पट्टावली प्रबन्ध संग्रह

जैन इतिहास निर्माण समिति, जयपुर

जैन इतिहास निर्माण समिति प्रकाशन—१

पट्टावली प्रबन्ध संग्रह

संकलियता व संशोधक

आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज

सम्पादक

डॉ॰ नरेन्द्र भानावत

एम॰ ए॰, पी-एच॰ डी॰

प्रकाशक

जैन इतिहास निर्माण समिति, जयपुर

प्रकाशक :

जैन इतिहास निर्माण समिति,
आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भंडार,
लाल भवन, चौड़ा रास्ता, जयपुर-३

प्रथम संस्करण : १९६८

मूल्य : १०.००

मुद्रक :

राज प्रिंटिंग वर्क्स
किशनपोल बाजार, जयपुर।

प्रकाशकीय

किसी भी देश का इतिहास, यदि उसका अतीत गौरवमय रहा है वर्तमान के लिए प्रेरणादायी होता है। जैन परम्परा का इतिहास अपने में कई सार्वभौम तथ्यों और सार्वकालिक जीवनादर्शों को समेटे है जिनसे प्रेरणा लेकर हम वर्तमान जीवन की अपनी कई समस्याओं को सुलझा सकते हैं। पर उसका क्रमवद्ध प्रामाणिक इतिहास अब तक अपने सर्वांग सम्पूर्ण रूप में सामने नहीं आया। जो स्फुट प्रयत्न हुए हैं वे उपयोगी होते हुए भी प्रतिनिधि ग्रन्थ का रूप नहीं ले सके हैं। ऐसे इतिहास ग्रंथ की वर्षों से आवश्यकता अनुभव की जा रही है जो जैन परम्परा को प्रामाणिकता के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अपने सही ऐतिहासिक एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर सके। सं० २०२२ के वालोतरा चातुर्मास में उपाध्याय श्री हस्तीमल म० सा० ने ऐसे प्रतिनिधि इतिहास ग्रन्थ के निर्माण कार्य को उठाने का प्रेरक उद्वोधन दिया और एक विस्तृत रूपरेखा भी वनाई जो विद्वानों के सामने रखी गई।

इतिहास-निर्माण के इस संकल्प का व इसकी लेखन-पद्धति का सभी ओर से स्वागत हुआ। परिणाम स्वरूप एक जैन इतिहास-निर्माण-समिति गठित की गई जिसके अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री इन्द्रनाथजी सा० मोदी, मंत्री श्री सोहनमल कोठारी व कोपाध्यक्ष श्री पूनमचन्दजी सा० वडेर मनोनीत किये गये।

इतिहास-लेखन का यह कार्य श्रमसाध्य है। लोंकाशाह ने निर्भीक होकर तत्कालीन संदर्भ में जो क्रांति की उसका दूरगामी प्रभाव पड़ा और आचार में अधिक दृढ़ता आई। लोंकाशाह के वाद की परम्परा के स्रोत अन्धकार में हैं। उनकी अद्यावधि न तो स्पष्ट जानकारी हमें प्राप्त है और न उसे जानने के विशेप प्रयत्न हुए हैं। अव यह आवश्यक समझा गया है कि इन लुप्त कड़ियों को सुश्रृङ्खलित कर एक प्रामाणिक इतिहास समाज के समक्ष प्रस्तुत किया जाय।

प्रामाणिक इतिहास तव तक नहीं लिखा जा सकता जव तक कि विभिन्न प्रकार के ऐतिहासिक साधनों द्वारा पूरी विपय-सामग्री संकलित न की जाय। विषय-सामग्री का यह संकलन किसी एक व्यक्ति के वश की वात नहीं है विशेपकर उस स्थिति में जवकि एक सम्प्रदाय विशेप कई शाखा-उप शाखाओं में विभक्त होऔर सवकी पृथक्-पृथक् परम्पराएँ चली हों। आज के इस संगठन और एकता के युग में यह आवश्यक है कि एक ही स्रोत से चलने वाली भिन्न प्रतीत होती हुई सभी परम्पराओं को समुचित सम्मान और महत्त्व देते हुए उसका ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया जाय। प्रस्तावित इतिहास ग्रन्थ की यही मूल दृष्टि है।

इतिहास-लेखन का यह कार्य व्ययसाध्य तो है ही श्रमसाध्य और समयसाध्य भी है। परम श्रद्धेय आचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म० सा० के निर्देशन में इस कार्य का समारंभ हो गया है। इसी सिलसिले में आचार्य श्री ने राजस्थान का ग्रामानुग्राम विहार करते हुए गुजरात प्रदेश की ओर प्रस्थान किया और वहां के पाटन, खंभात, वड़ौदा, अहमदाबाद आदि नगरों के ज्ञान-भंडारों का निरीक्षण कर हजारों हस्तलिखित प्रतियों का अवलोकन किया। इस यात्रा में जो महत्त्वपूर्ण पट्टावलियां सामने आईं, उन्हीं का प्रकाशन इस ग्रंथ के द्वारा किया जा रहा है। आशा की जाती है, पट्टावलियों के मूल पाठों का यह प्रकाशन प्रामाणिक इतिहास-लेखन में आधारभूत सामग्री का काम देगा।

ग्रंथ के निर्माण में आचार्य प्रवर हस्तीमलजी म० सा० की ही मूल प्रेरणा और शक्ति रही है। यह उन्हीं के श्रम का प्रसाद है। पं० रत्न मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्रजी म० का भी ग्रंथ निर्माण में पूरा सहयोग रहा है। उनके प्रति हम हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। राजस्थान विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ० नरेन्द्र भानावत ने हमारे निवेदन को स्वीकार कर इसके सम्पादन में जो अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, उसके लिए हम उनके अत्यन्त आभारी हैं। परम श्रद्धेय देवेन्द्र मुनिजी और प्राचीन भापा तथा साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान श्री अगरचन्दजी नाहटा ने भूमिका लिखकर ग्रंथ का जो गौरव और महत्त्व बढ़ाया है, समिति उसके लिए आभार मानती है। प्रतिलेखन, प्रूफ-संशोधन आदि में पं० शशिकान्तजी झा, मोतीलालजी गांधी व पूनमचन्दजी मुणोत का सहयोग विस्मृत नहीं किया जा सकता।

समिति के अध्यक्ष श्री इन्द्रनाथजी मोदी, कोषाध्यक्ष श्री पूनमचंदजी बडेर, श्री श्रीचन्दजी गोलेछा, श्री सोहननाथजी मोदी, श्री नथमलजी हीरावत, श्री केसरीमलजी सुराणा, श्री इन्द्रचन्दजी हीरावत, श्री धनराजजी चोपड़ा तथा प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से सहायता करने वाले अन्य सभी सदस्यों ने समय-समय पर रुचि लेकर इस अभियान को सफल बनाने में जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया है, उसके लिए इस अवसर पर आभार प्रकट करना, मैं अपना पुनीत कर्त्तव्य मानता हूं।

जैन इतिहास निर्माण समिति का यह प्रथम प्रकाशन प्रस्तुत करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। आशा है, समाज की सेवा में दूसरा प्रकाशन भी शीघ्र ही प्रस्तुत होगा।

—सोहनमल कोठारी
मंत्री
जैन इतिहास निर्माण समिति, जयपुर

सम्पादकीय

इतिहास अतीत की महत्त्वपूर्ण घटनाओं और चली आती हुई परम्परागत धारणाओं का यथार्थ चित्रण है। भारतीय धर्म, दर्शन और समाज की ऐतिहासिक परम्परा बड़ी समृद्ध रही है। यह सही है कि व्यष्टि की अपेक्षा समष्टि को अधिक महत्त्व प्रदान करने के कारण भारतीय परम्परा में इतिहास-लेखन जैसी सजग प्रवृत्ति नहीं रही, पर इतिहास-लेखन के विविध स्रोत—शिलालेख, ताम्रपत्र, भुर्जपत्र, गुर्वावली, पट्टावली, वंशावली, पीढ़ियावली, ख्यात, वात विगत, हाल-हगीगत, पट्टा-परवाना, उत्पत्ति ग्रंथ, रुक्का, रोजनामचा, दफ्तर-वही, प्रशस्ति आदि—विदेशियों के लगातार आक्रमण होने पर भी, किसी न किसी रूप में सुरक्षित अवश्य रहे। इतिहास-लेखन के इन विविध उपकरणों की सहायता के बिना प्रामाणिक इतिहास-लेखन का कार्य पूर्ण विश्वसनीयता के साथ सम्पन्न नहीं हो सकता।

हमारे यहाँ की इतिहास-लेखन परम्परा मध्ययुग में आकर लुप्त सी हो गई। सत्रहवीं शती के प्रारंभ में इतिहास-लेखन का व्यवस्थित कार्य मुगलों ने पुनः आरंभ किया। स्वयं बादशाह अकबर ने अपने राज्य में इतिहास-लेखन का एक अलग ही विभाग खोला। तभी से अन्य रियासतों एवं स्वतंत्र राज्यों में प्रतिस्पर्द्धा की भावना से इतिहास-लेखन के स्फुट प्रयत्न होते रहे। मुगल शासक इतिहास-प्रेमी थे। वे स्वयं 'नामा' संज्ञक ग्रंथों के रूप में अपना आत्म-चरित लिखा करते थे।

इस दृष्टि से जो इतिहास लिखे जाते थे, उनमें राजनीतिक परिवर्तनों और घटनाओं को ही प्रमुखता दी जाती थी। सामाजिक परिवर्तनों और धार्मिक आन्दोलनों को दृष्टि में रखकर सांस्कृतिक इतिहास लेखन का कार्य प्रायः उपेक्षित ही रहा। किसी भी राष्ट्र का सच्चा इतिहास वहाँ के शासकों की कार्य-प्रणालियों तक ही सीमित नहीं है। उसमें वहाँ के सामाजिक-धार्मिक आन्दोलनों एवं जन सामान्य जनता की मनोवृत्तियों का चित्रण भी अपेक्षित है। विभिन्न स्रोतों से पड़ने वाले प्रभावों और उनको आत्मसात करने की धारणा-शक्ति का विवेचन भी अभीष्ट है। क्योंकि इतिहास केवल मात्र गड़े हुए मुर्दों को उखाड़ने का कार्य नहीं है। उसके अन्तस में भावी समाज-रचना की कई निर्माणकारी प्रवृत्तियाँ भी काम करती हैं।

संस्कृति के निर्माण एवं विकास में धर्म का बहुत बड़ा हाथ रहा है। श्रमण परम्परा और वैदिक परम्परा की समानान्तर रूप से प्रवाहित होने वाली धाराओं ने भारतीय संस्कृति को गतिशील बनाये रखा है। प्रथम तीर्थंकर युगादिदेव भगवान ऋषभदेव मानवीय संस्कृति के प्रथम आख्याता थे। उनके पूर्व भोगमूलक संस्कृति थी। पुरुषार्थ का मानवीय जीवन के विकास में कोई स्थान नहीं था। ऋषभदेव ने ही कर्ममूलक पुरुषार्थप्रधान संस्कृति की प्रतिष्ठा की। उनके क्रम में चौवीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर हुए। ये चरम तीर्थंकर कहे गये हैं। भगवान महावीर के बाद विभिन्न जैनाचार्यों ने सांस्कृतिक देय के इस प्रवाह को आज तक गतिशील रखा है।

दुर्भाग्य से भारतीय जन-जीवन शताब्दियों तक पराधीनता के नीचे पलता रहा। विजातीय शासकों ने राजनीतिक दृष्टि से ही नहीं सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी हमें पद-दलित किया। ऐसे नैराश्यपूर्ण असहाय वातावरण में जन-जीवन की नैतिक शक्ति और मनोबल को थामे रखना अत्यन्त आवश्यक था। जैनाचार्यों ने सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों स्तरों पर इस दायित्व को निभाया।

सैद्धान्तिक स्तर पर ईश्वर की एकाधिकार भावना के स्थान पर उसके विकेन्द्रीकृत रूप की दृढ़ता के साथ प्रतिष्ठा कर यह प्रतिपादित किया कि व्यक्ति स्वयं अपने भाग्य का, सुख-दुख का निर्माता है। ईश्वर की ओर से उसे सुख-दुख नहीं मिलते। अपने ही शुभाशुभ कर्मों का वह भोक्ता है। अपने ही पुरुषार्थ के बल पर वह आत्मा के सर्वोत्तम विकास—ईश्वरत्व—तक पहुँच सकता है। इस भावना ने व्यक्ति को स्वावलम्बी और आत्म-निर्भर बनाया। आत्मस्वातंत्र्य की यह सबसे बड़ी सांस्कृतिक उपलब्धि जैन दर्शन की देन है।

व्यावहारिक स्तर पर जैन श्रमण इस भावना को जन-जीवन में उतारने के लिए राजसत्ता से दूर रहकर जनता को कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य न खोने और धर्म पर दृढ़ रहने की देशना स्वयं साधनापरक जीवन व्यतीत करते हुए देते रहे। उसी का परिणाम है कि इतने विजातीय एवं विधर्मीय आक्रमणों के बीच भी हम भारतीयता की रक्षा कर सके।

संस्कृति के रक्षक, आत्मोपदेष्ठा इन जैन आचार्यों, संतों, श्रावकों आदि की परम्परा को जानने के लिए पट्टावलियाँ महत्वपूर्ण साधन हैं। विगत कुछ वर्षों में पट्टावली-संग्रह के ऐसे कई प्रयत्न हुए हैं पर लोंका गच्छ व स्थानकवासी परम्परा पर प्रकाश डालने वाली पट्टावलियाँ यत्र-तत्र बिखरे रूप में ही मिलती रही हैं। प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा संबंधित प्रमुख पट्टावलियों को एक स्थान पर संकलित करने का प्रयत्न किया गया है।

संकलित पट्टावलियों का प्रकाशन करते समय उनके मूल पाठ को सुरक्षित रखने की दृष्टि से कई नाम और स्थान अस्पष्ट, अशुद्ध व त्रुटिपूर्ण प्रतीत होने पर भी उसी रूप में रखे गये हैं। परम्परागत मान्यता एवं लेखन व उच्चारण भेद के कारण भी पाट-परम्परा में प्रसंगानुसार भिन्नत्व दिखायी देता है। किंवदन्तियों और मान्य विश्वासों को उसी रूप में लिखा गया है जिस रूप में परम्परा विशेष में लेखन-काल में वे माने जाते थे। किसी भी परम्परा में बिना परिवर्तन के उसके मूल रूप को प्रस्तुत करना ही हमारा लक्ष्य रहा है। अपनी ओर से कोई काट-छांट नहीं की गई है।

ग्रंथ को अधिकाधिक उपयोगी और बोधगम्य बनाने की दृष्टि से प्रत्येक पट्टावली के पूर्व संक्षेप में उसका सार तत्व दे दिया गया है। लोंकागच्छ परम्परा की प्रतिनिधि रचना संस्कृत पट्टावली 'पट्टावली प्रबन्ध' का हिन्दी अनुवाद तथा स्थानकवासी परम्परा की प्रतिनिधि रचना पद्य पट्टावली 'विनयचन्द्रजी कृत पट्टावली' का सरलार्थ भी दिया गया है। हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने में हमें पं० शशिकान्त झा शास्त्री और सरलार्थ प्रस्तुत करने में पं० मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्रजी म० का सहयोग प्राप्त हुआ है। इन दोनों के प्रति आभार प्रकट करना हम अपना पुनीत कर्तव्य समझते हैं।

विद्वानों और शोधार्थियों की सुविधा के लिए ग्रंथ के अन्त में ८ परिशिष्ट दिये गये हैं जिनसे ग्रंथ में आये हुए विशिष्ट व्यक्ति, स्थान, गच्छ, ग्रंथ आदि के संबंध में सुगमता व शीघ्रता से ज्ञातव्य प्राप्त किया जा सके। 'प्रति-परिचय' परिशिष्ट में पट्टावलियों का बहिरंग परिचय प्रस्तुत किया गया है। 'भगवान महावीर के बाद की प्रमुख घटनाएँ' परिशिष्ट से विभिन्न ऐतिहासिक मोड़ों को आसानी से समझा जा सकता है। अन्त में शुद्धि-पत्र भी दे दिया गया है ताकि पाठक अशुद्धियों को सुधार कर पढ़ें।

ग्रंथ के निर्माण में पूज्य श्री हस्तीमलजी म० सा० की मूल प्रेरणा रही है। उन्हीं की गवेषक दृष्टि, सुदूरवर्ती ग्रामानुग्राम विहार-यात्रा, निरन्तर अध्ययनशीलता और अध्यवसाय का ही यह प्रतिफलन है। बड़े परिश्रम से उन्होंने इन पट्टावलियों का संकलन व संशोधन किया है। प्राक्कथन के रूप में संकलित पट्टावलियों का अन्तरंग-दर्शन करा कर सामान्य पाठकों के लिए भी उन्होंने इस ग्रंथ को विशेष उपयोगी बना दिया है। श्रद्धेय श्री देवेन्द्र मुनि और प्रसिद्ध गवेषक विद्वान श्री अगरचन्द नाहटा ने ग्रंथ की भूमिका लिखने के हमारे निवेदन को स्वीकार किया, एतदर्थ हम उनके आभारी हैं। पं० शशिकान्त झा, श्री मोतीलाल गांधी व श्री पूनमचन्द मुणोत ने प्रूफ संशोधन, प्रतिलेखन आदि में जो सहयोग दिया, वह उनका धर्म के प्रति सहज अनुराग है। अनुक्रमणिका तैयार करने में श्रीमती शान्ता भानावत, एम. ए. के सहयोग को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता। ग्रंथ को इस रूप में प्रकाशित करने का श्रेय

समिति के मंत्री श्री सोहनमल कोठारी की निस्वार्थ सेवा-भावना, सतत जागरूकता और लगन को है। राज प्रिन्टिंग वर्क्स के अधिकारी सेठ श्री द्वारकादास और प्रबन्धक श्री देवकीनंदन शर्मा के विशेष रुचि लेने के कारण ही यह ग्रंथ इतना शीघ्र पाठकों के समक्ष आ सका।

आशा है, यह ग्रंथ धर्म प्रेमियों, विद्वानों और इतिहासज्ञों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगा।

—डॉ० नरेन्द्र भानावत
मानद निर्देशक
आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भंडार, जयपुर

अनुक्रम

प्राक्कथन

इतिहास-लेखन में अन्यान्य साधनों की तरह प्राचीन पट्टावलियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

श्वेताम्बर जैन मुनियों ने पट्टावली के माध्यम से इतिहास की अच्छी सामग्री प्रस्तुत की है। शिलालेख एवं प्रशस्तियों से केवल इतना ही ज्ञात होता है कि किस काल में किस मुनि ने क्या कार्य किया, अधिक हुआ तो उस समय के राज्य-शासन एवं गुरु-शिष्य-परम्परा का भी परिचय मिल सकता है, किन्तु रास, गीत और पट्टावली आदि उनके स्मरणीय गुण, तप, संयम एवं प्रचार का भी ज्ञान कराते हैं। पट्टावली में अपनी परम्परा से सम्बन्धित पट्ट-परम्परा का पूर्ण परिचय दिया जाता है। कभी किसी आचार्य के परिचय में अतिरंजना भी हो सकती है, फिर भी ऐतिहासिक दृष्टि से पट्टावली का महत्त्व कम नहीं है। पट्टावलियों का निर्माण किंवदन्तियों और अनुश्रुतियों से ही नहीं किया गया है, इनके निर्माण में तत्कालीन रास, गीत, सज्झाय और प्रशस्तियों का भी उपयोग होता है। फिर भी श्रुति-परम्परा के भेद से कुछ नाम एवं घटना-चक्र में भिन्नता होना सहज है।

पट्टावलियों को हम मुख्य रूप से दो भागों में बाँट सकते हैं। प्रथम शास्त्रीय पट्टावली और दूसरी विशिष्ट पट्टावली। पहली सुधर्मा स्वामी से लेकर देवर्धिगणी तक, जो प्रायः समान ही है। कल्प सूत्र एवं नन्दी सूत्र की पट्टावली मुख्यतः शास्त्रीय कही जाती है। गच्छ-भेद के पश्चादवर्ती विविध पट्टावलियां विशिष्ट पट्टावली के नाम से कही जा सकती हैं, जिनमें अपनी अलग विशेपता होती है।

पट्टावली के द्वारा ही आचार्य-परम्परा का क्रमबद्ध पूर्ण इतिहास प्राप्त हो सकता है, जो इतिहास-लेखन में अत्यावश्यक है। हमारी दृष्टि से इतना विस्तृत परिचय देने वाला कोई दूसरा साधन नहीं हो सकता। श्वेताम्बर परम्परा में जो विभिन्न गच्छों की पट्ट-परम्परा उपलब्ध होती है, उसका श्रेय इन पट्टावलियों को ही है।

श्वेताम्बरों की तरह दिगम्बर मुनियों की व्यवस्थित परम्परा उपलब्ध नहीं

होती। शोलापुर से "भट्टारक सम्प्रदाय" पुस्तक प्रकाशित हुई है, पर उसमें मुनियों की परम्परा प्राप्त नहीं होती। काष्ठा संघ, मूलसंघ, माथुर संघ और गोप्य सघ की परम्परा में कितने गण, शाखा और आचार्य हुए, इसका प्रामाणिक परिचय प्रस्तुत करना दुष्कर है।

श्वेताम्बर सम्प्रदाय की ओर से पट्टावली के दो-तीन संकलन प्रकाशित हुए हैं, पर उनमें लोंकागच्छ और स्थानकवासी परम्परा की पट्टावलियां का व्यवस्थित संकलन नहीं हो पाया, अतः उनको मूलरूप में जनता के सामने प्रस्तुत करना आवश्यक था। स्थानकवासी समाज की ओर से इस तरह का यह पहला ही प्रयास है। लोंकागच्छ और स्थानकवासी सम्प्रदाय की सभी पट्टावलियों का संग्रह न करके हमने उनकी मुख्य-मुख्य शाखाओं को ही प्रमुख स्थान दिया है। जैसे विजयगच्छ, सागरगच्छ आदि शाखाओं का तपागच्छ में समावेश हो जाता है। चौरासी गच्छ में जैसे खरतर, तपा, आंचलिया, पूनमिया, ओकेश और पायचन्द गच्छ प्रमुख हैं, वैसे ही लोंकागच्छ में गुजराती लोंका, नागोरी लोंका, उतराध लोंका ये प्रमुख हैं और स्थानकवासी परम्परा की जीवराजजी, लवजी, धर्मसिंहजी, धर्मदासजी, हरजी, और पंजाब एवं मारवाड़–भूधरजी की शाखा में अन्य पट्टावलियों का भी समावेश हो जाता है। उनमें आगे की नामावलि को छोड़ शेष वर्णन एकसा है।

प्रस्तुत संग्रह लोंकागच्छ और स्थानकवासी परम्परा की अमुद्रित पट्टा-वलियों का संकलन है। इनमें उपर्युक्त पट्टावलियों को ही स्थान दिया गया है, फिर भी कुछ सामग्री इसमें नहीं दे सके, पाठकों ने चाहा तो अगले भाग में अवशिष्ट सामग्री प्रस्तुत की जा सकेगी।

पट्टावलियों का अन्तरंग दर्शन

लोंकागच्छ परम्परा :

लोंकाशाह द्वारा जिनमार्ग के शुद्ध आचार को समझ कर जिन्होंने संयम ग्रहण किया, उन भाणजी, नूनजी आदि संयमियों के समुदाय को लोंकागच्छ कहा जाता है। लोंका गच्छ में मुख्य रूप से २ भेद हैं, गुजराती और नागौरी लोंका। सात पाट के बाद रूपा ऋषि के विशिष्ट त्याग, तप के प्रभाव से लोंका गच्छीय साधुओं का दूसरा नाम गुजराती लोंका पड़ा।

गुजराती लोंका गच्छ में पूज्य जीवराजजी के पश्चात दो पक्ष हो गये, मोटी पक्ष और नानी पक्ष। मोटी पक्ष की गादी वडोदा में और नानी पक्ष की वालापुर में कायम हुई। इनके अतिरिक्त उत्तराध लोंका जो लाहोरी लोंका गच्छ के नाम से कहे

जाते हैं। इन तीनों की पट्टावलियां मूल गुजराती लोंका की परम्परा से मिलती हुई हैं। पर नागोरी लोंका गच्छ जो सं० १५८० के समय हीरागर और ऋषि रूपचन्दजी से प्रकट हुआ, उसका संबन्ध गुजराती लोंका की पट्टावली से नहीं मिलता। यहां पर मुख्य रूप से नागोरी लोंका और गुजराती लोंका के मोटी पक्ष और नानी पक्ष की पट्टावलियां प्रस्तुत की गई हैं। अन्य भी गद्य एवं पद्य में लोंकागच्छ की पट्टावलियां प्राप्त होती हैं, पर उनका समावेश इनमें हो जाता है। संकलित ७ पट्टावलियों का अन्तरंग दर्शन इस प्रकार है:—

(१) पहली पट्टावली 'पट्टावली प्रबंध' में ऋषि रघुनाथ ने नागोरी लोंका गच्छ की उत्पत्ति से १९ वीं सदी तक का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत किया है। रचनाकाल के ९ वर्ष बाद ही मुनि संतोषचन्द्र ने इसको प्रतिलिपि तैयार की। भाषा अधिकांश शुद्ध एवं सरल है। पट्टावलीकार ने २७ वे पट्टधर देवर्धिगणी तक का परिचय देकर २८ वें चन्द्रसूरि, २९ वें विद्याधर शाखा के परम निर्ग्रन्थ संमतभद्र सूरि और ३० वें धर्मघोष सूरि माने हैं। धर्मघोष सूरि ने धारा नगरी में पंवारवंशीय महाराज जगदेव और सूरदेव को प्रतिबोध देकर जैन बनाया। अतः इनसे धर्मघोष गच्छ प्रगट हुआ। धर्मघोष सूरि के बाद ३१ वें जयदेव सूरि, ३२ वें श्री विक्रम सूरि, आदि अनेक आचार्य हुए। संवत ११२३ में ३८ वें परमानन्द सूरि हुए। इनके समय सं० ११३२ में सूरवंश की पारिवारिक स्थिति क्षीण हो चुकी थी। गुरु ने उनको नागौर जाकर बसने की सलाह दी और कहा कि नागौर में तुम्हारा बड़ा भाग्योदय होगा। गुरु के वचन से सूरवंशीय वामदेव ने सं० १२१० की साल नागौर में आकर वास किया। वहां उनकी बड़ी वृद्धि हुई। सं० १२२१ के वर्ष संघपति सतीदास के यहां ससाणी कुल देवी का जन्म हुआ और सं० १२२९ में वह मोरखाणा नाम के गांव में अंतर्धान हो गई। सं० ११३२ में सूरवंशीय मोल्हा को स्वप्न में दर्शन देकर देवी पुतली-रूप से प्रकट हुई। मोला ने कुल देवी का देवालय बना दिया। यही सुराणा की कुलमाता मानी जाती है।

४०वें पट्टधर उचितवाल सूरि से सं० ११७१ में धर्मघोष उचितवाल गच्छ हुआ। इनके प्रतिबोध पाये हुए आज ओस्तवाल कहे जाते हैं। ४१ वें प्रौढ सूरि से सं० १२३५ में धर्मघोष पूढवाल शाखा हुई जो अभी पोरवाड़ नाम से कही जाती है। ४३ वें नागदत्त सूरि से धर्मघोष नागौरी गच्छ प्रगट हुआ। सं० १२७८ में विमल चन्द्र सूरि से दीक्षा लेकर इन्होंने क्रिया उद्धार किया, शिथिलाचार का निवारण किया। सं० १२८५ के वैशाख शुद ३ को इन्होंने आचार्य पद प्राप्त किया। इन्हीं से नागौरी गच्छ की स्थापना होती है। ५६ वें पट्ट पर शिवचंद्र सूरि हुए। सं० १५२९

में ये नियतवासी और शिथिलाचारी हो गये। इनके देवचंद और माणकचंद दो शिष्य थे। ५६ वें पट्ट पर नागौरी लोंका गच्छ की नींव डालने वाले हीरागरजी और रूपचंदजी हुए, जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार दिया है :—

पिरोज खां के राज्य काल में नागौर बड़ी समृद्ध स्थिति में था। गांधी सरदारंगजी और सींचोजी वहां के बड़े सिद्धान्त प्रेमी माने जाते थे। रूप चंद जी सदा उनके पास बैठते और धर्म-गोष्ठी किया करते।

लेखक के अनुसार लोंका का शास्त्र-लेखन के लिए नागौर आना और रूप चंद के साथ साक्षात्कार का उल्लेख मिलता है। लोंकाशाह से प्राप्त सिद्धान्त ग्रन्थों को पढ़कर और सींच.जी के साथ मनन कर रूपचंदजी विरक्त हो गये। उनके मन में धर्म दीपाने की भावना जगी।

सं० १५८० में जब वे दीक्षा को निकले तो हीरागरजी और पंचायणजी भी तैयार हो, चले आये। बड़े ठाट बाट से तीनों ने सं० १५८० के ज्येष्ठ शु० १ को दीक्षा ग्रहण की। बादशाह पिरोजखां ने भी अपने मंत्री किशन को समारोह में भेजा। परस्पर के वचन और उपकार की स्मृति हेतु ये नागौरी लूंका कहलाये।

इनके उपदेश से हजारों लोगों ने व्रत-नियम ग्रहण किये। साथ ही रूप चंद जी की पत्नी ने भी १२ व्रत ग्रहण किये। इन्होंने धर्म के नाम पर होने वाले आरम्भ-समारंभ का निषेध किया। इनके वनवास और कठोर साधना बल से लोंका गच्छ की अल्प समय में ही ख्याति फैल गयी।

सं० १५८५ में रयणजी ने दीक्षा ग्रहण की और ५० दिन का संथारा ग्रहण कर नागौर में ही स्वर्गवासी हुए। कहा जाता है कि श्री रूपचंद जी के तपः प्रभाव से पूर्णभद्र देव उनकी सेवा किया करता था। उदाहरण स्वरूप एक घटना प्रस्तुत की गई है। मालव देश के महिमपुर में चातुर्मास करने को जब इन्होंने स्थानीय सेठ गोवर्धन से उपाश्रय की याचना की तो उन्होंने रथके चक्र पर बैठने को कहा, उस समय अन्य साधुओं को स्थानान्तरित करके उन्होंने देवागरजी के साथ रथ के चक्कों पर ही मासखमण पचख के रहना स्वीकार कर लिया। सेठ ने गुप्तचरों के माध्यम से इनके कठोर तप का हाल सुना तो बड़ा प्रभावित हुआ। दूसरे दिन क्षमायाचना करते हुए कोठी में विराजने की प्रार्थना की, परन्तु श्री रूपचन्दजी ने कहा—मासखमण की तपस्या तो यहीं पूर्ण करेंगे। इस प्रकार इनके त्याग-तप के प्रभाव से ६ लाख ८० हजार घर नागौरी लोंका गच्छ की परंपरा में हो गये। मेवाड़-भूषण भामाशाह और ताराचंद कावड़िया लोंकामत के ही उपासक बताये गये हैं।

बादशाह आलमगीर के समय आचार्य सदारंगजी हुए, जिनको बीकानेर नरेश अनोपसिंह और सुजानसिंह जी गुरुभाव से मानते थे। शनैः २ लोंकागच्छ में भी नगर-प्रवेश और पगमंडे आदि आडम्बरों का प्रवेश हो गया। ऋषि रघुनाथ ने पूज्य लक्ष्मीचंद्र जी के शासन-काल तक का इतिहास प्रस्तुत किया है। आगे २० वीं सदी का इतिहास अनुपलब्ध है।

(२) दूसरी गणी तेजसिंह कृत हिन्दी पद्य पट्टावली है। इसमें पूज्य केशवजी तक ९ पट्टधरों का वर्णन है। (३) तीसरी 'संक्षिप्त पट्टावली' में ऋषि भाण से पूज्य भागचंद जी तक केशव जी पक्ष के १६ पट्टधरों का परिचय, जन्म-दीक्षा-आचार्यपद और स्वर्गवास काल के साथ दिया गया है। (४) चौथी पट्टावली में भगवान् महावीर से लेकर ३५ पाट तक का उल्लेख कर लूंकागच्छ की उत्पत्ति वतलाई गई है। पूज्य भागचदजी द्वारा वालाचंद जी के आचार्य पद प्रदान से पट्टावली को पूर्ण किया है। (५-६) पांचवी और छट्ठी-गुजराती लोंका मोटा पक्ष की पट्टावलियां हैं। भगवान् महावीर से २७ पाट का उल्लेख कर विविध गच्छों की उत्पत्ति का काल लिखा है। नागौरी लूंका की उत्पत्ति सं० १६८१ में लिखी है जो संस्कृत पट्टावली से बाधित है। वहां सं० १५८० में नागौरी लूंका की उत्पत्ति लिखी है। साधारण अंतर को छोड़ शेष में दोनों पट्टावलियां समान हैं। (७) सातवीं पट्टावली में देवार्धि को २९ वें पट्टधर माना है। नामोल्लेखन भी अस्त-व्यस्त है। तीसवें विवुधसूरि हुए।[1]

पट्टावली के अनुसार सं० १४२८ में १५२ संघ यात्रा को जाते हुए पाटण आये। उस समय वर्षा ऋतु से नीलण-फूलण हो गई, अतः देरासर की सहुलियत देखकर सब वहीं रुक गये। खाली दिन कैसे विताये जांय तो मालूम हुआ कि लोंकाशाह नये मत का प्रचार कर रहे हैं। संघवी भी सुनने को आने लगे, सिद्धान्त सुन कर बोले कि महाराज! भगवान् महावीर के १ लाख ५९ हजार श्रावकों में आनन्द जैसे एक भव करके मोक्ष जाने वाले भी हैं, परन्तु शास्त्र में कहीं भी उनके द्वारा संघ निकालने, देवल वनाने और प्रतिमा-पूजन का उल्लेख नहीं है। प्रतिवोध पाकर सब १५२ संघवियों ने विशाल संपदा का परित्याग किया और दीक्षित हो गये। फिर १५३ ठाणा से विहार कर वे वन में तपस्या करने लगे। महापन्नवणा के अनुसार भस्मग्रह उतरने पर जीवा और रूपा नाम के दो जीव होंगे, उनसे जिन धर्म की फिर उदय-उदय पूजा होगी, ऐसा लिखा है।

लूंका ने ३ दिन के अनशन की आराधना कर स्वर्गगति प्राप्त की और मध्य रात्रि में आकर १५२ साधुओं को सूरि मंत्र दिया तथा लोंका मत को

---

१. यहां से कुछ नामों की पायचन्द गच्छीय पट्टावली से तुलना कीजिये।

सत्य मानने की सलाह दी। पट्टावली में लोंकाशाह को ओसवाल वंशीय लूंकड़ लिखा है। उनकी ५७ वर्ष की आयु और ३ मास की दीक्षा बताई गई है।

आनन्द-विमलसूरि का ईडर की गुफा में सं० १५८२ के वर्ष मासखमण करना लिखा है। इसलिये १४२८ का लेख भ्रान्त प्रतीत होता है।

शेष वर्णन छट्ठी पट्टावली के समान है। केवल पू० कल्याणचंद्रजी के पश्चात् पूज्य खूबचंदजी का स्वर्गवास सं० १६८२ तक का वर्णन विशेष है।

स्थानकवासी परम्परा :

प्रस्तुत संग्रह में स्थानकवासी परम्परा से सम्बन्धित दस पट्टावलियाँ हैं जिनसे मुख्य रूप से पूज्य जीवराजजी पूज्य धर्मसिंहजी, पूज्य लवजी, पूज्य धर्मदासजी और पूज्य हरजी की मूल परम्परा का पता चलता है। विभिन्न गच्छों की पट्टावलियां न्यूनाधिक अन्तर से प्राप्त होती हैं परन्तु उनमें कोई खास भेद नहीं मिलता, अतः संग्रह में प्रस्तुत १० पट्टावलियां इन मूल परम्पराओं से सम्बन्धित ही ली गई हैं। पूज्य धर्मदासजी की, पूज्य मनोहरदासजी की, पंजाब की, गोंडल सम्प्रदाय की तथा अन्य पट्टावलियां जो तत्सम या कुछ विशेषता वाली हैं, आवश्यक समझा गया तो उनको अगले भाग में दे सकेंगे। संगृहीत पट्टावलियों का अन्तरंग दर्शन इस प्रकार है —

(१) पहली पद्य पट्टावली में कवि विनयचन्द्रजी ने भगवान महावीर से देवर्धि गणी तक २७ पाट और ७ निह्नवों का परिचय देकर दुर्भिक्ष का चित्र खींचते हुए बताया है कि उस समय श्रमणवर्ग की क्या स्थिति रही, संयम-पालन की कठिनाई से शिथिलाचार का कैसे प्रवेश हुआ ? तत्पश्चात् विविध गच्छों की उत्पत्ति, लोंकाशाह के सिद्धान्त-लेखन, लोंकाशाह का धर्म प्रचार, संघवी-प्रतिबोध, ४५ जन के साथ भाणजी, नूनजी, सरवाजी आदि की दीक्षा का वर्णन है। पट्टावली के अनुसार ऋषि भाणजी से ऋषि जीवाजी तक ८ पाट मर्यादा में रहे और फिर शिथिलता का प्रवेश हो गया। भिक्षावृत्ति को छोड़ कर मुनि निमंत्रित भोजन को जाने लगे। आधाकर्मी खाने लगे। सं० १७०९ में लवजी ऋषि ने दीक्षा ली, सं० १७१४ की साल क्रिया उद्धार किया, ढूंढे में ठहरने से लोग उन्हें ढूंढिया कहने लगे, महापुरुष गाली को भी वरमाला समझ धारण करते हैं, ये भी वैसे शांत रहे। इनके प्रमुख शिष्य सोमजी हुए। वरजंगजी के गच्छ से निकल कर

हरिदासजी, प्रेमजी, कानजी व गिरधरजी ने सोमजी को गुरु स्वीकार किया। फिर अमीपाल, श्रीपाल, धर्मसिंह, हरिदास, जीवो, शंकरजी, केशुजी, लघु हरिदासजी, समर्थजी, सोहनजी. तोडोजी, गोधाजी, सदानन्दजी आदि भी सोमजी के शिष्य कहे गये हैं।

धर्मदास जी ने पोतियावंध की श्रद्धा छोड़ कर कानजी म० के प्रतिवोध से मुनि दीक्षा ग्रहण की। इनके त्याग पूर्ण उपदेश के प्रभाव से ९९ शिष्य हुए, जिनमें सांचोर के धन्नाजी म० मुख्य थे। धन्नाजी के शिष्य सोजत के—मुणोत गोत्री भूधर जी हुए। ये वड़े त्यागी, वैरागी, उग्र तपस्वी और क्षमाशील थे। इन्होंने सोट मारने वाले अपकारी पर भी उपकार किया। भूधरजी म० के अनेक शिष्य हुए जिनमें श्री नारायणजी, रघुनाथजी, जयमल्लजी और कुशलाजी मुख्य थे। मेड़ता के अन्तिम चातुर्मास में पाँच की तपस्या के पारणे इनका स्वर्गवास हुआ।

मेड़ता चातुर्मास को पधारते समय इनके प्रिय शिष्य नारायणजी ने पानी के परिषह से मार्ग में ही शरीर छोड़ दिया। पानी के लिये गाँव में गये हुए सन्त जव पीछे लौटे तव तक तो इन्होंने स्वर्ग की ओर प्रयाण कर दिया था। धन्य है इनकी सहिष्णुता को।

कुशलाजी म० सेठों की रींया के चंगेरिया गोत्री थे। माता, पुत्र और हजारों की सम्पदा छोड़ इन्होंने दीक्षा ली और पूज्य जयमल्लजी म० के साथ वड़े प्रेम से अप्रमाद-भाव पूर्वक संयम की साधना की। पूज्य कुशलाजी म० के प्रशिष्य श्री रतनचन्दजी म० के क्रिया उद्धार और शिष्य-परिवार का संक्षिप्त परिचय देते हुए पट्टावली पूर्ण की है।

(२) दूसरी प्राचीन पट्टावली में भगवान महावीर से देवर्धिगणी तक २७ पट्टधर आचार्य और सिद्धान्त-लेखन का परिचय देते हुए निह्नवोत्पत्ति एवं दुष्काल की परिस्थिति का वर्णन किया है।

लोंकाशाह द्वारा सिद्धान्त-लेखन, संघवी आदि का प्रतिवोध और भाणजी आदि ४५ के दीक्षा ग्रहण के पश्चात् लहुजी उपनाम लवजी के क्रिया उद्धार का विस्तृत वर्णन किया गया है। सूरत के वीरजी वोहरा के विचारानुसार लोंका-गच्छीय वजरंगजी के पास दीक्षित होकर लवजी ने कुछ समय वाद वजरंगजी से साधु आचार के वावत विचार करते हुए निवेदन किया कि भगवन् गच्छ का मोह छोड़ कर क्रिया-उद्धार करो तो मैं आपका शिष्य और आप मेरे गुरु हैं।

वरजंगजी द्वारा स्वीकृत नहीं करने पर ऋषि थोभणजी और सखियाजी के

साथ ये गच्छ त्याग कर अलग हो गये और विहार कर सूरत से खम्भात पहुँचे। सूरत में कपासी सेठ का सहयोग पाकर इन्होंने अरिहन्त-सिद्ध की साक्षी से पंच महाव्रत धारण कर, शुद्ध संयम स्वीकार किया।

वीरजी ने इनकी महिमा सुनकर सूरत के नवाव को पत्र दिया कि लवजी सेवड़े को खम्भात से निकाल दो। नवाव ने लवजी को बुलाकर अपने यहां बिठा लिया। लवली ने भी शान्त भाव से उपवास कर, भजन-स्मरण में ध्यान जमा लिया। जब बेगम की दासी ने इनको २-३ दिन विना खाये-पीये भजन करते देखा तब बेगम से जाकर अर्ज की। वेगम ने नवाब को कहा कि फकीर को क्यों रोक रखा है? इनकी बद्दुआ से तुम्हारा राज्य बिगड़ जायगा। इस पर नवाब ने लवजी ऋषि को छोड़ दिया। ये वहां से कालोदरा गांव पधारे, लोगों को उपदेश दिया और विहार करते हुए अहमदाबाद चले आये। इतने समय की साधना से लोगों में इनके त्याग, तप का प्रभाव बढ़ चुका था। इसलिए वीरजी वोहरा के विरोध का किसी पर असर नहीं हो सका।

अहमदाबाद में धर्मसी ऋषि भी प्रचार कर रहे थे। अतः दोनों के अलग-अलग प्रचार से लोगों में समझ भेद न हो इसलिये लवजी ऋषि ने धर्मसी मुनि के यहाँ पधार कर एक होने की विचारणा की। मुनि अमीपाल जी आदि की इच्छा होते हुए भी उसमें सफलता नहीं मिली। दोनों ओर लोग आते-जाते और पूछते, आप दोनों में क्या फर्क है? धर्मसी ऋषि भी उत्तर में फरमाते कि हम एक हैं, फिर भी दोनों का प्रचार अलग-अलग होता रहा। पट्टावलीकार के लेखन से प्रतीत होता है कि लवजी ऋषि धर्मसी से दीक्षा में बड़े थे, फिर भी लवजी ऋषि का मन जिन मार्ग के हित की दृष्टि से धर्मसी जी के प्रति विनय भाव का ही रहा।

मुनि धर्मसी शास्त्र के पन्नों को भी परिग्रह समझकर साधुओं के लिये उनके रखने और शास्त्र लिखने का निषेध करते रहे पर कुछ समय बाद उनकी मौजूदगी में ही यह विचार बदल देना पड़ा।

फिर बुरहानपुर में किसी रंगारिन के यहाँ विष-मिश्रित भोजन करने से लवजी ऋषि को वेदना हुई। उन्होंने सागारी संथारा कर समाधि मरण प्राप्त किया।

पीछे सोमजी आदि मुनि ने रंगारिन के प्रति बढ़ती हुई प्रतिक्रिया की भावना को शान्तभाव से सहन किया। लवजी ऋषि के बाद श्री सोमजी अणगार ने भी मुनि धर्मसिंह जी के साथ वात्सल्य व्यवहार चालू रखा।

कहा जाता है धर्मसिंह जी के कई मुनि अमीपालजी, श्रीपाल जी आदि सोम जी ऋषि के पास चले आये।

कोटा सम्प्रदाय के परसरामजी आदि का भी सोमजी अणगार की सेवा में आना माना है।

लवजी ऋषि का विस्तृत परिचय होने से इसे लवजी की पट्टावली भी कह सकते हैं।

(३) तीसरी पूज्य जीवराज जी म० की पट्टावली में भगवान महावीर से नाथूराम जी तक ७० पट्टधरों के नाम और सं० १५६६ में पीपाड़ नगर में क्रिया उद्धार के लिए निकलने का उल्लेख है।

(४) चौथी खंभात पट्टावली में भगवान महावीर के बाद २७ पाट के नाम, सूत्र-लेखन और दुर्भिक्ष की स्थिति का संक्षिप्त वर्णन है। तत्पश्चात् लोंकाशाह के शास्त्र-लेखन एवं १५३१ में क्रिया उद्धार, पूज्य जीव ऋषि के बाद आई हुई शिथिलता से लवजी का क्रिया उद्धार, सोमजी, कानजी, रणछोड़जी और सोमजी के परिवार में ऋषि हरिदासजी, ऋषि प्रेमजी का उल्लेख है। केशवजी और कुंवरजी के गच्छ से निकले हुए साधुओं के नामों में लहुजी के ८ नाम दिये हैं। ॐ से फिर दूसरा भाग चालू होता है। प्रभु महावीर के बाद स्थूल भद्र तक ७ नाम और निह्नवों की घटना, चार शाखा एवं शास्त्र-लेखन काल बताया है। तीसरे भाग में इन्द्र की भस्मग्रह बाबत पृच्छा, जम्बू के मोक्ष गमनान्तर १० बोल का विच्छेद लिख कर फिर २७ पाट का परिचय दिया है। विशेष घटनाओं का उल्लेख कर कडवामत की स्थापना, और माननीय साधुओं में १३ नाम लिखे गये हैं। इनको वंदना करना, आहारादि देना प्रमाण माना है।

(५) ५ वीं गुजरात पट्टावली में पूज्य धर्मदासजी महाराज के शिष्य मूलचन्दजी महाराज की पट्ट-परम्परा में पूज्य धर्मदासजी से पूज्य हीरोजी तक ४२ आचार्यों का परिचय दिया गया है। इसमें पूर्व पीठिका नहीं है। केवल पूज्य धर्मदासजी महाराज के सौराष्ट्र वंश का एक परिचय है।

(६) छट्ठी भूधरजी की पट्टावली में पूज्य भूधरजी महाराज का ऐतिहासिक परिचय और पूज्य रघुनाथजी के संयम-ग्रहण तक का उल्लेख है। पीठिका में २७ पाट और क्रिया उद्धार आदि की घटनाओं का वर्णन है। पूज्य धर्मदासजी से पू० भूधरजी तक का परिचय विशेष है। धन्नाजी मालवाड़ा सांचोर के कामदार बाघा के पुत्र थे। सगाई और सम्पदा छोड़ कर इन्होंने दीक्षा ली। घृत पुड़ी के सिवाय इन्होंने सब विगय का त्याग किया। ये बड़े तपस्वी थे। उनके पट्टधर पूज्य भूधरजी हुए। सं० १७१७ में दीक्षा, (विचारणीय है) ली और सं० १८०४ में संथारा किया। इनके पाट पर पूज्य रघुनाथजी महाराज बैठे, जिन्होंने सं० १७८७ में अपनी माता के साथ दीक्षा ली।

(७) सातवीं मरुधर पट्टावली में भगवान महावीर के जन्म, दीक्षा, केवल ज्ञान, इन्द्रभूति का प्रबोध और सुधर्मा से २७ पाट का संक्षिप्त इतिहास है। निन्हवों की उत्पत्ति के प्रसंग से सं० ६०९ में दिगम्बर मत का उद्भव बताया गया है कल्पस्थिति और दिगम्बर परम्परा के कुछ आचार्य, चार संघ-काष्ठा-संघ, मूलसंघ, माथुरसंघ, गोप्यसंघ, २० पंथी, १३ पंथी एवं गुमान पंथी का उल्लेख है।

इस पट्टावली में बतलाया है कि वज्रसेन आचार्य के समय चन्द्र, नागेन्द्र आदि ४ शाखाएँ निकलीं। उनमें से २ शाखाएं दिगंबर सम्प्रदाय में मिलीं और दो श्वेताम्बर सम्प्रदाय में रहीं। शाखाओं से पहले दो बार दुष्काल पड़े। एक १२ वर्ष का और दूसरा ७ वर्ष का। दुष्काल में भिक्षा की दुर्लभता से बहुत से साधु आचार में ढीले पड़ गये। शुद्ध आचार मार्ग पर चलने में जो असमर्थ थे उन्होंने नया मत चलाया। वे श्रावक जनों को कहने लगे कि भगवान् मोक्ष पधारे हैं, इसलिए भगवान् की प्रतिमा स्थापना करो तो भगवान् याद आयेंगे। लोगों के मन में यह कल्पना जँचाई गई। तत्संबंधी कई लाभ बताये और विविध महिमा दर्शक ग्रन्थ भी बनाये।

वीर निर्वाण ६२८ (८८२) में और विक्रम संवत् ४१२ के वैशाख शुक्ल ३ के दिन प्रतिमा की स्थापना हुई। ३६ वर्ष तक अर्थात् ४४८ की साल तक कागज पर भगवान् की तस्वीर बनाकर पूजन करते और उस पर केशर के छींटे डालते। इससे तसवीर का आकार छिपने लगा। तब लिंगधारी रतन गुरु ने विचार कर काष्ठ की प्रतिमा कराई। संवत् ४४८ के माघ शुक्ल ७ से काष्ठ की प्रतिमा पूजी जाने लगी। ४९ वर्ष तक यह प्रथा चलती रही। फिर गुरुओं ने विचार किया कि काष्ठ की प्रतिमा नित्य प्रक्षाल करने से गीली रहती है, उसमें फूलण आजाती है, इसलिए यह ठीक नहीं है।

तब सं० ४९७ चार सौ सताणवे की साल चैत्र शुक्ल १० को मंदिर में पाषाण की प्रतिमा स्थापन की। धातु की मूर्तियां बनने लगीं। लोगों के लिए आकर्षण बढ़ाने को प्रभावना, नाटक, और स्वामी वात्सल्य आदि चालू किये। इस प्रकार सं० ८८२ में हिंसाधर्म प्रकट हुआ, उसका जोर बढ़ा।[1]

वीर निर्वाण २२८५ वर्ष के बाद सं० १८१५ की साल भीषन नाम का निन्हव हुआ। पू० श्री रुगनाथजी म० सा० के २३ शिष्य हुए, उनमें ७ वें शिष्य भीषण हुए। जिस समय वे पू० महाराज के पास दीक्षा लेने आये तो अपलक्षण देख कर पू० महाराज ने स्वीकार नहीं किया। पू० महाहाज के दूसरे शिष्य नगजी स्वामी थे। भीषन ने उनके पास सं० १८०७ की साल कालू में दीक्षा ग्रहण की। जब पू०

१—पट्टावली प्रबन्ध संग्रह, पृ० २३१-२३२

रुगनाथ जी म० ने यह खवर सुनी तो विचार किया कि पंचम काल में भीपन ऐसे प्राणी से जिन धर्म को हानि होती दिखती है, परन्तु भावी-भाव टाला नहीं जाता, यह समझ कर संतोप किया। सं० १८१३ की साल में भीपनजी ने 'जिनरख जिन पाल' का चौढालिया वताया। उसमें दग्धाक्षर देख कर पू० महाराज ने फरमाया कि यह अक्षर निकाल दो। पर भीपणजी ने अहंकार वश यह स्वीकार नहीं किया। सं० १८१३ की साल में पू० महाराज की इच्छा नहीं होते हुए भी मेवाड़ राजनगर में उन्होंने चातुर्मास किया। चातुर्मास में एक दिन गर्म पानी लाए। उसमें अचानक विच्छून्दरी गिर पड़ी। तव नगराज जी स्वामी ने कहा—इसे जतना से निकाल दो परन्तु पानी अधिक गर्म होने से विछून्दरी मर गई। नगजी स्वामी ने कहा—पंचेन्द्रिय की घात हुई है, इसका प्रायश्चित लो। उस पर भीपणजी वोले—मैंने उसे मारा नहीं है, उसकी आयु पूरी होने से मर गई है। ऐसे विकल जाति जीव जो १८ पाप सेवन करने वाले हैं, उन्हें वचाने में क्या लाभ है, इस प्रकार खोटी परूपणा की। चौमासा उतरने पर जव पू० महाराज के पास आए तव पू० महाराज ने दो वार प्रायश्चित दिया पर उनके मन के भाव नहीं वदले। इससे पू० रुगनाथजी महाराज ने सं० १८१५ चैत्र सुद ६ शुक्रवार को १३ साधुओं से भीपन जी को वगडी में अलग कर दिया। उनमें से दस साधु भीपनजी को छोड़कर पीछे चले आये। छः तो पूज्य महाराज के पास प्रायश्चित लेकर सम्मिलित हो गये और चार श्री रूपचन्द जी स्वामी, श्री जेठमल जी स्वामी आदि ने गुजरात में विहार किया और जूने भण्डारों को देखकर एवं शास्त्र-पढ़कर वस्तु तत्त्व का निर्णय किया, और सं०१८३६ की साल में भीपन जी की श्रद्धा छोड़ कर पू० रुघनाथ जी म० की श्रद्धा कायम की। भीषन जी के पास तीन ही साधु रहे थे। वहीं से तेरह पंथ संप्रदाय निकली।[1]

द्वितीय कालकाचार्य द्वारा पंचमी से चौथ की संवत्सरी और राजा विक्रम द्वारा वर्ण-वर्णी कैसे हुई इसका ऐतिहासिक परिचय दिया है। फिर वीर भद्र से लेकर आचार्य रूपचन्द्र जी और ७३ वें पट्टधर खेमकरणजी तक का इतिहास प्रस्तुत करते हुए मध्य-वर्ती घटनाओं का उल्लेख किया है। लोंकाशाह के क्रियाउद्धार का परिचय देते लिखा है—लूंका अहमदावाद के दपतरी थे। सरकारी काम से मन हट जाने से नाणावटी का काम करने लगे। एक दिन किसी मुसलमान ने मुंहम्मदी के पैसे वंटाये और उन पैसों से चिड़ी मारने को ली। इससे शाह को नाणावटी के धन्धे से भी विरक्ति हो गई।

एकदा रत्नसूरि घूमते हुए अहमदाबाद आये तथा किसी वड़े उपाश्रय में पुराने शास्त्र भण्डार को देखा और श्रावकों को बुलाकर भंडार खुलवाया तो मालूम हुआ कि उदई ने पन्ने खा रखे हैं। उस समय शाह लखमसिह आदि सेठियों ने भंडार

१—पट्टावली प्रवन्ध संग्रह, पृ० २३८-२३६

को खराब होते देख दिलगिरी से कहा—शास्त्रों का उद्धार होना चाहिये। पुराने पन्नों को नये रूप से लिखाकर सुरक्षित किये जांय, इससे जैन धर्म कायम रहेगा। उस समय अहमदाबाद में सेठिया रतनचन्द भाई थे। उन्होंने कहा कि लूंकाशाह जैन धर्म के जानकार हैं तो उनके पास सूत्र लिखाए जायं। तब दूसरे लोगों ने कहा कि लूंका सेठ बड़ा धन वाला है, वे पुस्तक नहीं लिखेंगे।

इस पर सेठ अमीपाल, लखमसी भाई तथा रतन भाई आदि समस्त श्रावकों ने विचार कर लूंकाशाह को बुलाया और शास्त्र लिखने के लिये आग्रह पूर्वक निवेदन किया। लोंकाशाह ने भी संघ का आग्रह और धर्म का काम समझकर लिखना स्वीकार किया। जब सब शास्त्रों का लिखना पूर्ण हो गया, तब लोंकाशाह अपने घर पर सूत्र सिद्धान्त का वाचन करने लगे। सेठ लिखमसी और रतनसिंहजी आदि अनेक भव्य जीव सुनने को आते। आगे जाकर सिरोही के सेठ श्री नागजी, मोती चन्द जी आदि एवं अरठवाड़ा के संघ जो यात्रा के लिये जा रहे थे, उनके आने और सिद्धान्त-श्रवण का भी उल्लेख है। सं. १५३१ में सेठ सरवाजी, दयालजी, भाणजी, नून जी, जगमालजी आदि ४५ को वैराग्य उत्पन्न हुआ और दीक्षा लेने की भावना प्रगट की। उस समय लोंकाशाह गृहस्थ थे। उन्होंने कहा—दीक्षा तो मुनि देते हैं। फिर पंचम काल के अन्त समय तक शासन चलने का विचार कर लोंका शाह ने लखम सी आदि धर्म प्रेमी सेठों को बुलाया और कहा कि भरत क्षेत्र में कहीं भी सिद्धान्त के अनुसार शुद्ध संयमी मुनिराज होने चाहिये। उनको किसी तरह बुलाया जाय तो बड़ा उपकार का कारण है। श्रावकों ने भी देश-देशान्तर में पता चलाया तो मालूम हुआ कि हैदराबाद जिले में ज्ञानऋषिजी २१ ठाणों से विराजमान हैं। उनकी सेवा में प्रार्थना की गई और मुनिराज भी परीषहों को सहते हुए अहमदाबाद पधारे।

सरवाजी, दयालजी, भाणजी, नूनजी आदि ४५ भव्य जीवों ने उनकी सेवा में सं० १५३१ वैसाख शुक्ला १३ को मुनि-धर्म ग्रहण किया। ज्ञान ऋषि ६१ वें पट्टधर कहे गये। १५३२ की साल में नानजी और जगमाल जी ने भी उनकी सेवा में दीक्षा ग्रहण की। सं० १५३८ के वर्ष मीगसर सुद ५ को लूंका जी ने दीक्षा लेकर ज्ञान ऋषिजी का शिष्यपन स्वीकार किया। उनको सुमतिसेन के शिष्य के रूप में घोषित किया।

लोंकाशाह की दीक्षा के लिए सूरत के कल्याणजी भंसाली के भन्डार में संस्कृत-पट्टावली बताई जाती है। फिर यति ज्ञानसागर जी द्वारा लिखित नाटक में भी लोंकाशाह के दीक्षा का वर्णन बताया गया है।

लोंकागच्छ के अभ्युदय और शिथिलाचार के प्रति लोगों का तिरस्कार देख कर १५३२ में आनन्दविमल सूरि ने क्रिया उद्धार किया (कहीं २ इनके क्रिया उद्धार का काल १५८२ माना गया है) लोंकागच्छ के आठ पाट शुद्धाचारी रहे. नवमें पाट पर फिर शिथिलाचार का प्रसार होने लगा । इसके बाद पोतिया बंध की उत्पत्ति बताई गई है । सं० १६७५ की साल धराजजी स्वामी के चेले जसाजी से पोतिया बंध की शुरूआत बताई जाती है। पंचमकाल में महाव्रत का पालन नहीं होता। श्रावक धर्म का ही पालन संभव है । इस प्रकार की मान्यता रखकर जसाजी ने श्रावक के वेश में खुली डण्डी रखकर गोचरी करनी चालू की । सं १९२५ तक यह परम्परा चलती रही ।

इसके पश्चात् बोहरा वीरजी के दोहित्र लवजी की वैराग्योत्पत्ति और बजरंग जी के पास दीक्षा-ग्रहण की बात लिखी गई है। सं० १७१२ में लवजी का होना लिखा गया है। लवजी मुनि के पड़े हुए मकान में ठहरने से लोग उन्हें ढूंढिया कहने लगे । सं० १७१४ के वर्ष पोष वदी ३ को ढूंढिया कहलाये ।

लवजी ऋषि के शिष्य सोमजी स्वामी हुए । उनके शिष्य हरिदासजी, प्रेमजी, कानजी, गिरधरजी, अमीपालजी, श्रीपालजी, हरिदासजी, जीवाजी, सहेर करणीमलजी, केसुजी, हरिदासजी, समरथजी, गोदाजी, मोहनजी आदि हुए। यह कानजी ऋषि की परम्परा है ।

फिर क्षेमकरण आचार्य के पाट धर्मसिंहजी ७३ वें बतलाये गये हैं। इनके परिचय में लिखा गया है कि १३ वर्ष गृहस्थपन में रहकर ५५ वर्ष की सामान्य दीक्षा पालन की और ४ वर्ष आचार्य पद पर रहे। कुल ७२ वर्ष का आयु पालकर सं० १७०२ के साल में देवलोक हुए।

धर्मसिंहजी के बाद ७४ वें नगराजजी स्वामी हुए। ७५ वें जीवराजजी स्वामी १२ वर्ष संसार में रहकर २५ वर्ष[1] सामान्य दीक्षा पाली, फिर १३ वर्ष आचार्य रहे। कुल ६३ वर्ष संयम पालकर सं० १७२१ के वर्ष इनका स्वर्गवास लिखा गया है।

सं० १७१५ की साल में गुजरात के गोल गांव में यति लोगों ने पीले वस्त्र धारण किये, तब से पीताम्बर सम्वेगी कहलाये ।

आ० जीवनराजजी के पद पर ७६ वें धर्मदासजी स्वामी बतलाये जाते हैं। पट्टावली लेखक के अनुसार धर्मदासजी ने १५ वर्ष संसार में रहकर फिर ५ वर्ष

१—५० वर्ष के स्थान पर भूल से २५ वर्ष लिखे गये प्रतीत होते हैं।

व्रतधारी रूप से विताये और १.५ दिन की सामान्य प्रव्रज्या पालकर ५२ वर्ष आचार्य पद का भोग किया। ७२ वर्ष का कुल आयु पूर्ण कर सं० १७७३ के समय धारा नगरी में इनका स्वर्गवास बतलाया जाता है।

श्री धर्मदासजी म० का परिचय देते हुए लेखक ने प्रथम २१ साथियों के साथ लवजी महाराज के पास आकर धर्म चर्चा करने का उल्लेख किया है। लवजी म० के साथ ७ वोल का अन्तर पड़ा, इसलिये धर्मदासजी ने मुनि धर्मसिंहजी के पास आकर चर्चा की और २१ वोल का फर्क होने से उनके पास भी दीक्षित नही हुए और जीवराजजी स्वामी से प्रश्नोत्तर किये। जीवराजजी महाराज के द्वारा समाधानकारक उत्तर पाकर धर्मदासजी को संतोप हुआ और धन्नाजी आदि २१ साथियों के साथ स्वयं अहमदावाद की वादशाही वाड़ी में सं० १७२१ काति सुद ५ को दीक्षित हुए ।

धर्मदासजी के स्वयं दीक्षा लेने की प्रसिद्धी लेखक के अनुसार इसलिये हुई कि १५ दिनों के वाद ही जीवराजजी स्वामी का स्वर्गवास हुआ। अतः लोग धर्मदासजी को स्वयं दीक्षित कहने लगे ।

इसके वाद धर्मदासजी के ९९ शिष्यों के नाम देकर समुदाय स्थापन करने वाले २१ प्रमुख शिष्यों के नाम दिये गये हैं।

धन्नाजी को साँचोर के मालवाड़ा कामदार मुथा वाघाजी के पुत्र वतलाया है। सं० १७१३ में ये प्रेमचन्दजी के पास पोतियावंध, की श्रद्धा से ८ वर्ष करीव रहे और १७२१ में दीक्षा ग्रहण की। लम्बे समय तक एकान्तर तप करते हुए कितने ही वर्ष मेड़ता स्थिरवास विराजमान रहे और संवत् १७८४ के आश्विन शुक्ला दशमी को समाधि मरण प्राप्त किया। इनकी पूर्ण आयु ८३ वर्ष की थी।

पूज्य धन्नाजी म० के वाद ७८ वे पाट पर भूधरजी म० विराजमान हुए। भूधरजी म० ५० वर्ष घर में रहे। ७ वर्ष सामान्य प्रवज्या पाल कर २० वर्ष आचार्य पद पर सुशोभित रहे। सं० १८०४ में मेड़ता चातुर्मास के समय देवलोक पधारे। इनके ९ शिष्य वतलाए गये हैं, फिर भूधरजी म० के पट्टधर ७९ वें श्री रघुनाथजी म० का परिचय देते हुए उनको परम्परा का उल्लेख किया है। सं० १८४० में पूज्य रघुनाथजी से श्री जयमल्लजी म० पृथक् हुए पर जब तक पू० रघुनाथजी म० विराजे रहे तव तक श्री जयमल्लजी म० ने पूज्य पदवी की चादर नहीं धारण की। पू० रघुनाथजी सं० १८४६ माघ शुक्ला ११ को मेड़ता में देवलोक हुए।

तत्पश्चात सं० १८५४ में श्री गुमानमलजी म० अलग हुए। सं० १८७१ में श्री चौथमलजी म० अलग हुए। सं० १८८४ में श्री महाचंदजी म० अलग हुए। सं० १८८५ में श्री माणकचंदजी म० अलग हुए (पृ० २६८) श्री रघुनाथजी म० के पट्टधर पूज्य जीवणचंद्रजी म० हुए-इनके १३ शिष्य थे, उनमें से चौथमलजी स्वामी का अलग संघाडा चालू हुआ। पूज्य जीवणचन्द्रजी म० के बाद पूज्य त्रिलोकचन्द्रजी म० और तिलोकचन्द्रजी म० के पाट पूज्य पन्नालालजी और पूज्य पन्नालालजी म० के पाट दौलतरामजी म० और दौलतरामजी म० के पाट पूज्य सौभाग्यमलजी म० बतलाये गये हैं। सबका संक्षिप्त परिचय देते हुए लेखक मुनि अमरचन्दजी ने अपनी गुरु परम्परा काव्य में प्रस्तुत की है। इसके बाद पूज्य रघुनाथजी म० की परम्परा में आज तक दीक्षित सन्तों की नामावली प्रस्तुत की गई है।

उपसंहार में वर्तमान सम्प्रदायों का उल्लेख करते हुए बतलाया है कि (१) पू० रघुनाथजी म० की सम्प्रदाय (२) पूज्य जयमलजी म० की सम्प्रदाय (३) पूज्य रतनचंद्रजी म०-की सम्प्रदाय (४) पूज्य चौथमलजी म० की सम्प्रदाय और (५) पूज्य माहाचन्द्रजी म० की सम्प्रदाय धन्नाजी म० से सम्बन्धित हैं। पूज्य हरिदासजी म० के साधु पंजाब में विचरते हैं जो पूज्य अमरसिंहजी म० का संघाडा नाम से प्रसिद्ध हैं। और पूज्य जीवराजजी म० के टोले में पूज्य अमरसिंहजी, पूज्य नानकरामजी, पूज्य स्वामीदासजी म० की सम्प्रदाय मारवाड़ में विद्यमान है।

(८) आठवीं—'मेवाड़ पट्टावली' में भगवान महावीर के निर्वाण बाद भस्मग्रह के फल की पृच्छा करते हुए चतुर्विधसंघ के उदय की पृच्छा की गई है। सुधर्मास्वामी आदि पट्टधर आचार्य और मध्यवर्ती घटनाओं का वर्णन करते हुए लोंकाशाह द्वारा दयाधर्म के प्रचार का वर्णन किया गया है, फिर लवजी ऋषि के संक्षिप्त क्रिया उद्धार का वर्णन कर धर्मदासजी म० के दीक्षा एवं शिष्य-वर्ग का परिचय दिया है। पूज्य रोडीदासजी म० के अभिग्रह पूर्वक तपोमय जीवन का वर्णन करते हुए स्वर्गीय पूज्य मोतीलालजी म० तक का उल्लेख किया है। तपोधनी बालकृष्णजी म० के चमत्कारपूर्ण जीवन की घटना के साथ तपस्वी गुलाबसिंहजी म० का भी परिचय दिया गया है। प्रमुखता से मेवाड़ परम्परा के सन्तों का परिचय होने से इसको मेवाड़ पट्टावली कहा गया है।

(९) नवमी दरियापुरी सम्प्रदाय की पट्टावली में सुधर्मास्वामी के बाद २७ वें पट्टधर देवर्धिगणी से आर्य ऋषि आदि आचार्यों का परिचय देते हुए ४६ वें पट्टधर लोंकाशाह को आचार्य माना है। ६३ वें क्रिया-उद्धारक धर्मसिंहजी म० से इस परम्परा का आरम्भ माना गया है।

इस परम्परा में पूज्य सोमजी आदि २५-२६ पट्टधर हो चुके हैं। वर्तमान में पू० चुन्नीलालजी म० विद्यमान हैं।

सामायिक में दो करण तीन योग से पापों का त्याग किया जाता है। इसे छः कोटि पच्चक्खाण कहते हैं। दरियापुरी परम्परा के अनुसार श्रावक के ८ कोटि पच्चक्खाण माना गया है। मनसे सावद्य-प्रवृत्ति को करने व कराने का त्याग कर केवल अनुमोदन ही खुला रखा जाता है। इसको ८ कोटि पच्चक्खाण कहते हैं। मूल मान्यताओं में समानता होने पर भी कुछ बोलों के अन्तर से दरियापुरी-सम्प्रदाय अलग मानी गई है।

(१०) दसमी कोटा परपपरा की पट्टावली में प्रारम्भिक पीठिका के रूप से मध्यवर्ती घटनाएं, दुष्काल की परिस्थिति से बढ़ता हुआ शिथिलाचार और उसके निवारण हेतु लोंकाशाह द्वारा किये गये प्रयत्न का वर्णन अन्य पट्टावलियों के समान ही है।

विशेष में-लवजी ऋषि के पास अमीपालजी आदि जो गच्छ त्याग कर क्रिया उद्धार में सम्मिलित हुए, उन महापुरुषों का निर्देश किया गया है। परम्परा के आद्य पुरुष स्वरूप श्री हरजी, श्री गोघोजी, श्री परसरामजी, श्री लोकमण.जी, श्री माहारामजी, श्री दौलतरामजी, श्री लालचन्दजी, श्री गणेशरामजी, श्री गोविंदरामजी, तपसी हुक्मीचन्दजी आदि का उल्लेख किया गया है। यह संक्षिप्त परिचय हुण्डी रूप से लिखा है। फिर बाईस सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक सन्तों के नाम पूर्वक बाईस-टोला की गणना की गई है। लेखक श्यामपुरा के तनसुखजी पटवारी ने पूज्य गजानन्दजी म० के पत्र के आधार पर स० १९२३ में प्रतिलिपि की है। उसका उतारा सं० १९५४ में उनके वंशज हजारीलालजी द्वारा किया गया है।

पूरक पत्र में पू० दौलतरामजी म० से क्रमबद्ध परिचय दिया गया है। दौलत रामजी म० के शिष्य लालचंदजी और उनके शिष्य तपस्वी हुक्मीचन्दजी म० बतलाये गये हैं। उनको शिष्य करने का त्याग होने से पू० गोविन्दरामजी के शिष्य श्री दयालजी म० के पास रतलाम में शाह शिवलालजी ने दीक्षा ली। ये पू० हुक्मीचन्दजी म० के बाद उनके पट्टधर हुए। सं० १९०७ में शिवलालजी म० के ५ शिष्य हुए और चतुर्विध संघ की साक्षी से उनको आचार्य पद प्रदान किया गया। सं० १९१७ में तपस्वी हुक्मीचन्दजी म० जावद में स्वर्गधाम पधारे।

सं० १९२५ में उदयचन्दजी म० को जावद में पूज्य पदवी दी गई। सं० १९३२ में पूज्य शिवलालजी म० देवलोक पधारे। यह कोटा परम्परा की एक शाखा है जो पूज्य हुक्मीचन्दजी म० के नाम से कही जाती है।

पूज्य दौलतरामजी म० के शिष्य गोविंदराम जी से श्री फतहचन्दजी म०, श्री ज्ञानचन्दजी म०, श्री छगनलालजी म०, श्री बख्तावरमलजी म०, श्री कजोड़ीमलजी म०, श्री शंकरलालजी म०, श्री प्रेमराजजी म०, श्री खादीवाले गणेशलालजी म० हुए। इनके सन्त महाराष्ट्र में विचरते हैं।

पूज्य अनोपचन्दजी म० के परिवार में भी श्री बलदेवरामजी म०, श्री हरकचन्दजी म० आदि हुए। अभी रामकुमारजी म० के शिष्य श्री रामनिवासजी कोटा परम्परा के सन्तों में से विराजमान हैं। परसरामजी म० से चलने वाली एक शाखा जिसमें मुनि गोडीदासजी म० हुए, उनके शिष्य मोहन मुनि वर्तमान में मौजूद हैं।

संशोधन और प्रतिलिपि-विधान में सावधानी रखते हुए भी लिपि-दोष, मतिदोष और भाषा-भेद से स्खलना संभव है।

प्रस्तुत संग्रह के संशोधन में अजमेर के मुनि हगामीलालजी म० का संग्रह, बड़ौदा के लोंकागच्छीय यति हेमचन्द्रजी का संग्रह, आचार्य विनयचंद्र ज्ञान भंडार, जयपुर और जैन रत्न पुस्तकालय, जोधपुर के अतिरिक्त अभय जैन ग्रंथालय, बीकानेर की लोंकागच्छ की बड़ी पट्टावली तथा तपागच्छ पट्टावली व दिव्य ज्योति आदि ग्रंथ एवं प्रतियों का भी उपयोग किया गया है।

पं० मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्रजी का भी विनयचन्द्र कृत पद्य पट्टावली के अनुवाद और अन्य संशोधन-कार्य में यथासमय सहयोग मिलता रहा है। विभिन्न संग्रहालयों के अधिकारियों एवं ग्रंथकारों का सहयोग भुलाया नहीं जा सकता।

आशा है, इतिहास प्रेमी आगे भी इतिहास के छिपे तथ्यों को प्रस्तुत करने में सहयोग करते रहेंगे।

—आचार्य श्री हस्तीमलजी म०

प्रस्तावना

हमारा सुनहला अतीत कितना उज्ज्वल है। उस गंभीर रहस्य को जानने की जिज्ञासा मानव-मन में सदा ही अठखेलियां करती रही हैं। उसी जिज्ञासा से उत्प्रेरित होकर उसने उसे द्योतित करने के लिए समय-समय पर प्रयास किया है। उसी लड़ी की कड़ी में प्रस्तुत ग्रंथ भी है। इस ग्रंथ में विभिन्न भण्डारों की तह में दबी हुई, इधर-उधर बिखरी हुई, अस्त-व्यस्त पट्टावलियों को समुचित रूप से संकलित व सम्पादित कर प्रबुद्ध पाठकों के समक्ष रखा गया है। ये पट्टावलियाँ अपने युग का प्रतिनिधित्व करती हैं, अतीत की सुमधुर स्मृतियों को वर्तमान में साकार करती हैं, पूर्वजों की गौरव-गाथाओं को प्रकट करती है और यथार्थ का चित्रण कर भावी गति-प्रगति के हिमगिरियों के गगनचुम्बी शिखरावलियों को छूने की प्रबल प्ररेणा देती हैं।

जैन साहित्य में पट्टावली-लेखन का युग चतुर्दश पूर्वधर स्थविर आर्य भद्रबाहु स्वामी[1] से प्रारंभ होता है। उन्होंने दशाश्रुत स्कन्ध के आठवें अध्याय—कल्प सूत्र में स्थविरावली का अंकन कर[2] गौरवमयी परम्परा का श्री गणेश किया। उसके

१—(क) वंदामि भद्दबाहुं
पाईणं चरिमसगलसुयनाणिं
सुत्तस्स कारगमिसिं
दसासु कप्पे य ववहारे ॥ १ ॥

—दशाश्रुत स्कंध निर्युक्ति, गा० १

(ख) पंचकल्प महाभाष्य गाथा—१ से ११ तक।

(ग) तेण भगवता आधारपकप्प-दस्त-कप्प-ववहाराय नवमपुव्वनी संदभूता निज्जूढा

—पंचकल्प चूर्णी पत्र १ लिखित

२—लेखक ने अहमदाबाद के लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर में दशाश्रुत स्कंध की प्राचीन एक हस्तलिखित प्रति देखी है जिसमें आठवें

पश्चात् देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमणने अनुयोगधरों की पट्टावली (स्थविरावली) अंकित की[1]। स्पष्ट है आगम साहित्य में इन्हीं आगमों में स्थविरावलियाँ आई हैं। कल्प सूत्र में स्थविरावली पट्टानुक्रम से है तो नन्दी सूत्र में अनुयोगधरों की दृष्टि से है। पट्टानुक्रम (गुरु-शिष्य क्रम) से देवर्द्धिगणी का क्रम चौतीसवाँ और युग प्रधान (अनुयोगधर) के रूप में सत्ताइसवां है।[2]

यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कल्पसूत्र की स्थविरावली भी एक समय में और एक साथ नहीं लिखी गई है अपितु उसका संकलन भी आगम-वाचना की तरह तीन वार हुआ है। प्रथम आर्य यशोभद्र तक स्थविरों की एक परम्परा निरूपित है जो पाटलीपुत्र की प्रथम वाचना के पूर्व की है। इस वाचना में पूर्ववर्ती स्थविरों की नामावली सूत्र के साथ संकलित की गई है। उसके पश्चात् उसमें दो धाराएं प्रकट हुई हैं। एक संक्षिप्त और दूसरी विस्तृत, जिनकी क्रमशः परिसमाप्ति आर्य तापस और आर्य फग्गुमित्र (फल्गु मित्र) तक होती है, वे द्वितीय वाचना के समय संलग्न की गई हैं और उसके पश्चात की स्थविरावली देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण ने अन्तिम वाचना में गुम्फित की है। संक्षिप्त स्थविरावली में मुख्यतः प्रमुख स्थविरों का निर्देश है तो वितृत स्थविरावली में मुख्य स्थविरों के अतिरिक्त उनके गुरु भ्राता और उनसे विस्तृत गण-कुल प्रभृति शाखाओं का भी उल्लेख है।[3] जहां संक्षिप्त स्थविरावली में आर्यवज्र के चार शिष्य निरूपित किये गये हैं।[4] वहां विस्तृत स्थविरावली में तीन शिष्य बताये हैं। उनके नामों में

अध्ययन में सम्पूर्ण कल्प सूत्र है। इस प्रति का उल्लेख श्री पुण्यविजयजी ने कल्पसूत्र की भूमिका में किया है।

१—जे अन्ते भगवन्ते,
कालिअ सुअ आणु ओगिए धीरे
ते पणमिऊण सिरसा,
नाणस्स परूवणं वोच्छं

—नन्दी स्थविरावली, गा० ४३

२—देखिए-पट्टावली पराग संग्रह, कल्याणविजय गणी, पृ० ५३

३—देखिए-लेखक द्वारा सम्पादित कल्पसूत्र-स्थविरावली-वर्णन

४—थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमगोत्तस्स अंतेवासी चत्तारी थेरा-थेरे अज्ज-नाइले थेरे अज्ज पोमिले, थेरे अज्जपोमिले, थेरे अज्ज जयंते, थेरे अज्जतावसे

—कल्प सूत्र, सू० २०६

भी अन्तर है। प्रथम में आर्य नागिल, आर्य पद्मिल, आर्य जयन्त और आर्य तापस हैं तो द्वितीय में आर्य वज्रसेन आर्य पद्म और आर्य रथ [1]।

इस अन्तर का मूल कारण यह है कि श्रमण भगवन् महावीर के पश्चात् अनेक बार भारत भूमि में दुष्काल पड़े, जिससे उत्तर भारत में जो श्रमण संघ विचरण कर रहा था उसे विवश होकर समुद्र तटवर्ती प्रदेश की ओर बढ़ना पड़ा, पर जो वृद्ध थे तथा शारीरिक दृष्टि से चलने में असमर्थ थे वहीं पर विचरते रहे, जिससे श्रमण संघ दो भागों में विभक्त हुआ। प्रथम दुष्काल की परिसमाप्ति पर वे सभी पुनः सम्मिलित हुए किन्तु सम्प्रति मौर्य के समय और आर्य वज्र के समय दुर्भिक्ष के कारण जो श्रमण संघ दक्षिण, मध्य भारत व पश्चिम भारत में आया था वह दीर्घ-काल तक उत्तर भारत में विचरने वाले श्रमण संघ से न मिल सका, जिसके फलस्वरूप उत्तर में विचरण करने वालों का पृथक संघ स्थविर हुआ और दक्षिण तथा पश्चिम प्रांत में विचरण करने वालों का दूसरा स्थविर हुआ। इस कारण स्थविरावली के नामों में पृथकता आई है। दाक्षिणात्य श्रमण संघ १७० वर्ष तक अपनी स्वतन्त्र शासन पद्धति चलाता रहा, उसके पश्चात् विक्रम की द्वितीय शताब्दी के मध्य में पुनः वह उत्तरीय श्रमण संघ में सम्मिलित हो गया।

यह पहले लिखा जा चुका है कि आगमों की तीन वाचनाएं हुईं।

प्रथम वाचना आर्य स्कन्दिल की अध्यक्षता में मथुरा में हुई थी और इस वाचना में उत्तर प्रदेश और मध्य भारत में विचरण करने वाले श्रमण ही एकत्र हुए थे। यह वाचना माथुरी वाचना के रूप में विश्रुत हुई।

दूसरी वाचना आर्य नागार्जुन के नेतृत्व में दाक्षिणात्य प्रदेश में विचरण करने वाले श्रमणों की वल्लभी में हुई थी। पर दोनों वाचना में एक दूसरे से, एक दूसरे नहीं मिले।

तीसरी वाचना में दोनों ही वाचना के प्रतिनिधि उपस्थित हुए। माथुरी वाचना के प्रतिनिधि देवर्द्धिगणी थे और वालभी वाचना के प्रतिनिधि कालकाचार्य थे। जिन पाठों के सम्बन्ध में दोनों शंका रहित थे वे पाठ एक मत से स्वीकार

१—थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोतमसगोत्तस्स इमे तिन्नि थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तंजहा—थेरे अज्जवइरसेणे थेरे अज्ज पउमे, थेरे अज्जरहे—

—कल्प स्थविरावली सू० २२१

कर लिये गये और जिनमें मतभेद था, उन्हें उस रूप में स्वीकार कर लिया गया।

माथुरी वाचना के अनुसार स्थविर-क्रम इस प्रकार है—

१—सुधर्मा	२—जम्बू
३—प्रभव	४—शय्यम्भव
५—यशोभद्र	६—सम्भूतविजय
७—भद्रबाहु	८—स्थूलभद्र
९—महागिरि	१०—सुहस्ती
११—बलिस्सह	१२—स्वाति
१३—श्यामार्य	१४—शाण्डिल्य
१५—समुद्र	१६—मंगू
१७—नन्दिल	१८—नागहस्ती
१९—रेवति नक्षत्र	२०—ब्रह्मद्वीपिकसिंह
२१—स्कन्दिलाचार्य	२२—हिमवन्त
२३—नागार्जुन वाचक	२४—भूतदिन्न
२५—लोहित्य	२६—दुष्यगणी
२७—देवर्द्धिगणी	

वालभी वाचना के अनुसार स्थविर-क्रम इस प्रकार है :—

१—सुधर्मा	२—जम्बू
३—प्रभव	४—शय्यंभव
५—यशोभद्र	६—सम्भूतविजय
७—भद्रबाहु	८—स्थूलभद्र
९—महागिरि	१०—सुहस्ती
११—कालकाचार्य	१२—रेवतिमित्र
१३—आर्य समुद्र	१४—आर्य मंगू
१५—आर्य धर्म	१६—भद्र गुप्त
१७—श्री गुप्त	१८—आर्य वज्र
१९—आर्य रक्षित	२०—पुष्प मित्र
२१—वज्रसेन,	२२—नागहस्ती
२३—रेवतिमित्र	२४—बह्मदीपिकसिंह सूरि
२५—नागार्जुन	२६—भूतदिन्न
२७—कालकाचार्य	

देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण की गुरु-परम्परा

१—सुधर्मा	२—जम्बू
३—प्रभव	४—शय्यंभव
५—यशोभद्र	६—संभूतविजय-भद्रबाहु
७—स्थूल भद्र	८—महागिरि-सुहस्ती
९—सुस्थित सुप्रतिबुद्ध	१०—आर्य इन्द्रदिन्न
११—आर्य दिन्न	१२—आर्य सिंहगिरि
१३—आर्य वज्र	१४—आर्य रथ
१५—आर्य पुष्पगिरि	१६—आर्य फल्गुमित्र
१७—आर्य धनगिरि	१८—आर्य शिवभूति
१९—आर्य भद्र	२०—आर्य नक्षत्र
२१—आर्य रक्ष	२२—आर्य नाग
२३—जेष्ठिल	२४—आर्य विष्णु
२५—आर्य कालक	२६—संपलित तथा आर्यभद्र
२७—आर्य वृद्ध	२८—आर्य संघपालित
२९—आर्य हस्ती	३०—आर्य धर्म
३१—आर्य सिंह	३२—आार्य धर्म
३३—आर्य शांडिल्य	३४—देवर्द्धिगणी

तात्पर्य यह है कि स्थविरावलियों में पृथकता रही है इसलिए प्रबुद्ध पाठक 'पट्टावली प्रबन्ध संग्रह' का पारायण करते समय एक ही विषय में और एक ही व्यक्ति के सम्बन्ध में विभिन्न पट्टावलियों में विभिन्न मत देख कर घबराएँ नहीं किन्तु समन्वय की दृष्टि से, तटस्थ बुद्धि से सत्य-तथ्य को समझने का प्रयास करें।

यह पूर्ण सत्य है कि श्रमण भगवान महावीर से देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण तक एक विशुद्ध परम्परा रही है। उसके पश्चात् चैत्यवासियों का प्रभुत्व जैन परम्परा पर छा जाने से परम्परा का गौरव अक्षुण्ण न रह सका। आचार्य अभयदेव ने उस स्थिति का चित्रण इस प्रकार किया है[1]—

१—देवड्ढि खमासमणजा
परंपरं भावओ वियाणेमि।
सिढ़िलायारे ठविया
दव्वेण परंपरा बहुहा॥

—आगम अट्ठुत्तरी, गा., १४

देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण तक की परम्परा को मैं भाव परम्परा मानता हूँ। इसके पश्चात् शिथिलाचारियों ने अनेक द्रव्य परम्पराओं का प्रवर्तन किया और वे द्रव्य परम्पराएँ द्रौपदी के दुकूल की तरह निरन्तर बढ़ती रहीं। धर्म के मौलिक तत्त्वों के नाम पर विकार, असंगतियां और साम्प्रदायिक कलहमूलक धारणाएँ पनपती रहीं।

सोलहवीं शती वैचारिक क्रान्तिकारियों का स्वर्ण युग है। इस काल में भारत की प्रत्येक परम्परा में अनेक क्रांतिकारी नररत्न पैदा हुए जिन्होंने क्रांति की शंख-ध्वनि से जन-जीवन को नवजागरण का दिव्य संदेश दिया। कबीर, धर्मदास, नानक, संत रविदास, तरणतारण स्वामी और वीर लोंकाशाह ऐसे ही क्रांतिकारी थे। यह स्वाभाविक था कि अप्रत्याशित और आकस्मिक क्रांतिकारी विचारों से स्थितिपालक समाज में हलचल पैदा हुई और परिणाम स्वरूप प्रतिक्रियावादी भावनाएं उभरीं, किन्तु वे उसे समाप्त नहीं कर सकीं पर पूरी शक्ति के साथ पाशविकता से लड़ती रहीं। उसका आदर्श व्यक्ति न होकर गुण था, समष्टि न होकर सम्यग् दृष्टि थी। समीचीन तत्त्वों पर आधृत होने के कारण वह एक सुदृढ और सौन्दर्य सम्पन्न परम्परा निर्मित कर सकी जिस पर शताब्दियों से मानवता गर्व कर रही है।

श्री लोंकाशाह तथा स्थानकवासी समाज के महापुरुष क्रियोद्धारक (१) श्री जीवराजजी महाराज, (२) श्री लवजी ऋषिजी म० (३) श्री धर्मसिंहजी महाराज (४) श्री धर्मदासजी म० और (५) श्री हरजी ऋषिजी म० किन-किन परिस्थितियों में उठे, उभरे, उन्होंने मानव-चेतना के किन निगूढ़ गह्वरों में क्रांति के स्वरों को मुखरित किया ? उनका कहां और कब, कितना और कैसा प्रभाव पड़ा ? क्या-क्या कार्य हुआ ? आदि की संक्षिप्त जानकारी संकलित पट्टावलियों की पंक्तियों में समुपलब्ध होगी। पाठक उन्हीं के शब्दों में रसास्वादन करें।

पट्टावलियों के अब तक अनेक संग्रह विविध स्थलों से प्रकाशित हुए हैं उनमें से कितने ही संग्रह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। किन्तु उन संग्रहों में लोंकागच्छ की और स्थानकवासी परम्परा की विश्वस्त पट्टावलियां, सामान्यतः नहीं दी गई हैं। यदि कहीं पर दी भी गई हैं तो इतने विकृत रूप से दी गई हैं कि उनके असली रूप का पता लगाना ही कठिन है। इतिहासकार को इतिहास लिखते समय तटस्थ दृष्टि रखनी चाहिए, जो इतिहासकार इस नियम का उल्लंघन करता है उसका इतिहास सत्य से परे हो जाता है। अभी कुछ समय पहले ऐसा एक ग्रंथ 'पट्टावली पराग संग्रह' नाम से देखने में आया। इसके सम्पादक मुनि श्री कल्याणविजयजी

अच्छे विद्वान और इतिहासवेत्ता हैं। हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि 'पट्टावली पराग संग्रह' (पट्टावलियों का पराग) में पट्टावली पराग के वदले निम्नस्तरीय आलोचना हैं। स्था० सम्प्रदाय के दो-तीन मुनियों के लिए तो नाम निर्देशपूर्वक आक्षेप किये हैं जो इतिहास-लेखन में अवांछनीय है। इतिहास-लेखक इस प्रकार व्यक्तिगत आक्षेप से वचकर तुलनात्मक समीक्षा तो कर सकता है, ऐसी आलोचना नहीं।

मुझे परम आह्लाद है कि प्रस्तुत ग्रंथ के संकलयिता व सम्पादक ने इतिहासकार के मूल भाव की रक्षा की है। उन्होंने जो पट्टावलियां जहां से जिस रूप में उपलब्ध हुईं, उन्हें उसी रूप में प्रकाशित की हैं, कहीं पर भी किसी सम्प्रदाय विशेष को श्रेष्ठ या कनिष्ठ वताने का प्रयास नहीं किया हैं।

इस प्रकार के पट्टावलियों के संग्रह की चिरकाल से प्रतीक्षा की जा रही थी, वह इस ग्रंथ के द्वारा पूरी हो रही है। यों इसमें भी अभी तक सम्पूर्ण स्थानकवासी समाज की पट्टावलियां नहीं आ पाई हैं। ज्ञात से भी अज्ञात अधिक हैं। मुझे आशा ही नहीं, अपितु दृढ विश्वास है कि जैन इतिहास निर्माण समिति का सतत प्रयास इस दिशा में चालू रहेगा और जहां से भी पट्टावलियां तथा प्रशस्तियां उपलब्ध होंगी, उनका प्रकाशन होता रहेगा।

मैं ग्रन्थ का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं कि उन्होंने मां भारती के भव्य भण्डार में ऐसी अनमोल कृति समर्पित की है। जैन इतिहास निर्माण समिति पण्डित प्रवर श्रद्धेय मुनि श्री हस्तीमलजी म० सा० से दिशा-निर्देश प्राप्त कर ऐसी और भी महत्त्वपूर्ण अन्वेपणा प्रधान कृतियाँ समर्पित करेंगी, ऐसी आशा है।

—श्री देवेन्द्र मुनि, शास्त्री, साहित्यरत्न

भूमिका

जैन धर्म भारत का एक प्राचीनतम धर्म है। जैन परम्परा के अनुसार इस अवसर्पिणीकाल में भगवान ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर हुए जिन्होंने मानव को विद्यायें, कलायें सिखाने के वाद धर्म की स्वयं आराधना करके कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया। वे वीतरागी एवं जिन बने। उनका उपदिष्ट धर्म मार्ग, जैन धर्म का आदि स्रोत है। उसके वाद अन्य २२ तीर्थंकरों ने उसी शाश्वत धर्म का प्रचार किया। अन्तिम २४ वें तीर्थंकर का धर्म-शासन, 'वर्तमान' में चल रहा है। भगवान महावीर के ११ गणधरों में से सुधर्मा स्वामी की परम्परा अभी चल रही है। वैसे उपकेश गच्छ वाले अपनी परम्परा भगवान पार्श्वनाथ से भी जोड़ते हैं, पर पार्श्वनाथ के वहुत से मुनि भगवान महावीर के शासन में समाविष्ट हो चुके थे। पार्श्वनाथ परम्परा का स्वतन्त्र अस्तित्व जैन आगमादि प्राचीन साहित्य से समर्थित नहीं है।

भगवान महावीर के वाद की आचार्य पट्ट-परम्परा नन्दीसूत्र और कल्पसूत्र स्थविरावली से ज्ञात होती है। देवर्द्धिगण क्षमाश्रमण तक की युग प्रधानक आचार्य परम्परा की उसमें नामावली है। इसके वाद की नामावली में मतभेद है।

वज्रस्वामी से पहले भी वहुत से गण, कुल व शाखा आदि समय-समय पर प्रसिद्ध हुईं, उनका उल्लेख कल्पसूत्र की स्थविरावली में प्राप्त होता है, पर उनकी परम्परा अधिक समग तक नहीं चली जवकि वज्रस्वामी के शिष्य वज्रसेन के वाद जो चार कुल प्रसिद्ध हुए उनकी परम्परा में से 'चन्द्र कुल' की परम्परा तो आज भी विद्यमान है। इन कुलों में से समय-समय पर वहुत से गच्छों का प्रादुर्भाव हुआ जिनकी संख्या ८४ मानी जाती है, यद्यपि है इससे भी अधिक। इस संवंध में श्री यतीन्द्र सूरि अभिनन्दन ग्रन्थ, में प्रकाशित मेरा लेख द्रष्टव्य है।

१६ वीं शताब्दी में लोंकाशाह ने जो विचार प्रकट एवं प्रचारित किये उसे लखमसी, भाणा आदि ने विशेष वल दिया व आगे वढ़ाया। लोंकाशाह स्वयं दीक्षित नहीं हुए थे पर भाणा, रूपजी आदि ने दीक्षा ली और अपने गच्छ का नाम लोंकाशाह के नाम से 'लोंका गच्छ' रखा। उसकी परम्परा कई शाखाओं में विभक्त होने पर भी आज विद्यमान है। १८ वीं शताब्दी में लोंकागच्छ की परम्परा में से

ढूंढ़िया साधुमार्गी, बाईसटोला या स्थानकवासी सम्प्रदाय निकला और उसमें से भीखणजी से तेरहपंथी सम्प्रदाय निकला।

लोंकाशाह कहां के निवासी थे ? किस जाति के थे ? इत्यादि बातों के संबंध में काफी मतभेद पाया जाता है। इस संबंध में मेरा लेख 'जिनवाणी' में प्रकाशित हो चुका है और मेरे भ्रातृपुत्र भंवरलाल का एक लेख 'विजय' राजेन्द्र सूरि स्मृति ग्रन्थ' में प्रकाशित हो चुका है। लोंकाशाह के सम्बन्ध में श्री मुनि ज्ञानसुन्दरजी का 'श्रीमान लोंकाशाह' नामक ग्रन्थ भी पठनीय है।

वैसे तो लोंकाशाह के अनुयायी थोड़े ही वर्षों में कई शाखाओं में विभक्त हो गये जिनमें से १३ के नाम हमारे संग्रह के हस्तलिखित पत्र में लिखे मिले हैं। लोंकामत की ४ प्रधान शाखायें मानी जाती हैं जिनमें से ऋषि बीजा के विजय गच्छ, जो पहले बीजा मत के नाम से प्रसिद्ध था, ने तो मूर्तिपूजा को स्वीकार कर विजयगच्छ के नाम से अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बना लिया और यहां तक कि अपनी पट्टावली में भी लोंकाशाह का उल्लेख तक नहीं किया है। पंजाब—उत्तर दिशा में जिस लोंका शाह की परम्परा का प्रचार हुआ उसे उतरावी गच्छ की संज्ञा प्राप्त हुई। उतराध-गच्छ की ऋषि परम्परा के संबंध में 'जैनाचार्य श्री आत्मानन्द शताब्दी स्मारक ग्रन्थ' के हिन्दी विभाग पृष्ठ १९६ और मेरे प्रकाशित 'उतराध गच्छ परम्परा गीत' द्रष्टव्य हैं।

नागोरी लोंकागच्छ का नामकरण 'नागोर' नगर से हुआ और इसकी २ गद्दियों के उपाश्रय बीकानेर में हैं। इस गच्छ की पट्टावली विद्वान् यति श्री रघुनाथजी ने संस्कृत में बनाई है जो हिन्दी अनुवाद के साथ प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रकाशित है। इस 'पट्टावली-प्रबन्ध' की मैंने प्रतिलिपि करवाकर बहुत वर्ष पहले मुनि जिनविजयजी को भेजी थी और उनके सम्पादित 'पट्टावली संग्रह' में छप भी चुकी है पर वह ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ। राजस्थानी भाषा में लिखी हुई नागोरी लोंकागच्छ की एक अन्य पट्टावली की नकल हमारे संग्रह में है। इस गच्छ के आचार्य रूपचन्द, हीरागर, वयरागर आदि के संबंध में कई ऐतिहासिक रास, गीत आदि रचनायें प्राप्त हैं जिनका ऐतिहासिक सार हमने 'जिनवाणी' में प्रकाशित कर दिया है। प्रस्तुत पट्टावली संग्रह में भी नागोरी लोंकागच्छ की कई पट्टावलियां प्रकाशित हुई हैं।

लोंकागच्छ की दूसरी प्रधान शाखा 'गुजराती लोंकागच्छ' के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी परम्परा और साहित्य के संबंध में मुनि कांतिसागरजी का एक विस्तृत लेख 'मुनि श्री हजारीमल स्मृति ग्रन्थ' के पृ० २१४ से २५३ तक में प्रकाशित हुआ है

और लोंकागच्छ की साहित्य सेवा के संबंध में भी एक लेख उक्त ग्रन्थ के पृ० २०३ से २१३ में प्रकाशित है।

गुजराती लोंकागच्छ की गुजरात और राजस्थान में कई गद्दियां थीं। उनकी परम्पराओं की कई पट्टावलियां इस ग्रन्थ में छपी हैं। १७ वी शती के अन्त और १८ वीं शती के प्रारम्भ में लोंकागच्छ की इस परम्परा में से लवजी[1], धर्मदास, धर्मसिंह, आदि ने शिथिलाचार को छोड़कर स्वतन्त्र समुदाय कायम किये जिसे ढूंढ़िया, साधुमार्गी या स्थानकवासी परम्परा के नाम से प्रसिद्धि मिली। स्थानकवासी परम्परा की भी कई पट्टावलियां इस ग्रन्थ में संगृहीत हैं।

लोंकागच्छ और स्थानकवासी परम्परा संबंधी खोज सर्व प्रथम श्री वाडीलाल मोतीलाल शाह ने अब से ६० वर्ष पूर्व प्रारम्भ की। उन्हें जो कुछ जानकारी व सामग्री मिली उसे उन्होंने 'ऐतिहासिक नोंध' के नाम से गुजराती भाषा में लिखकर प्रकाशित किया। उनके द्वारा किया गया वह प्रयत्न अवश्य ही सराहनीय है। इसी कार्य के लिये वे सन् १९०७ के दिसम्बर में पंजाब तक भी पहुँचे। उनके इस ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद की भी २-३ आवृतियां निकल चुकी हैं जिनमें से प्रथमावृत्ति की प्रति बीकानेर के सेठिया लायब्रेरी में और द्वितीयावृति की (संवत् १९८२ में प्रकाशित) प्रति हमारे अभय जैन ग्रन्थालय में है।

स्व० वाडीलाल शाह के बाद लोंकागच्छ और स्थानकवासी पट्टावली के संबंध में उल्लेखनीय प्रयत्न जैन साहित्य महारथी स्व० मोहनलाल दलीचन्द देसाई का है। इनके सन् १९४४ में प्रकाशित 'जैन गुर्जर कवियो' भाग ३ के पृ० २२०५ से २२२२ तक में प्राप्त पट्टावलियों का सारांश दिया गया है। उन्होंने गुजराती लोंका-गच्छ की बड़ोदा गद्दी की पट्टावली देने के बाद कुंवरजी पक्ष की बालापुर की पट्टावली दी है। तदनन्तर धर्मसिंहजी, लवजी, और धर्मदासजी की परम्परा का परिचय देने के बाद गोंडल, लींबड़ी, संघाड़ा, हुकमीचन्दजी सम्प्रदाय के आचार्यों का थोड़ा परिचय देकर बरवाला, चूड़ा, धागंद्रा और बोराद संघाड़े का संक्षिप्त विवरण दिया है।

सन् १९४२ में राजकोट से प्रकाशित 'लवजी स्वामी स्मारक स्वर्ण ग्रन्थ' में स्थानकवासी सम्प्रदाय की गुर्वावली दी गई है। उसके अनुसार धर्मदासजी के ९९ शिष्यों में से मूलचन्दजी गुजरात में रहे। गुजरात, सौराष्ट्र कच्छ के ७ संघाड़ों का

---

१. इनके और इनकी परम्परा के संबंध में मुनि मोती ऋषिजी लिखित 'ऋषि सम्प्रदाय का इतिहास' नामक ग्रन्थ द्रष्टव्य है।

इसमें उल्लेख किया गया है। वे हैं- (१) लींवड़ी, (२) गोंडल (३) वरवाला (४) आठकोटिकच्छी, (५) चूड़ा, (६) धांगंध्रा और (७) सायला। इनमें से धांगध्रा और चूड़ा के समुदाय को निरवंश गया, लिखा है। धर्मसिंहजी से आठ कोटि दरियापुरी सम्प्र-प्रसिद्ध हुआ। धर्मदासजी की दो सम्प्रदायों की नामावली इस ग्रन्थ में दी है। धर्मदासजी के शिष्य मूलचन्दजी के शिष्य पंचाणजी के शिष्य रत्नसी गोंडल गये और उनके शिष्य डूंगरसी से गोंडल सम्प्रदाय प्रसिद्ध हुआ। मूलचन्दजी के शिष्य गुलावचन्दजी के शिष्य वालाजी। और उनके शिष्य हीराजी लीवड़ी आये। इनकी परम्परा लींवड़ी सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है। लींवड़ी से कानजी वरवाला गये, वसरामजी धांगंध्रा गये, जसाजी वोराद, और नागजी सायला गये। उनसे इन स्थानों के नाम से अलग-अलग सम्प्रदाय प्रसिद्ध हुए। कृष्णजी स्वामी कच्छ में गये वहां आठ कोटि सम्प्रदाय स्थापित हुआ जिसमें से मोटी पक्ष और नानी पक्ष, दो शाखायें निकलीं।

श्रीवाडीलाल शाह ने अपने 'ऐतिहासिक नोंध' ग्रन्थ में लिखा है कि धर्मदासजी के ९९ शिष्यों में ९८ मारवाड़, मेवाड़, पंजाव की ओर विहार कर गये और वाईसटोला के नाम से विख्यात हुये। वाईस टोलों की नामावली कई प्रकार की पाई जाती है। इसके संवंध में 'जिनवाणी' में मेरा लेख अभी प्रकाशित हुआ है।

स्थानकवासी मुनि मणिलालजी के द्वारा लिखित पट्टावली ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है और भी इस तरह के लोंकागच्छ और स्थानकवासी सम्प्रदाय की पट्टावलियों संवंधी ग्रन्थ, लेख प्रकाशित हुये होंगे पर वे अभी मेरे सामने नहीं हैं। अब तक विभिन्न गच्छों की पट्टावलियां प्रकाशित हुई हैं उनकी कुछ जानकारी नीचे दी जा रही है।

श्वेताम्बर, खरतरगच्छ, तपागच्छ, आदि की कतिपय पट्टावलियां पहले कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने अपने ग्रन्थों में दी थीं। फिर मुनिसुन्दर सूरि विरचित 'गुर्वावली' यशोविजय जैन ग्रन्थ माला से प्रकाशित हुई। तपागच्छ की इस गुर्वावली की द्वितीयावृति संवत् १९६७ में निकली वह हमारे संग्रह में है। संवत् १९८८ में मुनि जिनविजयजी द्वारा सम्पादित 'खरतर गच्छ पट्टावली संग्रह' को वावू पूरणचन्दजी नाहर कलकत्ता ने प्रकाशित की। इसमें खरतरगच्छ की ५-६ पट्टावलियां संस्कृत भाषा में लिखित प्रकाशित हुई जिनमे से एक खरतरगच्छ की आचार्य शाखा की और बाकी भट्टारक शाखा की हैं। खतरगच्छ की सवसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण 'युग प्रधानाचार्य गुर्वावली' की एक मात्र प्रति हमें वीकानेर के क्षमाकल्याण जैन ज्ञान भंडार में प्राप्त हुई जो मुनि जिनविजयजी द्वारा सम्पादित सिंघी जैन ग्रन्थमाला से सं० २०१३ में प्रकाशित हुई। तपागच्छ संवंधी पट्टावलियों में पन्यास कल्याणविजयजी द्वारा सम्पादित पट्टावली गुजराती विवेचन के साथ श्री विजयनीतिसूरीश्वरजी जैन लायब्रेरी, अहमदावाद से प्रकाशित हुई। 'तपागच्छ श्रमण वंश वृक्ष,' 'वीर धर्म पट्टावली' आदि

ग्रन्थ प्रकाशित हुये हैं। नागपुरीय तपागच्छ जो पायचन्द के नाम से प्रसिद्ध है, उसकी एक पट्टावली और 'पार्श्वचन्द्र गच्छ टूंक रूप रेखा' ये दोनों ग्रन्थ अहमदाबाद से प्रकाशित हुये। उपकेश गच्छ की एक पद्य बद्ध पट्टावली मुनि ज्ञान सुन्दर रचित 'प्राचीन जैन इतिहास' भाग २१ में 'पार्श्व पट्टावली' के नाम से फ़लौदी से प्रकाशित हुई है। अंचलगच्छ की एक वृहद् पट्टावली संवत् १९८५ में 'म्होटी पट्टावली' के नाम से अंजार से प्रकाशित हुई है।

विविध गच्छों की पट्टावलियों के संग्रह रूप में ४ ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं जिनमें से मुनि दर्शनविजयजी द्वारा सम्पादित 'पट्टावली समुच्चय' भाग १-२ श्री चारित्र स्मारक ग्रन्थ माला, वीरमगांव, अहमदाबाद से प्रकाशित हुये हैं। इसके प्रथम भाग में कल्पसूत्र, नन्दीसूत्र की स्थविरावली और तपागच्छ की कई पट्टावलियों के साथ 'जैन साहित्य संशोधक' में मुनि जिनविजयजी की प्रकाशित की हुई उपकेशगच्छीय पट्टावली भी दी गई है। परिशिष्ट में पल्लीवाल गच्छ की ऐतिहासिक सामग्री भी दी है। इस ग्रन्थ के द्वितीय भाग में प्रधान रूप से पद्यबद्ध भाषा पट्टावलियों का संग्रह किया गया हैं जिसमें तपागच्छ के अतिरिक्त कच्छूलीगच्छ, पूर्णिमागच्छ, आगम गच्छ, वृहद गच्छ एवं कंवला गच्छ की पद्यबद्ध पट्टावलियों देने के साथ-साथ परिशिष्ट में दी गई पुरवणी नामक विस्तृत टिप्पणियाँ महत्त्व की हैं। इनमें से वृहद-गच्छ गुर्वावली मैंने 'जैन सत्य प्रकाश' में पहले प्रकाशित की थी।

दूसरा प्रयत्न स्व० मोहनलाल देसाई का है। उन्होंने 'जैन गुर्जर कविओ' भाग २-३ के परिशिष्ट में खरतर गच्छ, तपागच्छ, अंचलगच्छ, उपकेशगच्छ, लोंका गच्छ, आगमगच्छ, पूर्णिमागच्छ, पल्लीवाल गच्छ की प्राप्त पट्टावलियों का गुजराती में सारांश दे दिया है। तपागच्छ और खरतरगच्छ की कई शाखाओं की पट्टावलियां भी दी हैं। इनमें से 'उपकेश गच्छ प्रबन्ध' जो अभी तक मूल रूप में प्रकाशित भी नहीं हुआ है, उसका सारांश देकर श्री देसाई ने उसे सुलभ बना दिया। वैसे आचार्य श्री बुद्धिसागर सूरि ने भी बहुत वर्ष पहले ऐसा एक प्रयत्न किया था और उनका एक गुजराती ग्रंथ प्रकाशित हुआ था पर उस समय अन्य ऐतिहासिक सामग्री प्रकाश में नहीं आ पाई थी। इसलिए देसाई की टिप्पणी आदि का प्रयत्न विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

तीसरा महत्त्वपूर्ण प्रयत्न मुनि जिनविजय जी का है। उन्होंने 'विविध-गच्छीय पट्टावली संग्रह' प्रथम भाग सिंघी जैन ग्रंथ माला से सं० २० १७ में छपवाया। पर खेद है केवल भूमिका आदि के लिए ही अब तक इसका प्रकाशन रुका हुआ है। इसमें 'गणधर सत्तरी' आदि कई अभी तक की अप्रकाशित रचनायें हैं। उपकेशगच्छ, आगम गच्छ, तपागच्छ, नागपुरी तपागच्छ, वृहद् गच्छ, राजगच्छ, पल्लीवाल गच्छ, अंचल

गच्छ, लोंका गच्छ, कडुग्रामति, पूर्णिमागच्छ, और एक छोटी स्थानकवासी पट्टावली भी दी गई है। इनमें से वृहदगच्छ, राजगच्छ, वीरवंश पट्टावली, आदि मैंने मुनिजी को भेजी थी। 'जैन साहित्य संशोधक' में प्रकाशित 'वीरवंशावली' भी इस ग्रंथ में सम्मिलित कर ली गई है। इसमे प्राकृत, संस्कृत, राजस्थानी और गुजराती आदि की पट्टावलियों का महत्त्वपूर्ण संग्रह है।

चौथा प्रयत्न जैन इतिहासविद् मुनि कल्याणविजय जी ने किया। उनके 'श्री पट्टावली पराग संग्रह' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन जालोर से सं. २०२३ में हुआ है। इसमें छोटी-वड़ी ६४ पट्टावलियों का सारांश दिया गया है। मुनि कल्याण विजयजी की टिप्पणियां और विवेचन भी उल्लेखनीय हैं। हिन्दी भाषा में अपने ढंग का यह एक ही ग्रंथ है। इससे पहले 'वीर निर्वाण संवत' और 'जैनकाल गणना' नामक ग्रन्थ द्वारा मुनि कल्याणविजयजी अच्छी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। 'प्रभावक चरित्र' के पर्यालोचन में उन्होंने जैनाचार्यों के इतिहास पर अच्छा प्रकाश डाला है। उनके 'श्री पट्टावली पराग संग्रह' नामक ५१७ पृष्ठों के ग्रन्थ में वृहदगच्छ, तपागच्छ, खरतर गच्छ, पूर्णिमा, साध पूर्णिमा गच्छ, अंचल, आगमिक गच्छ, लघु पौशालिक, वृहद पोशालिक. पल्लीवाल गच्छ, उपकेशगच्छ, पार्श्वचन्द्र गच्छ, लोंकागच्छ, कटुकमत, बाईस सम्प्रदाय, तेरहपंथ की पट्टावलियां हैं।

'पिप्पलकगच्छ की पट्टावली' टिप्पणियां सहित मैंने श्री महावीर जैन विद्यालय के रजत जयन्ती अंक में प्रकाशित की थी। पल्लीवाल गच्छ पट्टावली, इससे पहले 'श्री आत्मानन्द शताब्दी स्मारक ग्रन्थ' में और कई अन्य पट्टावलियां 'जैन सत्य प्रकाश' आदि में प्रकाशित कीं, और कई अप्रकाशित संग्रह करके रखी हुई हैं।

दिगम्बर सम्प्रदाय के कई संघों की पट्टावलियां 'जैन सिद्धांत भास्कर' में बहुत वर्ष पहले छपी थी। एक पट्टावली मैंने भी प्रकाशित की। उल्लेखनीय ग्रन्थ में जीवराज जैन ग्रन्थमाला से प्रकाशित 'भट्टारक सम्प्रदाय' नामक ग्रन्थ डा. जोहरापुरकर का सं० १९६८ में प्रकाशित हुआ जिसमें सेनगण, बलात्कारगण की कई शाखाओं और काष्टा संघ के चार गच्छों की पट्टावलियां प्रकाशित हुई है। प्रस्तावना में भट्टारकों सम्बन्धी बहुत-सी महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है।

प्रस्तुत 'पट्टावली प्रबन्ध संग्रह' नामक ग्रन्थ में लोंकागच्छ की ७ और स्थानकवासी परम्परा की १० इस तरह कुल १७ पट्टावलियां छपी हैं। इनमें से पहली पट्टावली नागोरी लोंकागच्छ की आचार्य परम्परा सम्बन्धी रघुनाथ ऋषि रचित संस्कृत में है। उसके बाद गणि तेजसी कृत 'पद्य पट्टावली' केवल ४ पद्यों

की है। फिर संक्षिप्त पट्टावली, बालापुर पट्टावली, बड़ौदा पट्टावली, मोटा पक्ष की पट्टावली और लोंकागच्छीय पट्टावली है। ये राजस्थानी-गुजराती गद्य में हैं।

तदनन्तर स्थानकवासी परम्परा की प्रथम पट्टावली कवि विनयचन्द कृत पद्य बद्ध है जिसका अर्थ भी रघुनाथ की संस्कृत पट्टावली की तरह साथ में ही दे दिया गया है। उसके बाद की सभी पट्टावलियां राजस्थानी-गुजराती गद्य में हैं। इनमें सबसे बड़ी मरुधर पट्टावली है। यह पट्टावली संवत् १९५७ में लिखी हुई है। इसमें मुनि सौभाग्गमलजी ने वास्तव में बहुत श्रम करके काफी महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है। अब तक लोंकागच्छ और स्थानकवासी पट्टावलियों का कोई ऐसा संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ था, इसलिए इस ग्रन्थ की पट्टावलियों के संग्राहक उपाध्याय श्री हस्तीमलजी का प्रयत्न बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा।

लोंकाशाह, इनकी मान्यताओं एवं परम्परा तथा स्थानकवासी सम्प्रदाय की पट्टावलियों के संग्रह का प्रयत्न मैं भी करीब ३० वर्ष से करता आ रहा हूं। कई छोटी-छोटी पट्टावलियां 'जिनवाणी' नामक पत्रिका में प्रकाशित भी कर चुका हूं। इस ग्रन्थ में प्रकाशित छोटी-बड़ी कई पट्टावलियां मेरे संग्रह में भी हैं और कुछ अभी तक अप्रकाशित भी हैं।

पट्टावलियों के अतिरिक्त लोंकागच्छ व स्थानकवासी परम्परा के अनेक आचार्यों, मुनियों, आर्याओं सम्बन्धी कई रास, एवं गीत भी मैंने प्रयत्नपूर्वक संगृहीत किये हैं, जिनका इन पट्टावलियों की अपेक्षा भी ऐतिहासिक महत्त्व अधिक है, क्योंकि वे सभी रचनायें समकालीन रचित हैं जबकि पट्टावलियां तो श्रुति परम्परा के आधार से पीछे से लिखी गई हैं। इनमें से कइयों में तो केवल नाम ही मिलते हैं और कुछ में आचार्यो का विवरण बहुत ही संक्षेप में मिलता है। ऐतिहासिक रास, गीत, इन पट्टावलियों से बहुत अधिक और नवीन जानकारी देते हैं। इसलिए उनका एक संग्रह सम्पादन करके मैंने ब्यावर प्रकाशनार्थ भेजा है।

—श्री अगरचन्द नाहटा

पट्टावली प्रबन्ध संग्रह

(१)

पट्टावली प्रबन्ध

[प्रस्तुत पट्टावली नागौरी लौंकागच्छीय परम्परा से सम्बन्धित है। इसके रचयिता रघुनाथ ऋषि लद्धराज जी के प्रपौत्र शिष्य थे। इसकी रचना सं० १८९० में पटियाला के पास अवस्थित सुनाम नामक ग्राम में की गई। इसमें भगवान् महावीर के निर्वाण से लेकर सं० १८९० तक की मुख्य घटनाओं और नागौरी लौंकागच्छ की उत्पत्ति से वर्तमान पट्टधर श्री पूज्य लक्ष्मीचन्द्र जी तक का ऐतिहासिक परिचय प्रस्तुत किया गया है। संस्कृत भाषा में निबद्ध यह रचना रचनाकार के प्रौढ़ भाषा ज्ञान की परिचायिका है। ऋषि शिवचन्द ने सं० १९०७ में मकसूदाबाद के बालूचर नामक गांव में इसे लिपिबद्ध किया।]

नमः श्री सर्वज्ञनाय।

मूल—अर्हदनन्ताचार्योपाध्याय मुनीन्द्र रूप शिष्टाय।
इष्टाय पंच परमेष्ठिनेऽस्तु नित्यं नमस्तस्मै ॥१॥

अर्थ—श्री सर्वज्ञ को नमस्कार हो। अरिहन्त, अन्तरहित सिद्ध आचार्य, उपाध्याय और मुनीन्द्र रूप, शिष्ट एवं इष्ट पंच परमेष्ठि को नित्य नमस्कार हो।

मूल—प्रणिपत्य सत्य मनसा, जिनपं वीरं गिरं गुरुंश्चाऽपि ।
पट्टावली-प्रबन्धो, विलिख्यते, निज गणज्ञप्त्यै ॥२॥

अर्थ—सत्य मन से, जिनेन्द्र महावीर को, वाणी को और गुरुओं को प्रणाम करके, अपने गण की जानकारी के लिए पट्टावली-प्रबन्ध को लिखता हूं ।

मूल—इह किलावसर्पिण्यां श्री ऋषभाऽजित संभवाऽभिनन्दन-सुमति-पद्म प्रभ-सुपार्श्व-चन्द्रप्रभ-सुविधि-शीतल-श्रेयांस-वासुपूज्य-विमलान्तधर्म-शान्ति-कुंथु-अर-मल्लिमुनि सुव्रत-नमि, नेमि-पार्श्वेषु, सर्वेषु त्रिलोकी दीपकेषु, परिनिर्वृतेषु नन्दन नृप जीवो दशम देवलोकतश्च्युतो द्विजवर ऋषभदत्त गृहिणी देवानन्दोदरेऽवतीर्णः पुत्रत्वेन ।

अर्थ—निश्चय इस अवसर्पिणी काल में ऋषभ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनन्दन, सुमतिनाथ, पद्मप्रभ सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ, सुविधिनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य विमलनाथ, अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत, नमिनाथ, नेमिनाथ और पार्श्वनाथ इन सर्वजन हितकारी त्रिलोक दीपकों के बुझ जाने पर, नन्दन राजा का जीव दशवें देवलोक से चबकर, द्विज श्रेष्ठ ऋषभदत्त की पत्नी देवानन्दा के उदर में पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ ।

मूल—तदैव देव राजेन शक्रेणावधि-विज्ञात भगवदवतारेण विधिवद् विहित हितकृत्प्रभुस्तवेन विमृष्टमहोकर्मणां विपाको यच्चरमतनुरपि चतुर्विंशतितनस्तीर्थकृन्महावीर नामा द्विजाति कुलेऽवतारीदित्यादि सकलं यस्य चरित्रं परम पवित्रं सुवाचितमेव ।

अर्थ—उसी समय देवराज इन्द्र ने अवधि ज्ञान से भगवान् का अवतार जान कर और विधि पूर्वक हितकारी प्रभु की प्रार्थना करके सोचा कि अहो ! यह कर्म का परिणाम है कि अन्तिम शरीर धारी भी चौबीसवें तीर्थङ्कर श्री महावीर ब्राह्मण कुल में अवतरित हुए हैं । इस तरह जिनका 'परम पवित्र, सम्पूर्ण चरित्र अच्छी तरह पढ़ा जा चुका है ।

मूल—तस्योत्पन्नकेवलस्य भगवतः श्री इन्द्रभूति १ अग्निभूति २ वायुभूति ३ व्यक्त ४ सुधर्म ५ मंडित ६ मौर्य पुत्र ७ अकंपित ८ अचल भ्रात ९ मेतार्य १० प्रभासनामानः ११ एकादश गणधरा जाताः ।

अर्थ—उन भगवान् महावीर के केवल ज्ञान उत्पन्न होने के पश्चात् इन्द्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति, व्यक्त, सुधर्म, मण्डित पुत्र, मौर्य पुत्र, अकंपित, अचल भ्रातृ, मेतार्य और प्रभास नाम के ग्यारह प्रमुख शिष्य गणधर हुए ।

मूल—तेषु प्रथमः श्री इन्द्रभूतिर्गोतम गोत्रीयः गुब्बर ग्राम निवासि द्विजवर वसुभूति सुतः समग्रोत्तमार्थ पृथ्वी पृथ्वी मातृकुक्षि शुक्ति मुक्ता समः, सप्तकरोन्नत तनुः, पद्मगर्भ गौरवर्णः समधीत सकल हृद्यविद्योऽतिम जिन वचनाऽमृत पानानन्तरमेव समुपात्त दीक्षश्चतुर्दश पूर्व रचनाकरण प्रथित वाग्विभवः सकल सकल साधु मंडलाग्रणीः पंचाशदब्दान् गार्हस्थ्य स्थिति भाक्, त्रिंशत् समाश्छद्मस्थावस्थाभृत्, तदनुसमुत्पन्नकेवलज्ञानः प्रति बोधितानेक भव्यजन निकरः श्री वीर निर्वाणाद् द्वादशवर्षैः सिद्धः ।

अर्थ—उनके प्रथम श्री इन्द्रभूति हुए जो गौतम गोत्रीय गुब्बर ग्राम निवासी ब्राह्मण श्रेष्ठ वसुभूति के पुत्र थे । पृथ्वी के समान विशाल हृदया पृथ्वी नामा माता थी । उसकी कोख रूप सीप में मोती के समान सकल उत्तमार्थयुक्त आपने जन्म लिया । आप सात हाथ की ऊँची देह और कमल पराग की तरह गौर वर्ण वाले थे । इन्होंने सभी उत्तम विद्याओं को जानकर अन्तिम तीर्थङ्कर भगवान् के वचनामृत का पान किया और उपदेश से प्रभावित होकर दीक्षा ग्रहण करली । चौदह पूर्व की रचना से जिन्होंने अपना श्रुतिबल प्रगट किया वे समस्त साधु मण्डल के अग्रणी थे । पचास वर्षों तक गृहस्थ स्थिति में रहे, दीक्षित हो कर तीस वर्ष की छद्मस्थपर्याय के बाद केवलज्ञान प्राप्त किया और अनेक भव्य जन समूह को प्रतिबोध देकर वीर निर्वाण से बारहवें वर्ष सिद्ध पद के अधिकारी हुए ।

मूल—एवं पूर्ण द्वानवति समायुः प्रथम पट्टोदयाचल भानुः ॥ १ ॥

अर्थ—इस प्रकार सम्पूर्ण बरानवें वर्ष की आयु पाये तथा प्रथम पट्ट रूप उदयाचल के सूर्य की तरह सुशोभित रहे।

मूल—तत्पट्टे पंचमगणभृत् सुधर्मस्वामी श्री वीरात् सिद्धो विंशतितमेऽब्दे ॥ २ ॥

अर्थ—उनके पाट पर पंचम गणधर श्री सुधर्म स्वामी वीर निर्वाण से बीसवें वर्ष में सिद्ध हुए। आप भगवान् महावीर के प्रथम पट्टधर हुए, गौतम बड़े होने पर भी केवली होने से पट्टधारी नहीं बने। ऊपर प्रथम पट्टधर लिखा है वह शासन की अपेक्षा नहीं, बड़े होने की दृष्टि से समझें।

मूल—तत्पट्टे श्रीजंबूस्वामी श्रीवीरात् चतुःषष्ठि मितेऽब्दे मुक्तः।
श्रीवीरे बुद्धे चतुःषष्ठि समायावत् केवलज्ञानमदीपि ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री जम्बूस्वामी हुए। वीर से चौंसठवें वर्ष में वे मुक्त हुए। वीर निर्वाण के बाद चौंसठ वर्ष तक केवल ज्ञान चमकता रहा।

मूल—अथ श्री जम्बूस्वामिनि मोक्षं गते मनःपर्यवज्ञानं, (१) परमावधिः, (२) पुलाकलब्धिः, (३) आहारकतनुः, (४) उपशमश्रेणिः, (५) क्षपकश्रेणिः, (६) जिनकल्पित्वम्, (७) परिहार विशुद्धिः (८) सूक्ष्म संपरायः (९) यथाख्यात नामकंचेति चारित्र त्रितयम् (१०) एतेऽर्थाः व्युच्छिन्नाः ॥ ३ ॥

अर्थ—श्री जम्बू स्वामी के मोक्ष जाने के बाद, मनःपर्यवज्ञान १ परमावधि २ पुलाकलब्धि ३ आहारकशरीर ४ उपशम श्रेणि ५ क्षपक श्रेणि ६ जिन कल्प ७ परिहार विशुद्धि ८ सूक्ष्म सम्पराय ९ और यथाख्यात नाम के और तीन चारित्र विच्छिन्न हो गये १।

मूल—तत्पट्टे श्री प्रभव प्रभुः श्रीवीरात् ७४ तमेऽब्दे स्वर्गगतः ॥४॥

अर्थ—जम्बू के पाट पर श्री प्रभव स्वामी वीर से ७४ वें वर्ष में स्वर्गगामी हुए।

---

१. टि० दश बोल में १ केवलज्ञान का उल्लेख है। उसके बदले श्रेणी आरोहण में दोनों श्रेणियां एक में आ जाती हैं।

मूल—तत्पट्टे श्री शय्यंभवसूरिः श्री वीरात् ९८ तमेऽब्दे देवत्वं प्राप ॥ ५ ॥

अर्थ—प्रभव स्वामी के पाट पर श्री शय्यंभव सूरि वीर से ९८ वें वर्ष में देवत्व को प्राप्त हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री यशोभद्रसूरिः श्री वीरात् शततमे (१००) वर्षे देवत्वं गतः ॥ ६ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री यशोभद्र सूरि श्री वीर से १०० वर्ष बाद देवलोक वासी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री संभूतिविजय स्वामी श्री वीरात् १४८ तमेऽब्दे स्वर्ययाय ॥ ७ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री संभूतिविजय स्वामी श्री वीर से १४८ वें वर्ष में स्वर्ग पधारे।

मूल—तत्पट्टे श्री भद्रबाहु स्वामी निर्युक्तिकृत् श्री वीरात् १७० तमे वर्षे स्वर्ग गतः।

अर्थ—उनके पाटपर श्री भद्रबाहु स्वामी निर्युक्तिकार श्री वीरनिर्वाण से १७० वें वर्ष में स्वर्गगामी हुए।

मूल—श्री वीरात् २१४ वर्षेऽव्यक्तवादी तृतीयो निह्नवोऽभवत् ॥८॥

अर्थ—श्री वीरसे २१४ वें वर्ष में अव्यक्तवादी तृतीय निह्नव हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री स्थूलभद्रस्वामी २१५ वर्षे स्वर्जगाम ॥ ९ ॥

अर्थ—भद्रबाहु के पाट पर श्री स्थूलभद्र स्वामी हुए जो वीर निर्वाण से २१५ वें वर्ष में स्वर्ग गए।

मूल—तत्पट्टे श्री महागिरिर्जिनकल्पाभ्यास कृत् ॥ १० ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री महागिरि जिनकल्प के अभ्यासी हुए।

मूल—श्री वीरात् २२० वर्षे शून्यवादी तुर्यो निह्नवोऽभूत।

अर्थ—श्री वीर से २२० वें वर्ष में शून्यवादी चौथे निह्नव हुए।

मूल—श्री वीरात् २२८ वर्षे क्रियावादी पंचमो निह्नवोऽजनि, एकस्मिन् समये क्रिया द्वयं ये मन्यन्ते ते क्रियावादिनः।

अर्थ—श्री वीर से २२८ वें वर्ष में पंचम क्रियावादी निह्नव हुए। जो एक समय दो क्रियाओं का होना मानते हैं, वे क्रियावादी हैं।

मूल—अथ श्री महागिरि पट्टे श्रीसुहस्तिसूरिः येन 'संप्रति' नामा नृपः प्रतिबोधितः ॥ ११ ॥

अर्थ—बाद श्री महागिरि के पाट पर श्री सुहस्तिसूरि हुए जिन्होंने "संप्रति" नाम के राजा को प्रतिबोध दिया।

मूल—तत्पट्टे श्री सुस्थित सूरिः कोटिकगण स्थापयिता ॥१२॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री सुस्थित सूरि हुए जिन्होंने कोटिक गण की स्थापना की।

मूल—तत्पट्टे श्री इन्द्रदिन्न सूरिः ॥१३॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री इन्द्रदिन्न सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री आर्यदिन्न सूरिः ॥१४॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री आर्यदिन्न सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री सिंहगिरिः ॥१५॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री सिंहगिरि हुए।

मूल—तत्पट्टे दशपूर्वधरः श्री वयरस्वामी यतो वयरी शाखा प्रवृत्ता।

अर्थ—उनके पाट पर दश पूर्व के धारक श्री वयर स्वामी हुए जिनसे 'वयरी' शाखा प्रचलित हुई।

मूल—तत्पट्टे श्री वज्रसेनाचार्यः श्री वीरात् ४७० वर्षे स्वर्ग गतः ॥१७॥ अस्मिन्नेव समये विक्रमादित्यो नृपोऽभूत्, कीदृशः श्री जिन धर्म पालकः पुनः परदुःखापनोदकः पुनः वर्णादिव्यक्तिं सम्यक् विधाय पृथक् २ स्वस्वकुल मर्यादाकारको जातः।

अर्थ—उनके पाट पर श्री वज्रसेनाचार्य श्री वीर से ४७० वर्ष में स्वर्ग गए। इसी समय विक्रमादित्य नाम का राजा हुआ वह कैसा था—जैन धर्म का पालक, पर दुःखहारक और भली भांति वर्ण व्यवस्था करके सबके लिये अलग २ कुल मर्यादा बनाने वाला हुआ।

मूल—तत्पट्टे श्री आर्यरोह स्वामी ॥१८॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री आर्यरोह स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री पुष्यगिरि स्वामी ॥१६॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री पुष्यगिरि स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री फल्गुमित्र स्वामी ॥२०॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री फल्गुमित्र स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री धरणगिरि स्वामी ॥२१॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री धरणगिरि स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री शिवभूति स्वामी ॥२२॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री शिवभूति स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री आर्यभद्र स्वामी ॥२३॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री आर्यभद्र स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री आर्यनक्षत्र स्वामी ॥२४॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री आर्य नक्षत्र स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री आर्यरक्षित स्वामी ॥२५॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री आर्यरक्षित स्वामी हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री नागेन्द्र सूरिः ॥२६॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री नागेन्द्रसूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणाह्वाः सूरिपादाः बभूवुः। ते च कीदृशाः तदाह, गाथया—सुत्तत्थरयण भरिए, खमदम मद्दव गुणेहिं संपन्ने। देवड्ढि खमासमणे, कासव गुत्ते पणिवयामि। एवं सप्तविंशति पट्टा जाताः ॥२७॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण नाम के आचार्य हुए। वे कैसे थे यह गाथा के द्वारा कहा है—सूत्रार्थ रत्नों से भरपूर क्षमा दम और मार्दवादि गुण वाले काश्यप गोत्री देवर्द्धि क्षमाश्रमण को मैं प्रणाम करता हूं। इस प्रकार सत्ताइस पाट हुए।

मूल—श्री वीरात् ६८० वर्षेषु गतेषु आगमाः पुस्तके लिखितास्तत्कारणं कथयन् प्रथमं गाथामाह—

वल्लहि पुरंमि नयरे, देवड्ढि पमुहेण समण संघेण ।
पुत्थे आगम लिहिया, नव सय असीयाउवीराउ ॥१॥
एकदा प्रस्तावे देवर्द्धिक्षमाश्रमणैः कफोपशमाय गृहस्थ गृहा-देकः शुंठी ग्रन्थिरानीतो याचनया, सचाऽऽहार समये विस्मृति दोषान्न जग्धः । अथ प्रतिक्रमणावसरे प्रतिलेखनायां क्रियमाणायां धरातले स शुंठिग्रन्थिः कर्णात्पतितस्तच्छब्दं श्रुत्वा ज्ञातमहो शुंठी ग्रन्थिर्विस्मृतः, समयानुभावोह्ययम् यन्मतिर्हीना जाताऽधुनाऽऽगमाः कथं मुखे स्थास्यन्तीति विमृश्य वल्लभीपुरे सकलाचार्य समुदायं मेलयित्वाऽऽगमाः पुस्तकारूढ़ाः कृताः । पूर्वं मुख पाठः श्रुत आसीत्--पुनः आचारांगीयं महाप्रज्ञानामकं सप्तममध्ययनं साधूनां पठ्यमानमासीत् । तस्य षोडशाऽप्युद्देशाः किञ्चित् कारणं विज्ञाय देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणैर्न लेखिता अतस्ते विच्छिन्नाः ॥२७॥

अर्थ—श्री वीर से ९८० वर्ष बीत जाने पर आगम पुस्तक रूप में लिखे गये—उसका कारण बतलाते हुए पहले गाथा कहते हैं—वल्लभीपुर नगर में देवर्द्धि प्रमुख श्रमण संघ ने वीर निर्वाण से ९८० वर्ष में आगमों का पुस्तक रूप में लेखन किया । एक समय देवर्द्धि क्षमा श्रमण कफ शान्ति के लिए एक गृहस्थ से सूंठ की गंठिया मांग के लाए । वह भोजन के समय विस्मृति दोष से खाना भूल गए । बाद प्रतिक्रमण के समय प्रतिलेखना करते वह गांठ कान से जमीन पर गिर पड़ी । उसका शब्द सुनकर जाना कि अहो हम सूंठ खाना भूल गए । यह समय का प्रभाव है कि बुद्धि कमजोर पड़ गई । इस समय शास्त्र कैसे कंटस्थ रहेंगे यह सोचकर बल्लभीपुर में सकल आचार्य समुदाय को एकत्रित करके आगम को पुस्तकारूढ़ किया । इसके पहले श्रुत मुखाग्र थे । फिर आचारांग का महाप्रज्ञा नाम का सातवां अध्ययन जो साधुओं के पढ़ने में आता था, उसके १६ उद्देश कुछ कारण जानकर देवर्द्धि गणी क्षमा श्रमण ने नहीं लिखे जिससे वे विच्छिन्न हो गए ।

मूल—तत्पट्टे श्री चंद्रसूरिः येन संग्रहणी प्रकरणं रचितं समलधार गच्छेऽभूत्, अतोऽग्रे चतस्त्रः शाखाऽभूवन्-चंद्रशाखा १ नागेन्द्र

शाखा २ निवृ तिशाखा ३ विद्याधरशाखा चेति ४ ॥२८॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री चन्द्रसूरि हुए जिन्होंने प्राकृत भाषा में संग्रहणी नामा प्रकरण की रचना की। वे मूलधार गच्छ में हुए थे। इसके आगे चार शाखाएं हुईं, जैसे-चन्द्रशाखा १, नागेन्द्र शाखा २, निवृ तिशाखा३ और विद्याधर शाखा ४।

मूल—तत्पट्टे विद्याधर शाखायां श्री समन्तभद्र सूरिर्निर्ग्रन्थ चूडामणिरिति यस्य विरुदोऽभूत् ॥२९॥

अर्थ—उनके पाट पर विद्याधर शाखा में श्री समन्तभद्र सूरि हुए जिनको निग्रन्थ चूडामणि विरुद प्राप्त था।

मूल—तत्पट्टे श्री धर्मघोष सूरिः पंचशतयति परिवृतो नानादेशेषु विहरन् क्रमादुज्जयिनी पार्श्ववर्ति धारायांपुरि पुमारवंश सुमणि श्री जगद्देव महाराज पुत्र रत्नं श्री सूरदेवेश्वरं नाना प्रत्यय दर्शन पूर्वकं प्रतिबोध्य श्री जैनधर्मे स्थिरीचकार। पुनः सप्त कुव्यसन परिहारं कारितवान् तत एव श्री धर्मघोष गच्छः सर्वत्र विश्रुतो जातः। तदैव च श्री सूरदेव लघु भ्राता सांखल नामा सोऽपि प्रतिबुद्धः त्रिंशत्तमोयं पट्टः श्री वीरशासनेऽजनि ॥३०॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री धर्मघोष सूरि हुए जो ५०० यतियों से घिरे हुए अनेक देशों में विहार करते हुए क्रमशः उज्जयिनी के पास धारा नगरी आये और वहां पमारवंश शिरोमणि श्री जगदेव महाराज के पुत्र रत्न श्रीसूरदेवेश्वर को अनेक प्रकार के परिचय दिखलाकर जैन धर्म में प्रतिबोध देकर स्थिर किया। फिर सात कुव्यसन का परित्याग करवाया। तभी से श्री धर्म घोष गच्छ सब जगह प्रसिद्ध हुआ। उसी समय श्री सूरदेव के छोटे भाई साँखल नाम वाला भी प्रतिबुद्ध हुआ। यह तीसवां पट्ट श्री वीर शासन में हुआ।

मूल—तत्पट्टे श्री जयदेव सूरिः ॥३१॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री जयदेव सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री विक्रमसूरिः दुष्ट कुष्टादि रोग दूरीकरणेनाऽनेकोपकार कृत् ॥३२॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री विक्रम सूरि हुए दुष्ट कुष्टादि रोग को दूर कर जिन ने अनेकों लोगों पर उपकार किया।

मूल—तत्पट्टे श्री देवानंद सूरिः, एतस्मिन् गणाधीशे श्री सूरदेवापत्यतः सूरवंशः प्रतीतोजगति जातः। तथैव सांखलावंशोऽपि राज्यं तु म्लेच्छैरपहृतं। ततो धनदसम संपत्या शत्रुंजयादि तीर्थ यात्रा विधानेन संघपति पदं प्रोत्तुंगं यवनाधीश साहिशिरोमणिभिः प्रदत्तं सकल जैन संघेनापि ॥३३॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री देवानन्द सूरि हुए। इनके आचार्य बनने पर श्री सूरदेव के पुत्र से सूर वंश संसार में प्रसिद्ध हुआ। इसी प्रकार सांखला वंश भी। राज्य तो म्लेच्छों ने छीन लिया था। फिर भी धन कुबेर सी बिपुल संपदा से शत्रुंजयादि तीर्थों की यात्रा करने के कारण समस्त जैन संघ एवं यवनाधीश शाह शिरोमणि ने भी आपको संघपति का सबसे ऊंचा पद प्रदान किया।

मूल—तत्पट्टे श्री विद्याप्रभु सूरिः ॥३४॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री विद्याप्रभु सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री नरसिंह सूरिः ॥३५॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री नरसिंह सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री समुद्र सूरिः ॥३६॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री समुद्र सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री विबुध प्रभु सूरिः। सर्वेप्येते सूरयो जाग्रत्तर प्रत्यया बभूवुः ॥३७॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री विबुध प्रभु सूरि हुए। ये सभी आचार्य प्रगट प्रभाव वाले थे।

मूल—तत्पट्टे संवत् ११२३ श्री परमानन्द सूरिर्जातः। तस्मिन् गुरौ जाग्रति ११३२ वर्षे सूरवंशः कुतश्चित्कर्म दोषात्तुच्छतां प्राप्तः

परिकरेण । ततो गुरुणाऽऽज्ञप्तं भो यूयं नागोर नगरे वसत, तत्र स्थितानां भवतां महानुदयो भावीति श्रुत्वा सूरवंशजो वामदेव संघपतिः सकलत्र एव नागोर नगरेऽपितः संवत् १२१० वर्षे । सुखेन तत्रप्रतिवर्षं महती कुल वृद्धिर्जाता । १२२१ वर्षे सूरवंशीय संघपति सतदास गृहे ससाणी नाम्नी कुलदेवी माता जाता । १२२६ वर्षे नागोर पुरादुत्थिता मोरख्याणा नाम ग्रामेऽन्तर्हिता । १२३२ वर्षे ससाणी माता प्रकटिता मोला सूरवंशीयस्य स्वप्ने दर्शनं दत्वा पुत्तलिका प्रकटीभूता, मोलाकेन देवालयः कारितः ॥३८॥

अर्थ—उनके पाट पर संवत् ११२३ में श्री परमानन्द सूरि हुए। उनके गुरुत्व काल ११३२ वर्ष में किसी कर्म दोष से सूर वंश अपने परिकर के साथ तुच्छ दशा [स्थिति] को प्राप्त हो गया तब गुरु ने आदेश दिया कि तुम सब नागोर नगर में बसो। वहां रहते हुए तुम सबों का बड़ा उदय होने वाला है। यह सुन कर संवत् १२१० वर्ष में सूरवंशज संघपति वामदेव अपनी पत्नी के संग नागोर नगर में रहने लगे। वहां सुख पूर्वक रहते हुए प्रति वर्ष उनको बड़ी कुल वृद्धि होने लगी। १२२१ वर्ष में सूर वंशीय संघपति सतदास के घर में ससाणी नाम की कुल देवी माता पैदा हुई। १२२६ वर्ष में नागौर नगर से उठकर मोरख्याणा नाम के ग्राम में वह अन्तर्धान हो गई और १२३२ वर्ष में ससाणी माता पुनः प्रकट हुई तथा सूर वंशीय मोला को स्वप्न में दर्शन देकर फिर पुतली रूप से प्रकट हुई। इस पर मोला ने देवालय बनवा दिया।

मूल—तत्पट्टे श्री जयानन्द सूरिः ॥ ३९ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री जयानन्द सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री रविप्रभ सूरिः ॥ ४० ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री रविप्रभ सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे ११८१ श्री उचित सूरिः, ततः श्री धर्मघोषीय गण उचितवाल संज्ञो जातः, तत्प्रतिबोधिता इदानीं ओस्तवाल संज्ञकाः कथ्यंते श्रावक जनाः ॥ ४१ ॥

अर्थ—उनके पाट पर सं० ११८१ में श्री उचितसूरि हुए। वहीं से धर्मघोषीय गण उचित वाल नाम से कहा जाने लगा। उनसे प्रतिबोध पाये हुए श्रावक जन इस समय ओस्तवाल कहलाते हैं।

मूल—तत्पट्टे सं० १२३५ श्री प्रौढ़सूरियेंनोवसग्गहरस्तोत्र पाठेनैव श्रद्धालु गृहे प्रवृत्तामारी निवर्तिता ततएव धर्मघोषीया पूढ़वाल शाखाजाता, पुनस्तत् प्रतिबोधिताः प्राग्वाटकाः कथ्यन्ते।

अर्थ—उनके पाट पर सं० १२३५ श्री प्रौढ़सूरि हुए जिनने "उवसग्ग-हर" स्तोत्र के पाठ से ही श्रद्धालु श्रावकों के घर में उत्पन्न मारी-प्लेग की बीमारी दूर करदी। वहीं से धर्म घोषीय "पूढ़वाल" शाखा हुई फिर उनसे प्रतिबोध पाये हुए वे ही पोरवाड़ या प्राग्वाटक कहलाये।

मूल—अथोत्कृष्टतर संपदायां परिवर्द्धमानायां सूरवंशीयाः (सूरं-सूर्य मणन्ति तेजसा गच्छन्ति ते) "सूराणा" इति कथापिता लोके। एतस्मिन् समये तत्पट्टालंकरिष्णुः श्री विमलचन्द्रसूरिरभवत्।

अर्थ—बाद बहुत अधिक सम्पत्ति के बढ़ जाने पर सूरवंश वाले [तेज से सूर याने सूर्य का अनुगमन करने से] लोक में "सुराणा" कहाये। इस समय उनके पाट को अलंकृत करने वाले श्री विमलचन्द्र सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री नागदत्तसूरिरभूत्ततो धर्मघोषीया नागोरी गच्छ संज्ञाधराः जाताः, तत्प्रसंगाश्चायम् श्री विमलचन्द्र सूरेर्नाग-दत्त १ मांडलचंद २ नेमचंदाह्वास्त्रयोऽन्तेवासिनो बभूवुस्तेषु-नागदत्तः पाटणवासी श्री श्रीमाल ज्ञातीयोऽभूत्, सच सं० १२७८ केनाऽपिकार्येण लवपुरीमगात् पुनस्ततो निवर्तमानो नागोरपुरे समेतः। तत्र श्री विमलचन्द्र सूरेर्मुखाद्धर्मोपदेशमा-कर्ण्य संजात वैराग्यः सन् दीक्षांलभौ ॥ १ ॥ अथ मांडलचंद उज्जयिनी निवासी तातेड़ गोत्रीयः सोऽपि कार्यवशेन नागोर पुरे समागतः नागदत्तं दीक्षितं श्रुत्वा स्वयं प्रवव्राज। एवं

द्वावपि उग्रतप साष्टमपारणायामाचाम्लं कुर्वन्तौ श्रुतपारगौ बहु निमित्तज्ञौ जातौ, कियत्कालं श्रीविमलचंद सूरिणा सार्द्ध विहृत्यं उज्जयिनीमागतौ। तत्रस्थितेन नागदत्तेन स्वीय गुरुन् शिथिलाचारान् दृष्ट्वा ४५ साधुभिः सह पृथग् विजह्रे।

क्रमेण प्रति ग्रामं विहरतानेक 'श्रावक' श्राविकाः प्रतिबोधयता पुनर्नागोरपुरे समेत्य चतुर्मासी चक्रे। बहुधा धर्म ध्यान तपः प्रभृतिकं सत्कर्म्म च। ततोऽन्य गच्छीयाः श्रावकाः स्वीय यतीन् श्रीपूज्यांश्च शिथिलान् वीक्ष्य नागदत्तान्तिके समेत्य धर्म ध्यानं व्याख्यान श्रवणं च कुर्वन्ति एवं नागोरपुरे तिष्ठति पश्चान्मांडलचंदोऽपि एकादशयति परिवृतस्ततो निःसृत्य लवपुरी देशे गतस्तत्र बहवो नवीनाः श्रावका प्रतिबोधितास्तदा धर्मघोषीया मंडेचवाल शाखा जाता सातु सांप्रतंन दृश्यते। इतश्चोज्जयिन्यां श्री विमलचन्द्र सूरयो दिवंगता अन्तसमये नेमचन्द्राय निज पदवी प्रदत्ता। अथच कियत्सु दिनेषु गतेषु एतां प्रवृत्तिमाकर्ण्य श्रावकाः संभूय नागदत्तान्तिके समेताः आगत्य चोक्तं, हे स्वामिन्! श्री विमलचंद्र सूरयो दिवंगताः नेमचंद्राय पट्टः प्रदत्तः, परन्तु स्वामिन्! पट्टयोग्यास्तु भवन्त एव सन्ति, ततोऽधुनास्माभिरत्रभवंतः पट्टे स्थापयिष्यन्ते, श्रीपूज्याः करिष्यन्ते इति मिथः समालोच्य सर्वोत्तमं मुहूर्त्तं दृष्ट्वा श्री श्रीमाल–सूराणा–तातेड़–गांधीचोरवेटिक प्रमुख सर्वश्रावकैर्नागोर मध्ये सं० १२८५ अक्षय तृतीया दिने श्री नागदत्तेभ्यः पदवी दत्ता श्रीश्री पूज्याः कृताः। ततो नागपुरीय गणो निःसृतः प्रसिद्धिं प्राप। तदनु श्रीनागदत्त जितांतपस्याप्रभावाकृष्ट चेता भवनवासी रत्नचूड़ाभिधो

देवः सान्निध्य कृज्जातः । एकदा तद्देव प्रभावान्निज गुरूणां सूरि मंत्र पत्रं नेमचन्द्रसूरि पार्श्वादाकृष्टं स्वपार्श्वे । ततः सूरि मन्त्रभृतो जाताः । अथ श्री नागदत्त सूरयो यत्र गतास्तत्र नागोरी गच्छीयाः कथापिताः । अनेके श्रावकाः प्रतिबोध्य स्वगच्छीयाः कृताः । तदनु बहवो यतयोऽपि नेमचन्द्रसूरीन् शिथिलान् वीक्ष्य श्री नागदत्त सूरि पादान् सिषेविरे । नागोरी गच्छीय साधवः कथापिताः । ईदृशा महाप्रतापिनो जागरूक भागधेयाः सेढ़िस्तटस्तंभनक प्रतिष्टइति स्तोत्र कर्तारः श्री नागदत्त सूरयो जज्ञिरे ॥ ४४ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री नागदत्त सूरि हुए। उनसे धर्म घोषीय नागोरी गच्छ नाम चला। उसका प्रसंग इस तरह है—श्री विमलचन्द्र सूरि को नागदत्त, मांडलचंद और नेमचन्द्र नाम के तीन शिष्य हुए। उनमें नागदत्त जो पाटणवासी श्री श्रीमाल जाति के थे। वे सं० १२७८ में किसी कार्य से लवपुरी गये और वहाँ से लौटकर फिर नागोर आये। वहां पर श्री विमलचन्द्र सूरि के मुंह से धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य जगा और दीक्षा ग्रहण करली। बाद मांडलचन्द्र उज्जयिनी निवासी जो तातेड़ गोत्रीय था, वह भी कायवश नागौर आया और नागदत्त को दीक्षित हुआ सुनकर स्वयं दीक्षित हो गया। इस प्रकार ये दोनों उग्र तपस्या से अष्टम के पारणा में आचाम्ल करते हुए शास्त्र के पारगामी और बहुत निमित्त के जानकार हो गए। कितने ही समय तक श्री विमलचन्द्र सूरि के साथ वे दोनों विहार करते रहे फिर उज्जयिनी आए। वहां ठहरे हुए नागदत्त ने अपने गुरु को शिथिलाचारी देखकर ४५ साधुओं के साथ पृथक विहार कर दिया।

क्रमशः गांव गांव विहार करते और अनेक श्रावक श्राविकाओं को प्रतिबोध देते हुए उन्होंने फिर नागोर नगर में आकर चतुर्मास किया। बहुत प्रकार के धर्म ध्यान और तपस्या आदि सत्कर्म हुए एवं अपने यति और श्री पूज्यों को शिथिलाचारी देखकर अन्य गच्छ के श्रावक भी नागदत्त के पास आकर धर्म ध्यान और व्याख्यान श्रवण करने लगे। इस प्रकार नागोर में रहने पर पीछे से मांडलचन्द्र भी एगारह साधुओं के साथ वहां से कर लवपुर चले गये और वहां बहुत से नवीन श्रावकों को

प्रतिबोध दिया। उस समय धर्मघोषीय मंडेचबाल शाखा प्रगट हुई। अब वह शाखा नहीं दिखाई देती। इधर उज्जैन में विमलचन्द्र सूरि का स्वर्गवास हो गया। उन्होंने अन्त समय में अपनी आचार्य पदवी नेमचन्द्र को प्रदान कर दी। बाद कितने ही दिन बीतने पर जब श्रावक लोगों ने यह बात सुनी तब इकट्ठे होकर नागदत्त के पास आए और बोले कि हे स्वामी! श्री विमलचन्द्र सूरि का स्वर्गवास हो गया और नेमचन्द्र को उन्होंने अपना पाट दिया है, किन्तु पाट के योग्य तो आप ही हैं। इसलिए अब हम सब आपको उनके पाट पर स्थापित करेंगे और श्रीपूज्य बनाएंगे। इस तरह आपस में विचारकर सबसे उत्तम मुहूर्त देखकर श्री श्रीमाल, सुराणा, तातेड़, गांधी, और चोरवेटिक (चोरडिया) प्रमुख सभी श्रावकों ने नागौर के मध्य सं० १२८५ अक्षय तृतीया के दिन श्री नागदत्त को पदवी प्रदान की और श्री पूज्य बनाया, वहीं से नागपुरी (नागोरी) गण निकला और प्रसिद्ध हुआ। इसके बाद आ० नागदत्त की तपस्या के प्रभाव से आकृष्ट होकर भवनवासी रत्नचूड़ नामका देव उनकी सेवा में रहने लगा। एक समय उस देव के प्रभाव से अपने गुरु नेमचन्द्र सूरि के पास से मंत्र पत्र को आकर्षित कर प्राप्त किया। तब से आप सूरि मंत्रधारी हो गए। बाद श्री नागदत्त सूरि जहां गए वहां नागोरी गच्छीय कहलाये। अनेक श्रावकों को प्रतिबोध देकर अपने गच्छानुगामी बनाये। इसके पश्चात् बहुत से यति भी नेमचन्द्र सूरि को शिथिल देखकर श्री नागदत्त सूरि के चरण-शरण में आए और नागोरी गच्छ के साधु कहाए। ऐसे महाप्रतापी, जागरूक भाग वाले "सेढिस्तटस्तंभनक प्रतिष्ठ" इस स्तोत्र के कर्ता श्री नागदत्त सूरि हुए।४४।

मूल—तत्पट्टे श्री धर्म सूरिः॥ ४५॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री धर्म सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री रत्नसिंह सूरिः॥ ४६॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री रत्नसिंह सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री देवेन्द्र सूरिः॥ ४७॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री देवेन्द्र सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री रत्नप्रभ सूरिः॥ ४८॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री रत्नप्रभ सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री अमरप्रभ सूरिः॥ ४९॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री अमरप्रभ सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री ज्ञानचन्द्र सूरिः ॥ ५० ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री ज्ञानचन्द्र सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री मुनिशेखर सूरिः ॥ ५१ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री मुनिशेखर सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री सागरचन्द्र सूरिस्त्रैवैद्य गोष्ठी ग्रन्थकर्ता यवनराज-सभासुलब्धजयः ॥ ५२ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री सागरचन्द्र सूरि हुए जो "त्रैवैद्य गोष्ठी" ग्रन्थ के कर्ता थे, इन्होंने मुसलमान राजा की सभा में विजयश्री प्राप्त की।

मूल—तत्पट्टे श्री मलयचन्द्र सूरिः ॥ ५३ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री मलयचन्द्र सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्रीविजयचन्द्र सूरि रुपसर्गहरस्तोत्र व्याख्याकृत् ।५४।

अर्थ—उनके पाट पर श्री विजयचन्द्र सूरि "उपसर्ग हर" स्तोत्र की व्याख्या करने वाले हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री यशवंत सूरिः ॥ ५५ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री यशवंत सूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री कल्याण सूरिः ॥५६॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री कल्याणसूरि हुए।

मूल—तत्पट्टे श्री शिवचन्द्र सूरिः सं० १५२९ जातः स च शिथिलाचारः एकमालयमाश्रित्य स्थितः साधुव्यवहार रहितः सूत्र सिद्धान्त वाचनामकुर्वन् रास भासादिकं वाचयितुं लग्नः। स चैकदाऽकस्माच्छूल रोगेण मृत्युमाप ॥५७॥

अर्थ—उनके पाट पर सं० १५२९ में श्री शिवचन्द्र सूरि हुए। वे शिथिलाचारी होकर एक ही जगह नियत रूप से रहने लगे। और साधु व्यवहार से रहित, सूत्र सिद्धान्त की वाचना नहीं करते हुए भासा के रास वांचने लगे और एक समय अकस्मात् शूल रोग से उनकी मृत्यु हो गई।

मूल—तस्य देवचंद माणकचंद नामानौ द्वौ शिष्यावभूताम् । तयो र्मध्ये देवचंदस्तु व्यसनी विजयाहि (मल) फेनादिकमत्ति शिथिलतरो माहात्मतुल्यो जातः । अथ माणकचंदो यति व्यवहार रक्षकः. श्रद्धालुनां पुरतो व्याख्यान प्रत्याख्यानादिकं धर्म्म कर्म्म साधयति, श्रावयति च भक्तामरादि स्तवान् । उभयकालं प्रतिक्रमणं करोति । अस्मिन्नवसरे माणकचंद पार्श्वे सूराणा डेडोजी, देवदत्त जी, वीरमजी, रयणु जी, सांडो जी, सोहिल जी, नरदास जी प्रमुखाः, गांधी सदारंगजी, सीचो, जी, गेहोजी प्रमुखाः पुनस्तातेड़ सद्दोजी, कम्मोजी, नंदोजी प्रमुखाः पुनरवेटिका, नाथोजी, वीजोजी, रूपोजी, खेमो जी प्रमुखाः पुनः श्री श्रीमाल सहसकरण जी, शिवदत्तजी, श्रीकरण जी, प्रमुखा आगच्छन्ति सामायिक प्रतिक्रमणादिकं च कुर्वन्ति । तस्मिन्नवसरे धर्मघोष सूराणा गच्छीयैः पौषध शालिकैः सूराणा डेडोजी देवदत्त जी प्रमुखान् प्रतिभणितं भवन्तोऽस्मान् शिथिलान् दृष्ट्वा नागोरी गच्छगा जाता, त दिदानीं तु एतेऽपिश्लथाचारा एव जाता, अतो भवन्तोऽधुनाऽस्मत्पौषधशालायामागच्छन्तु । तदा सूराणा प्रमुख श्रावकै- रुक्तम्--सक्रियावतो युष्मान् वीक्ष्याऽस्मद्वृद्धाः नागोरी गच्छीया जाता । अथ को गुणो भवत्सुयमाश्रित्य युष्मासु तिष्ठेम, तदा पुनः पौषध शालिका अकथयन् अस्माभिर्भवद्वृद्धा प्रतिबोध्य उकेशाः कृताः । जगदेव पुमारतोऽखिला प्रवृत्तिः श्राविता पुनरवोचञ्च वयं युष्मदीयाः कुल गुरवोऽतोऽस्मभ्यमपि अशनादिकं दीयतां । तदा सूराणकैरवाचि अग्रतोऽस्माकमपि- स्थान नामादि लिख्यतांऽस्मतोऽशनादिकमपि गृह्यतां ततः पौषध शालिकैर्विवाह पट्टिकासु नामादि लिखनमकारि । जातस्य

परिणीतस्य च लागभागमुपाददतेस्म । ते एवं प्रकारेण धर्म घोषीय नागोरी गच्छस्य श्री महावीर देवात् ५८ पट्टा अभूवन् ।

अर्थ—उनके देवचन्द और माणकचन्द नाम के दो शिष्य थे । उन दोनों में देवचन्द तो व्यसनी बन भंग अफीम आदि खाने लगा, अतिशिथिल होने से महात्मा जैसा हो गया । दूसरा माणकचन्द जो यति व्यवहार का रक्षक था श्रद्धालु भक्तों के आगे व्याख्यान प्रत्याख्यान आदि धर्म कार्य करता और भक्तामर आदि स्तवन सुनाता तथा दोनों समय प्रतिक्रमण करता । इस अवसर पर माणकचन्द के पास सूराणा डेडोजी, देवदत्तजी, वीरमजी, रयणजी, सांडोजी, सोहिल जी, नरदास जी आदि गांधी सदारंग जी, सीवो जी, गेहोजी प्रमुख, तातेड और सद्दो जी, कम्मो जी, नंदो जी प्रमुख तथा चौरवेटिक, नाथो जी, बीजो जी, रूपो जी, खेमो जी प्रमुख और श्री श्रीमाल सहसकरण जी, शिवदत्त जी, श्रीकरण जी प्रमुख आते और सामायिक प्रतिक्रमणादि करते । उस समय धर्म घोष सुराणागच्छीय पौषधशालिकों ने सूराणा डेडोजी देवदत्त जी प्रमुख लोगों को कहा कि आप हम सबको शिथिल देखकर नागोरी गच्छ में चले गये थे । किन्तु इस समय तो ये भी शिथिलाचारी बने हुए हैं अतः आप अब हमारी पौषध शाला में आजाओ । तब सूराणा प्रमुख श्रावकों ने कहा—क्रियावान् देखकर हमारे पूर्वजों ने नागोरी गच्छ स्वीकार किया था । अब आप में क्या गुण हैं जिसको लेकर हम आपके गच्छ में रहें । तब फिर पौषध शालिक बोले—हमने आपके वृद्धों को बोध देकर उकेश गच्छी बनाये । जगदेव पमार से लेकर सारी प्रवृत्ति सुनायी और फिर बोले—हम तुम्हारे कुल गुरु हैं अतः हम सबको भी आहार आदि प्रदान करो । तब सूराणा बोले—आगे से हमारे भी नाम तथा पता लिखो और हमारे यहाँ से भोजनादि भी ले जाओ । तब से पौषध शालिक विवाह पट्टिकाओं में नाम आदि लिखने लगे और जन्म और विवाह की लाग भी लेने लगे । इस तरह धर्म घोषीय नागोरी गच्छ का श्री महावीर देव से ये ५८ पट्ट हुये ।

मूल—अथैकोनषष्ठितमे पट्टे श्री श्रीमाल गोत्रीयाः श्री हीरागर सूरयोऽभवन् । पितृनाम मालाजी माणिक्यदेजी जननी, नौलाई ग्रामे जन्म ।

अर्थ—५९ वें पाट पर श्री श्रीमाल गोत्रीय श्री हीरागर सूरि हुए। इनके पिता का नाम मालो जी और माता का नाम माणिक्यदेजी था, नौलाई ग्राम में इनका जन्म हुआ।

मूल—षष्ठितमे पट्टे सूराणा गोत्रीयाः श्री रूपचन्द्राचार्या जाताः। पिता रयणजी, माता शिवादे, नागोर नगरे जन्म।

अर्थ—साठवें पाट पर सूराणा गोत्रीय श्री रूपचन्द्र आचार्य हुए। इनके पिता का नाम रयणजी तथा माता का नाम शिवादे था। नागोर नगर में इनका जन्म हुआ था।

मूल-अथ श्रीहीरागरजी रूपचंद्रयोः कथा लिख्यते-अद्वस्तिमित समृद्ध नागोर नाम नगरं तत्र साहि शिरोमणिमुगलान्वयः फीरोजखान नामा राज्यं करोति। तत्र नगरे वहवः साधुकारा जनाः धनिनो वसन्ति। तेषु शिरोमणिः सूराणा देवदत्तजीकोऽस्ति, तदीयो वृद्ध भ्राता डेडोजीकोऽस्ति, देवदत्तजीकस्य देल्हणजी १ कमादेजी चेति भार्याद्वयम् आद्यायास्त्रयः पुत्राः रयणजी १ सांडोजी २ सोहिलजी ३ नामानो जाताः। एते त्रयोऽपि सुधर्माणः शत्रुंजयस्य संघः पृथक् २ त्रिभिर्निष्कासितः तेन ते त्रयोऽपि भ्रातरः संघपतयः कथापिताः। द्वितीयस्या भार्यायाः सहस्स मल्लाख्यः पुत्रोऽभूत् अथ रयणजीकस्य भांडराज १ हरचंद २ रूपचंद ३ कम्मो ४ पंचायण ५ नामकं पुत्र पञ्चकमजनि, पंचाप्येते सहोदरा महान्तो वहुप्रदा नगरेऽग्रेसरा अभूवन्। सांडेजीकस्य नाथू १ नापो २ नंदो ३ नान्हो ४ नामानश्चत्वारः सुताबभूवुः। सोहिलकस्य पुत्राभावेन रयणजी पार्श्वाद् रूपचन्द्रोंके गृहीतः। पश्चात् कियद्दिनेषु गतेषु रूपचन्द्रस्य पुण्यातिशयात्सोहिलजीकस्य खेतसी नामांगजोऽजनि। सहस्स मल्लस्यांके पंचायणको दत्तः। डेडोजीकस्य साहवीरम् १

श्री करणाऽख्यौ द्वौ सुतावभूताम् । साहवीरमकस्य पुत्रो नरदासोऽभूत्तस्य नागोजी नामासुतोऽजनि ।

अर्थ—अब श्री हीरागरजी और रूपचन्दजी की कथा लिखते हैं— धनधान्य से परिपूर्ण नागोर नाम का नगर है। वहां पर शाह शिरोमणि मुगलवंशीय फीरोजखान नाम का राजा राज्य करता था। उस नगर में बहुत से धनी साधुकार-साहुकार लोग वास करते थे। उनमें सुराणा शिरोमणि देवदत्तजी एवं उनके बड़े भाई डेडोजी भी थे। देवदत्तजी को देल्हजी एवं कमादेजी नामकी दो स्त्रियां थीं। पहली देल्हजी को रयणुंजी, सांडोजी, और सोहिलजी नाम के तीन पुत्र हुए। तीनों ही धर्मात्मा तथा शत्रुंजय का अलग २ संघ निकालने के कारण संघपति के रूप में प्रसिद्ध हुए। द्वितीय स्त्री के सहस्समल्ल नाम का पुत्र हुआ। फिर रयणुंजी के भांडराज १, हरचंद २, रूपचंद ३, कम्मो ४, एवं पंचायण ५ नाम के पांच पुत्र हुए। ये पांचों सहोदर बड़े और दानी होने से नगर में अग्रणी थे। सांडेजी को नायू १, नापो २, नंदो ३ और नल्हो नाम के चार पुत्र हुए। सोहिलक ने पुत्र के अभाव में रयणुंजी के पास से रूपचंद्र को गोद लिया। बाद कितने ही दिन बीतने पर रूपचन्द्र के पुण्य प्रभाव से सोहिलजी को खेतसी नाम का पुत्र हुआ। उधर सहस्समल के गोद में पंचायण को दिया। डेडेजी को साहवीरम और श्री करण नाम के दो पुत्र हुए। साहवीरम को नरदास नाम का पुत्र हुआ, उसको नगोजी नाम का पुत्र हुआ।

मूल—अथ सं० १५४५ राव बीकाजीकेन योधपुरान्निर्गत्य पितृव्य कांधलजी कृत साहाय्येन बीकानेर पुरं स्थापितम्। सं० १५५६ माघ शुक्ल पंचम्यां रयणुंजी साहो बीकानेर पुरे समेत्य राज्ञः पार्श्वे गृहाणां भूमि-गृहीतवान्। तत्राप्यद्र्ध वासः स्थापितः। अथ सं० १५६२ श्री चतुर्विंशती मंदिरं 'वत्सापत्यैः' पंचजनैस्सह संभूय कारितम् प्रतिष्ठादिवसे सं० १३८० वर्षे नवलखा(खा)रासल पुत्रराजपालात्मज साह नेमचंद वीरमदुसाह देवचन्द कान्हड़ादिभिः प्रतिष्ठापिता, मूलनायक प्रतिमा मंडोवराद् वत्सापत्यैरानीता सतीसम्यक् स्थापिता, सर्वैरेकत्र मिलि-

तैराषाढ़ शुक्ल नवम्यां राव श्री वीकाजी राज्ये पश्चात्तदेव मंदिरं सर्व पंचजनानामंके धृतम् । सं० १५७१ चतुष्पथीय मंदिरस्य परितो दुर्गं कारितं वत्सापत्यैः । अथैकदा कार्तिक्याः पूजायां विधीयमानायां रयणु साहेनाभाखि अद्यवयमादौ पूजांविधास्यामः तदा वत्सापत्यैरुक्तं भो साहजिदः अस्मत् कारितं मंदिरमस्ति, पुनर्मंडोवरादस्मत-आनीता मूल प्रतिमाऽस्ति, ततोऽद्यमहतीमर्चां वयं करिष्यामः । यूयं श्वः कर्तास्थेति भणिते-ऽन्योन्यं विवादो जातः । तदा वत्सापत्यैः साहंकारं वचोभापितं भोः साहजित् इयद् बलं तु नवीनं मंदिरं विधाप्यकर्तुमुचितम् । ततो रयणु साहो मंदिरान्निःसृत्य निज भवने मनस्युद्विग्नः सन् विमृशति नव्यं मंदिरं कारायणंविना महत्वं न तिष्ठति । द्रव्यस्य तु गणना नास्ति मम, परंतु तत्कारित मंदिरोपरि स्वीयत्वं नधार्यं इति विमृश्य चतुष्पथीय मंदिरे गमनं त्यक्तम् ।

अर्थ—बाद सं० १५४५ में राव बीकाजी ने जोधपुर से निकल कर चाचा कांधलजी की सहायता से बीकानेर नगर की स्थापना की । सं० १५५६ माघ शुक्ल पंचमी में रयणजी साह बीकानेर में आकर राजा के पास घर बनाने को जमीन प्राप्त की । वहां आकार रहना भी आरंभ कर दिया । बाद सं० ६१५२ में चतुष्पथ चौक का मन्दिर बछावतोंने पंचों के साथ मिलकर बनाया प्रतिष्ठा के दिन नवलखा रासल पुत्र राजपाल के आत्मज साह नेमचंद और वीरमदु-साह देवचन्द कान्हड़ आदि द्वरा प्रतिष्ठित १३८० की मूलनायक की प्रतिमा बछावतों ने मंडोर से लाकर विधिपूर्वक स्थापित की । एक जगह मिलकर सभी ने आषाढ़ शुक्ल नवमी को राव श्री बीका जी के राज्य में फिर वही मन्दिर सभी पंचजनों के अधीन कर दिया । और सं० १५७१ में चतुष्पथ मंदिर के चारों ओर बछावतों ने एक कोट बना दिया । फिर किसी समय कार्तिक की पूजा के समय रयणजी ने कहा—आज हम पहले पूजा करेंगे, तब बछावत बोले—ओ साहजी ! मन्दिर हमने बनवाया है और मंडोर से मूल प्रतिमा भी हम ही लाये हैं अतः आज बड़ी पूजा तो हम करेंगे । तुम सब कल करना यह कहने पर परस्पर विवाद हो

गया। तब वछावतों ने अहंकार पूर्वक कहा साहजी ! इतना बल तो नवीन मन्दिर बनाकर करना उचित है। इस पर से रयणजी साह मन्दिर से बाहर निकल गये और अपने भवन में उद्विग्न मन से सोचने लगे कि नवीन मन्दिर बनवाए बिना महत्त्व नहीं रहेगा। मेरे पास द्रव्य की तो कोई गिनती नहीं है परन्तु उनके बनवाए मन्दिर पर अपना अधिकार नहीं रखना चाहिए यह सोचकर चतुष्पथ वाले मन्दिर में जाना छोड़ दिया।

मूल—पश्चादनेके मेलका आगताः परन्तु रयणुंजी साहो न गतः। कियद्दिनानंतरं नागोर पुरे गत्वा भ्रातृ—भ्रातृजैः सह स्वीय-वार्त-कथन पूर्वकं, नव्य मंदिरकरण-प्रतिज्ञा स्थापिता। सुखेन तत्र तिष्ठतोरयणु साहस्य राव श्री लूणकरणानां प्रसाद-पत्राणि समेतानि। तानि वाचं २ रयणु साहो भांडैजीकर्मैजीकाभ्यां विमर्श कृतवान् सकलत्रवर्गो बीकानेर पुरे समागतो नगोजी-कोऽपि। रूपचन्दस्तु स्त्रियं विनैवा-गतस्तत्र राजांतिके रुक्म पंचशती प्राभृती कृता। राज्ञा महान् सन्मानः कृतः कथितं च यूयं महीयांसो वरीयांसः साधुकाराः स्थ। अतः सुखेन वाणि-ज्यादिकं कुरुथ। यच्चात्मकार्यं राजोचितंवाच्यं वाच्यमेवं श्री महाराजेन सहर्षमुदिते सद् वस्त्रादिभिः सत्कृताः सर्वेऽपि।

अर्थ – पीछे अनेकों मेले आए परन्तु रयणजी शाह नहीं गए। कुछ दिनों के बाद नागोर नगर में जाकर उन्होंने भाई और भतीजों के साथ परामर्श में अपनी बात कहकर नये मंदिर बनाने की प्रतिज्ञा रक्खी। सुख से वहाँ रहते हुए रयणु साह को राव श्री लूणकरण आदि के प्रेम पत्र प्राप्त हुए। उनको बांच बांच कर रयणु साहने भांडैजी से विचारकिया और स्त्री वर्ग सहित बीकानेर चले आए। नगोजी भी आगए। रूपचन्द्र बिना स्त्री के ही आए। और वहां राजा के पास ५०० मुहरें भेंट की। राजा ने भी बड़ा सम्मान किया और कहा कि तुम सब बड़े अच्छे साहुकार हो अतः सुख से यहाँ व्यापारादि करो और हमारे योग्य कोई कार्य हो तो बोलना इस प्रकार महाराज के सहर्ष कहने पर सबका उत्तम वस्त्रों से सत्कार किया गया।

मूल—एवं तिष्ठतां तेषां आषाढ़ चातुर्मासी पर्व समागतं। तदानीं रूप-

चन्द्रादिभिः सदलङ्कारभूषितैर्देव-सदनं गंतुकामैः रयणु साहः पृष्टः सन् इति व्याहृतवान् भोः ! श्रूयतामस्माकं तु वत्सापत्यैः सार्द्धं विवादो जातोऽस्ति, नवीन मंदिरं कारयित्वैव जिन-मंदिरे गमनं युक्तमन्यथा नहि, इत्याकर्ण्य रूपचन्द कामोजी-काभ्यामुक्तं कृतं प्रसाधनं नोतारयामोऽधुना एतेनैव प्रति-कर्मणा राज्यद्वारतो मन्दिरभूमिं गृह्णीमस्तदा वरं इत्या-मृश्य प्रधानमेकं शिरोभूषणं रजतैकसहस्रं च लात्वा राज्य-द्वारे राज्ञः प्राभृतीकृतम्, तदा राज्ञा श्री लूणकरणेनाज्ञप्तं भोः कथ्यतामित्युक्ते रयणु साहेन विज्ञप्तं महाराज ! वयं नवीनं श्री जैनमन्दिरं कारयिष्यामस्ततो मन्दिरोचिता भूमिः प्रदीयताम् । तदा राज्ञाऽभाणि नगरे सति-भूमिर्भवदीया यथेच्छं गृह्यतामस्मच्छासनमस्ति । ततो रयणु साहेन मनोऽभिमता भूरुपात्ता ।

अर्थ—इस प्रकार वहां रहते हुए उनको आषाढ़ चातुर्मासी का पर्व आ गया । उस समय रूपचन्द्र आदि ने अच्छे अलङ्कारों से भूषित होकर मन्दिर जाने की इच्छा से रयणु साह को पूछा तो उन्होंने कहा कि हमको वच्छावतों से विवाद हुआ है । अतः नवीन मन्दिर बनवाकर ही जिन मन्दिर में जाना ठीक होगा, अन्यथा नहीं । यह सुनकर रूपचन्द और कामोजी ने कहा—किया हुआ प्रसाधन अब नहीं उतार, अभी इसी वेशभूषा में राज-द्वार से मन्दिर की भूमि प्राप्त करें तो ठीक रहेगा, ऐसा सोचकर प्रधान शिरोभूषण और हजार रुपये लेकर राजा के यहां गये और भेंट की । तब राजा लूणकरण ने आज्ञा दी कहो—सेठ क्या है ? इस पर रयणु साह ने निवेदन किया कि महाराज ! हम सब नवीन जैन मन्दिर बनाना चाहते हैं—इसलिए मन्दिर के योग्य भूमि दीजिये । तब राजा बोला—नगर में तुम्हारी जमीन है, जहां चाहो ले लो—हमारी आज्ञा है । तब रयणु साह ने इच्छानुसार अच्छी जमीन ले ली ।

मूल—सं० १५७८ विजयदशम्या दिवसे श्रीवीरवर्द्धमान स्वामिनो मन्दिरस्य पादोद्धृतः । ततः परं शैघ्र्याद् रूपचन्द, कमोजी-

नगोजीका मन्दिरकार्यं कारयन्ति, रजतानां पंचविंशति-सहस्राणि रयणुंसाहेन पृथगेव रक्षितानि सन्ति, अस्मिन्नवसरे सोहिलात्मजस्य रूपचन्द—भ्रातुः खेतसीकस्योद्वाहो नागोर पुरे मंडितोऽस्ति तदुपरि रयणुंजी-रूपचन्दजी-कमोजी-का अहिपुरं गताः। भांडोजी—नगोजीकौ वीकानेरे स्थितौ। रयणुंजीकेन नागोरपुरं गच्छता रूपचन्दजीकस्य कथनेन मन्दिरकार्यसमर्पणा नगोजीकस्य कृता, रजतानां पंचदश सहस्राणि दत्तानि कथितं च मन्दिरकार्यं शीघ्रतया कार्यम्।

अर्थ—सं० १५७८ विजया दशमी के दिन श्री वर्द्धमान स्वामी के मन्दिर की नींव डाली गई। बहुत शीघ्रता से रूपचन्द, कमोजी और नगोजी मन्दिर का कार्य कराने लगे। चांदी के पचीस हजार रुपये रयणुं साह ने इसके लिए अलग ही रखे थे। इस अवसर पर सोहिल के पुत्र श्रीरूपचन्द के भाई खेतसी का नागोर नगर में विवाह होने वाला था। उसमें रयणुंजी, रूपचन्दजी और कमोजी नागोर गए। भांडोजी और नगोजी बीकानेर में ठहरे। रयणुंजी ने नागोर जाते रूपचन्दजी के कहने पर मन्दिर का कार्य नगोजी को समर्पित किया और १५००० हजार रुपये भी दिए और कहा कि मन्दिर का कार्य शीघ्रता से किया जाय।

मूल—अथ नगोजीकः श्री मन्दिर कृत्यं कारयति तस्मिन् समये कोडमदेसर निवासी सोनो नाम वैद्यो निःस्वोऽस्ति तेनाऽऽगत्य नगोजीकं प्रति लपितं, एतत्कार्यं मम समर्प्यताम्, इत्युक्ते स्थानीयोऽयमिति मत्वा मन्दिरकृत्यं तद्धस्तेन कारितम्। तावता रजतानां पंचदश सहस्राणि व्ययीभूतानि, तदा सोनाकेनोक्तं पुनारजतानि प्रदीयताम्। तदा नगोजीकेनाभाणि, सांप्रतं कार्यं शैथिल्यं विधीयतां, समयान्तरेण पुनः करिष्यते।

अर्थ—श्री नगोजी मंदिर का कार्य करवा रहे थे उस समय कोड मदेसर निवासी सोनो नाम का वैद्य जो साधारण स्थिति का था, नगोजी से आकर बोला—यह कार्य मुझे संभलाइये। उसके ऐसा कहने पर नगोजीने स्थानीय समझ कर मंदिर का काम उसके हाथ में कर दिया। उतने में १५ हजार

रुपये खर्च होगए तो सोना ने कहा और रुपये दीजिये। तब नगोजीने कहा कि अभी काम बन्द कर दो, बाद फिर करेंगे।

मूल—अस्मिन्नवसरे यद् वृत्तं तल्लिपिक्रियते, नगरलोकेषु प्रशस्यः श्रावक शिरोरत्नं धनी सुकृती गांधी गोत्रीयः सदारंगजी सींचोजीकश्च वर्तते। तयोर्मध्ये सींचोजीको महान् धर्म मर्मज्ञः शास्त्रार्थज्ञोऽस्ति, सींचोजी–पार्श्वे रूपचंद्रस्य महती स्थितिः उभौ धर्मगोष्ठीं कुरुतः, परं सिद्धान्त–पुस्तकानामलाभात् साधु श्रावक धर्म भेदं न जानीतः। सिद्धान्त श्रवणोत्कं मनो विशेषादेतयोः सदैवास्ते। इतश्च कैश्चित्पौषधशालिकैः सिद्धान्त पुस्तकानि भूमिगृह–मध्यस्थानि गलितानि ज्ञात्वा जालोर–निगम–निवासी लुकाह्वं लेखकमाहूय रहः संस्थाप्य पुस्तक लिखनं कारितम्।

अर्थ—इस समय जो बात हुई उसे लिपिबद्ध किया जाता है। नगर के लोगों में प्रशस्त, श्रावक शिरोभूषण धनी और सुयशवाले गांधी गोत्रीय सदारंगजी एवं सीचोंजी रहते थे। उन दोनों में सींचोजी बड़े धर्मज्ञ और शास्त्र तथा उसके अर्थ के जानकार थे। सींचोजी के पास रूपचन्द्रजी बहुत ठहरते और दोनों धर्म-गोष्ठी करते रहते किन्तु सिद्धान्त ग्रन्थों के नहीं मिलने से साधु व श्रावक के धर्मभेद को नहीं जानते। विशेष रूप में इन दोनों का मन सदा सिद्धान्त सुनने को उत्कंठित रहता। इधर किसी पोषधशालिकों ने भूमिघर में स्थित सिद्धान्त ग्रन्थों को गलता हुआ जानकर जालोर निवासी लुंका नाम के लेखक को बुलाकर उसे एकान्त में रखकर पुस्तक लेखन करवाया।

मूल—अथ पुस्तक लिखनं कुर्वता लुंकासाहेन साधोराचारं दृष्ट्वाऽर्थ विचारं मनसिकृत्वा सहर्षभरं विमृष्टं धन्यं श्री जैनशासनं, धन्याः साधवो ये ईदृग्गुणैर्विराजमाना भवन्ति तच्चरण रज सैव पापानि विलयंयान्ति, इत्यामृश्यान्यपत्राणि कृत्वा यतिभ्यः प्रच्छन्नं स्वस्मै सिद्धान्तान् लिखति लेखकः सः। एवं कुर्वता

सर्व-ग्रन्थाः लिखित्वा गुरुभ्यो निसृष्टाः स्वस्यापि पार्श्वे रक्षिताश्च ।

अर्थ—फिर पुस्तक लिखते हुए लुंकाशाह ने साधुओं का आचार देखकर और मन में अर्थ का विचार कर हर्षित मन से विचारा कि जैन शासन धन्य है और धन्य हैं इसके साधु जो इस प्रकार के गुणों से विराज मान हैं, उनके चरणरज से ही पाप नष्ट हो जाते हैं ऐसा सोच कर दूसरे पत्र लिखकर यतिओं से प्रच्छन्न रूप में लेखक अपने लिए भी सिद्धान्त लिखते। इस तरह करते हुए सभी ग्रन्थों को लिखकर गुरु को दे दिये और अपने पास भी रख लिये ।

मूल—अथ गुरुतो गृहगमनाज्ञा प्रार्थिता तस्मिन्नवसरे रूपचंदजी-केन प्रवृत्तिरियं प्राप्ता लुंकासाहं प्रति-उक्तं दर्शयतांनः सिद्धान्तान् लिखित्वाऽपि च दीयताम् । तदा लुंकासाहेनावादि अत्र तु लिखने यतयो विगृह्णन्ति, गृहे गत्वाऽखिल-राद्धान्तान् लिखित्वा वः प्रेषयिष्यामीत्युक्ते रूपचंदजीकेन व्याहृतं वचो दीयतां, तदा लुंकासाहोऽवदत् यूयमपि वचोदत्थ, तदारूप-चन्द्रेणाभाणि वयं कीदृग्वचो दद्मः ततो लुंकासाहोऽवदत् अहं जाने भवद्वेश्मनि ईदृशी संपदस्ति, एतद्वोवयः सुन्दरं म्रियते पुन-र्भवतां धर्मे परिणामातिरेकं वीक्ष्य जानामि भवन्तः सत्क्रियोद्धारं करिष्यन्ति, तन्ममापि नाम चेद्रक्ष्यं भवेत्तदाहं सिद्धान्तान् लिखित्वा प्रदद्याम्, इत्युदीरिते रूपचंदजीकोऽवोचत्, मम वचोऽस्ति अस्माभिश्चेत् क्रियोद्धारः कृतस्तदाऽयं नागोरी गच्छीयाः स्म एव भवतामस्माकं चेत्युभयेषां नाम रक्षिष्यामः ।

अर्थ—कार्य समाप्त होने पर शाहजी ने गुरुजी से घर जाने की आज्ञा मांगी। उस समय रूपचंदजी को लुंकाशाह की इस प्रवृत्ति का पता चल गया था, उन्होंने लुंकाशाह को आकर कहा—हमको सिद्धान्त दिखाओ और लिखकर भी दो। इस पर लुंकाशाह बोले कि यहां तो लिखने में यति लड़ते हैं। घर जाकर निश्चय सभी सिद्धान्तों को लिखकर आपको भेज दूँगा। उसके ऐसा कहने पर रूपचंदजी ने कहा कि वचन दो, तब लूंकाशाह बोला कि आप भी वचन दो। इस पर

रूपचन्दजी ने कहा कि हम किस तरह का वचन दें। तब लुंकाशाह बोला— मैं जानता हूं कि आपके घर में इतनी अधिक सम्पत्ति है और आपकी यह उम्र भी सुन्दर है फिर भी धर्म में आपकी परिणति देखकर जानता हूं कि आप क्रियोद्धार करेंगे। अतः मेरा नाम भी अगर उसमें रहे तो मैं सिद्धान्त लिख कर दूं। उसके ऐसा कहने पर रूपचन्दजी बोले मेरा वचन है, हम यदि क्रियोद्धार करेंगे तो नागोरी लोंकागच्छी होकर ही तुम्हारा और अपना दोनों का नाम रक्खेंगे।

मूल—अथ लुंकासाहेन जालोर पुरात् सर्वागम कदम्बकं रूपचंद्रेभ्यः प्रहितम्। अन्य देशेऽपि योग्य गृहिणो वीक्ष्य दत्तम्। अथ रूपचंद्रजीकः सींचोजी पार्श्वे सिद्धान्तान् शृणोत्यधीते च. एकदा सींचोजीकेन रूपचंदजीकं प्रति कथितं भवन्तश्चेत् क्रियोद्धारं कुर्युस्तदा जगति महन्नाम स्यात्। पुनः धर्मस्य महिमा महान् भवति। भवदीयां गिरमाकर्ण्य बहवो जीवाः प्रतिबुध्यन्ते। चतुर्विध श्रीसंघस्थापना च जायते। तदा रूपचंद्रजीकेनोदितं स्त्रियं प्रतिबोध्य पित्रोराज्ञां च लात्वा दीक्षां कक्षीकरिष्येऽहं। पुनर्यावद्दीक्षाज्ञां न प्राप्नुयां तावत्-शुद्ध श्रावक धर्मं पालयिष्य:-मित्युदीर्य गृहं गताः सर्वे।

अर्थ—बाद लुंकाशाह ने जालोर नगर से सभी आगम लिखकर रूपचन्द्रजी के पास भेज दिये। अन्य देशों में भी योग्य व्यक्ति को देखकर शास्त्र दिये। रूपचन्द्रजी सींचोजी के पास सिद्धान्तों को सुनने और पढ़ने लगे। एक समय सींचोजी ने रूपचन्द्रजी से कहा कि आप यदि क्रियोद्धार करें तो संसार में बहुत नाम होगा। फिर धर्म की बड़ी महिमा होगी, आपकी वाणी सुनकर बहुत से जीव प्रतिबोध पाएंगे। चतुर्विध श्री संघ की स्थापना भी होगी। इस पर रूपचंद्रजी बोले—स्त्री को प्रतिबोध करके तथा माता पिता की आज्ञा लेकर मैं दीक्षा लूंगा। जब तक दीक्षा की आज्ञा नहीं प्राप्त करलूं तब तक शुद्ध श्रावक धर्म का पालन करूंगा। ऐसा कहकर सब घर चले गए।

मूल—अथ तत्क्षणकृत—सरस भोजन-नानावल्लीदल चर्वण सरसा

मोद लेपन गुलाब जलेन स्नान (केसर) कश्मीर जन्मादि तिलक करणादीनि सर्वाणि त्यक्तानि रूपचंदजीकेन विरक्तात्मना (विरक्त कामेन)। एवं सति हीरागरजीकेनेयं वार्ता श्रुता विमृष्टं च धन्यः सूराणा गोत्रीयः श्री रूपचंद्रोऽस्यामवस्थायां परामीदृशीं ऋद्धिं त्यक्त्वा दीक्षामंगीकरिष्यति ततो वयमपि लास्यामो व्रतम्, एवं ज्ञात्वा रूपचंद्रान्तिके समेतः हीरागरः श्री श्रीमालान्वयः। अथ रूपचंदजीकस्य द्वितीये सहाये मिलिते दीक्षाभिलाषो महानेव जातः।

अर्थ—बाद उसी समय रूपचंद्रजी ने सरस भोजन, नागर वेल के पत्तो का चर्वण, सरस आमोददायक लेपन, और गुलाब जल से स्नान, केशरादि कश्मीरोत्पन्न वस्तुओं का तिलक आदि विरक्तमन से सब कुछ छोड़ दिया। इस स्थिति में जब हीरागरजी ने यह बात सुनी तो सोचा कि सूराणा गोत्रीय रूपचंद्र धन्य है कि इस उम्र में इतनी बड़ी सम्पत्ति छोड़कर दीक्षा लेगा। तो मैं भी व्रत ग्रहण करूं ऐसा जानकर (सोचकर) वह श्रीमाल गोत्रीय हीरागरजी भी रूपचंद्रजी के पास आये। जब रूपचंद्रजी को दूसरा सहायक मिला तब उनकी दीक्षा की अभिलाषा और भी बढ़ गई।

मूल—अथैकदा रूपचंदजीको गृहे पित्रादिपरिवार मध्ये स्थितः सरस सिद्धान्त व्याख्यानं कुर्वन्नाह (श्लोकः)—

यो दीक्षानुमतिं दत्ते, संसारे नास्ति तत्समः।
निषेधयति दीक्षां यो, धीहीनोपि न तत्समः ॥१॥

एवमुक्ते रयणुजीकः प्राह दीक्षा निवारणं न कार्यमितिमे नियमः- भ्राता वा पुत्रो वा नारी वा यः कश्चिद् भाग्यवान् गृहारंभ समारंभादिकं त्यक्त्वा प्रव्रज्यामादत्ते स सुकृती, तस्मिन्नवसरे सोहिल साहे स्वर्गते रूपचन्द्रेण विमृष्टमधुना गृहे स्थातव्यं नहि, पितृष्वसुः समीपे गत्वा कृतांजलिना दीक्षानुमतिरर्थिता।

अर्थ—फिर एक समय रूपचंद्रजी घर में पिता आदि परिवार के बीच बैठे हुए सरस सिद्धान्तों का व्याख्यान करते हुए बोले "जो दीक्षा ग्रहण

में अनुमति देता है, संसार में उसके समान दूसरा नहीं और जो दीक्षा का निषेध करता है उसके समान हीन बुद्धि भी कोई दूसरा नहीं। उनके ऐसा कहने पर रयणुजी बोले—दीक्षा नहीं रोकने का मेरा नियम है। भाई हो या पुत्र अथवा स्त्री जो कोई भाग्यवान् घर के आरम्भ समारम्भ को छोड़कर दीक्षा अंगीकार करता है वह पुण्यात्मा है। उस समय सोहिल साह स्वर्गवासी हो गए थे। तब रूपचंद्र ने सोचा कि अब घर में नहीं रहना चाहिये अतः भूआजी के पास जाकर उन्होंने अंजलिबद्ध होकर दीक्षा की प्रार्थना की।

मूल—अथ पितृष्वसाह—हे रूपचंद्र ! भवान् भोगिभ्रमरः शृणु मद्-वचः, इह तव सुन्दरमोदक पक्वान्नसहितोदनं रोचते, साधुत्वे तु शीत विरसाद्यन्न प्राप्तिः, अत्र अतलसादि भव्य भव्य नव्य नेपथ्यानि तत्र तु मलिनांशुक धारणं, शिरोलोचकरणं भविष्यति, अत्र तु तांबूलं गले पुष्पस्रग्, तत्र दन्तधावनमपि न, देहस्य शुश्रूषाऽपि न कार्या, अत्र रम्यशयनीये शयनं तत्र भूमावेव शयनोपवेशनादि। अत्र भव्य जलैः स्नानं तत्र गात्रे मल-संचयः, अत्र गोदुग्धादि पेयमपेयम्, तत्र नित्यमुष्णजलं पास्यसि, अत्र त्वं राजेवाज्ञां करोषि, तत्र तु गृहे २ भिक्षार्थ-मटनं कंटकादि सहनमित्यादीनि पितृष्वस्रा बहूनि वचांसि व्याहृतानि तदा रूपचंद्रेणोक्तं हे पितृष्वसः ! साधुभावात् कातरो बिभेति न शूरपुरुषः, एवं पितृष्वसारं प्रति-बोध्याऽऽज्ञा गृहीता।

अर्थ—तब भूआ बोली कि—हे रूपचंद्र ! तुम भोगी भ्रमर हो हमारी बात सुनो—यहां तुमको सुन्दर मोदक, पक्वान्न सहित ओदन अच्छा लगता है और साधु बनने पर तो ठंडे तथा विरस अन्न प्राप्त होंगे, यहां पाट आदि के सुन्दर २ नये कपड़े पहनने को हैं और वहां मलिन कपड़े धारण तथा शिरोलुंचन करना पड़ेगा। यहां पान और गले में माला और वहां पर दंतौन और देह की सम्भाल भी नहीं करनी होगी। यहां सुन्दर बिस्तरे पर सोना और वहां जमीन पर ही सोना, बैठना आदि होंगे। यहां पर सुन्दर

शीतल जल से स्नान और वहां शरीर पर मल संचय करना होगा। यहां गोदुग्ध आदि अनेकों पेय और वहां रोज गर्म पानी पीना होगा। यहां तुम राजा की तरह आज्ञा करते हो और वहां तो घर २ भीख मांगने घूमना और कांटों आदि का कष्ट सहन करना होगा, इस तरह भूआ ने बहुतसी बातें कहीं। तब रूपचंद्र बोले—कि हे भूआ! साधुपन से कातरजन डरते हैं किन्तु शूर पुरुष नहीं, इस तरह भूआ को प्रतिबोध देकर आज्ञा प्राप्त की।

मूल—अथैकदा रूपचंद्रो नवीनं मंदिरोपरि रमणीयं केलिगृहं कारयित्वा स्त्रियायुतः पर्यंकोपरि निषण्णः सन् धर्म वार्ता करोति। अनेन जीवेन गढ़ हर्म्यादि—सुंदरस्त्रियो राज्यलीलाश्चानेकशोऽधिगताः परंतु संयमं विना जीवस्य न किंचित्कार्यं सरति इत्थं वार्तयतोः स्त्रिया हास्येन भणितं संयमं गृह्णतः को वारयति कस्याऽपि चित्ते दीक्षाऽभिलाषोऽस्ति चेत्तदा गृह्णतां संयमश्रीः, इतिकथिते सत्येव रूपचंद्रः प्राह, अथ गार्हस्थ्ये वसनस्य मे नियमोऽस्ति, इत्याकर्ण्य स्त्री खिन्ना जाता सती बभाण—हे कांत! मयातु हास्यं वचोव्याहृतं, तदा रूपचंद्रेणाभाणि—भामिनि! हस्तिनां च रदा निर्गतास्ते पश्चान्न प्रविशन्ति तथैव ममापि नियमो नापवर्तते। पुनरस्मिन् संसारे देवलोकादिष्वनंतशः स्त्रीसत्सम्बन्धः प्राप्तः तस्मात्प्रसद्य हे सुभगे! दीक्षानुमतिं देहि इत्युक्ते तया आज्ञा प्रदत्ता।

अर्थ—फिर किसी समय रूपचंद्र मन्दिर के ऊपर नवीन सुन्दर क्रीड़ागृह बनवाकर स्त्री के संग पलंग पर बैठा हुआ धर्म की बात कर रहा था कि इस जीव ने गढ़ महल, सुन्दर स्त्री और राज्य लीला अनेक बार प्राप्त की किन्तु संयम के बिना जीव का कुछ भी कार्य नहीं बना। इस प्रकार बात करते हुए स्त्री ने हँसी से कहा—संयम ग्रहण करने वाले को कौन रोकता है? किसी के चित्त में दीक्षा की अभिलाषा है तो वह संयम ग्रहण करे। ऐसा कहने पर रूपचन्द्र बोला—अब गृहस्थाश्रम में रहने का मुझे नियम है, यह सुनकर स्त्री दुःखी हो गई और बोली—हे कांत! मैंने तो हँसी की

बात कही थी। तब रूपचंद्र बोले ऐ भामिनि ! हाथी के दाँत निकलने के बाद फिर नहीं पैठते वैसे हमारा भी नियम अब नहीं बदलता। फिर इस संसार में और देवलोकादि में अनन्तवार स्त्री स्वामी का सम्बन्ध प्राप्त हुआ, इसलिये हे सुभगे ! प्रसन्न होकर दीक्षा की आज्ञा दे दो, ऐसा कहने पर स्त्री ने आज्ञा प्रदान की।

मूल—अथ रूपचंद्रः प्रसन्नः सन् प्रातःकालीनं प्रतिक्रमणं कृत्वा समुदिते दिनकरे मातापित्रोरुवाच—भोः पितरौ ! अन्यैस्तु सर्वैराज्ञा दत्ताऽस्त्येव परं भवदाज्ञा विशेषतः श्रेयसी गृहीतुं युज्यते, अतः सा प्रदीयताम्। तदा पितृभ्यामत्याग्रहं ज्ञात्वा आज्ञाप्रदत्ता। अथ रूपचंद्र प्रहृष्टः फलितमनोरथः सन् दीक्षां लातुमुद्यतो जातः, तस्मिन्नवसरे पंचायणनामा स्वसहोदरः सहसमल्लांकपुत्रो द्वितीयां स्त्रियं परिणेतुमना विवाहमकरोत्, तोरणानि बद्धानि सधवस्त्रीभिर्मंगलगीतानि गातुमारब्धानि सन्ति, तत्समये पंचायणजीकेन रूपचन्द्रस्य दीक्षावार्ता श्रुता, विचारितं च असारोऽयं संसारः धन्यो रूपचंद्रः यो विद्यमानं संपदं रम्यां रमणीं च त्यजति, धिगस्तु मां योऽहं द्वितीयां स्त्रियं परिणेतुमना अस्मि, इत्यामृश्य विवाहस्य महं दीक्षायाः कृत्वा रूपचंद्रांतिकेगतः पंचायणजीकः प्राह—भो महाभाग ! रूपचंद्र प्रव्रज्या समादान प्रस्थितयोर्भवतोरहं तृतीयो भवामि, अहमपि दीक्षामादास्ये इति पंचायणजीकस्य वचोनिशम्य ही-रागररूपचंद्राभ्यां विमृष्टमहोशुभः सार्थो मिलितः, तनु-मनो-नयनानि विकसितानि।

अर्थ—बाद रूपचंद्र प्रसन्न होकर प्रातःकालीन प्रतिक्रमण करके सूर्य उगने के बाद मां बाप से बोला—ऐ माता पिता ! अन्य तो सबने दीक्षा की आज्ञा दे दी है किन्तु आपकी आज्ञा लेनी अधिक श्रेयस्कर है, अतः आज्ञा प्रदान करें, तब मां बाप ने अत्याग्रह जान कर आज्ञा दे दी। बाद रूपचंद्र प्रसन्न एवं सफल मनोरथ होकर दीक्षा लेने के लिए तैयार हो गये।

उस समय पंचायण नामका उसका सहोदर भाई जो सहस्समल के गोद गया था दूसरी स्त्री से परिणय करने को विवाह कर रहा था, तोरण बँध चुके थे सधवा स्त्रियों ने मंगलगान गाने आरम्भ कर दिये। उस समय पंचायणजी ने रूपचन्द्रजी की दीक्षा की बात सुनी और विचारा कि यह संसार असार है, रूपचंद्र धन्य है जो विद्यमान सम्पत्ति और सुन्दरी स्त्री को छोड़ता है। मुझको धिक्कार है, जो मैं दूसरी स्त्री से परिणय करना चाहता हूँ ऐसा सोचकर विवाहोत्सव को दीक्षा का उत्सव बनाकर रूपचन्द्र के पास गए। पंचायणजी बोले—ऐ महाभाग रूपचन्द्र ! दीक्षा ग्रहण के लिए तैयार आप दोनों के बीच मैं तीसरा होता हूं। मैं भी दीक्षा लूंगा ऐसा पंचायणजी का वचन सुनकर हीरागर और रूपचन्द्र दोनों ने सोचा कि अहो शुभ साथी मिला है, इससे उनके तन मन और नयन प्रफुल्लित हो उठे।

मूल—अस्मिन्नवसरे सिद्धांतवचसा वर्षसहस्रद्वयस्थितिको भस्म-
ग्रहोऽपि समुत्तीर्णः उदितो जिनधर्म सहस्रकरः।
श्लोकः—भस्मग्रहे समुत्तीर्णे, त्रयाणां जगतामिव।
जिनधर्म्मोऽरुणेनैषां, प्रध्वस्तं ह्यान्तरं तमः ॥१॥
अथैतस्मिन् समायोगे सं० १५८० मिते वर्षे ज्येष्ठ शुक्ल प्रति पदो दिनं दीक्षामुहूर्तं शुभमागतम्। हीरागरस्य प्रव्रज्या महोत्सवः सहस्समल्ल—श्रीकरणसहसवीर—शिवदत्तै र्मंडितः रूपचंद्र पंचायणकयोर्महामहः साह रयणुजीकेन प्रारब्धः। अर्थिभ्यो दीयमानेषु दानेषु वह्वी वेला लग्ना तावता भानुरस्तं-गतः।

अर्थ—इस अवसर पर सिद्धान्त वचन से दो हजार वर्ष की स्थिति वाला भस्म ग्रह भी वीत गया और जैन धर्म का सूर्य उदित हुआ। कहा भी है—भस्मग्रह के वीत जाने पर जिन धर्म रूप अरुणोदय से तीनों जगत का आंतर अन्धकार मिट गया। फिर उस शुभ संयोग में सं० १५८० के वर्ष में ज्येष्ठ शुक्ल प्रतिपदा का दिन दीक्षा का शुभ मुहूर्त प्राप्त हुआ। हीरागरजी का दीक्षा महोत्सव सहसमल, श्रीकरणसहसवीर और शिवदत्तजी ने किया और रूपचन्द्र तथा पंचायणजी का दीक्षोत्सव साह रयणु द्वारा संपन्न हुआ। याचकों को दान देने में वहुत समय लगा और तब तक सूर्य डूब गया।

मूल—अथ प्रातरुत्थाय स्वजन—सम्बन्धि वर्गेमिलिते प्रथम—रस-शोभा समुद्ये जाग्रति गीयमानेषु गीतेषु, सजल-जलधर-गंभीर-गर्जेषु नांदीतूर्येषु वाद्यमानेषु दीक्षां समादातुं निर्गच्छन्ति-त्रयोऽपि शूरतर पुरुषाः। तस्मिन्नवसरे नगरे वार्ता विस्तृता बहवो राजकीया पुरुषाः पञ्चजनाः साधुकाराश्चागताः साहि-शिरोमणिनाऽपि स्वीयकृष्णमंत्रीश्वरः उत्सवकरणाय प्रेषितः। अथ त्रयोऽपि ते तिस्रः शिबिका आरुह्य जयजय शब्देषु प्रवर्त-मानेषु बहुषु-क्षत्रिय-महाजन-द्विजाति-प्रमुख-नागरिकेषु पादयो-र्नमत्सु, मस्तके मुकुटं बद्ध्वा गलेषु हारेषु ध्रियमाणेषु श्री-सिद्धार्थ—महाराज—पुत्रवदतिशयेन दीयमानेषु नानादानेषु सायरसाहस्याऽग्रोद्याने समेताः, प्रथमतः शिबिका हीरागरस्य ततो रूपचन्द्रस्य, तत्पृष्ठतः पंचायणकस्य चलिताः क्रमेण सायर-साहस्याऽग्रोद्याने त्रयोऽपि शिबिकाभ्यः समुत्तीर्य प्रथमालापं मुखादुच्चार्य आभरणादिकं सर्वं समुत्तार्य च पूर्वदिगभिमुखं त्रयोऽपि-उपविष्टाः। ततः स्वहस्तेन लोचं कृत्वा अर्हत्-सिद्धसाधू-न्नमस्कृत्य च महाव्रतरूपं सामायिकं—सामायिकचारित्रमादत्तं त्रिभिः, बहुषु लोकेषु धन्या धन्या एते इति शब्दं कुर्वाणेषु श्री श्रीचन्द्रप्रभ स्वामिनो मंदिरे समेत्य स्थिताः।

अर्थ—फिर सवेरे उठकर स्वजन सम्बन्धियों के मिलने पर, प्रथम शोभा समूह के जागने पर और गीतों के गाए जाने पर, सजल मेघ के समान गंभीर नाद वाले नांदी और तूर्य के बजते हुए 'तीनों शूर पुरुष' दीक्षा लेने के लिए निकल पड़े। उस समय नगर में बात फैल गई तो बहुत से राजकीय पुरुष और पञ्च, एवं साहूकार भी आए। शाह शिरोमणि ने भी अपने कृष्ण मंत्रीश्वर को उत्सव करने के लिए भेजा। बाद वे तीनों दीक्षार्थी तीन पालकियों पर चढ़कर जयजय शब्दों के बीच बहुत से क्षत्रिय, महाजन और ब्राह्मण प्रमुख नागरिकों के चरणों में प्रणाम लेते हुए माथे पर मुकुट और गले में हार धारण किए हुए श्री सिद्धार्थ महाराज के पुत्र वर्धमान की

तरह मुक्त मन से अनेक विधि दान देते हुए सायर साह के वगीचे में आए। पहले हीरागरजी की पालकी फिर रूपचन्द्रजी की और उसके पीछे पंचायणजी की चली। सायर साह के वगीचे के आगे तीनों पालकी पर से उतर कर मुख से प्रथमा लापक उच्चारण कर और समस्त आभूषण उतार कर तीनों पूर्व दिशा की ओर मुंह करके बैठ गये, और अपने हाथ से लोचकर अरिहन्त, सिद्ध और साधु को नमस्कार कर महाव्रत रूप सामायिक चारित्र को तीनों ने स्वीकार किया एवं लोगों के द्वारा धन्य धन्य का अभिनन्दन पाते हुए श्री चन्द्रप्रभ स्वामी के मन्दिर में आकर ठहरे।

मूल—अथ सिकदार श्रेष्ठि साधुकारैः सर्वैरागत्य श्री हीरागर रूप-चन्द्रयोराचार्यपदं दत्तं, लुंकासाहस्य वचः पालितं, नाग-पुरीय लुंकाः कथापिता लोके, अथ सकल पर्षदि समेतायां "आरंभे नत्थिदया, महिला संगेण नासए बंभं। संकाए-सम्मत्तं", इत्यादि जीवदया पूर्वकं उपदेशो दत्तः, काव्यद्वयं श्रुत्वोपदेशं बहुभिस्तु भव्यैरारंभकृत्यं सततं निषिद्धं समादृतं शीलमहचूर्य रत्नं सम्यक्त्वमादृतं। तंच निशाशनोनम् (रात्रिभोजन वर्जितं)। आचार्य हीरागर रूपचन्द्रैः समादृते श्री मुनिसिंह धर्मे सुखं प्रवृत्तं, भवभीः प्रणष्टा। जातोहि सर्व गुणप्रकाशः।

अर्थ—बाद प्रसिद्ध सेठ और साहूकार सभी ने आकर श्री हीरागर रूपचन्द्र को आचार्य पद प्रदान किया और लंकासाह की बात रखकर नागोरी लुंका नाम से लोक में प्रसिद्ध हुए। फिर सारी सभा के मिलने पर उन्होंने उपदेश दिया कि 'जहां आरंभ है वहां दया नहीं रहती और नारी के संग में ब्रह्मचर्य नहीं रहता तथा शङ्का से सम्यक्त्व नष्ट होता है, इत्यादि जीव दया पूर्वक उपदेश सुनाया। काव्यमय इन दोनों उपदेशों को सुनकर बहुत से लोगों ने सदा के लिए आरंभ का त्याग कर दिया और ब्रह्मचर्य पालन का व्रत लिया तथा सम्यक्त्व ग्रहण किया। साथ ही रात्रि भोजन भी छोड़ा। आचार्य श्री हीरागर और रूपचन्द्र द्वारा मुनीन्द्र का धर्म स्वीकार

करने पर सुख प्राप्त हुआ और भव भ्रमण की भीति नष्ट होगई। तथा सब गुणों का प्रकाश होगया।

मूल—अथ श्री रूपचन्द्र स्त्रियाऽपि श्रावक व्रतान्यादृतानि, कियत्सु दिनेषु गतेषु श्री हीरागरजी, रूपचन्द्रजी, पंचायणजीकैर्वनवासः समादृतः। तृतीय यामे नगरे गोचर्य्यै आगच्छंति, शुद्धाहारं गृह्णन्ति, षट्काय—जीवरक्षां कुर्वन्ति, पुनः पंचाचारपालनं कुर्वन्ति, वने कायोत्सर्गं विदधति, ग्रीष्मे आतापनां समाददते, शीतकाले शीत-परीषहं सहन्ते, उपशमरसे रक्ताः, भव्यजीवान्प्रतिबोधयन्ति, समकांचन—प्रस्तराः, पूजापमानयोः समाः, महोज्ज्वलतरैर्गुणैर्विराजमाना अरकेऽस्मिन् परमपुरुषवद् दुष्करक्रियां कुर्वन्तः सुखेन संयममाराधयन्ति, अथ ते त्रयोऽपि देशनगरादिषु विहरंति श्रीधर्ममुद्दीपयन्तः। यत्र ते व्रजन्ति तत्र श्रेष्ठिप्रमुखाः सम्यक्त्वमाद्रियन्ते केचन श्रावकत्वम् एवं मालवदेश—वागड़—मरुधरदेश—मेदपाट-देशादिषु विचरन्तः श्रीजिन—धर्म—प्रभावनाभिः केभ्यश्चित् संयमं ददानाः बहून् श्रावकान् कुर्वन्तः नागपुरीय—लुंका गच्छस्याचार्या इति विरुदं दधानाः सन्ति।

अर्थ—श्री रूपचन्द्र की स्त्री ने भी श्रावक व्रत स्वीकार किए। कुछ दिन बीतने पर श्री हीरागरजी, रूपचन्द्रजी और पंचायणजी ने वनवास स्वीकार किया। वे तीसरे पहर में जङ्गल से नगर में गोचरी के लिए आते शुद्धाहार ग्रहण करते और षट्काय के जीवों की रक्षा करते थे। फिर पंचाचार का पालन करते एवं वन में कायोत्सर्ग करते थे। ग्रीष्म ऋतु में धूप की आतापना लेते और शीतकाल में शीत का कष्ट सहन करते, शान्ति रस में तल्लीन हो भव्य जीवों को प्रतिबोध देते, स्वर्ण और पत्थर को समान तथा मान एवं अपमान को भी समान ही मानते थे। इस प्रकार अत्यन्त उज्ज्वल गुणों से युक्त होकर इस पंचम काल में महान् पुरुष की तरह कठिन क्रिया करते हुए सुख पूर्वक संयम की आराधना करते थे। फिर वे तीनों

मुनि देश, नगर आदि में विहार करते रहे श्री जैन धर्म को उद्दीप्त करते प्रभावना करते हुए ये जहां भी जाते वहां के सेठ प्रमुख सम्यक्त्व ग्रहण करते और कोई कोई श्रावक भी बनते। इस प्रकार मालवा, वागड़, मरुधरा और मेद पाट आदि देशों में विचरते हुए श्री जैन धर्म की प्रभावना से किसी किसी को संयम देते तथा बहुत को श्रावक बनाते हुए नागोरी लुंका गच्छ के आचार्य का विरुद धारण करते रहे।

मूल—अथैकदा पंचायणजीको मुनिराज्ञां लात्वा कतिचित्साधुपरिवृतो मालवदेशे नगरकोट्टे समेतः सर्वोऽपि नगरलोको हृष्टः अस्तोक-लोकोपरि धर्मोपदेशदानादिनोपकारः कृतः। तत्रतिष्ठतः श्रीपंचायणजीसाधोः शरीरे असाध्यो रोग उत्पन्नस्तदा अनशनं कृत्वा स्वर्गं प्राप्तः। अथ सं० १५८५ रयणुंजी-केनात्महितं ज्ञात्वा श्रीहीरागरसूरि—पार्श्वे दीक्षा कक्षीकृ-ताऽहिपुरे बहून् दिवसान् यावत् पंचाचारशुद्धं संयमं प्रतिपाल्यान्तसमये अनशनं कृतम्। तस्मिन् समये श्री रूपचंद्र-सूरिभिः स्तंभपुरकोट्टे स्थितै रयणुंजीकैरनशनं गृहीतं श्रुत्वा नागोरपुरे समेत्य स्वपितुराराधना कृत्यानि पूर्णानि कृ-तानि। पंचाशद्दिनानि संस्तारकमाराध्य शुभध्यानेन कालं कृत्वा वैमानिको देवो जातः।

अर्थ—बाद एक समय पंचायणजी मुनि आज्ञा लेकर कुछ साधुओं के सङ्ग मालव देश के नगर कोट में आए। नगर के सभी लोग प्रसन्न हुए। बहुत लोगों पर धर्मोपदेश से उपकार किया। वहां ठहरे हुए श्री पंचायणजी साधु के शरीर में असाध्य रोग उत्पन्न होने से उन्होंने आजीवन अनशन करके स्वर्ग प्राप्त किया। बाद सं० १५८५ में रयणुजीने भी आत्म हित जानकर श्री हीरागर सूरि के पास में दीक्षा ग्रहण की और नागोर में बहुत दिनों तक पंच महाव्रत रूप शुद्ध संयम का पालन करके अन्त समय में अनशन धारण किया। उस समय श्री रूपचन्द्र सूरि ने स्तम्भ पुर में रहते हुए रयणुजी के अनशन के समाचार सुने तो नागोर आकर अपने पिता की और अन्तिम आराधना का कार्य संपन्न किया। पचास दिन पर्यन्त

संस्तारक की आराधना करके वे शुभ ध्यान से काल कर वैमानिक देव हुए।

मूल—अथ श्री हीरागर—रूपचन्द्रसूरयोऽनेकसाधु सहिताः नागोर-पुराद् विहृत्य सं० १५८६ बीकानेरे समायातास्तदा तत्र चोर-वेटिकः श्रीचन्द्रनामा लक्षाधीशोऽस्ति। तेन बहु-साधु-जनानां सुखेन संयम—यात्रा—निर्वाहार्थं स्वकीया कोष्ठिका चतुर्मासी-स्थित्यैदत्ता। अथ व्याख्यानं श्रोतुं पौषध प्रतिक्रमणादिकं कर्तुं च सूरवंशीयाश्चोरवेटिका अन्ये च बहवः समागच्छन्ति। तस्मिन्नवसरे कमलगच्छीय—यतयः शिथिलाचारा अभूवन्। ततः तेभ्यो विरक्तास्सन्तः एतद् गुणरञ्जिताश्च चोरवेटिकाः सर्वे नागोरी लुंकागच्छीया जाताः, कोष्ठिकोपाश्रय—निमित्तं-दत्ता। अथ चातुर्मास्यनन्तरं विहृत्य क्रमेणोज्जयिनी पुरींगताः, तत्रांत्यसमयं मत्वा श्री हीरागरसूरिभिरेकविंशति—दिनाना-मनशनं साधयित्वा मृत्वा वैमानिक सुरत्वं प्रपेदे। पदवी १९ समा भुक्ता। ५९।

अर्थ—बाद श्री हीरागर और रूपचन्द्र सूरि दोनों अनेक साधुओं के साथ नागोर नगर से विहार कर सं० १५८६ में बीकानेर पधारे, उस समय वहां चोरवेटिक (चोरडिया) श्रीचन्द्र नाम का लखपती सेठ था, उसने बहुत साधुओं के सुख पूर्वक संयम यात्रा निर्वाह के लिये अपनी कोठी चातुर्मास वास को दे रखी थी। वहां व्याख्यान सुनने तथा पौषध प्रतिक्रमण आदि करने को सूरवंश के चोरवेटिक और अन्य भी बहुत से लोग आते थे। उस समय कमलगच्छी यति शिथिलाचारी हो गये थे। अतः उनसे विरक्त और इनके गुण से प्रसन्न होकर चोरवेटिक (चोरडिया) सभी नागोरी लुंका-गच्छीय हो गए और कोठी उपाश्रय के लिए दे दी। फिर चातुर्मास के पीछे विहार करके क्रमशः उज्जैनी नगर गए। और वहां पर अपना अंत समय जानकर श्री हीरागर सूरि बीस दिन का अनशन साध कर मरे और वैमानिक देव हुए। उनने १९ वर्ष तक पद का भोग किया।

मूल—अथ श्री रूपचन्द्र सूरय उज्जयिनीतो विहृत्य क्रमान्महिम नगरे पादावधारितास्तत्र चातुर्मासिक—स्थिति—करणाय कोटि धना-

धीश गोवर्द्धननामकश्रेष्ठिपार्श्वतः स्थानं मार्गितं ततः परीक्षां कर्तुं तथा हास्यपूर्वकं श्रेष्ठी प्राह भो महाभागाः ! स्थ तु योग्या वसतिस्तु काचिन्नास्ति परं त्वस्मदीय कोष्ठिका-भिमुख-चतुर्द्वारकेऽस्मद्रथ-चक्राणि पतितानि सन्ति तेषामुपरि-स्थीयतां सुखेन, तदाचार्यश्रीरूपचन्द्रैरन्ये तु साधवोऽन्यत्र चातुर्मास्यै प्रेषिताः स्वयं देपागर मुनिनाऽन्वितैः रथचक्रोपर्युपविश्य मासोपवासं प्रत्याख्याय धर्मध्यान परायणैः स्थितम् । श्रेष्ठिना रहो लोका रक्षिताः परं ते तु महान्तः उत्तम पुरुषा मेरुवद्धर्मध्यानेऽचलाः स्थिता दृष्टाः । श्रेष्ठिपार्श्वे तैर्लोकैः सर्वोऽपि धर्मध्यानादिको व्यतिकरस्तेषां निरुपितः ।

अर्थ—बाद श्री रूपचन्द्र सूरि उज्जयिनी से विहार करके क्रमशः महिम नगर पधारे और वहां चौमासे के लिए करोड़पति गोवर्द्धन नामक सेठ के पास मकान की याचना की । तब परीक्षा के लिए सेठ ने हंसी पूर्वक कहा—ऐ महाभाग ! रहने योग्य स्थान तो कोई नहीं है परन्तु हमारी कोठी के आगे चतुर्द्वारिक (चोबारे) में हमारे रथ के चक्के पड़े हुए हैं, उन पर सुख से ठहर जाओ, तब आचार्य श्री रूपचन्द्र ने अन्य साधुओं को अन्यत्र चातुर्मास के लिए भेज कर स्वयं देपागर मुनि के सङ्ग रथ के चक्के पर बैठकर मास उपवास का प्रत्याख्यान करके धर्म ध्यान परायण हो ठहर गए । सेठ ने छिपे कुछ लोग रक्खे परन्तु वे तो महा उत्तम पुरुष थे, अतः मेरु की तरह धर्म ध्यान में अचल देखे गये । गुप्तचरों ने उन साधुओं का धर्म ध्यानादि सब हाल सेठ को कह सुनाया ।

मूल—अथ श्रेष्ठी तदीय गुण श्रवणेन जागरूक भव्य परिणामः सन् प्रातरुत्थायागत्य प्रदक्षिणात्रय दान पूर्वकं नत्वा पादयोर्निपत्य कृताञ्जलिः सन्नित्युवाच । हे स्वामिन् ! असारेऽस्मिन् संसारे भवन्तो धन्याः शुद्धक्रियोद्धारकाः पापवारकास्तारकाश्च सन्ति, न दृश्यतेऽस्मिन् समये भवादृशः कश्चित् तपोधनेषु मुख्यः । अहं पापीयानस्मि येन भवतां कष्टं दत्तं महान्

ऽविनयो वः कृतः तदिदानीं स्वामिन् ! भवन्तः कृपां कृत्वाऽन्यस्मिन् स्थाने समीचीने तिष्ठंतु । तदा श्री रूपचन्द्राचार्यैरुक्तं हे महानुभाव ! एको मासक्षपणस्तत्रैव करिष्यते पश्चात् स्पर्शनानुरूपं विधास्यते । एवं कुर्वतां मासक्षपणः पूर्णो जातस्ततः पारणार्थे द्वये चलिताः पारणाय एकैकमुत्कलं गृहरक्षितमासीत्, तदा श्री रूपचन्द्राचार्यैस्तु गृहस्थस्यैकं गृहमकपाटं वीक्ष्य प्रवेशः कृतस्तत्र गृहस्थेनाऽभाणि-महाभाग ! अधुना तृतीययामेऽन्य आहारस्तु न, साम्प्रतं प्रासुकाः माषाः पतिताः सन्ति ते यदीच्छाऽस्ति तदा गृह्यताम् । अथ तैरपि शुद्धाहार-निरीक्षण पूर्वं गृहीताः । अथ देपागरसाधुरेकस्य मिथ्यात्विनो गृहस्थस्य भवनमकपाटं विलोक्य प्रविष्टस्तदा तत्रैका स्त्री प्राह—अधुना अशनस्य का वेला रक्षान्वितारब्धा—स्थाली कस्मैचित्कार्याय भृत्वा धृताऽस्ति यदीच्छाऽस्ति तदेयं गृह्यताम् । तदा शुद्धां मत्वा सा गृहीता । अथ द्वयेऽपि स्थाने पारणां विधायाष्टमं गृहीतम्, तस्यैव श्रेष्ठिन आज्ञां लात्वा तस्यामेव कोष्ठिकायां महत्यन्यस्मिन् चतुर्द्वारके स्थिताः ।

अर्थ—अब उनके गुण श्रवण से शुभ परिणाम वाला सेठ सवेरे उठकर उनके पास आया और तीन वार प्रदक्षिणा करके पांवों में गिरकर हाथ जोड़े हुए बोला—हे स्वामी ! इस असार संसार में आप धन्य हैं, शुद्ध क्रिया के उद्धारक, पाप के निवारक और तारक-तारने वाले हैं । इस समय आपके जैसा दूसरा कोई प्रमुख तपस्वी नहीं दिखाई देता । मैं तो पापी हूं जिससे कि आपको कष्ट दिया और आपका बड़ा अविनय किया । इसलिए हे स्वामी ! अब कृपा करके आप दूसरी किसी अच्छी जगह में ठहरें । तब श्री-रूपचन्द्राचार्य बोले—हे महानुभाव ! एक मास क्षपण तो यहीं करेंगे बाद स्पर्शना के अनुकूल किया जायगा । इस तरह उनका मासोपवास पूरा हो गया । बाद दोनों पारणा के लिए चले । पारणा के लिए एक एक घर खुला रक्खा था । श्री रूपचन्द्र आचार्य ने गृहस्थ का एक घर खुला देखकर प्रवेश

किया। वहां गृहस्थ ने कहा – महाभाग! अभी तीसरे पहर में दूसरा आहार तो नहीं है, प्रासुक उड़द पड़े हैं, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो ले लो। उन्होंने भी शुद्ध आहार देखकर ले लिया। बाद देपागर साधु एक मिथ्यात्वी गृहस्थ का खुला घर देखकर वहां गये, तो घर में एक स्त्री बोली—अभी भोजन का समय तो नहीं है। राख पड़ी हुई राब की थाली किसी काम से धरी हुई है, अगर इच्छा हो तो यह ले सकते हो। शुद्ध समझ कर उन्होंने वह राब ले ली। बाद दोनों ने स्थान पर पारणा करके अष्टम तप पचख लिया फिर सेठ की आज्ञा लेकर उसी की कोठी में किसी बड़े चौबारे में ठहर गए।

मूल—अथ श्रेष्ठी बभाण—हे स्वामिन्नद्य प्रभृति मनोवाक्कायैर्यूयं मे गुरवोऽहं भवदीयः श्रावकोऽस्मि। अथ देशान्तरेषु श्रेष्ठिना निजवणिक् पुत्रानन्यानपि स्वीयसम्बन्धिप्रमुखान् पण्यानि-दायं २ निवेदिताः समाचाराः, यदेते मुनयः सत्याः सत्क्रिया-पालकाः धन्यतराश्च कियद् गुण वर्णनालिख्यते, ये केचनै-तेषां चरणारविन्दयुगलं नंस्यंति तेषां जन्म फलेग्रहि--सुफलं। वयं तु एतेषां श्रावका जाताः स्म, इतीदृशान् समाचारान् वाचं २ बहवो लोकाः श्रावका जातास्तत्रत्याऽपि बहवस्तथैव, जालोरे कोचरान्वया वेलापत्याः। कालू निवासिनो भांडागारिणः, जेसलमेरौ बोहराऽभिजनाः, कृष्णगढ़े व्याघ्रचारा, चाण्डालिया चौधरी, चोपड़ा, भट्टनयरे नाहरगोत्रीयाः महीपालापत्या साह-पद धारिणः, वैद्या, वाफणा, ललवाणी, लूणापत्याः, वरढ़ीया, नाहटा प्रमुखा अनेक-ज्ञातीया ओकेशवंशीया अग्रोतकाश्च 'अगरवाल' नागोरी लुंका गणीया जाताः। एवमेकलक्षमशीति-सहस्राधिकं गृहाणां प्रतिबोधितम्। पूर्णभद्रदेवोऽपि सान्निध्य-कृज्जातः। अथ श्री रूपचन्द्राचार्याः स्वान्त्यसमयं ज्ञात्वा पंचविंशति दिनानि यावदनशनं विधाय महिमपुरे एव कालं कृत्वा वैमानिकसुरत्वं प्रपेदिरे। सं० १५८० तः २९ वर्षान् यावत्पदं भुक्तम्। ६०।

अर्थ—एक दिन सेठ बोला—हे स्वामी आज से आप हमारे गुरु हैं और मन, वचन, काया से मैं आपका श्रावक हूं। फिर सेठ ने देशान्तरों में अपने अन्य वणिक् पुत्रों को और प्रमुख सम्बन्धियों को भी पत्र दे देकर निवेदन किया कि ये मुनि सचमुच में सत् क्रिया के पालक और धन्य-तर हैं, कहां तक इनका गुण वर्णन लिखें। जो कोई इनके चरण कमल को प्रणाम करेगा उसका जन्म सुफल होगा। हम सब तो इनके श्रावक हो गए हैं, इस तरह के समाचार पढ़ २ कर बहुत से लोग श्रावक हो गए, वहां के भी बहुत से वैसे ही, जालोर में कोचर वंशीय वेलावत, कालू निवासी भंडारी, जेसलमेर में बोहरावंशी, कृष्णगढ़ में बाघचार, चाण्डालिया, चौधरी चोपड़ा, भट्टनगर में नाहर गोत्री महीपाल के पुत्र साहपदधारी वेद, बाफणा, ललवाणी, लूणावत, बरढीया, नाहटा प्रमुख अनेक जाति के ओकेश वंशीय (ओसवाल) और अग्रवाल भी नागोरी लुंकागच्छी हो गए। इस तरह एक लाख अस्सी हजार घर को उन्होंने प्रतिबोध दिया। शासन रक्षक पूर्णभद्र देव भी उनका सेवक हो गया। बाद श्री रूपचन्द्र आचार्य अपना अन्त समय जानकर २५ दिनों का अनशन करके महिमपुर में स्वर्गवासी होकर वैमानिक देव हुए। सं० १५८० से २६ वर्षों तक आचार्य पद पर रहे। ६०।

मूल—तत्पट्टे श्री देपागर सूरयो बभूवुस्ते परीक्षक वंशीयाः कोरडा निगमे खेतसी नामा जनकः; धनवती जननी नागोरपुरे चारित्रं, पदमपि तत्रैवात्तम् (गृहीतं) सं० १६१६ चित्रकूट महादुर्गे कावडियान्वयो भारमल्लो धनी तपागणीयोऽभूत् तेन श्री देपा-गर सूरीणामभिधानं शुद्धक्रियाधारकत्वं च श्रुतं तदादित एव तद् गुणरञ्जित-चेतस्कोऽवदत्, श्लोकः—"धन्यो देपागर स्वामी, प्रदीपो जैन शासने, एष एव गुरुर्मेस्ति, धन्योऽहं तन्निदेशकृत् ।" इति भावनया शुद्धात्माभूद्भारमल्लः तस्मिन्नवसरे तत्रत्यो भामा नामा नाहटोऽस्ति तद्गेहे पुण्ययोगाद् दक्षिणा-वर्तः शंखः प्रादुरभूत्। तत्सान्निध्यात् गृहेऽष्टादश कोटयो धनस्य प्रकटी भवंति।

अर्थ—उनके पाट पर श्री देपागर सूरि हुए। वे परीक्षक (पारख)

वंशी थे, कोरडा निगम में खेतसी नामा उनके पिता और धनवती माता थी। नागोर में संयम लिया और वहीं पर आचार्य पद भी ग्रहण किया। सं० १६१६ चित्रकूट (चित्तौड़) महादुर्ग में कावडिया वंशी भारमल्ल तपागच्छी एक सेठ था, उसने श्री देपागर सूरि का नाम और शुद्ध क्रिया-धारीपन सुना। तब से ही वह उनके गुण में रंजित चित्त वाला हो गया और बोला कि—धन्य देपागर स्वामी, जो जैन शासन में प्रदीप हैं। यही हमारे गुरु हैं, उनका आज्ञाकारी होने से मैं धन्य हूं। इस भावना से भारमल्ल की आत्मा शुद्ध हो गई। उस समय में वहां भामा नाम का नाहटा सेठ था। उसके घर में पुण्य योग से दक्षिणावर्त शंख प्राप्त हुआ। उसके संयोग से घर में १८ करोड़ धन की संपदा हो गई।

मूल—अथ पण्मासी प्रान्ते शंखदेवेन भामाकस्य स्वप्ने दर्शनं दत्तं निवेदितं च भो भामासाह ! त्वं शृणु तव भार्यायां उदरे पुत्रीत्वेन कश्चिज्जीवः समेतोऽस्ति कावडिया—भारमल्ल भार्योदरे सुकृती कश्चन जीवः सुतः अवतीर्णोऽस्ति ततस्तत्-पुण्य—प्रेरितो भारमल्ल कावडिया गारेगमिष्यामि, इत्या-कर्ण्य भामाकोऽवदत्—एवं मा याहि यथाहं करोमि तथा-गच्छेत्युक्ते तेनोमिति भणितम्, अथाहम्मुखे जाते सर्व—स्वजन सहितः शंख स्वनजागरूकी कृतानेकलोकः स्वर्ण-स्थाले दक्षिणावर्त शंखं निधायाति महर्घ्ये (न) वस्त्रेणा-च्छाद्य भामाको भारमल्ल—भवनाभिमुखमागतस्तमायान्त-मालोक्य सानन्दं सादरं भारमल्लोभिमुखं भिलितः पृष्टश्च किमागमन—प्रयोजनं प्रोच्यतामित्युदिते भामाकोऽवदत् कर्णो भोः सभ्य सम्बन्धिन् ! ममपुत्री तव च पुत्रो भविष्यति, तयोः सम्बन्धं कर्तुं श्रीफल स्थाने इममद्भुत—माहात्म्यं शंखं ददामि इति निशम्य समुत्पन्नपरमामोदो बहु-दान-मान—पूर्वकमग्रहीत् भारमल्लः गृहकोष्ठकान्तः समभ्यर्च्य सम्यक् चंदनचतुष्कोपरि संस्थाप्य संस्मृतो देवस्तेना-

ष्टादश कोटि धनं तत्र प्रकटितम् । अथ महती कीर्ति-र्विस्तृता ।

अर्थ—बाद षण्मासी के अन्त में शंखदेव ने भामा को स्वप्न में दर्शन दिया और बोला कि ऐ भामाशाह ! तुम सुनो—, तुम्हारी स्त्री के पेट में पुत्री रूप में कोई जीव आया हुआ है और भारमल्ल कावडिया की स्त्री के उदर में कोई पुण्यात्मा जीव पुत्र रूप से अवतरित हुआ है—इसलिये उसके पुण्य से प्रेरित होकर मैं भारमल्ल कावड़िया के घर जाऊंगा, ऐसा सुनकर भामाशाह बोला—ऐसे मत जाओ जैसा मैं करूं वैसे जाओ, ऐसा कहने पर उसने हां कहा । फिर प्रभात होने पर अपने सभी स्वजनों के साथ शंख के स्वर से अनेक लोगों को जगाते हुए, सोने की थाली में दक्षिणावर्त शंख को रखकर ऊंचे मूल्यवान् वस्त्र से ढक कर भामाशाह भारमल्ल के घर की ओर आये । उसको आते देख कर आनन्द और आदर सहित भारमल्ल भी आगे आकर मिले और पूछा कि—कहिये कैसे पधारना हुआ ? ऐसा कहने पर भामा ने कान में कहा—ऐ सभ्य सम्बन्धिन् ! मुझे पुत्री और आपको पुत्र होगा, उन दोनों का सम्बन्ध करने के लिए श्री फल के स्थान में इस अद्भुत माहात्म्य वाले शंख को देता हूं । यह सुन कर परम प्रसन्नता के साथ एवं बहुत-बहुत दान मान-पूर्वक भारमल्ल ने शंख ग्रहण किया एवं घर के कोठे में अच्छी तरह से पूजाकर चन्दन की चौकी पर रख के देव का स्मरण किया, जिससे १८ करोड़ धन वहां पर प्रकट हुआ—इससे बड़ी कीर्ति फैली ।

मूल—एकदा तत्र वनान्तरुच्चैर्मंडपाधो धर्मध्यानं विदधत् साधु गुणग्रामाभिरामः श्री देपागरस्वामी शुद्धतपोधनो भारमल्लेन दृष्टो, विधिवद् वंदितश्च शुद्धधर्मोपदेशामृतं पीतं श्रवणा-भ्याम् । अति-प्रसन्नेन भारमल्लेन विमृष्टमहो महान् भाग्योदयो मे प्रकटितो यदीदृग्गुणगुरवो दृष्टाः सर्वेऽर्था मे सेत्स्यन्ति तदा भारमल्लो अन्ये च बहवः श्रावका जाताः नागोरी लुंका गणीयाः ॥

अर्थ—एक समय वहां नगर के वन में उच्च मंडप के नीचे भार-मल्ल ने धर्म ध्यान करते हुए साधु के गुण समूह से सुन्दर शुद्ध तपोधनी

श्री देवागर स्वामी को देखा और विधि पूर्वक वन्दन किया और कानों से शुद्ध धर्मोपदेश रूप अमृत का पान किया। भारमल्ल ने अत्यन्त प्रसन्न मन से विचार किया कि अहो मेरा महान् भाग्योदय है कि इस तरह के गुणी गुरु के दर्शन हुए—मेरे सभी मनोरथ सिद्ध होंगे। उस समय भारमल्ल और दूसरे भी बहुत से श्रावक नागोरी लुंका गच्छी हो गये।

मूल—अथ भारमल्लस्य भामा नामकः सुतोऽजनि महान्महः कृतः सर्वत्र दानादिनार्थिजन—मनोरथाः पूरिताः, अन्येऽपि ताराचन्द्रादयः पुत्रा अभूवन्। तत्र भामासाह—ताराचंद्रौ विश्रुतौ जातौ। स्वगच्छरागेण बहवो जनाः स्वगणे समानीताः। पुनः श्री राणाजीतोऽमात्य पदंलात्वा बलिनौ जातौ। ताराचंद्रेण सादड़ी नाम नगरं स्थापितं। सर्वत्र पौषधशालादिकानि स्थानानि कारितानि। स्थाने २ पुरे २ ग्रामे २ बहुजनेभ्यो धनं दायं (दत्वा) स्वगणीयाः कृताः। श्री नागोरीय—लुंकागणोऽति-ख्यातिमाप। पुनर्भामासाहेन दिगम्बर मतगा नरसिंघपौराः स्वगणे समानीता, बहुस्वं दत्वा १७०० गृहाणि तेषामात्मीयानि कृतानि। भिंडरकादिपुरेषु तदा च जातं श्रावक गृहाणां चतुरशीति सहस्राधिकं लक्षमेकम् १८४००० पुनः श्री देपागर सूरेर्विजयराज्ये लुदिहाना निगम निवासी श्रीचंद नामा ओस-वाल जातिश्चतुरशीति—कोटिवित्तेश्वरो तस्य सोदरः सुरी-भूतः प्रत्यहं वणिक्—पुत्राणां लेखानितस्ततो दत्ते येन बहुधनोत्पत्तिर्भवति! सचैकदा नायातस्तदा श्रीचंद्रेण पृष्टं हे भ्रातर्ह्यः कथं नागतः—तदा सुरेणोक्तं भ्रातः ह्यः प्राचि महाविदेहे श्री सीमंधर जिनं नंतुमिंद्रोऽगात् तेन सहाऽह-मपि गतोऽभूवम्।

अर्थ—बाद भारमल्ल को भामा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसके लिए बहुत बड़ा उत्सव किया। सर्वत्र दानादि देकर याचकों के मनोरथ पूर्ण किये। ताराचंद्र आदि और भी पुत्र हुए। उनमें भामासाह और

ताराचंद्र दोनों बहुत प्रसिद्ध हुए। अपने गच्छ के धर्म राग से बहुत से आदमी अपने गण में लाए गये। फिर श्री राणाजी से मंत्रिपद पाकर दोनों भाई और भी बलशाली बन गए। ताराचंद्र ने सादड़ी नामक गांव स्थापित किया। सब जगह पौषध शालादि के स्थान बनवाए। स्थान २ में, नगर २ और ग्राम २ में बहुत से जनों को धन देकर अपने गच्छ में किया—इस तरह श्री नागोरी लुंका गच्छ अत्यन्त ख्याति प्राप्त हो गया। फिर भामा-शाह ने दिगम्बर मतानुयायी नरसिंघपुराओं को अपने गण में लिये। बहुत सा धन देकर इनके १७०० घरों को अपना बनाया। तब भिंडर आदि गांवों में १८४००० श्रावकों के घर हो गए। फिर श्री देपागर सूरि के विजय राज्य में लुधियाना नगरवासी ओसवाल जातीय श्रीचंद नाम का ८४ करोड़ धन का स्वामी था, उनका सहोदर भाई देवलोक में था। स्नेहवश वह वणिक् पुत्रों के लेख नित्य इधर उधर भेजा करता जिससे सेठ को बहुत धन की आमद होती। वह एक दिन नहीं आया, तब श्रीचंद ने पूछा कि हे भाई! कल क्यों नहीं आए तब देव बोला कि हे भाई! कल पूर्व महा-विदेह में श्री सीमंधर स्वामी को नमस्कार करने को इन्द्र गया था, उनके साथ मैं भी गया हुआ था।

मूल—व्याख्यानान्ते शक्रेणानुयुक्तः प्रभो! भरतक्षेत्रेऽपि कश्चित् सत्यः साधुः—वर्तते नवेति पृष्टे प्रभुणाऽभाणि हरे! अस्मिन् समये देपागर नामा मुनिपोऽस्ति, स चतुर्थारक मुनि—समः संयमभृत्, इमां प्रवृत्तिमाकर्ण्य श्रीचंदेनोक्तं स क्व साम्प्रत-मस्ति? देवः प्राह—सन्मानकपुरे (समाणा नगरे) तपस्यती—त्याकर्ण्य हृष्ट चेतसा श्रीचंदेन स्व मानुषः प्रेषितः। तत्रत्यः—श्राद्धानामिति कथापितं च भवद्भिर्देपागर स्वामिनं नत्वा मदीयाऽत्रागमन—प्रार्थना कार्या। ततस्तैः पुराद् बहिर्देवमंडपे स्थिता दृष्टाः प्रणताश्च भक्त्या विज्ञप्ताः, तदा श्री सूरिभिरुक्तं ज्ञास्यते साधुधर्मोऽस्ति। ततो द्वित्रेष्वब्देषु गतेषु श्री श्रीपूज्या लुदिहाना बाह्योद्याने निरवद्य प्रदेशे तपस्यन्तः स्थिताः तदा प्रागुज्ञापितेनारामिकेण वर्द्धापनिका श्रीचंदाय दत्ता, सोऽपि

सत्वरं तस्य पद-एवागत्य ववंदे, तुष्टाव च धन्योऽसि स्वामिन्, भवादृशः संयमी कोऽपि साम्प्रतं नास्ति, ततः श्री सूरिभिरुप-देशामृत पानेन तच्छ्रवसी तोपिते तस्मिन्नेवावसरे श्रीचंदसुतया धर्मकुमरीत्याख्यया त्यक्त-श्वसुरादिसंबंधया ज्ञाततत्वया गृहे स्थितयैव श्रावकाचार पालनपरया सर्वागम श्रवणावगत-पर-मार्थया तत्रागत्य विधिवद् गुरवोऽभिवंदिताः गुरुवचन सुधा-रस सुहितया दीक्षाकक्षीकरणाय चेतो विशोध्य स्वयमेव तत्सा-क्षिकं चरणमात्त तिसृभिर्द्धर्म सखीभिः सार्द्ध, लोके महान् धर्म प्रकाशोऽर्जनि यशश्च। अस्मिन् गणे सैव प्रवर्तिनी प्रथमा ऽभूत्तयापि द्वादश-क्रोशी-परिमंडल विहारः कृतोनाधिकः। एवं श्री देपागरस्वामिना धर्मोद्योतं विधायाचार्य-पदं नक्षत्र मितसमाः परिभुज्य मेड़तानगरेऽनशनं कृत्वा २१ एक-विंशति दिनान्ते स्वर्गतिः प्राप्ता। ६१।

अर्थ—व्याख्यान के अन्त में शक्र ने पूछा कि प्रभो! भरत क्षेत्र में भी क्या कोई सच्चा साधु है? प्रभु बोले—हे इन्द्र! इस समय देपागर नामक मुनीश हैं—जो चौथे आरे के मुनि समान संयमधारी हैं। इस समा-चार को सुनकर श्रीचंद बोला वह अभी कहां है? देव ने कहा—समाणा नगर में तपस्या करते हैं यह सुनकर प्रसन्न चित्त हो श्रीचंद ने अपना आदमी भेजा और वहां के श्रावकों को कहलाया कि आप सब देपागर स्वामी को नमस्कार कर मेरे यहाँ आने की प्रार्थना करना। तब उन लोगों ने गांव के बाहर देव मंडप में ठहरे हुए देपागर मुनि के दर्शन किये और प्रणाम किया और भक्ति पूर्वक विनती की। तब श्री सूरि बोले—जाना जायगा साधु का मार्ग है। फिर दो तीन वर्ष बीतने पर श्री श्री पूज्य लुधियाना के बाहरी बगीचे में शुद्ध स्थान में तपस्या करते हुए ठहरे। तब पहले सूचना पाये हुए बागवान ने श्री चंद को बधाई दी। उसने भी शीघ्र उनके चरणों में आकर वन्दना की और प्रसन्न हुआ, नत मस्तक हो स्तुति करने लगा—हे स्वामी! आप धन्य हैं आप जैसा कोई दूसरा तपस्वी अभी नहीं है। बाद श्री देवागर सूरि ने उपदेशामृत के पान से लोगों के कान तृप्त किये।

उसी समय श्रीचंद की धर्म कुमारी नामवाली पुत्री श्वसुर कुल के सम्बन्ध को छोड़ तत्वों की जानकार एवं घर में रहती हुई, श्रावकाचार को पालन करने लगी, वह समस्त आगमों के परमार्थ को जानने वाली थी। उसने वहां आकर विधि पूर्वक गुरु वन्दना की और गुरु-वचन रूप अमृत रस से अपना हित मानने वाली दीक्षा स्वीकार करने को चित्त शुद्धि करके गुरु की साक्षी से स्वयमेव तीन धर्म सखियों के संग चारित्र अंगीकार किया। लोक में महान् धर्म का प्रकाश और यश हुआ। इस गण में वही पहली प्रवर्तिनी हुई, उसने भी बारह कोश के मंडल में विहार किया, अधिक नहीं। इस प्रकार श्री देपागरस्वामी ने धर्म का प्रकाश करके २७ वर्ष तक आचार्य पद भोग कर मेड़ता नगर में २१ दिनों के अनशन से स्वर्गवास प्राप्त किया।

मूल—तत्पट्टे श्री वैरागर स्वामी दिदीपे, श्रीमाल ज्ञातिः भल्लराजः पिता, रत्नवती जननी नागोरपुरे जन्म, चारित्रपदं च तत्रैव। एकोनविंशतिः १९ समाः पदवी भोगः। मेड़तानगरे ११ दिनान्यनशनं कृत्वा देवत्वं प्राप। ६२।

अर्थ—उनके पाट पर श्री वैरागर स्वामी सुशोभित हुए। श्रीमाल जाति के भल्लराज उनके पिता और रत्नवती माता थी, नागोरपुर में जन्म, दीक्षा एवं आचार्यपद भी वहीं हुआ। १९ वर्ष तक पदवी भोग कर मेड़ता नगर में ११ दिन का अनशन करके देवपद प्राप्त किया।

मूल—तत्पट्टे श्री वस्तुपालोऽलंचक्रे, कड़वाणीय गोत्रे महाराजः पिता, हर्षानाम्नी माता नागोरपुरेऽजनि, चरणं पदं च नागोर पुरे। वर्ष सप्तकं पदवी भुक्ता, सप्तविंशति २७ दिनान्यनशनं कृत्वा मेड़तापुरे स्वर्जगाम ॥ ६३ ॥

अर्थ—उनके पाट पर श्री वस्तुपाल सुशोभित हुए, कड़वाणीय गोत्रीय महाराज पिता और हर्षा नामकी माता थी, नागोर में जन्म और चारित्र पद प्राप्त किए। ७ वर्ष तक पदवी भोग कर और २७ दिनों का अनशन करके मेड़ता में स्वर्ग गए।

मूल—तदीयपट्ट विभूषणं—परिष्कर्ता श्रीकल्याणसूरिर्जातः, शिव-

दासः पिता सूराणा गोत्रीयः, कुशला नाम प्रसूः । राजलदेसर निगमे जन्म, वीकानेरे चारित्रं, पदं च नागोरपुरे जातम् । चतुर्विंशति समाः पदं भुक्तं, लवपुर्यां दिनाष्टकमनशनं देवलोकालंकारतामियाय, अयं सूरिर्महाप्रतापः शतं शिष्याणां हस्तदीक्षितानामजनि जागरूक प्रत्ययो गच्छवृद्धिकृत् ॥६४॥

अर्थ—उनके पाट को सुशोभित करनेवाले श्रीकल्याणसूरि हुए, सूराणा गोत्री शिवदास उनके पिता और कुशला नाम की माता थी। राजलदेसर गांव में जन्म, बीकानेर में दीक्षा और नागोर में आचार्य पद हुआ। २४ वर्षों तक पद का पालन किया। लवपुर (लाहौर) में आठ दिनों का अनशन करके देवलोक को प्राप्त हुए। यह आचार्य महाप्रतापी थे, सौ शिष्यों को दीक्षित किये तथा जागरूक प्रत्यय एवं गच्छ की वृद्धि करने वाले थे। ६४।

मूल—तत्पट्टे भैरवाचार्यो दिदीपे, सूरवंशजः । तेजसीजी पिता तस्य, लक्ष्मी नाम्नी प्रसूरभूत् ।१। जन्म चारित्रपट्टं श्रीकृत्यं नागोरपूर्वरे । द्वादशाब्दी तु सूरित्वे, दिग्दिनान्यनशनं कृतम् ।२। सोजताह्वपुरे प्राप देवत्वं, शुद्ध संयमः । पंच षष्ठितमः सूरिः, क्रियाद् वृद्धिंगणे पराम् ।३। यस्य धर्म राज्येऽनेके व्यतिकराः शुभा जाताः नागोरपुरे गहिलड़ा गोत्रीया हीरानन्द प्रभृतयो निःस्वीभूय मेड़तापुरे श्री गुरुवंदनाय गता, निशीथे भैरव विहित—सान्निध्यात् श्री श्रीपूज्यैरेतेषामृद्धि—वृद्धि—वचोदत्तं तेऽपितस्य गुरोः कृपया पूर्वाशांनगरेषु महेभ्या भूता तदनुतदपत्यै (फर्क सेरतो) दिल्लीश्वराज्ञाज्जगच्छ्रेष्ठिपदं महाराजपदं च प्राप्तं सर्वसेनतो वितीर्ण कोटि धनैरिदं तु प्रसिद्धतरं आख्यानं ततो न विस्तृत्य लिखितम् ॥६५॥

अर्थ—उनके पाट पर भैरवाचार्य सुशोभित हुए, सूरवंशज तेजसीजी उनके पिता और लक्ष्मी नाम की माता थी। जन्म, दीक्षा, और पदवी दान का काम नागोर में हुआ। बारह वर्षों तक सूरि पद पर रहे, दश दिनों का

अनशन किया और सोजत नाम के नगर में देवलोकवासी हुए। ये शुद्ध संयमी ६५ वें सूरि गण में उत्तम वृद्धि करें। जिनके धर्म राज्य में अनेक शुभ वृत्त हुए। नागोर में गहिलड़ गोत्रीय हीरानन्द प्रभृति दरिद्र होकर मेड़तापुर में गुरु वन्दन के लिए गये। रात में भैरव की सेवा से श्री श्रीपूज्य ने उसको ऋद्धि सिद्धि वृद्धि का वचन दिया, वह भी गुरु की कृपा से पूर्व दिशा के नगर में बहुत बड़ा धनी हो गया। बाद में दिल्लीश्वर की आज्ञा से जगत सेठ और महाराज पद को प्राप्त किया और बड़ा धन का विस्तार किया, इसका कथानक बहुत प्रसिद्ध है इसलिये यहाँ विस्तार से नहीं लिखा।

मूल—तत्पट्टे श्री नेमिदाससूरिरभवद् विजयी सूरवंशयः रायचंदः पिता, सजना जननी, जन्मचारित्रे बीकानेरपुरे, पदमहिपुरे गृहीतं सत् १७ समा भुक्तं दिनसप्तकानशनेन उदयपुरे स्वरितः (स्वर्गं प्राप्तः) ॥६६॥

अर्थ—उनके पाट पर श्रीनेमिदाससूरि हुए, विजयी सूरवंशीय रायचन्द उनके पिता और सजना माता थी। जन्म और दीक्षा बीकानेर में और पदवी नागोर में ग्रहण की जो १७ वर्षों तक भोगी गई। दिन सात के अनशन से उदयपुर में स्वर्गवासी हुए।

मूल—तत्पट्टं शोभयामास श्रीआसकरणाचार्यः। सूरवंशीयः लब्धमल्लः पिता तारांजीति मातृनाम। मेड़तापुरे जन्मचारित्रं च, पदं नागोरपुरे, एकदा श्री श्रीपूज्या नागोरनगरे स्थितास्सन्ति। तस्मिन्नवसरे भागचन्द नामा सूरवंशयः स्वपितृ-पितृव्य-भ्रातृ-भ्रातृज-पुत्रादि-परिवृतो व्याख्यानं शृण्वन्नुपाश्रये स्वस्थाने उपविष्टोऽस्ति। तदानीं यशोदा कुक्षिजास्तस्य पंचापि पुत्रास्तत्र स्थितास्सन्ति, चत्वारस्तुसुता अग्रजाः स्वोचित स्थाने निषण्णाः पंचमोऽनुजः सदारङ्गनामा सप्तवर्षीयो निज पितृव्यांके उपविष्टः। महत्यां श्रीसंघपर्षदि व्याख्याने जायमाने बालस्वभावत्वाद् सदारङ्गः पितृव्यांकादुत्थायोपपट्टं वृद्धमुनि समुपवेशनस्थाने द्रुतं गत्वा निषसाद, तदा सर्वैर्हास्यपूर्वक—

मुक्तं भो अत्र मा उपविश, अत्र तु यः कश्चित् तपस्वी प्राज्ञो यतिः प्रवयास्तस्योपवेशनभूरियमितिभणितेऽहं यतिरेवभूत्वा निपत्स्यामि अत्रेत्युक्ते सदारंगेण, सर्वेषु मौनमाधायस्थितेषु श्रीःश्रीपूज्यास्ततो विहृत्य मेड़तापुरे गतास्तदनु तेन सदारंगेन गृहे मात्रादीनां पुरतो निज-संयम-ग्रहणाशयः प्रोक्तः, अत्या-ग्रहेण तदाज्ञामादाय श्री सूरीनाकार्य्य च कृत-सुमतिसंगेन सदारंगेणाऽमितवसुत्यक्त्वा महामहपूर्वकं दीक्षांगीचक्रे, नवमवर्षे, तत्प्रभृत्येवाध्येतु लग्नः वर्षपंचके एवानूचानो जातः । ततः पञ्चदशाब्दिकेन पष्ठतपोभिग्रहो गृहीतः, महान् तपस्वी, विकृति त्यागी, शुद्धाशयो, विज्ञश्चेति सत्वाचार्यैरन्त्य-समये श्रीवर्द्धमाननाम्नोऽन्तेवासिनो गणभृत् पद दानावसरे प्रोक्तं, भवतामात्मीय पट्टं सदारङ्गाय देयमिति १८ समाः पदं भुक्तं दिननवकाननशन करणेन श्री श्रीपूज्यैर्द्यौः प्राप्ता सम्वत् १७२४ फाल्गुन मासे ॥६७॥

अर्थ—उनके पाट को श्री आसकरणाचार्य ने सुशोभित किया । सूरवंशीय लब्धमल्ल उनके पिता और तारांजी माता का नाम था । मेड़ता नगर में उनका जन्म और दीक्षा हुई, पदवी नागोर नगर में हुई । एक समय श्री श्रीपूज्य नागोर नगर में विराज रहे थे, उस समय भाग-चन्द नाम का सूर वंशीय सेठ अपने पिता, चाचा, भाई, भतीजे और पुत्रादि से युक्त होकर व्याख्यान सुनने को उपाश्रय में अपने स्थान पर बैठा । उस समय यशोदा की कूंख से उत्पन्न उसके पांचों पुत्र वहां थे । चार तो आगे अपने-अपने स्थान पर बैठे थे, किन्तु पांचवां पुत्र सदारंग नाम का जो सात वर्ष का था, अपने चाचा की गोदी में बैठा था । बहुत बड़ी श्रीसंघ की सभा में व्याख्यान चल रहा था । बाल स्वभाव से सदारंग चाचा की गोदी से उठकर पाटे के पास वृद्ध मुनि के बैठने की जगह जाकर जल्दी से बैठ गया । तब उपस्थित सब लोग [illegible]सी से बोले ऐ बाल ! वहां मत बैठो, यहां तो जो कोई तपस्वी, विद्वान्, [illegible] अवस्था से वृद्ध यति होता है, उसके बैठने का स्थान है । इस पर

सदारंग ने कहा कि मैं यति होकर ही इस पर बैठूंगा, उसके ऐसा कहने पर सब चुप हो गए। श्री श्रीपूज्य वहां से विहार कर मेड़ता गए। उनके पीछे सदारंग ने घर में माँ आदि के आगे अपने संयम ग्रहण की भावना व्यक्त की। अत्याग्रह से उनकी आज्ञा लेकर और श्री सूरि को बुला कर सदारंग ने सुमति के संग अमित धन छोड़ कर बहुत उत्सव पूर्वक नवमे वर्ष में दीक्षा ली एवं उसी दिन से पढ़ने में संलग्न हुए और पांच वर्ष में विद्वान् बन गये। फिर १५ वर्ष से छट्ठ २ तप का अभिग्रह ग्रहण किया। महान् तपस्वी, विगई त्यागी, शुद्ध आशय वाले और विज्ञ मान कर आचार्य ने अन्तिम समय में श्री वर्द्धमान नाम के शिष्य को गण संचालक का पद देते कहा—कि आपको अपना पाट सदारंग को देना चाहिये। १८ वर्ष तक पद का भोग किया और नौ दिन का अनशन करके श्री श्रीपूज्य स्वर्गगामी हुए सं० १७२४ फाल्गुन मास में।

मूल—तदीय पट्टे श्री वर्द्धमानाचार्यो वैद्यवंश्याः, सूरमल्लः पिता जननी लाडमदेजीति, जाखासरे जन्म चारित्रमहि-पुरे, पदमपि तत्रैव सं० १७२५ माघशुक्लपंचम्याम्। तदनन्तरं १७३० वर्षे वैशाख शुक्ल दशम्यां श्रीबीकानेरे पदावधारिताः श्री श्रीपूज्यास्तत्र, महान्महः संजातः श्रीफलैः प्रभावना कृता श्री देवगुर्वाज्ञा चिन्तामणि विभूषित-मस्तकैः श्रावकैः महती प्रतिष्ठा व्यधायि। ततोऽनेक क्षेत्रेषु विहृत्य पुनर्बीकानेरे समेत्य स्वान्त्यसमयवेदिभिर्दिनसप्तका-नशनमाश्रित्य त्रिदिवोऽलंचक्रे, वर्षाष्टकपदभोगिभिः श्री श्रीपूज्यैः ।६८।

अर्थ—उनके पाट पर श्री वर्द्धमान आचार्य हुए। वैद्य वंशीय सूरमल्ल उनके पिता और माता लाडमदेजी थी। जाखासर में आपका जन्म और नागोर में ही दीक्षा एवं सं० १७२५ माघ शुक्ल पंचमी में पद की प्राप्ति हुई। तदनन्तर सं० १७३० के वर्ष वैशाख शुक्ल दशमी में श्री श्रीपूज्य बीकानेर पधारे। वहां पर बहुत बड़ा उत्सव हुआ—नारियल की प्रभावना की गई। श्री देव गुरु की आज्ञा रूप चिन्तामणि से युक्त शिर वाले श्रावकों ने बड़ी प्रतिष्ठा की। बाद अनेक क्षेत्रों में विहार करके

फिर बीकानेर में आकर अपना अन्तिम समय जान कर सात दिन के अन-शन से श्री पूज्य ने स्वर्गवास प्राप्त किया।

मूल—श्री वर्द्धमानाचार्यैर्गुरुदेव वचःस्मरद्भिः श्री सदारङ्गसूरयो निजपट्टे स्थापिताः। तत्र महति महे विधीयमाने श्रावकैर-नेकधा मिलिते स्वपरगणीये श्रीसंघे महान् :प्रमोदः सर्वेषां भवन्नस्ति। तस्मिन्नवसरे सुच्यायदेवी—यात्रागतैर्निज संपद्—भरावगणित—धनिनिवहैर्हिसारकोटनिवासिभिर्ब्रह्मेचा-गोत्रीयैः कुहाडापरपर्यायैः शालिभद्रोत्तमचन्दादिभिः सभ्य-परिकरान्वितैः क्रमान्नागोरनगरे समेतैर्विज्ञात—पदवीमहैः सुश्रावकैर्गुरुतर गुरुभक्त्या साधर्म्मिक वत्सलत्वादि सुकृत्य-कृतये रजतानां चतुःसहस्री व्ययिताः। तत्र तेषां यशोनाम-कर्म प्रकृतेरुदयो महानजनि तत्रत्यैः सूरवंश्यैरपि तैः सह स्व सम्बन्धः कृतोऽत्राग्रेतन विस्तरस्तु न पृष्टः।

अर्थ—श्री वर्द्धमान आचार्य ने गुरु देव के वचन का स्मरण कर श्री सदारङ्ग को अपने पाट पर स्थापित किया। वहां श्रावकों द्वारा किये गये बहुत बड़े उत्सव में अनेक बार स्व पर गणीयसंघ के मिलने पर सबके मन में बहुत हर्ष हुआ, उस समय सुच्याय देवी की यात्रा के लिए आये हुए अनेक धनियों ने जो कि हिसार कोट निवासी ब्रह्मेचा या कुहाड़ गोत्री कहाते थे। शालिभद्र उत्तम चन्द्र आदि सभ्य परिकरों से युक्त क्रमशः नागोर नगर में पदवी महोत्सव जानकर आए, उन सुश्रावकों ने बड़ी गुरु भक्ति से सार्धमिक वत्सलादि सुकृत्य के लिए चार हजार चांदी के सिक्के व्यय किए। वहाँ उन-सबके यशोनाम कर्म प्रकृति का महान् उदय हुआ। वहां के सूरवंशीयों ने भी उनके साथ अपना सम्बन्ध कायम किया। आगे का विस्तार यहां नहीं किया गया है।

मूल—ततः श्री सदारङ्ग सूरयः किंचित् कालं तत्र स्थित्वा-ऽन्य देशेषु विहरन्तः श्रीमत्पातसाहिना (आलमगीर) मार्गे मिलितेनाभिवंदिताः स्तुताश्च सत्प्रत्यय

दर्शनेन तत्र बीकानेर स्वामिना श्री अनोपसिंह महाराजेनाऽपि निज हृद्गत सुत चिन्ता निवर्त्तन पूरण विस्मित चेतसाऽभ्यर्चिताः, सत्कृताः, कथितं च श्री श्रीपूज्य-पादा भवंत उत्तम पुरुषा सर्व विद्या विशारदाः श्रेयांसो वरीयांसोऽखिल जगतः पूज्याः अस्माकं विशेषतो गुरवः प्रतीक्ष्याश्चेत्यादि शिष्टाचार पूर्वकम् ।

अर्थ—बाद श्री सदारंग सूरि कुछ काल तक वहां ठहर कर देशान्तर में विहार करते हुए मार्ग में बादशाह से मिले उसने वंदन किया । बीकानेर के राजा श्री अनोपसिंह जी ने वहां परिचय प्रभाव देखकर और अपने हृदयगत पुत्र चिन्ता निवारण की पूर्ति से विस्मित होकर श्री श्रीपूज्य सदारंगजी की महिमा की, सत्कार किया और बोले कि हे पूज्य ! आप उत्तम पुरुष हैं, सभी विद्याओं के जानकार हैं, कल्याणकारक हैं, श्रेष्ठ हैं सारे संसार के पूज्य हैं, हमारे तो विशेष रूप से गुरु हैं, प्रतीक्ष्य हैं इत्यादि शिष्टाचार पूर्वक श्रीपूज्य की स्तुति की ।

मूल—ततोऽनोपसिंहात्मज महाराज सुजानसिंहेनाऽपि तथैव मानिताः, श्री श्रीपूज्या लवपुरीं गताः, तत्राऽपि बहवो लोका रंजिताः सं० १७६० धर्मक्षेत्रे चतुर्मासी कृता, तत्र पातसाहि मान्याऽमात्य-मुंहनाणी शीतलदासेन शिविराद् विनीय चतुर्मासीकरण विज्ञप्ति लेखः प्रहितः, परं न तत्र स्थितास्ततो विहृत्य पानीयप्रस्थ (पानीपत) – दुर्गेऽप्रोतकैः श्रावकैर्बहुविज्ञप्तिकरणपूर्वकं स्थापिता । तत्रामात्य शीतलदासेन खानमहाशय द्वाविंशत्या युतेन दर्शनमकारि । जंतुत्राणोपदेशः सर्वैराकर्णितः, उररी कृतश्च दयाधर्मो, बहुलाभः समुपार्जितः । ततो योगिनी पुरे श्राद्धारंजिता, विशदतर सिद्धान्त सदर्थ सार्थ प्रकाशनेन ततोऽर्गलापुरे पातसाहिस्यालकस्य महाखानस्य सत्प्रत्यय दर्शन पूर्वकं जीवदयोपदेशेन मानसं रंजितं यावत् स्थितिकालं जीव-

दया महाखानेन प्रवर्त्तिता सर्वत्र नगरे। ततो विहृत्य सं० १७६६ पुनर्बीकानेरपुरे पूर्वगोपुरे पादावधारितास्तत्र कतिचिद्दिनानि शुक्रास्तादि मलिन दिवसत्वात् श्रावकैः पटमंडपे रम्यतरे स्थापिताः। तत्र . नगर प्रवेशोत्सव वार्तायां जायमानायां श्रावकाः संभूय विचारयन्तिस्म यत् ईदृशः प्रवेशः कार्यते यादृक् केनाऽपि न कृतः, कारितो वा पूर्वम्।

अर्थ—बाद महाराज अनोपसिंह के पुत्र महाराज सुजानसिंह ने भी वैसा ही मान किया। श्री श्रीपूज्य लवपुरी गए। वहां भी बहुत से लोग प्रसन्न हुए। सं० १७६० धर्मक्षेत्र में चातुर्मास किया वहां बादशाह के मान्य मंत्री मुहनाणी शीतलदास ने कैम्प से निकल कर विनय पूर्वक चतुर्मास करने का निवेदन पत्र भेजा, किन्तु वहां नहीं ठहरे। वहां से विहार कर पानीपत में अग्रवाल श्रावकों ने बहुत विनय पूर्वक ठहराये। वहां पर मंत्री शीतलदास ने खान महाशय और २२ के संग दर्शन किये। सबने जीव दया का उपदेश सुना और दया धर्म को स्वीकार किया, तथा बहुत लाभ लिया। उसके बाद योगिनीपुर के श्रावकों को शुद्ध सिद्धान्त, सदर्थ और अर्थ सहित ज्ञान उपदेश कर प्रसन्न किये। बाद अर्गलापुर में बादशाह के साले महाखान को सच्चा परचा दिखाकर जीव दया के उपदेश से प्रसन्न किया। जब तक श्रीपूज्य वहां ठहरे, महाखान ने सारे नगर में जीव दया पालन करने की घोषणा करवा दी। वहां से विहार कर सं० १७६६ में फिर बीकानेर के पूर्व दिशा के द्वार पर पधारे। वहां पर शुक्रास्त आदि से मलीन दिन होने के कारण श्रावकों ने कपड़े के मंडप में कतिपय दिन उन्हें ठहराया। वहां पर नगर प्रवेशोत्सव की बात चलने पर श्रावकों ने मिलकर विचार किया कि ऐसा प्रवेश कराया जाय जैसा कि पहले किसी ने न किया और न कराया हो।

मूल—इतश्च साह विमलदासेन गत्वा राज्यद्वारे भणितं महाराज! भवदीय पूर्वजैर्ये मानिता, अर्चिता, वंदितास्तेऽत्र श्री श्रीपूज्य चरणाः समेतास्सन्ति। ततोराज शार्दूलैः सनातनः पन्थाऽज्ञायते एवास्माकं श्रीमद्भदन्त पुंगवाः पूर्वगोपुरादेव देववादित्र वादनादिकया महत्या विच्छित्या प्रविशन्ति। सांप्रतं केचन

यति पाशाः किंचित्काचपिच्च्यं विदधति का वश्चे तसो वृत्ति-र्व्यांक्रियतामिति भापिते श्रीमहाराजैरवादि, एते तु श्री श्री-पूज्या अस्मदीया एव तत एतान् कोरुणद्धि, श्री श्रीपूज्यानां यादृशः प्रवेश महामहो भवति तादृश एव विधीयताम् किम-त्रान्यत्, सर्वाऽपि राज्यर्द्धिरादीयतां, सति राजशासने को-निवारयिता । ततो हस्तिवर तुरंगादि वाद्य ध्वज पटहातोद्यादि समादाय राजकीय सचिवः समेतः कथयितुं लग्नः श्री महा-राजेनाज्ञप्तमस्ति । अन्यापि या काचित् भवतां मर्यादा भवेत् तदनुरूपमपि क्रियताम् ।

अर्थ—इधर साह विमलदास ने जाकर राज्यद्वार में कहा कि महाराज! आपके पूर्वजों से सम्मानित, पूजित, वंदित श्री श्री पूज्य चरण यहाँ आए हुए हैं, अतः राज शार्दूल सनातन नियम से परिचित हैं ही। हमारे श्री पूज्यवर पूर्व द्वार से ही देवोचित वाद्य और बड़े समारोह से प्रवेश करते हैं। अभी कुछ यति लोग कुछ २ उल्टी बातें कर रहे हैं, अतः आपकी क्या इच्छा है फरमाइये ऐसा कहने पर महाराज ने कहा ये श्री श्री पूज्य तो हमारे ही हैं तब इनको कौन रोकता है? श्री श्रीपूज्यों का जैसा प्रवेश महोत्सव होता है वैसा ही करें। इस विषय में और क्या? राज्य की सारी वस्तुएं ली जाय, राज शासन के होते हुए रोकने वाला कौन है? तब हाथी और श्रेष्ठ घोड़े, बाजे, ध्वजा पटहा "निशान" आदि लेकर राज मन्त्री आए और कहने लगे कि श्री महाराज की आज्ञा है कि और भी जो कुछ आप सबकी मर्यादाहो, उसके अनुकूल भी कीजिये।

मूल—ततः प्रतोलीत्रयं कारितं, तत्र चैका सूरवंश्यानामपरा चोर-वेटिकानां, तृतीया समेपां श्रद्धालूनाम् । एवं प्रतोली त्रय—पद मंडन पटोलिका प्रभृति सर्व महःकृत्यं कृतम्, स्त्रावदातो-द्योतित पूर्वसूरयो युगप्रधान श्रीसदारंग सूरयः संमुखागता-स्तोक — लोक—समुत्कीर्त्यमान—विशदतर—कुंद—कुमुद—बान्धव मयूख समानानेक प्रवेशक शम दम—संयम—प्रकारा निज—चरण

गति–मृदुतापहसित–राजहंस–सुरगजमत्तवृषभाः मुनिवृषभाः शनैः शनैः स्थानीये स्थानीये यावतानेक यतियुताः प्रविशन्ति, तावता खरतर–कमल–गणीय–संजतैराटी मंत्रः–प्रारम्भः पूर्वं परस्परं पश्चात्पुरलोकाग्रतो भणन्ति अस्मदीया एवातोद्य–निवहा अत्र ध्वनन्ति नैतेषां पुनः प्राहुः एतद्वाद्यादिकं राजकीयं सुतरां। यतयः वादयंतु परं शंखो झल्लरिकांच श्रीचिन्तामणि श्रीमहावीरयोरेव सप्तविंशति महल्लेषु वादयिष्यति अन्यस्य न। नागोरी–लुंकागणीयान्प्रति परानपि तथा गौर्जरादीन् प्राहुः भवतां शंखं तु न कुत्राऽपि वादयितुं दद्मः। तदा श्रीभदन्तपादैरुक्तं अस्मदग्रेऽस्मदीय एव शंखो ध्वनिष्यति अन्यं वयमपि नेच्छामः। तदापुनपुनर्नृ-पादेशः समेतः शीघ्रतया प्रवेशो विधीयताम् यदा तपो न पराभवतिपौरान् तदाऽमात्येन शंखं व्यतिकरो निवेदितो नृपाग्रे, शंखस्तु–अवश्यमेव युज्यतेऽत्र।

अर्थ — बाद तीन प्रतोली-द्वार बनवाये जिसमें एक सूरवंशियों का दूसरा चोर पेटिकों का और तीसरा सभी श्रद्धालुओं के लिए। इस तरह तीन प्रतोली द्वार और चरण-मंडन को प्रतोली प्रभृति सब उत्सव के कृत्य किए। अपने उज्ज्वल प्रभाव तेज से पूर्वाचार्यों को प्रकाशित करने वाले युग प्रधान श्री सदारङ्ग सूरि सामने आए हुए समस्त लोगों से सुयश गाये जाते हुए (स्वच्छतर कमल के मित्र) सूर्यकिरण के समान शम, दमादि विविध देदीप्यमान गुण वाले अपने चरण गति की मृदुता से राजहंस ऐरावत हाथी और मत्तवृषभ को भी उपहास करने वाले मुनिवृषभ धीरे २ स्थान २ में अनेक यतियों से युक्त जब तक प्रवेश करते हैं, तब तक खरतर एवं कमल गच्छ वाले यतिओं ने राटी मंत्र कलह प्रारम्भ किया, फिर सब मिलकर नगर लोगों को कहते कि हमारे ही बाजे यहां बज रहे हैं इनके नहीं—फिर बोले कि ये सब राजकीय वाद्य भले यति बजाएं पर शङ्ख और झल्लरिका तो श्री चिन्तामणि और श्री महावीर के हैं जो २७ मुहल्लों में बजेंगे, दूसरों के नहीं। नागोरी लंकागच्छी और अन्य गच्छ वालों तथा गुजराती आदि

को बोले कि आपके शङ्ख को तो कहीं भी नहीं बजने देंगे, तब श्री आचार्य बोले कि हमारे आगे तो हमारा ही शङ्ख बजेगा। अन्य को हम भी नहीं चाहते तब फिर राजा का आदेश आया कि शीघ्रता से प्रवेश कराया जाय जिससे नगरवासियों का तप खराब नहीं हो। तब मन्त्री ने शङ्ख की बाधा राजा के आगे निवेदित की, शङ्ख का बजना तो यहां आवश्यक है।

मूल—तस्मिन्समये श्री लक्ष्मीनारायणप्रसादमादाय नयनाख्यः शंखध्माः समेतः, तंवीक्ष्य लालाणीव्यास उदयचन्द मुधड़ा चतुर्भुजाभ्यामुक्तं एष शंख विवादः यतिभिः क्रियते, ततः कथं च निवर्त्त(र्त्ते)त। एते वदन्ति १३ महल्लेषु श्री-चिन्तामणि भगवतः शंखो वाद्यतेऽन्येषु श्री महावीरदेवस्य, एतयोस्तु शंखादिकं श्री श्रीपूज्या अपि नोरीकुर्वन्ति, अतोऽत्र श्रीलक्ष्मीनारायणजीकस्य शंखो ध्वन्यते, एवं विवादो याति अन्यथानेत्यामृश्योपनृपमागत्य विज्ञप्तं, श्रीमहाराजः अधुना तु प्रवेशोत्सवे श्री लक्ष्मीनारायणजीकस्य शंखः प्रदीयते तदावरमग्रे श्री महाराजानामिच्छा तदा श्रीमहाराजेन नयनाह्वः शंखध्मा दृष्टः, कथितं च भो नयन, त्वं श्रीठाकुर-जीकानां सेवकोऽसि वयं निर्दिशामः श्री श्रीपूज्य सदारंगजी-कानां प्रवेश महे श्रीठाकुरजीकानां शंखोध्वन्यताम्। ततस्त मादाय स तत्र गतः, महताडम्बरेण प्रवेश महः कारितः। नारिकेलानां प्रभावना कृता, श्रीफलानां नवशति लाना तदनु-येनाडंबरेण प्रवेशोत्सवो जातः तेनैवाडंबरेण खराणा सुन्दर-दास वेश्मनि क्षमा श्रमणाशनं गृहीतम्।

अर्थ—उसी समय में लक्ष्मीनारायण का प्रसाद लेकर नयन राम नाम का शंख फूंकने वाला आया उसको देखकर लालाणी व्यास, उदयचंद मूंधड़ा और चतुर्भुज ने कहा यह शंख का विवाद यति लोग करते हैं, इससे कैसे बचा जाय। ये कहते हैं १३ महल्लों में श्री चिन्तामणि भगवान् का शंख बजता है और अन्य महल्लों में महावीर देव का। इन दोनों का

शंख श्रीपूज्य भी अङ्गीकार नहीं करते। इसलिए यहां श्री लक्ष्मीनारायण जी का शंख बजता है, दूसरी तरह नहीं। यह सोचकर राजा के पास आकर निवेदन किया कि महाराज! अभी तो प्रवेशोत्सव में श्री लक्ष्मी-नारायण जी का शंख दिया जाय तो अच्छा, आगे महाराज की इच्छा उसके बाद महाराजश्री ने नयन (नैनजी) नाम के शंखवादक को देखा और कहा कि ऐ नयनजी! तुम ठाकुरजी के सेवक हो, मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं कि श्री श्रीपूज्यसदारंगजी के नगर प्रवेश महोत्सव में श्री ठाकुरजी का शंख बजाओ। तब वह नयनजी शंख को लेकर वहां गया और बड़े आडम्बर से प्रवेशोत्सव कराया गया। नारिकेल की प्रभावना हुई, ६०० श्रीफल लगे। इसके बाद फिर जिस आडम्बर से प्रवेशोत्सव हुआ उसी आडम्बर से सूराणा सुन्दरदास के घर क्षमाश्रमण का आहार ग्रहण भी हुआ।

मूल—तत आषाढ़ चातुर्मास्यागमेऽन्ययति—विहित—शंख—विवादं मत्वा पूज्यश्रीस्वामिदासजी, रामसिहजी, पेमराजजी, कुशलचन्द-जी नामकैः प्रवरयतिभिः श्री राजसमीपे गत्वा भणितं भो! महाराजाधिराजाः श्री श्रीपूज्यैर्वः शुभाशीर्वचांसि दत्तानि सन्ति, पुनः शंख विवाद निवर्तनोऽन्तश्च कथापितः सोऽधुना विमृश्य क्रियताम्। किंच खरतर कमलगणीयश्रावकैः पूर्वं या स्थितिः कृता प्रोक्ता सा पृच्छ्यताम्, केनेयं स्थितिः कृताऽभूत्। तत्कागलादिकं चेत्स्यात्तदा दर्श्यताम्, पुनः पूज्य स्वामिदासैरवादि, महाराजाधिराज सं० १६४० याव-त्तु कोऽपि विवादोनाऽसीत्, कोऽपिकस्मै न वर्ज्जनमकरोत्। ततो विश्वविश्वंभराभार समुद्धरणादि 'वराह' कल्प श्री-रायसिहजी राज्ये कर्मचंदवत्सापत्येन सीमा स्वीय यतीनां कृताऽन्येषां शंखो झल्लरिका च न वाद्यते। ततः श्रीसूर-सिंहजी राज्ये ठाकुर नाम वैद्येन स्वगणीय शंखादि स्थितः स्थापिताऽधुना नय एष विमृश्य विधेयः। ततः श्री

महाराजेन द्वयेऽपि समाकार्य पृष्टाः, भवदीया स्थितिः केन बद्धा, कथंचान्येषां शंखवादनादि निरस्तं ? तैर्भणितं—महाराज ! अस्माकं राज्य द्वारतोऽयमारोपः कृतः यत् १३ महल्लेषु खरतर गणीयानां श्री चिन्तामणि शंखः, १४ महल्लेषु श्री महावीर देवस्य शंखो झल्लरिका च प्रवर्त्तते, एवमुक्ते श्री महाराजेन भणितं य आरोपः कृतोऽस्ति भवतोर्द्वयोस्तत् कर्गलादिकं दर्शनीयं, तदा तैरुदितं कर्गलादिकं तु तावन्नास्ति किं दर्शयामः श्री महाराजेनाभाणि भवतां राज्यद्वार कर्गलं विना द्वयोः आरोपः कया रीत्या जातः। पुनः श्रीमहाराजेन पृष्टमन्येषां वर्जितो यः शंखस्तस्य श्री महाराजकृतं लिखन पठनादिकं भवेत्तदपि दर्श्यताम्। अन्यथा केन हेतुनाऽमी अन्यगणीयान् वर्जयन्ति यतयः, तदा तैर्व्याहृतम् हे श्री महाराज ! वैद्य वत्सापत्या राव श्री बीकाजीकस्य सार्थे समेता अभूवन्, तेन हेतुना तैर्निज निज सीमाकारि। अग्रे देवपादानां मनसि भवेद्यथा तथा विधेयं। तदा श्री महाराजैर्भणितं वयं श्री प्रभुणा यथावन्नीति प्रवर्तनार्थं राजानः कृता स्मः। तद्रीतेरेव प्रवृत्तिर्भविष्यति एवमुक्त्वा मनसि विमृष्टं, एतेषामपि रीतिस्याप्यैव पूर्वजादेशाधिकारि विहितत्वात्।

अर्थ—फिर आषाढ़ चातुर्मासी के आने पर दूसरे यतियों से उठाये गए शंख विवाद को मानकर, पूज्य श्री स्वामिदास जी, रामसिंह जी, पेमराज जी और कुशलचंद जी नाम के प्रमख यतियों ने राजा के समीप जाकर कहा कि—ऐ महाराजाधिराज ! श्री श्रीपूज्य ने आपको शुभाशीर्वचन कहलाया है और फिर शंख विवाद मिटाने का संवाद भी कहा है उस पर अब विचार किया जाय। खरतर गच्छ, कमल गण के श्रावकों ने पहले जो स्थिति उत्पन्न की और कहा उसके लिये पूछा जाय। किसके द्वारा यह स्थिति पैदा की गई और इसके कागज आदि हों तो दिखावें फिर पूज्य स्वामिदास बोले—महाराजाधिराज ! सं० १६४० तक तो कोई विवाद

नहीं था, कोई किसी को रोक-टोक भी नहीं करता। बाद विश्व को विश्वं-भरा के भार समुद्धरण में वाराह तुल्य श्री रायसिंह महाराज के राज्य में कर्मचंद वच्छावत ने अपने यतियों के लिए सीमा निर्धारण किया इसलिये दूसरे यतियों के शंख और झल्लरिका नहीं बजती। फिर श्री सूरसिंह जी के राज्य में ठाकुर नामक वेद ने अपने गण में शंखादि की स्थिति कायम की। अब वहुत सोचकर न्याय करना चाहिये। बाद में महाराज ने दोनों को बुलाकर पूछा—आपकी स्थिति मर्यादा किसने बांधी और कैसे दूसरों के शंख बजाने आदि बंद हुए, उन्होंने कहा—महाराज! हमारे पर राज्य द्वार से यह आरोप किया गया कि १३ महल्लों में खरतर गच्छ वालों की ओर से श्री चिन्तामणि का शंख और १४ मुहल्लों में श्री महावीर देव का शंख झल्लरिका का प्रयोग होता है। ऐसा कहने पर श्री महाराज ने कहा—जो आरोप आप दोनों पर किया है उसके कागज आदि दिखावें, तब उन्होंने कहा—कागज तो नहीं है क्या दिखावें? श्री महाराज ने कहा राज्य दरबार के कागज बिना आप दोनों का आरोप कैसे सिद्ध हुआ। फिर महाराज ने पूछा कि दूसरों का शंख जो रोका गया है उसके लिये राज्य की कोई लिखा पढ़ी आदि हो तो वह भी दिखाई जावे। नहीं तो किस कारण से ये यति अन्य गण वालों को रोकते हैं—इस पर वे बोले हे महाराज! वेद और वछावत राव श्री वीकाजी के साथ आये थे इसलिये उन्होंने अपनी २ सीमा बनाली। आगे देव चरण की जैसी इच्छा हो वैसा करें? तब श्री महाराज ने कहा भगवान् ने हमको यथावत् नीति मार्ग को चलाने के लिये राजा बनाये हैं, तो रीत-मर्यादा से ही काम होगा। यह कहकर राजा ने मन में विचारा कि इन लोगों की भी रीति पूर्वजों के आदेशानुसार होने से चालू रखनी चाहिये।

मूल—अथैतेषां श्रीश्रीपूज्यानां समाधिका कर्तुमुचितेति परा-
मृश्योक्तं यूयं सप्तविंशति महल्लेषु सार्वदिकी स्थितिः क्रिय-
ताम्। एतेषां तु अद्य प्रभृत्यैव श्रीलक्ष्मीनारायणजीकानां
शंखः सर्वत्रपुरे वादयिष्यति, एतदीयश्राद्धानामपि हर्ष—वर्द्धापने
श्री ठाकुरजीकानामेव शङ्खो वादयिष्यति, श्री चिन्तामणि
महावीरयोः शङ्खस्य नावकाशः एनं शंखं निराकुर्वन् जनः श्री

ठाकुरजीकेभ्यो विमुखो भविष्यति। पुनः श्रीराज्यद्वारस्या
पराधी एवं भणित्वा शंखध्मा विसृष्ट इति।

अर्थ—फिर इन श्री श्रीपूज्यों का समाधान करना उचित है यह विचार कर महाराज ने कहा—आप लोग २७ मुहल्लों में सर्वदा की व्यवस्था कायम करलें। इन सबके तो आज से ही श्री लक्ष्मी नारायणजी का शङ्ख सारे नगर में बजेगा। इनके श्रावकों के हर्ष वधावे में भी ठाकुरजी का ही शङ्ख बजेगा। श्री चिन्तामणिजी और श्री महावीर का शङ्ख वहां नहीं बजेगा इस शङ्ख को रोकने वाला ठाकुरजी से विमुख होगा। और वह राज्य द्वार का अपराधी होगा। यह कह कर शङ्ख बजाने वाले को विदा कर दिया।

मूल—अथ श्री श्रीपूज्यैरष्टत्रिंशद्वर्षपर्यन्तं धर्मराज्यं कृतं, तत्र चतुर्विंशति शिष्याः जातास्तन्नामानियथा (१) श्रीगोपालजीका अटक महादुर्गे महान्तस्तपस्विनोऽटक जलं जनं क्षुभ्यद्यत्पद स्पर्शादपसृतं नदी जलेनाऽपि यच्छासनं मानितम्। श्री आनन्द-रामजीका वनूड नगरे स्थिता अभूवन् (२) भागूजीकाः तोलियासरे प्रसिद्धाः (३) महेशजीकाः मालव देशे प्रसिद्धाः (४) वखतमल्लजीकाः महान्तो मल्ला अजीतसिंह नृप मल्लमान मर्द्दकाः (५) चत्वारो रामसिंहजीकाः आसन्। एके तु ओकेश वंश्याः कोचर गोत्रीयाः उदयसिंहजीकैः समंमिलिताः (६) द्वितीयाश्च हुवाणाभिजनाः मालवदेशे (७) तृतीयाः खत्ति-ज्ञातीया मालवे (८) तुर्यारामसिंहजीका भीमजी अमीचंदजीका गुरवः (९) श्री सुखानन्दजीका बीदासर स्थलेषु कृतानशना दिवं ययुर्ये ते तपस्विनः (१०) श्री उदयसिंहजीकायैर्गणभेदः कृतः (११) श्री जगज्जीवनदासजीका मूल पट्टाधिपाः (१२) द्वौ शिष्यावादिमौ धर्मचन्द्र—गुणपालाख्यौ सिद्धान्तं पठन्तौ (१३) देवोपसर्ग जनित महाकष्टौ सम्यगाराधनामाधाय दिवंगतौ (१४) पेमराज रायसिंहजीकौ भैरव मंत्राराधकौ

(१५) अमान्निशि चलितौविहृलिसपदौ मूकौ जातौ (१६) विधिचंदजीका दीक्षातोऽशीतिदिनेष्वेव स्वर्गं गताः शूल रोगेण (१७) वस्तपालजी, हीराजी धन्नाजीकास्तपसा प्रसिद्धाः (१८) सार्द्ध द्विसेर जलकृत नियमा ग्रीष्मे उपसर्ग सहनं कृत्वा सं० १७६५ वर्षे पञ्चत्वमापुः (२०) वैद्यवंशीया (श्या) ज्ञानजीका आगमज्ञा महान्तो मालव देशे दुष्ट डाकिन्या गृहीता कृतानेकोपचारा अपि न पटवो जाताः (२१) मालव देशे भारजीकाः प्रसिद्धाः (२२) लक्षजीका आनन्द रामजी—सार्थ एव विहृतवन्तः (२३) दुर्गदासाह्वास्तु मालवे सार्थाद् अष्टादरी निपातेन केनाऽपि लक्षिताः (२४) एतेषां मध्यान्नवनव-देशेषु शिष्येषु विद्यमानेषु श्री श्रीपूज्यै रुदयसिंहस्य तपस्विनः शिष्यस्य प्रोक्तं भो ! पदं गृहाणेत्युक्ते उदयसिंहजीकैरभाणि मम पदेन कोऽर्थः सर्वगुणसंपन्नाः, प्रज्ञाला जीवनदासजी-कास्सन्ति तेभ्यः प्रदीयतामहंतु तन्निर्देशकृत् भविष्यामि इत्युक्ते पुनरप्याग्रहेणोक्तं, पदं गृहाण पश्चान्नकिञ्चित्कर्तु-मुचितम्. तैः पदादानं नोरीकृतम् । तदा श्रीसूरिशादूलैरव-सरं विज्ञाय श्रीसंघसाक्षिकमन्यगणीयानां च पुरतः श्रीमद्-भदंत पदं श्रीजगजीवनदासजीकेभ्यो लिखित्वा प्रदत्तम् । स्वयमाराधनादिनदशकं यावत्साधयित्वा त्रिदिवं मंड-यामासुः सं० १७७२ एवं पट्टानि ६१ जातानि ।

अर्थ—इस प्रकार श्री श्रीपूज्य जी ने ३८ वर्ष पर्यन्त धर्म राज्य किया वहां चौबीस शिष्य हुए उनके नाम इस प्रकार हैं—श्री गोपालजी अटक महादुर्ग में बड़े तपस्वी हुए, लोकों को क्षुब्ध करने वाला अटक का जल जिनके चरण स्पर्श से दूर हो गया नदी जल ने भी जिनका शासन मान्य किया। (१) बनूड नगर में श्री आनन्द रामजी हुए। (२) भागुरजी तोलियासर में प्रसिद्ध हुए (३) महेशजी मालवा में प्रसिद्ध हुए। (४) वखतमल्लजी बड़े शक्ति शाली थे जिन्होंने अजीतसिंह राजा के पहल-

वान का मान मर्दन किया। (५) रामसिंहजी चार हुए थे, जिनमें एक तो ओकेश वंश के कोचर गोत्रीय उदय सिंहजी के साथ मिल गए। (६) दूसरे हुवाणा में हुए जो मालव देश में है। (७) तीसरे क्षत्रिय जाति के मालवा में हुए, (८) चौथे रामसिंहजी भीमजी और अमीचंदजी के गुरु थे, (६) श्री सुखानन्दजी जो तपस्वी थे बीदासर में अनशन करके स्वर्ग सिधारे, (१०) उदयसिंहजी ने गण भेद किया। (११) श्री जगजीवन दासजी मूल गादी के अधिपति थे। (१२) प्रारम्भ के दो चेले धर्मचन्द्र और गुण-पाल सिद्धान्त पढ़ते हुए देवता के उपसर्ग से महान् कष्ट को पाते हुए सम्यग् आराधना करके स्वर्ग गए। (१४) प्रेमराजजी और रायसिंहजी भैरवमन्त्र के आराधक थे। भ्रमवश वे रात में चलायमान हो गये और विष्ठा से लिप्त पैर वाले गूंगे होगए। (१५-१६) विधिचंदजी दीक्षा के 'अस्सी वें दिन में ही' शूल रोग से स्वर्गवासी होगए। (१७) वस्तपालजी, हीराजी और धन्नाजी तपस्या से प्रसिद्ध थे। दिन में २।। सेर जल का ही वे उपभोग करते, गर्मी में उपसर्ग सहकर सं० १७६५ वर्ष में काल धर्म प्राप्त कर गये। (२०) वैद्यवंशीय ज्ञानजी आगम के बड़े ज्ञाता थे, मालव देश में दुष्ट डाकिनी से ग्रस्त हुए अनेक उपचारों से भी ठीक नहीं हुए। (२१) मालव देश में भारजी प्रसिद्ध हुए। (२२) लक्खाजी आनन्दरामजी के साथ ही विचरते रहे। (२३) दुर्गादासजी मालवा में साथियों से अलग गुफा में गिर जाने के कारण किसी से देखे नहीं गये। (२४) इनमें से नव देशों में विद्यमान् श्री श्रीपूज्य ने तपस्वी शिष्य उदयसिंहजी से कहा—भो तपस्वी! पद ग्रहण करो, ऐसा कहने पर उदयसिंहजी बोले—मझे पद से क्या प्रयोजन सर्व गुण सम्पन्न प्रज्ञावान, जीवनदासजी हैं, उनको पद दीजिये मैं उनके निर्देश का पालन करूंगा, ऐसा कहने पर भी फिर आग्रह से कहा—पद ग्रहण करो पीछे कुछ भी करना उचित नहीं पर उन्होंने पद लेना स्वीकार नहीं किया। तब सूरि शार्दूल ने समय देखकर श्रीसंघ की साक्षी और दूसरे गण वालों के आगे श्रीमत् भदंत पद जगजीवन दासजी को लिखकर दे दिया, और आप १० दिनों की आराधना करके सं० १७७२ में स्वर्ग को सुशोभित किया। इस प्रकार यह ६६ वाँ पाट हुआ।

मूल—तस्मिन्नब्दे शिक्षापत्राणि नागपुरीय सूराणा सहस्स-मल्लादिभिर्लेखं लेखं यतिभ्यः प्रदत्तानि श्री उदयसिंहजीका यति त्रयान्विता बीकानेरे स्थिताः, भाविसूरयस्तु बहुमुनि-

परिवृताः श्रीनागोरपुरे स्थितास्तत्रपट्टमुहूर्तं वर्षद्वयं यावच्छुद्धं नागतं, ततः समीचीने मुहूर्ते श्री श्रीपूज्याचार्या जगजीवनदासजीकाः पट्टं भूषयामासुः, चोरवेटिक गोत्रीयाः वीरपालजी पितृनाम, जनन्या नाम रतना देवीति, पढ़िहारा निगमे जनुश्चारित्रं मेड़तापुरे, पद महिपुरे। अथ नागोर नगरे घोडापत्यैः कथंचित् किंचिन्न्यूनरागैश्चोरवेटिकादि-युतै- भंडापत्य सूराणा गोत्रीयाणां लेखं दत्वा कथापितं, महत्सु- दयसिंहेषु स्थितेषु अत्रत्यैः श्राद्धैरेतेऽभिषिक्तास्तन्नास्माकं हृद्यं जातमथ बीकानेरे स्थिता अपि उदयसिंहजीकाः पट्टे स्थाप्या इति मुहुर्मुहुः समाचारे प्रवर्तमाने श्री श्रीपूज्यैः कथापितमद्यापि किमपि गतं नास्ति, अत्रागत्य पदमाऽदीयतां यूयं महान्तः तदोदयसिंहजीकैरभाणि मम तु पदादानेच्छा नहि ततस्तत्रत्यैर्भांडापत्यादिभिरत्याग्रहेण प्रसह्य पदे स्था- पिताः बीकानेरे एव। एवं गण स्फोटे जातेऽपि श्री मूल- पट्टेश्वरसान्निध्यात् बहु यतितति परिवृताः श्री जगजीवनदासजी नामधेया वरभाग धेयाः सर्वत्र देशे २ क्षेत्रे २ श्राद्धैरन्य- गणीय संघेनापि संमानिताः पूजिताश्च।

अर्थ—उस वर्ष नागोर के सूराणा सहस्समल्ल आदि ने शिक्षा पत्र लिख लिखकर यतियों को दिये। श्री उदयसिंह जी तीन यतियों के साथ बीकानेर ठहरे और भावी श्रीपूज्य बहुत मुनियों के संग नागोर बिराजे। वहां पर दो वर्ष तक शुद्ध पाट मुहूर्त नहीं आया—फिर अच्छे मुहूर्त में श्री श्री पूज्याचार्य जगजीवनदास जी ने पद ग्रहण किया, चोरडिया गोत्रीय वीरपाल जी आपके पिता का नाम और माता का रतनादेवी था, पढ़िहारा मंडी में जन्म मेड़ता में दीक्षा और अहिपुर में पद। फिर नागोर में घोड़ावतों ने किसी कारण धर्म राग की कमी से चोरडिया आदि के साथ भांडावत और सूराणा गोत्रीयों को पत्र देकर कहलाया कि बड़े उदयसिंह के रहते हुए यहां के श्रावकों ने जगजीवनदास जी को अभिषिक्त

किया है यह हम लोगों के मन को अच्छा नहीं लगता। इसलिये बीकानेर में बिराजमान उदयसिंह जी को पाट पर स्थापित करना चाहिए, इस प्रकार बार २ समाचार देने पर श्री श्रीपूज्य ने कहलाया कि आज भी कुछ गया नहीं है यहां आकर पद ले लिया जाय क्योंकि आप बड़े हैं। तब उदयसिंह जी बोले मेरे को पद लेने की इच्छा नहीं है, तब वहां के भांडावत आदि लोगों ने हठात् आग्रह पूर्वक बीकानेर में ही उनको पट्ट पर स्थापित कर दिये। इस तरह गण में विस्फोट होने पर भी श्री मूल-पट्टेश्वर के सान्निध्य से बहुत यतियों के परिवार सहित भाग्यवान् श्री जीवनदास जी सभी देश और क्षेत्रों में श्रावकों एवं अन्य गण के संघों से भी सम्मानित तथा पूजित रहे।

मूल—नागोर पुराद् विहृत्य भट्टनेरकोटे पादावधारितास्तत्र लघीयसोऽपि वाघासाहस्य वचन साहाय्यं कृतं तेनाऽल्प संपत्को वाघासाहः प्रभावनां महतीं कृतवान् ग्रन्थ गौरव भयान्नात्र विस्तरतो लिख्यते, सर्व संबंधस्ततः सरस्वती पत्तने, हिसारकोटे वुढ़लाडा निगमे, टोहणा, सुनाम, सन्मानक, रोपड, वजवाडा, राहौ, जालंधर, गुजरात, रावलपिंडी प्रभृतिषु क्षेत्रेषु विहृत्य सम्यग् लवपुर्यां प्रवेशोत्सवे जायमाने मुगल यवनः कश्चिद्युवा तत्रत्यस्यायुक सुतोऽकस्मात् संमूर्छितो लोकैर्मृत इति संभावितः, सशोकेषु लोकेषु जातेषु श्री नमस्कृति जलेन सर्वलब्धि वितानसंस्मारित पूर्वगणधरैः श्री श्रीपूज्य पादैः सिक्तः प्रत्यागत चेतनः सन् परमभक्तो महामहिमानमकरोत्, ततोऽनेकेषु क्षेत्रेषु विहरद्भिः श्री श्रीपूज्य चरणैः ये प्रत्यया दर्शितास्तान् को लिखितुं शक्नोति नवा वक्तुमलम्।

अर्थ—नागोर से विहार कर भट्टनेर कोट में श्रीपूज्य जी पधारे, वहां पर छोटे वाघाशाह को वचन से साहाय्य किया जिससे थोड़ी सम्पत्ति वाला भी वाघाशाह बड़ी प्रभावना कर गया। ग्रन्थ बढ़ने के भय से यहां विस्तार पूर्वक सब सम्बन्ध नहीं लिखा जाता है। फिर सरस्वती पत्तन, हिसार कोट, वुढ़लाडा मंडी, टोहणा, सुनाम, समाणा, रोपड, बैजवाड़ा, राहौं,

जालंधर, गुजरात और रावलपिंडी प्रभृति क्षेत्रों में विचर कर लवपुरी में प्रवेशोत्सव किया उस समय वहां के किसी मुगल अधिकारी का युवा पुत्र अकस्मात् मूच्छित हुआ और लोगों ने समझ लिया कि मर गया। तब लोगों के शोकमग्न होने पर पूर्वाचार्यो के लब्धि को स्मरण कराने वाले श्री पूज्यचरण ने नमस्कृति मंत्र के जल से सींचकर उसे स्वस्थ किया जिससे वह परम भक्त हो गया और उसने बड़ी महिमा की। इसके बाद अनेक क्षेत्रों में विहार करते हुए श्री श्रीपूज्य ने जो चमत्कार दिखाये उसको कौन लिख सकता अथवा कौन बोल सकता है ?

मूल—पुनरटक धुनी (नदी) पतिता समर्थनाम साहकस्य बहुपण्य-भृतानौस्तारिता तत्रत्यैर्हिंदूर्यवनैः प्रभावनाधिका चक्रे ।३। ततो निवृत्य समागच्छद्भिः सूरिपादैरोपड़नगरे वृद्ध श्राविकायाः गलत्कुष्ठमपहृतम् । ४ । पुनः सरस्वतीपत्तने विषम दुष्काल भीतैर्यवनैर्महम्मद-हुसेनस्योक्तं, वणिग्-जनैरेते यतयो रौरव-निबंधनवृष्ट्य-भावार्थं रक्षिता अत्रेत्याकर्ण्य दुर्म्मतिना तेन लोकानां पुरतः प्रोक्तं एतेनातश्चेद् गमिष्यन्ति तदाऽहं कच-ग्राहमेनान्निष्कासयिष्यामीति वार्त्तां कस्यापिमुखाच्छ्रुत्वा निष्प्रतिम पुण्यपण्यशालिभिर्लोकोत्तरातिशयधरैः श्री श्रीपूज्यै-र्भणितं भोः ! यतयोऽतः शीघ्रतया विहर्त्तव्यमतः स्थानाद् द्वित्रेष्वहस्सु यदत्र भावि तत्स एव द्रष्टा ईत्यसीत्युक्त्वा विहर्त्तुं लग्नाः तदा श्राद्धैरुक्तं—स्वामिन् वयमपि भवत्पद युगमाश्रिताश्चलामः एवं कथनेन श्री सूरयस्तत्रैव स्थापिताः । अथ तृतीये दिवसे भोरड यवनैः प्रातरेवागत्य बहिर्निर्गतो महम्मदहुसेनः शिरः श्मश्रु कचग्राहं भुवि निपात्य भृशं कुट्टितः, श्वसन् मुक्तः । ततो ज्ञात वृत्तान्तेन तत् पित्रा हसन-खां महाशयेनातीव निर्भर्त्सितः, रे पुत्र पाश ! त्वादृशोऽधमो मत्कुले कथंजातः अस्मत्पूज्य पूज्यानामविनयो वाचाऽपि

कृतो दुःखायैव केवलमस्मत्प्राणास्तु तद् दत्ता एव किमधिकल्पितेन । तत्र हसनखां नवावेन वहुभक्तिपूर्वकमाराधिताः । तदुक्तम्-दर्शितप्रत्ययं को हि, नाराधयति सत्तमम् । ध्वस्तध्वान्तं नभेदीप्तं, रविं को न निषेवते । इति ॥५॥

अर्थ—फिर अटक नदी के दरिया में, समर्थ नामक साह की द्रव्य से भरी हुई नाव को तिरादी। इससे वहां के हिन्दू और मुसलमान बहुत प्रभावित हुए। वहां से लौटकर आते हुए सूरिचरणों ने रोपड़ नगर में एक वृद्ध श्राविका के गलते कुष्ठ का निवारण किया। ४। फिर सरस्वती पत्तन में भयङ्कर अकाल से चिन्तित मुसलमानों ने महम्मदहुसेन से कहा कि वणियों ने इन यतियों को वर्षा रोकने के लिए यहां रक्खा है, यह सुनकर उस दुर्बुद्धि ने लोगों के सामने कहा कि ये सब यति अगर यहाँ से नहीं जाएंगे तो मैं इनके केश पकड़ कर बाहर निकाल दूंगा, यह बात किसी के मुंह से सुनकर परम पुण्यशाली और लोकोत्तर अतिशयधारी श्री श्री पूज्य ने कहा—ऐ यतियों ? यहां से शीघ्र ही विहार कर देना चाहिए क्योंकि—दो तीन दिनों में यहां जो होने वाला है उसे यही दुर्बुद्धि देखेगा, यह कहकर श्रीपूज्य विहार करने लगे तब श्रावकों ने कहा—स्वामी ! हम सब भी आपके चरणों के आश्रित, पीछे चलते हैं, ऐसा कहने से श्री पूज्यजी वहीं ठहर गये। बाद तीसरे दिन भोरड के यवनों ने सवेरे ही आकर बाहर निकले हुए मुहम्मद हुसेन को शिर तथा दाढी के केश पकड़ कर जमीन पर गिरा के बहुत पीटा और सिसकते जान छोड़ दिया, मालुम होने पर उसके पिता हसन खां महाशय ने उसकी बड़ी भर्त्सना की और कहा—रे पुत्र ! तुम्हारे जेसा नोच हमारे वंश में कैसे उत्पन्न हुआ, कि हमारे पूज्यों के पूज्य का वचन से भी अविनय करना दुःख के लिए होता है। हमारे प्राण तो उन्हीं के दिए हुए हैं, अधिक क्या कहें ? वहां हसनखां नवाव ने बहुत भक्ति से श्रीपूज्य की आराधना की कहा भी है—परिचय दिखाये हुए सत्पुरुष की आराधना कौन नहीं करता, आकाश में अन्धकार का नाश करने वाले दीप्तिमान् सूर्य का सेवन कौन नहीं करता।

मूल—ततो भट्टनेर मार्गेऽति तृषाकुला करभवाहकाः सद्गुरु ५।
चरण स्मरण परायणास्तत्त्क्षणमदृष्टचरममृतोपमं पानीयम

पिबन् ६ । ततः सं० १७८४ वर्षे श्री बीकानेर नगरे पादावधारितास्तत्र प्रत्यर्थि-द्विप-पंचाननेन श्री सुजानसिंह महाराजेन विशेषतः सन्मानिताः दृष्टप्रत्ययतया तत्रत्यैः सर्वैरपि राजकीय पुरुषैः समेत्य स्वपर-पक्षामित-जन-मनोहारी महान् प्रवेशोत्सवोऽकारि । एका प्रतोली चोरवेटिका कृता अपरा सूरवंशीया-नामिति प्रतोलीद्वय-मंडनं चित्रकृदेव जातम् । श्रीफलैः प्रभावना व्यधायि । हर्षोवेगात्परवशैरिव श्राद्धैः सूराणा मुकनदासजीकानां गृहे क्षमाश्रमण-विहरणं कृतम् । द्वितीय दिवसे आचार्य प्राणनाथजीकैरागत्य श्री महाराज कृतदंडवन्नमस्कृति-निवेदनमकारि, तदा श्री श्री-पूज्यचरणैरपि यानिकानिचिद् वचनानि विहितानि तानि श्रीमन्महाराज-कुंजरैः प्रतीतानि सांदृष्टिकतया (सद्यः फल तया) वृत्तानि । ॥७॥

अर्थ—फिर भट्नेर के मार्ग में प्यास से व्याकुल ऊंट के चालक लोगों ने सद्गुरु के चरण स्मरण के प्रभाव से उसी क्षण भाग्य से प्राप्त अमृत के समान पानी प्राप्त किया । ६ । बाद संवत् १७८४ वर्ष में श्री पूज्य बीकानेर पधारें, वहां विपक्षी रूप हाथी के लिए सिंह के समान श्री सुजानसिंह जी महाराज ने परिचय प्राप्त होने से विशेषतः सम्मानित किया । वहां के सभी राजकीय पुरुषों के संग स्व-पर पक्ष के अगणित जनों के साथ बड़ा मनोहर प्रवेशोत्सव किया । एक प्रतोली चोरवेटिक की और दूसरी सूरवंशीयों की, इस तरह दोनों प्रतोली-द्वारों का मंडन आश्चर्यकारी था । हर्षातिरेक से परवश की तरह श्रावकों ने श्री फलों की प्रभावना की, दूसरे दिन मुकनदास सूराणा के घर क्षमाश्रमण ने आहार लिया । आचार्य प्राणनाथ जी ने आकर श्री महाराज द्वारा किया गया दंडवत-नमस्कार निवेदन किया, तब श्री पूज्यचरण ने जो कुछ भी वचन कहे वे महाराज को सद्यः फलदायक प्रतीत हुए ।

मूल—तत्र पुरे श्री श्रीपूज्यपादैश्चतुर्मास द्वितयी कृता ततो मालवादि

जनपदेषु विहृत्य सिंहाद्धेनुमोचन निर्द्धन-श्राद्धस्य सुत-धन-वरप्रदान देवलिया नगरे कीटिकामत्कोटक भूयस्त्वनिराकरण-भटेव-राशिशुकस्य नगरमुख्यता प्रतिपादन प्रभृतयोऽनेकेऽवदात निकरा जाताः। पुनर्मंदसौर नगरेऽतीवनिःस्वता विदित सतत सद्भक्ति भावित चेतस्क खंजमृजा आदलवेगकस्य शुद्ध वचोऽमृत पानानन्तर मुक्तं त्वं याहीतः सकल मालवानामाधिपत्यभृद् भविष्यसीत्याकर्ण्यैवोजयिन्यभिमुखं चलतस्तस्यानेके महाराष्ट्रिकाश्वारोहा मिलितास्त प्रतिगदितं त्वमस्मत्पुरोगामो भूत्वा ग्रामपुरादीनि दर्शय यथास्मन्नवीन राज्य संस्था समीचीना जायेत, तदा तेनामेति भणित्वा तदुक्तं कृतं, पश्चान्नान्हा साहिबकस्य दाक्षिणात्यानामधिपस्य मिलितस्तेनोज्जयिनी मंदसौरेंदोरनाम्नां बृहत्पुराणामाधिपत्यं प्रददे। ततः सोऽतीव बलवान् प्रतापी यवनोऽपि हिंदुकवत् परमभक्तो जातः श्री श्रीपूज्य चरणानाम्।

अर्थ—उस नगर में श्री श्री पूज्यपाद ने दूसरा चातुर्मास किया फिर मालवादि देशों में विहार करके सिंह से गाय को छुड़ाना और निर्धन श्रावक को पुत्र एवं धन का वर प्रदान करना, देवलिया नगर में कीडिओं एवं मकोड़ों का निवारण करना, भटेवरा के बालक को नगर का मुख्य कहना आदि अनेक शुद्ध प्रभावना के काम हुए। फिर मंदसोर नगर में अत्यन्त गरीबी तथा सद्भक्ति से स्निग्ध हृदय वाले अदलवेग खां को श्री श्री पूज्य ने उपदेश वचनामृत पान के बाद कहा—तू यहां से जा सारे मालवा का स्वामी हो जायगा। यह सुनकर वह उज्जयिनी की ओर चल पड़ा रास्ते में अनेक महाराष्ट्रीय घुड़सवार मिले और उसको बोले कि तुम हमारे आगे होकर ग्राम नगर आदि दिखाओ जिससे हमारी नवीन राज्य संस्था ठीक बनी रह सके। तब उसने हां कहकर उसके कथनानुकूल किया। पीछे नान्हा साहब दक्षिणी लोगों के अधिनायक मिले, उन्होंने उज्जैन, मंदसौर, और इन्दौर जैसे बड़े नगरों का उसको स्वामित्व-अधिकार दे दिया,—तब वह

अत्यन्त बलवान् प्रतापी मुसलमान भी हिन्दू की तरह श्री श्री पूज्य का परम भक्त बन गया।

मूल—ततः श्री नागोरपुरे सं० १८१० समेताः सम्यक् प्रवेश महोऽजनि, तत्राकस्माद्दाक्षिणात्यैर्निरुद्ध—विविधासारप्रसारं नगरं विहितं वृद्ध भावेन दृष्टिप्रचारो हीनो जातः। विकृति त्याग-रूपया तपः श्रिया शरीरमपि सखेदं जातं, वर्षद्वयं तत्र स्थित्वा ततो यथाकथंचित् बीकानेर पुरे समेताः तनुशक्तेरभावेन प्रवेशनमहोऽपि न कृतः, चतुर्मास चतुष्कमकारि। ततो विहितानशनैः सं० १८१६ आश्विन कृष्ण सप्तम्याः प्रातर्दिन पञ्चकानन्तरं स्वर्गोमंडितः ४४ समाः पदभोगः। ७०,

अर्थ—फिर सं० १८१० में श्रीपूज्य नागोर में पधारे प्रवेशोत्सव हुआ। वहां पर अचानक दक्षिणात्यों ने नगर के अनेक आसार प्रसार बन्द कर दिये थे। वृद्धावस्था के कारण श्रीपूज्य की दृष्टि कमजोर हो गई— इधर विकृति त्याग रूप तप से शरीर भी क्षीण हो गया था। अतः दो वर्ष तक वहां विराज कर फिर जैसे तैसे भी बीकानेर पधार गए। शारीरिक शक्ति की कमी से प्रवेश महोत्सव भी नहीं किया। चार चातुर्मास किए और फिर अनशन करके सं० १८१६ आश्विन कृष्ण सप्तमी को प्रातः पांच दिन के संथारे से स्वर्ग लोक को अलंकृत किया। ४४ वर्षों तक पद भोग किया।

मूल—तत्पट्टे श्री भोजराज सूरयो वोहित्थान्वया जीवराजः पिता कुशलांजी जननी रहासरे ग्रामे जन्म, फतेपुरे चारित्रं, पदं तु श्री नागोरपुरे। सं० १८१६ वर्षे फाल्गुन मासे मालवानी वृत्ति पंचाशद् यतिवर परिकरिताश्चिरं विहृत्य मेड़तापुरे दिन त्रिकाऽनशन प्राप्त-स्वर्गाअभूवन्। वर्ष षट्कं पदभुक्तिः, एषां सप्त गुरुभ्रातरोऽभूवन्—श्री लालजी १ जयसिंहजी २ जयराज जी ३ श्री भोजराज जी ४ श्री लद्धराज जी ५ श्री दूदा जी ६

श्री रामचन्द्र जी ७ क्षेमचंदजी ८ नाम धेया अष्टौ शिष्याः श्री मज्जगजीवनदाससूरीणां दिग्गजा इव ७१ ।

अर्थ—उनके पाट पर श्रीभोजराज सूरि हुए, बोथरा वंश के जीवराज जी पिता और कुशलाजी माता थी। रहासर ग्राम में जन्म तथा फतेपुर में दीक्षा और नागोर में सं० १८१६ फाल्गुन मास में पद ग्रहण किया। मालवीय पचास यतियों से श्रीपूज्यजी चिरकाल विहार कर मेड़ता पधारे वहां तीन दिन के अनशन से आपका स्वर्गवास हुआ। छः वर्ष तक पद पर रहे। इनके सातगुरु भाई हुए जैसे—श्री लालाजी १, जयसिंहजी २, जयराज जी ३, श्री भोजराज जी ४, श्री लद्धराज जी ५, श्री दूदा जी ६, श्री रामचन्द्र जी ७, क्षेमचंद जी ८, नाम के श्रीमज्जगजीवनदास जी के दिग्गज की तरह ये आठ शिष्य थे।

मूल—तत्पट्टोदय कारिणः श्री हर्षचन्द्र सूरयः नवलखा गोत्रे पिता भोपतजी नामा, माता भक्तादेवीति करणु ग्रामे जनुः, सोजत पुरि चारित्रं, श्री नागोरपुरे पदमापुः सं० १८२३ वैशाख शुक्ल ६ दिने पदं, वर्ष १६ भुक्तं। श्रीहर्षचन्द्रसूरेर्विजयति धर्मराज्ये महान्तोऽमीयतयः संघाटकधराः तथाहि अभयराजजी, अमीचंद जी, लद्धराजजी, उदयचंदजी, गुलाबचंद जी, मेघराज जी, हीरानंदजी, आनंदरामजी, प्रभृतयो मरुधरदेश समीप वासिनो मालवदेशे मनसारामजी नैणसीजी प्रमुखाः ३२, उदीच्यां सेढू जी, जयराज जी, हरजी जी, मंगूजी, हरसहाय-जी, हरचंदजी प्रमुखाः ११। एषां वैदुष्यं यादृशं जातं तादृश-मत्र युगे न कस्याऽपि भूतम्। विस्तरस्तु मत्कृत पद्यबंध पट्टावली-तो ज्ञेयः। सपादजयपुरे विहिताऽनशना दिन त्रयं दिवं भूषया-मासुः ७२।

अर्थ—उनके पाट का उदय करने वाले श्री हर्षचन्द्र सूरि हुए। नवलखा गोत्रीय पिता भोपत जी और माता भक्तादेवी थी, करणु ग्राम में जन्म और सोजतपुरी में दीक्षा तथा नागोर में सं० १८२३ वैशाख शुक्ल

६ के दिन पद प्राप्त किया, १९ वर्ष तक पद पालन किया। श्री हर्षचन्द्र सूरि के धर्म राज्य में ये बड़े २ यति संघाड़ा के धारक थे जैसे—अभयराज जी १, अमीचंद जी २, लद्धराज जी ३, उदयचंद जी ४, गुलाबचंद जी ५, मेघराज जी ६, हीरानंद जी ७, आनंदराम जी ८ प्रभृति, मारवाड़ के पास रहने वाले मालवा में मनसाराम जी, नैणसी जी प्रमुख ३२। उत्तर में में सेढू जी, जयराज जी, हरजी जी, मंगू जी, हरसहाय जी, हरचंद जी प्रमुख ११ थे। इनकी विद्वत्ता जैसी थी वैसी इस युग में किसी की नहीं. हुई। विस्तार मेरी की हुई पद्यबंध पट्टावली से जानना चाहिए। सवाई जयपुर में तीन दिन का अनशन करके आप स्वर्ग सिधारे।

मूल—तत्पट्टे श्री श्रीपूज्याचार्या श्री श्रीलक्ष्मीचन्द्रजी नामानः, कोठारी गोत्रं जीवराजजी नामा पिता जयरङ्गदेवी जननी "नवहर" निगमे जन्म, चारित्र महिपुरे स्वहस्तेन पदमपि तदैव। सं० १८४२ आषाढ़ कृष्ण २ दिने। तत्र चातुर्मासद्वयी कृता। व्याख्यान—प्रत्याख्यानादि—सम्यग्धर्म-कर्म प्रवर्त्तितं, श्रीसंघ मनोरथाः सफलीकृतास्ततो वेनातट निगमे श्रीसंघेन महोत्सवेन चतुर्मासी कारिता ततो जोजावर नगरे पंचविंशति यति—समन्विता वर्षद्वयं स्थिताः। ततोऽन्यत्राऽनेक क्षेत्राणि निज चरण न्यासेन पूतानि विहितानि ततो बीकानेर नगरादिषु प्रभूत शुद्ध भावितांतःकरण श्रद्धालूनां मनांसि प्रमोद मेदुराणि विधाय श्री सुनाम "पट्यालांवाला" धर्म क्षेत्र, रोपड़, होशियारपुरा, जेजों जगद्रम्य, कृष्णपुरा खंडेलवाल श्रावक मंडित पंडित यति प्रमुखानेकच्छेक जन-मनस्सु अमंदानन्दमुत्पादयन्तोऽमृतसरो लवपुरी शालि-कोटाद्यदभ्रक्षेत्रेषु विहरन्तः श्री श्रीपूज्याः पुनः सर्वर्द्धि चारु चूरू निगमादिषु चतुर्मास्योऽनेकशो विधाय हितकृद्। धर्म प्ररूपणा दिल्ली, लक्ष्मणपुरी (लखनऊ) काशी, पाडलि-पुत्र, मकसूदाबादादि स्थानीयेषु संस्थित्य च पुनर्दिल्ली

नगरे चतुर्मासीद्वयमकार्षुः । ततो भूरि परिकरान्विताः सुश्रावक प्राभृतीकृत शिविकोत्तमारूढ़ा भरतपुर, गोद निगमादिपु विहृत्य कोटानगरादिपु च दाक्षिणात्यमहिता मालवादिजनपदेपु च बहुशोऽशेष श्रीसंघमनोविनोदाय संस्थितास्ततः श्री नागोर नगरमधिष्ठाय जालोर जेसलमेरु श्रीसंघेन बहुविज्ञप्तिपत्राणि संप्रेष्याऽऽहूताः । श्रीमद् भदन्त पुंगवाः सुखेन शुद्ध सुकृतोपदेश . कादंबिन्याऽस्तोक लोक-हृद्गत रौरवतामपनीतवन्तः । ततो विहृत्य फलवर्द्धि पुरी प्रभृति क्षेत्रेपु चिरं चतुरश्चेतश्चमत्कारि हारि विहार करणेन झज्झू निगमे समेताः ! राजाधिराज महाराज श्री रत्नसिंह-देवैः प्रज्ञाल प्रवर्ह मुनिवंशाभरण श्री गुरुचरण वनज भजनावाप्त परमानंद महर्षि वचन रचना चारिमातिशय प्रीणित चित्तै रजतयष्टि शुद्ध लेख संप्रेषण पूर्वकं बहु विज्ञप्य श्रीबीकानेरपुरे पुरातन पृथ्वीराज कारित प्रवेशोत्सवानु-कारिणा महामहेन प्रवेशिता, विशेषतो भक्तियुक्तिः कृता कारिता च एक विंशति यति मधुपार्च्चित चरणाः सुखेनाब्दत्रयमस्थुः ।

अर्थ—उनके पाट पर विजयमान श्री श्रीपूज्य लक्ष्मीचन्द्रजी आचार्य हुए कोठारी गोत्र के जीवराजजी पिता और जयरङ्गदेवी नाम की माता थी, नोहर में जन्म और अहिपुर में दीक्षा अपने हाथ से। पद भी वहीं सं० १८४२ आषाढ़ कृष्ण २ को हुआ। वहां पर दो चौमासे किए। व्याख्यान और त्याग पचखान आदि से भली-भांति धर्म प्रवृत्ति हुई। संघ का मनोरथ सफल किया। उसके बाद मंडी में श्रीसंघ ने महान् उत्सव पूर्वक चतुर्मास कराया। फिर जोजावर नगर में २५ यतियों के साथ दो वर्ष तक रहे। फिर अनेक दूसरे क्षेत्रों को अपने चरण न्यास से पवित्र किये। बाद बीकानेर आदि नगरों में प्रचुर शुद्ध भावना भावित चित्त वाले श्रावकों के मन को परम प्रसन्न करके श्री सुनाम, पटियाला, अंबाला, धर्मक्षेत्र, रोपड़, होशियारपुर जेजो, जगद् रम्य—जगरांवा कृष्णपुरा जो कि खंडेलवाल

श्रावकों से मंडित है अनेक पंडित और यति प्रमुख कुशल लोगों के मन में अत्यन्त आनन्द उत्पन्न करतेहुए अमृतसर, लवपुरी, श्यालकोटादि क्षेत्रों में बिहार करते हुए श्री श्रीपूज्य फिर सब ऋद्धि से युक्त सुन्दर चूरू शहर आदि में अनेक चौमासे करके हितकारी धर्म प्ररूपणा करते हुए दिल्ली, लखनऊ, काशी, पटना, मकसूदाबाद आदि स्थानों में ठहर कर फिर दिल्ली नगर में दो चौमासे किए। वहां से बहुत परिकर सहित सुश्रावकों द्वारा लायी गई उत्तम पालकी पर आरूढ हो भरतपुर, गोद मंडी में विहार कर कोटा आदि नगरों में दक्षिणी लोगों से पूजित होकर मालव भूमि में समस्त श्रीसंघ के मनोविनोद के लिए बहुत काल ठहरे। वहां से नागोर नगर पधारे वहां जालोर, जेसलमेर श्री संघ ने बहुत विनती पत्र भेजकर पधारने को आग्रह किया। श्रीमद् भदन्त पुंगव ने सुख पूर्वक शुद्ध पुण्योपदेश कथा से समस्त लोगों के हृदयगत पापों को दूर किया। वहां से विहार कर फलवर्द्धि पुरी प्रभृति क्षेत्रों में चिरकाल तक चतुर चित्त को चमत्कृत और मोहित करने वाले विहार से झुञ्झू निगम पधारे। राजाधिराज श्री रत्नसिंह देव ने प्रज्ञावान् श्रेष्ठ मुनि वंश के आभरण श्री गुरुचरण कमल के भजन से परम आनन्दित हो तथा महर्षि वचन से अत्यन्त प्रसन्न चित्त होकर चांदी की छड़ी और शुद्ध लेख भेजकर और बहुत निवेदन किया और बीकानेर में पुराने राजाओं के द्वारा किए गए उत्सव के अनुसार महान् उत्सव के सङ्ग उनका नगर प्रवेश कराया, विशेषरूप से भक्ति युक्ति की एवं कराई। २१ यति-मधुपों से पूजित चरण श्री पूज्य सुख से वहां तीन वर्ष ठहरे।

मूल—इतश्चोदीच्य यावत् क्षेत्र श्रीसंघेन सुनामस्थ यति रघुपति प्रति कथापितं बहु वत्सर वृन्दमतीतं श्री श्रीपूज्य पाद दर्शनामृत सतृष्णमस्मदीय मानसं वर्त्तते तेनाशु विज्ञप्ति-पत्राणि संप्रेष्य श्री सूरयः समाकार्य्याः। तदा तेनाऽपि बहुशश्छदाः विसृष्टाः संदेशहराश्च, अस्मिन्नवसरे स्थैर्यौदार्यादि गुणावली-समुपार्जित हीराट्टहास—राका—शशाङ्क—कर—निकर—सोदर यशः स्तोमैः श्री श्रीपूज्य चरणैः सद्यः प्रसद्य समागम दल द्वारा ज्ञापितमागमनम्। ततो बीकानेरान्महता महेन विहृत्य नवहर निगमं पुनानै राजपुरा, रोढी, बुढ़लाडादिषु समागत्य सुनाम

नगरे चातुर्मासी कृता। तत्र लद्धराजजीकानां प्रपौत्र-शिष्यो रघुनाथर्षिः शिष्य चतुष्टय युतः अपरेऽपि विंशति साधवस्तैः परिवृताः श्रीमद्भदन्तपुंगवाः सदागमावलीं सम्यग्व्याख्यातवन्तः। ततो विहृत्य सन्मानक धर्मक्षेत्र सढ़ौरा, अंबाला, बनूड़, रोपड़, नालागढ़, लुदिहाना प्रमुख क्षेत्राणि स्पर्शना-पूतानि विधाय च सं० १८६० वर्षे श्रीमत्पटयाला नामनि पुटभेदने श्रावकैश्चतुर्मासी कारिताऽस्ति, तत्र सुखेन धर्म कर्म प्रवर्तयन्तो विराजन्ते, ते सर्व जनपदेषु पूर्ववद् विजयमानाश्चिरं जीव्यासुः कोटि दीपमालिकाः। एतदाज्ञया श्री संघः प्रवर्त्तताम्। पट्टावल्याः प्रबन्धोऽयं, रघुनाथर्षिणा द्रुतम्। लिखितः सुगमः शोध्यो, विशेषज्ञैः पुनर्मुदा (१) इति श्रीमद् विवुध चक्र शक्र श्रीमुनिराजसिंह चरणाब्ज चंचरीक रघुनाथर्षिणा पट्टावली प्रबन्धो रचितः लिखितः। श्रीरस्तु। कल्याणमस्तु। श्री अहिपुराभिधान स्थानीये श्रेयः श्रेणयस्सन्तु। मुनि संतोषचन्द्रेण लिपिकृतं, संवत् १८६६ वर्षे-प्रथम चैत्र शुक्ला चतुर्दशी तिथौ भृगुवासरे।

अर्थ—इधर उत्तरीय यावत क्षेत्र के श्रीसंघ ने सुनाम में स्थित रघुनाथ यति को कहलाया कि वहुत वर्ष हो गए श्रीपूज्यचरण के दर्शनामृत के लिए मेरा मन अतिशय सतृण्ण बना हुआ है। इससे शीघ्र विनति पत्र भेज कर श्री सूरि को वुलाना चाहिए। तब उन्होंने भी बहुत पत्र लिखे और दूत भी भेजे, इस अवसर पर स्थिरता, उदारता और गंभीरता आदि गुणावली से प्राप्त हीरक से अट्टहास वाले और पूनम के चन्द्र किरण वत् धवल यश समूह वाले श्री श्रीपूज्य ने शीघ्र उत्तर पत्र द्वारा आने की सूचना भेज दी।

फिर बीकानेर से बड़े उत्सव के साथ विहार करके नवहर निगम को पवित्र करते हुए राजपुरा, रोढी, बुढ़लाडा आदि क्षेत्रों में होकर सुनाम नगर में चतुर्मास किया। वहां लद्धराजजी के प्रपौत्र शिष्य रघनाथ ऋषि

चार शिष्यों के साथ और अन्य बीस साधुओं से घिरे श्री श्रीपूज्य सतत आगम समूह की सुन्दर व्याख्या करते रहे। वहाँ से विहार कर सन्मानक, धर्म क्षेत्र, सढ़ौरा, अंबाला, वनूड, रोपड़, नालागढ़, लुधियाना, प्रमुख क्षेत्रों को स्पर्शना से पवित्र बनाते हुए सं० १८९० वर्ष में श्रीपटियाला नामक नगर में श्रावकों ने चातुर्मासी कराई। वहां पर सुख से धर्म कर्म कराते हुए विराजते रहे। वे सब देशों में पूर्ववत् विजय प्राप्त करते हुए चिरकाल तक जीएं। करोड़ों दीप मालिका इनकी आज्ञा से श्री संघ चलता रहे।

प्रशस्ति—यह पट्टावली का प्रबन्ध रघुनाथ ऋषि ने शीघ्रता से सुगम रूप में लिखा है—विशेषज्ञों को चाहिए कि प्रमोद भाव से इसका संशोधन करें। इस प्रकार विबुधों में इन्द्र के समान श्रीराजसिंह मुनि के चरण सेवक रघुनाथ ऋषि ने पट्टावली प्रबन्ध की रचना की तथा लिखा। श्री हो, कल्याण हो। श्री अहिपुर नाम के स्थान में कल्याण की श्रेणियां हों। मुनि सन्तोषचन्द्र ने सं० १८९९ के प्रथम चैत्र शुक्ल चतुर्दशी शुक्र में इसको लिपि बद्ध किया।

(२)

गणि तेजसी कृत पद्य-पट्टावली

[चार छन्दों की इस पट्टावली में गणि तेजसी (तेजसिंह) ने लोंकागच्छ परम्परा से सम्बन्धित रूपजी, जीवराजजी, बड़े वरसिंघजी, लघु वरसिंहजी, जसवंतजी, रूपसिंह जी, दामोदरजी, कर्मसिंहजी, तथा अपने गुरु केशव जी का पट्ट-क्रम से स्तवन किया है।]

[१]

रूपजी वधार्‌यो रूप, सिधांते कह्यौ सरूप,
जैन धर्म है अनूप, दया धर्म रोपीयो।
मान माया मोह मेटि, दया धर्म लेइ थेटि,
ज्ञान सुं पावन पेट, हिंसा धर्म लोपीयो॥
पंच व्रत रूप आथि, संयम कुं लेइ साथि,
क्षमा खग गहे हाथि, कर्म केरे कोपीयो।
द्वादश अंगी विचार, सिद्धांत सवै ही सार,
चित्त में सदावधार, ग्यान अंग ओपीयो॥

[२]

जीवजी विचारयो जीव, छकाय भमै सदीव,
संसार की एह नीव, जीव रक्षा कीजीये।
तजीयें कुटंब भार, मुकि कै धन अपार,
मनमें करी करार, साधु व्रत लीजीये॥

दोसी तेजपाल तन, साधु में भयो रतन,
लोक कहे धनि धनि, दान अभय दीजीयैं।
लोक कुं कहे विचार, सुणीये सिद्धांत सार,
तजीयै सवै संसार, कर्म कूं न धीजीयै ॥

[३]

तस्स पाटि प्रधान, हरियुगम सुगम, जिन शासन सोभ वधी।
जसवंत जिहाज भयो जसको, जस उजर खीरसो रूप ऋद्धि ॥
रूपसी रूप अनोपम उपम, देइ गुण ग्राम करे सुवुधी।
तस्स पाटि पटोधर, भये दमोदर, शील शिरोमणी ज्ञान निधी ॥

[४]

कर्म प्रताप भयो कर्मसिंघ जू, कर्म मे वारण सिंघ सवाइ।
पाट प्रताप विराजित केशव, ताको जू है नवरंगदे माइ ॥
नेतसी नंद, लुंका गच्छ इंद, कानी तारा चन्द ए वीनती पाइ।
गावत गुण सदा गणि तेजसी, गोतमसी गुरु की गिरूयाई ॥

॥ इति पट्टावली ॥

संक्षिप्त पट्टावली

[यह पट्टावली कुंवरजी-पक्ष से संबंधित है। इसमें लोंकागच्छ की उत्पत्ति के समय से लेकर भांणाजी, भीदाजी, नूंनाजी, भीमाजी, जगमालजी, सरवाजी, रूपजी, जीवजी, कुंवरजी, श्रीमल्लजी, रत्नसीजी, केशवजी, शिवजी, संघराज जी, सुखमल्लजी तथा तत्कालीन आचार्य भागचन्दजी (संवत् १७६३) तक का कालक्रमानुसार संक्षिप्त पट्ट-परिचय, प्रस्तुत किया गया है। इसका लिपि काल संवत् १८२७, ज्येष्ठ कृष्णा १२ बुधवार है।]

।। ॐ नमः सिद्धं ।।

प्रथम संवत् १५२५ वर्षे, कालूपुर मध्ये, साहलको, आणन्द सुत, जाति ना वीसा श्रीमाली, भिनमालना वासी अनै कालूपुर ना साह लक्ष्मी सी दया धर्म प्रगट हूओ।

सम्वत् १५३१ वर्षे ऋषि श्री भांणा सीरोही ना देश मध्ये अरहट्ट वाडाना वासी, जाति पोरवाड, अहमदाबाद मध्ये स्वयंमेव दिख्या लीधी ।।१।। ऋषि भदा[1] सीरोही ना वासी, जाति ओसवाल, गोत्र साधुरीया, संघवी तोला ना भाई जणा ४५ संघातै ऋषि भाणानै पासै दिख्या लीधी ।।२।। ऋषि श्री नूना ऋषि भदा पासै दिख्या लीधी ।।३।। ऋषि श्रीभीमा पाली गांमना वासी, जाति ओसवाल गोत्र लोढा, ऋषि श्री नूना पासै दिख्या लीधी ।।४।। ऋषि श्री जगमाल उत्तराध माहै, सधर गांम-

१—भीदा।

ना वासी, जातै ओसवाल, गोत्र सूरांणा, ऋषि श्री भीमा पासै दिख्या लीधी झझरी मध्ये ॥५॥ ऋषि श्री सरवा, जातै श्रीमाली सीध, डाढी लीना वासी, संवत् १५५४ वर्षे, ऋषि श्री जगमाल पासइ दीख्या लीधी ॥६॥ ऋषि श्री रूपजी अणहट्टवाडा पाटण ना वासी, जात ओसवाल, गोत्र वैद मुहता, संवत् १५५४ जन्म-संवत्, १५६८ दिख्या संवत्, १५८५ संथारो पाटण मध्ये दिन २५ नौ तीहां श्री जीव जी नै पदवी दीधी। ऋषि श्री रूपजी पाटण मध्ये स्वयंमेव दिख्या लीधी ॥७॥ ऋषि श्री रूप-जी नै पाटै ऋषि श्री जीवजी दोसी, तेजमाल[1] ना पुत्र, माता कपूर दे, सूरत ना वासी, जाति ओसवाल, गोत्र देसडला, संवत् १५७८ वर्षे सूरत मध्ये ऋषि श्री रूपजी पासै दिख्या लीधी। ऋषि श्री जीवजी माह सुद-५ वरस २८ मैं दिख्या लीधी। संवत् १६१३ वर्षे द्वुतीय जेष्ठ वदि-१० संथारो कीधौ दिन ५ नौ संथारौ आराध्यो ॥८॥

ऋषि श्री जीवजी नै पाटै ऋषि श्री कुंयरजी, पिता ऋषि लहुया, माता रुडाई, जात श्रीमांली, माता पिता आदि जणा ७ संघातै संवत् १६०२ वर्षे जेष्ठ सुदि ६ दिने, ऋषि श्री जीवजी पासै दिक्षा लीधी ॥ ९ ॥ ऋषि श्री कुंयरजी नै पाटि ऋषि श्रीमल्लजी, अहमदावाद ना वासी, जाति पोर-वाड़, साह थावरना पुत्र, माता कुंयरी, संवत् १६०६ वर्षे मागसिर सुद ५ दिने, अहमदावाद मध्ये, ऋषि श्री जीवजी पासै दिख्या लीधी ॥ १० ॥

ऋषि श्रीमल्लजी नै पाटै ऋषि श्री रत्नसीजी, नवानग्र ना वासी, जाति श्री श्रीमाली, गोत्र सील्हाणी, साह सूराना पुत्र, माता सूहवदे, वीवाह मेल्या पछी कुवारे जणा ९ संघातै अहिमदाबाद मधे, संवत् १६४८ वर्षे वइसाख वदि १३ दिने, श्रीमल्लजी पासै दिख्या लीधी। तिवारै पछै संवत् १६५४ वर्षे जेष्ठ वदि ७ दिने श्रीमल्लजीयैं स्वयंमेव पदवी दीधी ॥ ११ ॥ ऋषि श्री रत्नसींह जी नै पाटै ऋषि श्री केशवजी, मारूमाड मध्ये, डुनाडा ना वासी, जात श्री श्रीमाली, साह वजाना पुत्र, माता जयदंतदे, डुनाडा मध्ये संवत् १६७६ वर्षे फागुण वदि ५ रत्नसींह जी पासै, रिख तिलोकसी केसवजी पासै जणा ७ संघातै दिख्या

१—तेजपाल।

लीधी। संवत् १६८६ वर्षे जेष्ट सुदि १३ गुरौ रत्नसींहजी नै संथारै संघ मिली नै केशवजी नै पदवी दीधी ।। १२ ।।

आ० श्री केसवजी नं पाटै आ० श्री शिवजी, नवानगर ना वासी, जात श्रीमाली, संघवी अमरसींह ना पुत्र, माता तेजबाई, संवत् १६५४ वर्षे माह सुद १ नों जन्म संवत् १६६९ वर्षे फागुण सुदि २ दिने आ० श्री रत्नसींहजी पासै दिख्या लीधी, संवत् १६८८ वर्षे जेष्ट सुदि ५ सोमे चतुर्विध संघै पदवी दीधी, संवत् १७३४ वर्षे दिन ६६ नी संथारौ आराध्यौ ।।१३।। आ० श्री वजनो[1] नै पाटै आचार्य श्री संघराजजी, सीद्धपुर ना वासी, जात पोरवाड, संघवी वासाना पुत्र, माता वीरमदे, जणा ३ संघातै संवत १७१८ दिक्षा चैत्र सुद ११ मंगल। संवत् १७०५ जन्म। पदवी संवत् १७२५ वर्षे माह सुद १३। संथारौ संवत् १७५४ चैत्र बदि ११ तत पाट्ट आचार्य श्री सुखमल्लजी, संवत १७४१ आलणपुर मध्ये, सिंघराज जी पासै दिख्या लीधी। संवत १७५५ पोस सुदि पदवी दीधी। संवत १७६३ धोराजी मै संथारौ कीधौ। ततपटे आचार्य श्री भागचंदजी, संवत् १७६० मागसिर वदि २ दिख्या लीधी। संवत् १७६३ पदवी दीधी, पोस वदि ७, नवानगर मध्ये ।।

।। इति पट्टावल्यं लुंका संपूर्ण संवत् १८२७ ज्येष्ट वुदि १३ बुधवारे ।।

१—शिवजी।

(४)

बालापुर पट्टावली

[यह पट्टावली श्री कुंवरजी-पक्ष से सम्बन्धित है। प्रारम्भ में भगवान् महावीर से लेकर देवर्द्धि क्षमा श्रमण तक ३५ पाटों का उल्लेख किया गया है। तदनन्तर लोंकागच्छ की उत्पत्ति के समय से लेकर १७ आचार्यों—१-भाणाजी, २-भीदाजी, ३-नूंनाजी, ४-भीमाजी, ५-जगमालजी, ६-सरवा जी, ७-रूपजी, ८-जीवोजी, ९-कुंवरजी, १०-श्रीमल्लजी, ११-रतनसिंहजी, १२-केशवजी, १३-शिवजी, १४-संघराज जी, १५-सुखमलजी, १६-भागचन्दजी तथा तत्कालीन आचार्य १७-बाहलचन्दजी तक—का जन्म, माता-पिता, दीक्षा, पदवी, संथारा, स्वर्गवास आदि के उल्लेख के साथ संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है।]

।। अथ श्री पटावली लिखीइ छे ।।

हवइ श्री महावीर नइ पाटे श्री सूधर्मा स्वामी । १ । तेहने पाटे श्री जंबू स्वामी । २ । तेहने पाटे प्रभ स्वामी । ३ । तेहने पाटे सिज्जं-भव स्वामी । ४ । तेहने पाटे यशोभद्र स्वामी । ५ । तेहने पाटे श्री-संभूति विजय स्वामी । ६ । तेहने पाटे भद्रबाहु स्वामी । ७ । तेहने पाटे थूलभद्र स्वामी । ८ । तेहने पाटे गिरी महागिरी सुहस्ती आचार्य

। ९ । तेहने पाटे सुप्रतिवद्ध आचार्य । १० । तेहने पाटे इन्द्रदिन्न आचार्य । ११ । तेहने पाटे आर्यदिन्न आचार्य । १२ । तेहने पाटे सीहगिरि नामाचार्य । १३ । तेहने वयर स्वामी । १४ । तेहने पाटे आर्यरथ नामाचार्य । १५ । तेहने पाट पूस गिरी आ० । १६ । तेहने पाटे फग्गुमित्राचार्य । १७ । तेहने पाटे धन गिरि आ० । १८ । तेहने पाटे शिव भूति आ० । १९ । तेहने पाटे आर्यभद्र स्वामी । २० । तेहने पाटे आर्यनक्षत्र आ० । २१ । तेहने पाटे आर्यरक्षित आ० । २२ । तेहने पाटे आर्यनाग आ० । २३ । तेहने पाटे आर्य-जेहल आ० । २४ । तेहने पाटे आर्यविष्णु । २५ । तेहने पाटे आर्य-कालक नामाचार्य । २६ । तेहने पाटे आर्यभद्र । २७ । तेहने पाटे सयलित आ० । २८ । तेहने पाटे आर्यवृद्धि आ० । २९ । तेहने पाटे संघ पालक आ० । ३० । तेहने पाटे आर्यहस्ती आ० । ३१ । तेहने पाटे आर्यधर्म । ३२ । तेहने पाटे आर्यसीह । ३३ । तेहने पाटे संमिल आचार्य । ३४ । तेहने पाटे देवढी गणी खमासमं । ३५ ।

॥ इति पट्टावली ॥

॥ अथ श्री लुंका गछ नी उत्पत्ति लिखिइं छे ॥

सं० १५२८ ना वर्षे, श्री अणहलपुर पाटन मध्ये, मेंतां लकां बुद्धि ए श्री सिद्धांत लिखतां । सूत्रार्थ वांची । सूत्र मध्ये प्रतिमा नो अधिकार किहाई नही, वीजा जती पोसाल धारी थया । तिवारे ते लुंके निकले दया धर्म नी सूद्ध परुपणा करी, गछ काढ्यो । अन्य दर्शनीय नाम लुंके मती कह्या । तिहांथी लुंका गछ थपाणो ।

शुभ मुहुर्त शुभ वेलाइ प्रथम भाणा ऋषजी इं [illegible] मध्ये । संवत १५३१ ना वर्षे, न्याते पोरवाड, सीरोही दे [illegible] गामना वासी, स्वयमेव दीक्षा लीधी । माटे भंडारणे मोटे [illegible]

रुपीया मुकीने, तेहने पाटे ऋषि श्री भीदा जी ए दीक्षा लीधी । जाती ओसवाल, साथरीया गोत्र, सीरोही देश ना वासी, पोताना कुटुम्बी मनुष्य जण ४५ संघाते दीक्षा लीधी । घणो द्रव्य मुंकीने भाणा ऋषि ना शिष्य थया । संवत् १५४० दीष्या लीधी । त्रीजे पाटे ऋषि श्री ५ नूना जी थया । भीदाजी पासे दीख्या लीधी संवत् १५४६ ना वर्षे थया, घणो द्रव्य मुंकीने थया । ४ चोथे पाटे ऋषि श्री ५ भीमा जी थया । पाली गामना वासो, जाति ना ओसवाल, गोत्र लोढा, लक्ष द्रव्य मुकीने ऋषि श्री-५ नूनाजी पासे दीख्या लीधी । तेहना शिष्य थया । ५ पांचमे पाटे ऋषि-श्री ५ जगमाल जी उत्तराध मध्ये नवनरड गामना वासी, जात ओसवाल श्री झांझर मांहि दिख्या लीधी । सूराणा ना गोत्र ना ऋषि श्री ५ भीमा-जी पासे दिख्या लीधी । संवत् १५५० दीक्षा लीधी । ६ छट्ठे पाटे ऋषि श्री ५ सरवोजी थया । पातसाह अकब्बर नो वजीर दीवान हता, रुपया कोड ५ द्रव्य हतो, ते मुकी दीख्या लीधी । जाति श्रीमाली वीसा, संवत् १५५४ दिख्या लोधी । दिवाली दिनइ संवत् १५६६ निज हस्ते दिख्या लीधी । नवसें घरनी सामग्री श्री पाटण मध्ये लुंका गछना श्रावक थया । श्री पूज्या आचार्य श्री रूप ऋषि जी ओगणीस वरसनी दिख्या पाली । संवत् १५८५ पंचासीइं देवगति साधो । तास पाटे जीवो साह सूरति नगर ना वासी, तेजपाल साहना सुत, माता कपूरा, रूप ऋषि नी वाणी सांभली छूठ्या । ३२ लाख मुह मंदी द्रव्य मूकी दीख्या लीधी । लाख रूपयां एक महोछवे खरच्या । पछे आचार्य श्री ६ रूप ऋषि जी पासे दीख्या लीधो । तिवारे सूरति नगर मध्ये नवसे घर समस्या लुंका श्रावक थया । आचार्य श्री ६ जीव ऋषि जी थया । तस पाटे ९ में आचार्य श्री-६ कुयरजी वादी । जयकर लहु मुनि जस तात अमदावाद मोहोछव दीक्षा ले जिण सात माणस साथे दीक्षा लीधी । जीव ऋषिजी पासे महा विद्यामान पंडित कुंयरजी आचार्य थया, जिणे चोरासी ग्रह वरत्यां । पंचम आराना विषे एहवा साधु हवा । पदवी महोछव श्री अहमदाबाद मध्ये कीधो । इहांथी नानो गुर भाइ वरसंघजी बीजी पक्ष लुंकानी थइ । वरसंघ ने पदवी श्रीपत साहे देवरावो, तिहांथी बीजी पक्ष थई ।

आचार्य श्री ६ कुंयरजी ने पाट १० में श्रीमलजी, अह्मदावाद ना वासी, घणो द्रव्य मुकीने दीक्षा लीधी। आचार्य श्री ६ श्री मलजी थया। तस पाटे ११ में रतनसिंह नवानगर नावासी, सोहलाणी वीसा श्रीमाली, स्त्री श्री बाइ कुंयारी मूंकी, नव जन नव मनुष्य संघाते, श्री बाई ना माता पिता, रतन सी ना माता पिता एवं नव जणा संघाते दीक्षा लीधी। आचार्य श्री ६ रतन नगर नेमीश्वर नी ओपमा पांचमा आराने विषे नेमनाथनी करणी करी। तस पटे १२ में केशवजी थया। मारवाड नव कोटी तै मध्ये ग्राम कनाडो आचार्य रतन सीहनी वाणी सांभली घणा वैराग पाम्या। बार वरस वेराग पणे रह्या। घणो द्रव्य मुंकी आचार्य श्री ६ रतन सीह पासे दिख्या लीधी। पछे पदवी धर थया। एक वरस पदवी पाली। पछे देवांगत थया। आचार्य श्री ६ केसवजी थयां। तस पाटें १३ आचार्य-श्री ६ शिवजी थया। नवा नगर ना वासी, श्रीमाली पंच भाई आचार्य रतनसींह नो उपदेश सांभली घणुं वैराग्य पाम्या। छती ऋद्ध मूंकी, घणी द्रव्य मूंकी आचार्य श्री ६ रतनसींह पासे दीक्षा लीधी। घणा सुत्र, सिद्धांत व्याकरण, काव्य, न्याय शास्त्र, लाला ऋषे शीख्या, भणाव्या। पछे पाटोधर थया। कृपा पात्र माहा वेरागी शुद्ध चारित्र ना पालक, कृपा सागर, गुणना आगर, एहवा आचार्य। श्री ६ शिवजी गणधर ओपमा तेहने १६ शिख थया। जातवंत कुलवंत क्रियापात्र सुधा साधु विद्यावंत शास्त्रना पारगामी ऋषि श्री ५ जगजीवन जी आदि देई पंडित शिष्य थया। एहवा मोटा आचार्य श्री ६ शिवजी थया जिणे पांचमें आरानें विषै पांच पांडव नी करणी करी। जिणे ६६ दिहाडा नो संथारो कीधो। तिविहार संथारो बाकी दिन ६ रह्या, ते चोवीहार अणसण कीया एवं ६६ दिन नो संथारो कीधो। अमदावाद झवेरी वाडा मध्ये पहिली रात्रने समे काल प्राप्त थया। अमर विमान पाम्यां। जिवारे काल कीधो तिवारे उजवालौ थयो थोडी सी वेला। एहवा गछनायक हवा आचार्य श्री ६ शिवजी।

तास पाटे १४ मे श्री संघराजजी जाते पोरवाड़ विसा, सिद्धपर नगर ना वासी, संघवी वासाना पुत्र, माता विरदे बहेन मेघवाई तात पुत्र बेहेन संघाते आचार्य श्री ६ शिवराजजी पासें, घणों द्रव्य मुंकी ने दीख्या लीधी। पछे ऋषि श्री ५ जगजीवनजी ने शिष्यपणे सुप्या। एहने सारी पठे

भणावज्यो तिवारे ऋषि श्री ५ जगर्जीवन जी भणावे । प्रथमतो सुत्र सिद्धांत, इग्यार अंग, वार उपांग, ४ छेद, मूल सूत्र वत्रीस अर्थ टीका सहित भणाव्या। पछे व्याकरण, काव्य, सर्व अलंकार, छंद, सिद्धांत कौमुदी, दस हजार प्रक्रिया कौमुदी, न्याय सास्त्र ना ग्रंथ, गणित सास्त्र, लीलावती आदि देई। एवं ६ लाख ग्रंथ का अर्थ सहित सर्व भणाव्या। शिष्य ने तिवार पछी आचार्य श्री ६ शिवजी पोतानो अवसर जाणी राग पूरण आणी, अह्मदावाद झवेरी वाडे मोठे उपासरे, घणे आडंबरे, घणे महोछवे चतुर्विध संघ समस्त देखता आचार्य श्री ६ सिंघराजजी ने पोते स्वहस्ते संवत् १७२५ वीसें माहा शुदि १३ मंगलवारे पदवी दीधी। घणे द्रव्य खरची तिवारे गछ नायक पद दीधो। महा रुपवंत, गुणवंत, आठ संपदा ना धारणहार थया। २६ वरसनी पदवी भोगवी। सर्व आउखो वरस ५० संवत् १७५५ ने आगरा सहरे मां फागुण शुदि ११ दने काल कीधो। देवांगत पद पाम्यां। तिहां घणा द्रव्य संघे खरच्या, घणो धर्म नो लाहो लीधो, दिन ११ संथारो आव्यो।

आचार्य श्री ६ संघराजजी ने पाटे १५ में सुखमलजी थया। देश मारवाड जेसलमेर आसणी कोट गामना वासी, जाति ओसवाल. वीसा, संघवालेचा गोत्र, आचार्य श्री ६ संघराज जी पासे मोटे वैरागे दीख्या लीधी। बार वरस तप तप्या, घणा सुत्र सिद्धांत भण्या। अमदावाद सहरे सैदपुर मध्ये संवत् १७५६ चतुर्विध संघ मिली पदवी दीधी। आचार्य श्री ६ सुखमल्ल जी थया। मोटा तपेश्वरी श्री पूज्य थया। आचार्य सुखमल जी पासे वहेन तेजबाई ये दीख्या लीधी। आठ वरसनी पदवी भोगवी। सोरठ देस मध्ये सहरे धोराजी चोमासो रह्या। संवत् १७६३ आसोज वदि ११ दिने काल कीधो। सूरपद पाम्या, सर्व आउखु वरस ५० भोगव्यो। तेहने पाटें १६ में आचार्य श्री ६ भागचंदजी थाया। श्री पूज्य आचार्य श्री ६ सुखमलजी भागचंदजी भाणेज ने कछ देश मध्ये, भुज-नगर रा ओ श्री प्रागराज्ये संवत् १७६० श्री पूज्य सुखमलजीयें भाणेज भागचंदजी ने दीख्या दीधी। घणा सुत्र सिद्धांत भण्या। संवत् १७६३ नवे नगर चतुर्विध संघ मिली घणो महोछव करी मगसर वदि ७ पाट पदवी दीधी। तिवार पछे वरस ४५ पदवी भोगवी। आउखु वरस ६६ नु पालीने अंत समे दिवश ७ नो संथारो कीधो। मारवाड देश में सांचोर सहरे में महावीर निर्वाण दिवसे स्वर्ग पहोता। तत्पट्टे १७ में श्री पूज्य श्री

वाह्लुचंद्जी थया । मारवाड देशने विखे फलोधी सेहर ना वासी, ज्ञात ओसवाल, गोत्र गोलेछा, पिता साह् आगरा, माता सुजाणदे, जण त्रण संघाते बाल पणे वैराग्य पामीने वे पूत्र अने माता त्रण संघाते छती ऋद्धि छोडीने मोटे मंडाणे श्री पूज्य श्री भागचंदजी पासे दीक्षा लीधी । तद उपरंत श्री पूज्याचार्य श्री भागचंदजी संवत् १८....५ (?) वर्षे कार्त्तक सुद ३ दिने गुरुवासरे सुभ वेला स्वहस्ते श्री साचोर सहरे में चतुर्विध संघ मोटे मांडणे पद महोछ्व करीने, श्री पूज्य ६ श्री वाह्लुचंदजी ने आचार्य पद दीधो ।

(५)

बड़ौदा पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली में भगवान् महावीर से लेकर देवर्द्धि गणि क्षमाश्रमण तक २७ पाटों का उल्लेख करते हुए विभिन्न गच्छों की उत्पत्ति का निर्देश किया गया है। तदनन्तर लोंकागच्छ की उत्पत्ति व सम्बन्धित परम्परा के २४ आचार्यों—१-भाणा जी, २-भीदाजी, ३-नूंनाजी, ४-भीमाजी, ५-सरवाजी, ६-रूपजी, ७-जीवजी, ८-बडवरसिंघजी, ९-लघुवर-सिंघजी, १०-जसवंतजी, ११-रूपसिंहजी, १२- दामोदरजी, १३-कर्मसिंह जी, १४-केशव जी, १५-तेजसिंह जी, १६-कान्हाजी, १७-तुलसीदासजी, १८-जगरूपजी, १९-जगजीवन जी, २०-मेघराजजी, २१-सोमचन्दजी, २२-हर्षचन्दजी, २३-जयचंदजी, तथा तत्कालीन आचार्य २४-कल्याणचन्दजी (संवत् १९५७ तक)—का कालक्रमानुसार परिचय दिया गया है। २२ वें आचार्य हर्षचंदजी तक के उल्लेख के साथ संवत् १९३८ मगसर विद १ को बड़ौदा में इस प्रति का लेखन किया गया। अन्तिम दो आचार्यों का परिचय बाद में जोड़ा गया है।]

प्रथम पाटे श्री महावीर स्वामी थया ॥ १ ॥ ३० वर्षे श्री सुधर्म स्वामी मोक्षे पहुंता ॥ २ ॥ ६४ वर्षे श्री जम्बू स्वामी ॥ ३ ॥ ७५ वर्षे श्री प्रभव स्वामी थया ॥ ४ ॥ ९८ वर्षे श्री सियंभव स्वामी थया

॥ ५ ॥ १४८ वर्षे श्री जसोभद्र स्वामी थया ॥ ६ ॥ १५६ वर्षे श्री संभूतविजय स्वामी ॥ ७ ॥ १७० वर्षे श्री भद्रबाहु स्वामी ॥ ८ ॥ २१५ वर्षे श्री स्थूलभद्र स्वामी थया ॥ ६ ॥ २४५ वर्षे श्री आर्य-महागिरी स्वामी थया ॥ १० ॥ २८० वर्षे श्री बलिसाह स्वामी थया ॥ ११ ॥ ३३३ वर्षे श्री स्वांति स्वामी थया ॥ १२ ॥ ३७६ वर्षे श्री स्यामाचार्य स्वामी थया ॥ १३ ॥ ४०६ वर्षे श्री सांडिल स्वामी हवा ॥ १४ ॥ ४५४ वर्षे श्री जातधरम स्वामी हवा ॥ १५ ॥ ५०८ वर्षे श्री आर्य समुद्र स्वामी हवा ॥ १६ ॥ ५६१ वर्षे श्री नंदिल स्वामी हवा ॥ १७ ॥ ६८४ वर्षे श्री नागहस्ती स्वामी हवा ॥ १८ ॥ ७१८ वर्षे श्री खेत स्वामि हवा ॥ १६ ॥ ८०६ वर्षे श्री सिंह स्वामी हवा ॥ २० ॥ ८१४ वर्षे श्री खंदिल स्वामी हवा ॥ २१ ॥ ८४८ वर्षे श्री हेमवन्त स्वामी थया ॥ २२ ॥ ८७५ वर्षे नागार्जुन स्वामी हवा ॥ २३ ॥ ८७७ वर्षे श्री गोविन्द स्वामी हवा ॥ २४ ॥ ६१४ वर्षे श्री भूतदिन स्वामी हवा ॥ २५ ॥ ६४२ वर्षे श्री लोहितस्यगणि स्वामी हवा ॥ २६ ॥ ६७५ वर्षे श्री दुस्यगणि स्वामी हवा ॥ २७ ॥ तत्पट्टे ६७६ वर्षे श्री देवढगणी क्षमाश्रवण पाटे बेठा ।

ते पछे पांचमे वरसे ६८० वर्षे सिद्धान्त पुस्तके चढाववा मांड्यो । चौंदे वरस सिद्धान्त पुस्तकें चढावतां लागा । ६६३ में वर्षे-संवत्सरे ११ अंग, १२ उपांग इत्यादिक ८४ सूत्र नाम जाणवा । श्री वीरथकि ४७० वर्षे विक्रमादित्य नो संवत् थयो छे । विक्रमादित्य थी १३५ वर्षे सालि-वाहन नो साको थयो । विक्रमात् ५२३ वर्षे कालिकाचार्येण पंचमी तथा चतुर्थि पर्यूषणा कृता तथा ५२३ वर्षे पंचमी पर्यूषणा कृता तथा विक्रम संवच्छर हूंति १२५७ वर्षे चतुर्दशीनि स्थापना हुई ॥१॥ संवत् ४१२ वर्षे चैत्यनां देहरा प्रवर्त्या भस्मग्रह ने जोगे करी ने जाणवो ॥२॥ संवत् १००८ वर्षे पौषध शाला हुई ॥३॥ संवत् ६६४ वर्षे चोरचासी गच्छना मत थया ॥ ४ ॥ संवत् १००१ वर्षे मठधारी महातिमा थया ॥ ५ ॥ संवत् १२१३ ना वर्षे खड़तर गच्छ उजलमना थया ॥ ६ ॥ संवत् १२१४

ना वर्षे आंचलिया उजलमान थया ।। ७ ।। संवत १२३४ ना वर्षे नागोरी महातमा थया ।। ८ ।। संवत् १२५० ना वर्षे आगमीया, पूनमिया महातीमा थया ।। ९ ।। संवत् १२८५ में वर्षे तपा माहातिमा थया तथा वडगच्छ नो महातमो एक, तपगच्छ नो एवं २ थी चित्रगच्छ नीकल्यो तिहां महातिमा नो गच्छ मंडाण थयो ।। १० ।। संवत् १५२३ ना वर्षे लोकांपति थया ।। ११ ।। संवत् १५४४ ना वर्षे वीजामतिए प्रतिमा पूजी ।। १२ ।। संवत् १५७१ ना वर्षे पायचन्द प्रतिमा पूजी, क्रिया उद्धरी ।। १३ ।। संवत् १५८३ वर्षे आणंद विमल सूरी ए क्रिया उद्धरी ।। १४ ।। संवत् १६०२ वर्षे आंचलिए क्रिया उधरी ।। १५ ।। संवत् १६०५ वर्षे षडतरे क्रिया उधरी ।। १६ ।। संवत् १६८१ ना वर्षे महादेव एक गुजराति एवं २ ऋषि मायानी पासे ऋषि रूपचन्द ऋषि होरानन्दे नागोरी सीराना कुवा पासे दीक्षा लिधी । तिवार पछे ४ वर्षे एकठा रह्या । पछे सिचामति नागोरी लोंका निकल्या ।। १७ ।।

संवत् १५३१ ना वर्षे अनदावाद मांहे पोताने मेले ऋ० भाणा सिरोही देश मांहे, अरहट्टवाडा गांजना वासी, ज्ञाते पोरवाडते दिक्षा लीधी एवं पाट १ थयो ।। १८ ।। ऋषि भीदाजी सिरोही ना वासी, ओसवाल, गोत्र साथरिया एवं पाट २ । सा० तोलाना भाईए[1] ऋषि भीदानि पासे दिक्षा लोधो, अमदावाद मध्ये एवं पाट ३ थया । ऋषि भीना पालि गांमना वासी, ऋषि भीना, ऋषि नूना, ऋषि रतनसिए दीक्षा लीधी । ऋषि भीना[2] पालि गामना वासी, जाते ओसवाल, गोत्र सुराणा, तेणे झांझर गाम मांहे दीक्षा लीधी एवं पाट चार थया । ऋषि जगमाल ना शिष्य ऋषि सरवा, जाते ओसवाल, गोत्र सुराणो, श्रीमालि गोत्र संघाड़, उतरदेश लिवि गाम माहे दीक्षा लिधि संवत् १५५४ वर्षे तेमज ५४ वरस नी दीक्षा पाली एवं पाट ५ थया[3] । ऋषि सरवाने पासे पाटण ना वासी

१—अन्य पट्टावलियों में तीसरे पट्टधर आचार्य का नाम नूंनाजी मिलता है ।

२—अन्य पट्ट में भीमा ।

३—अन्य पट्टावलियों में पाँचवे पट्टधर आचार्य का नाम जगमालजी मिलता है । सरवाजी छठे आचार्य हैं । इस पट्टावली में जगमालजी की आचार्य रूप में गणना नहीं की गयी है ।

गोत्र वेद ऋषि रूपजी ए संवत् १५६५ ना वर्षे दीक्षा लिधि । वर्ष १७ नि दीक्षा थि दिन २५ संथारो उदये मां आव्यो । सर्व आयु वर्ष ४२ नो पाल्यो एवं पाट ६ थया । संवत् १५७८ ना वष, सुरतना वासि, महा-सुदी १५ गुरु दिने, जीवजिये पदवी लिधि । इहां थी सीमल[१] ऋषि नो गच्छ नीकल्यो । संवत् १५८५ वर्षे, पाटण मांहे पदवि लिधि; ते पदवी वर्ष २८ नी पदवि जाणवि, सर्वायु वर्ष ६३, संवत् १६१३ ना वर्षे जेठ वीजा वद १० वार सोमे दिन ५ नो संथारा थयो एवं पाट ७ थया ।

तत्पट्टे ऋषि वडवरसिंघ जी जाते ओसवाल, गोत्र नाटदेव का, पाटण ना वासि, वर्ष २३ हता, संवत १५८७ चैत्र सुदि ४ देने दीक्षा वर्ष २५ नी । पदवी संवत १६१२ ना वैशाख सुदि ७ सोमे पदवि वर्ष ३३ नी पाली । संवत १६४४ ना कार्तिक शुद २ दिने पोहोर ११ नो सागारी संथारो खंभातमां कीधो, सर्वायु वर्ष ८० नो पाल्यो एवं ८ पाट थया । वीजा लघुवरसिंहजी सादड़ी ना वासी, ओसवाल, गोत्र वोहोरा ना परि-वार मां, संवत् १६०६ वर्षे दीक्षा, संवत् १६२० पदवी, वर्ष ३६ नी पदवी । सर्वायु वर्ष ७२ सुखो भोगवो । संवत १६२१ ना खंभात मध्ये ऋ० कुंवरजी नो गच्छ निकल्यो । संवत् १६६२ वर्षे उसमापुर मध्ये, लघुवरसंघजिए पोहोर ८ नो संथारो, पाट नवमो ।

तत्पट्टे जसवंत जी सोहीजतना वासी, ओसवाल, गोत्र लोकड, संवत् १६४९ वर्षे दीक्षा, वर्ष ३९ नी पदवि, सर्वायु वर्ष ५५, पोहोर ८ नो संथारो, एमदपुर मध्ये । संवत् १६८८ ना वर्षे, एवं पाट १० थया । तत्पट्टे रूपसिंहजी गुंदवचना वासि, गोत्र वोहोरानु ओसवाल जाते पूनमिया, संवत् १६७४ वर्षे दीक्षा, वरस ८ नी पदवी, सर्वायु वर्ष ३५ पोहोर बे नो संथारो एवं पाट ११ । तत्पट्टे दामोदरजी अजमेर ना वासी, गोत्र लोढ़ा, संवत १६८८ ना वर्षे दीक्षा, संवत १६९६ वर्षे मास ८ नि पदवी, दीक्षा वर्ष ८ पोहोर १ नो संथारो । सर्व आयु वर्ष २३ मास ३ दिन २४ एवं

२—श्रीमल्ल ।

पाट १२। तेहने पाटे कर्मसिजि माता रत्नादे, पिता सा० रतनसी, ओसवाल, गोत्र लोढा। अजमेर ना वासि, खंभात मध्ये संथारो पोहोर ६ नो आराध्यो एवं पाट १३ थया। तत्पट्टे केशवजी पिता सा० नेतो, माता नवरंगदे, गाम जेतारण, गोत्र कोठारी, कोलदा मांहे जेठ वदि ६ सने संवत् १७२० ना वर्षे संथारो पोहोर २४ नो आराध्यो एवं पाट १४ थया। तत्पट्टे श्री तेजसंघजी ओसवाल वंशे ऊपना, तेहनो मोटो उपगार कहीए एवं पाट १५।

तत्पट्टे श्री काहानजी ओसवाल वंशे, तेहनो मोटो एवं पाट १६ थया। तत्पट्टे श्री तुलसीदास जी ओसवाल वंशे तेहनो मोटो उपगार कहिये पाट १७। तत्पट्टे श्री जगरूपजी ओसवाल तेहनो............पाट १८। तत्पट्टे श्री जगजीवन जी ओसवाल वंशे, तेहना पाट १९। तत्पट्टे श्री मेघराज जी ओसवाल ते पाट २०। तत्पट्टे श्री आचार्य श्री श्री सोमचन्द्र जी, ओसवाल वंशे वर्ते २१ पाट। तत्पट्टे वर्तमान श्री ६ श्री श्री हर्षचंद जी ओसवाल वंशे वर्तमान गच्छाधिराज सिरोमणि पंडित चरंजीवी हो जो। इति श्री पट्टावलि पूर्वाचार्यनि संपूर्ण। सं० १९३८ ना वर्षे मगसर विद १ दिने। श्री वडोदा मध्ये लिखि छे।

तत्पट्टे श्री जयचंद्र सुरी, ओसवाल वंशे मरूधर देस पाली ग्राम ना, दीक्षा वरस ६०, गादीधर पाट थापन सं० १८६८ महासुद ५, निरवाण बडोदरे सं० १९२२ ना वै० शुद १५ संथारो दिन ८ नो पाट २३ में हुवा। तत्पट्टे श्री कल्याण चंद्र सुरी, रेवासी पाली ना मरुधर देशे, पिता दोलतराम जी, माता नोजी बाई, गोत्र करणावट, ओसवाल वंसे, दीक्षा जीरणगढ़ मां संवत् १९१० मागसर सुद ३, पाट थापन वटपद्र नगरे सं० १९१८ ना महासुद ११ बुधे गादि ऊपर वैठा, सं० १९५७ श्रावण वद १० दिने वारसनी मोक्ष पदने पाम्या संथारो दिवस ३ नो तनु सासन प्रवरते।

(६)

मोटा पक्ष की पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली लोंकागच्छ के मोटा पक्ष से सम्बन्धित है। इसमें महावीर के पश्चात् २७ पट्टधर आचार्यों के नाम-काल-निर्देश के साथ उल्लिखित कर मध्यवर्ती घटनाओं का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् नागोरी लोंकागच्छ की उत्पत्ति का वर्णन कर २५ आचार्यों—१-माणाणी, २-भीदा जी, ३-साहा तोला नूं भाई (नूंनाजी), ४-भीनाजी, ५-जगमालजी, ६-सरवाजी, ७-रूपाजी, ८-जीवाजी, ९-वड वरसिंहजी, १०-लघु वरसिंहजी, ११-जसवंतजी, १२-रूपसिंह जी, १३-दामोदरजी, १४-कर्मसिंहजी, १५-केशवजी, १६-तेजसिंहजी, १७-कान्हाजी, १८-तुलसीदासजी, १९-जगरूप जी, २०-जगजीवनजी, २१-मेघराजजी, २२-सोमचंदजी, २३-हर्षचंदजी, २४-जयचंदजी एवं तत्कालीन आचार्य २५-कल्याणचंदजी तक का—जन्म, माता-पिता, दीक्षा, पदवी, संथारा, स्वर्गवास आदि के उल्लेख के साथ संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इसके लिपिकार ऋषि मूलचंद हैं। इसकी हस्त लिखित प्रति उदयपुर में है।

अथ श्री सतावीस पाट नी पटावलि लीख्यते। प्रथम पाटे श्री महावीर स्वामी थया। तारे पछे २० वर्षे सुधर्मा स्वामी मोक्ष पोंता

२ पाट जाणवां। ६४ वर्षे श्री जम्बु स्वामी थया पाट त्रीजे। ७५ वर्षे श्री प्रभव स्वामी थया पाट ४ चोथो। ९८ वर्षे श्री संभव स्वामी थया पाट ५—मो। १४८ वर्षे श्री यशोभद्र स्वामी थया पाट ६ ठो। १५६ वर्षे श्री संभुति विजय स्वामी थया पाट ७ मो। १७० वर्षे श्री भद्रबाहु स्वामी थया पाट ८ मो। २१५ श्री थूलीभद्र स्वामी थया पाट ९ मो। २४५ वर्षे श्री आर्य महागीरी स्वामी थया पाट १० मो। २८० वर्षे श्री बलसिंह स्वामी थया पाट ११ मो। ३३३ वर्षे श्री शांति स्वामी थया पाट १२ मो। ३७६ वर्षे सामाचार्य स्वामी थया पाट १३ मो। ४०२ वर्षे श्री सांडिल स्वामी थया पाट १४ मो। ४५४ वर्षे श्री जीतधर स्वामी थया पाट १५ मो। ५०८ वर्षे आर्य समुद्र स्वामी थया पाट १६ मो। ५९१ वर्षे श्री नन्दील स्वामी थया पाट १७ मो। ६८४ वर्षे श्री नागहस्ती स्वामी थया पाट १८ मो। ७१८ वर्षे श्री रेवत स्वामी थया पाट १९ मो। ८०८ वर्षे श्री सिंह स्वामी थया पाट २० मो। ८१४ वर्षे श्री खंदिल स्वामी थया पाट २१ मो। ८४८ वर्षे श्री हेमवंत स्वामी थया पाट २२ मो। ८७५ वर्षे श्री नागार्यन स्वामी थया पाट २३ मो। ८७७ वर्षे श्री गोविन्द स्वामी थया पाट २४ मो। ९१४ वर्षे श्री भूतदिन स्वामी थया पाट २५ मो। ९४२ वर्षे श्री लोहित्य गणी स्वामी थया पाट २६ मो। ९७५ वर्षे श्री दुस्यगणी स्वामी थया पाट २७ मो। तेहने पाटे ९७६ वर्षे श्री देवढ़ी क्षमाश्रमण पाट वेठा। ते ५०० साधुने परिवारे वीचरे छे।

ते पाट पछे पांचमें वर्षे ९८० वर्षे सीद्धान्त पुस्तके चढावना मॉंड्यो। चउद वर्षे सीधांत पुस्तकें चढावता थयां। ९९३ वर्षे संवत्सरे ११ अंग, १२ वारे उपांग, ६ छेद ग्रन्थ, दस पइना, चार मूल सूत्र एवं सूत्र अनुक्रमे लिख्या। श्री वीर थकी ४७० वर्षे वीक्रमादित्य नो संवत्सर थयो। विक्रमादित्य थी १३५ वर्षे सालिवाहन नो साको थयो। वीक्रमात्त ५२३ वर्षे कालकाचार्य पंचमी थी चतुर्थि पजुषण करंचां,

५२३ वर्षे पंचमी पजुषण करया, विक्रम संवछर हुती १२५७ वर्षे चतुर्दशीनी स्थापना थई, संवत् ४१२ वर्षे चेत्य देहरा प्रथम प्रवर्त्या। ते भस्मग्रह ने जोगे जाणवो सं० १००८ वर्षे पोषधशाला उपाश्रय थया। संवत् ६६४ वर्षे ८४ गच्छ नी स्थापना थइ। संवत् १००१ वर्षे मठ धारी माहत्मा थया। संवत् १२१३ वर्षे खतरगच्छ उजलमान थया। संवत् १२१४ वर्षे अंचलगछ उजल थया। १२३४ वर्षे नागोरी माहत्मा थया। संवत् १२५० वर्षे आगमिया पुनमीया माहत्मा थया। संवत् १२८५ वर्षे तपा माहत्मा थया, वडगछनो माहात्मा १, एक तपा गछना माहात्मा एवं २ एक थइ ने चोत्रगछ नीकल्यो। तीहां माहात्मा नो गछ मंडण थयो। संवत् १५२३ वर्षे लोकागछ नीकल्यो। संवत् १५४४ वर्षे वीजा मतीए प्रतिमां पुजी। संवत् १५७१ ना वर्षे पायचन्द गछे प्रतिमा पुजी, क्रीया उधरी। संवत् १५८३ वर्षे आणन्दवीमलसूरीये क्रीया उधरी। संवत् १६०२ वर्षे अंचलगछे क्रीया उधरी। संवत् १६०५ ना वर्षे षत्तर गच्छे क्रीया उधरी। संवत् १६८१ वर्षे मदावेद एक गुजराती एवं २ एक थई ने ऋष मयाचन्द नी पासे, ऋष रूपचन्द, ऋष हीरानन्द, नागोरी, सीराना कुवा पासे दीक्षा लीधी। तीवांर पछी चार वर्ष भेलो विहार कीधो।

पछे तेरा सांचामती नागोरी लुंका नीकल्या। संवत् १५३१ वर्षे देशना सांभली, ते अमदावाद मध्ये, पोतानी मेलेरी साणा, सीरोही देस मां, अरहटवाल गामना वासी, नाते पोरवाड, तरो दीकरा लीधी। नीरंजन जोती स्वरूपी सूध दयामय धर्म परूपी, अनेक जीवनो उधार करयो। स्थविर भाणाजी नो प्रथम पाट थयो। भीदा जी सीरोही नो वासी, ओसवाल वंश, गोत्र साथरीया, पाट २। एवं साहा तोला[1] ने भाइ ए ऋष भीदा जी पासे दीक्षा लीधी अमदावाद मध्ये एवं ३ पाट। सा भीमा पाली ना वासी, भीना, नूना, रतना एवं ३ जरो ऋष भीदाजी पासे दीक्षा लीधी, ऋष भीना एवं ४ पाट। ऋष जगमाल ऋष सरवाजी ते ओसवाल, गोत्र सूराना, तेरो झाझर गाम माहे दीक्षा लीधी एवं ५ पाट। ऋष जगमालना शिष्य ऋख सरवाजी ते वंश ओसवाल, गोत्र

१—अन्य पट्टावलियों में तीसरे पट्टधर का नाम नूंनाजी मिलता है।

श्रीश्रीमाल से संघाड, उत्तर देशे लींवी गाम माहे दीक्षा लीधी एवं ६ पाट । पाटण गामना वासी, ज्ञाते ओसवाल, गोत्र ते हवे साहा रूपाए संघ काढयो शेत्रुजानो अनुक्रमे, अमदावाद माहे संघे चातुर्मास गाल्युं ते सरवाजी स्थिवर ते रूपाजी ने प्रतिबोध्या, जण ५०० ते सूं दीक्षा लीधी, स्थविरे अन्त शमे मास १ नो संथारो करयो, श्री संघ सर्व ने तेड़ी, ऋष रूपाजी ने पाट आपी, आचार्य पद सोप्यों । वर्ष १७ नी अवस्थाए दीक्षा संवत् १५६५ मां दीक्षा लीधी, दिन २५ संथारो, सर्वायु वर्ष ४२ नो एवं ७ पाट । संवत् १५७८ ना वर्षे, सुरतना वासी, मह्रा सुद १५ गुरूवार दिने साहा जीवाजी सूरी पद लीधो ।

इहां थी सेमल ऋखनो गच्छ नीकल्यो । संवत् १५८५ ना वर्षे, पाटण मांहि पदवी लीधी, ते पदवी वर्ष २८ जाणवी, सर्व आयु वर्ष ६३, सं १६१३ ना वर्षे जेठ बीजा वद १०, वार सोमे, दिन ५ नो संथारो एवं ८ पाट । तत पटे ऋख वडवरसिंहजी सूरी ओसवाल वंशे, गोत्र कर्णावट, पाटण ना वासी, वर्ष २३ ना हता, देशना सांभली दीक्षा लीधी, संवत १५८७ वर्षे चेत्र सुद ४ दिने । पदवी सं० १६१२ ना वर्षे वैशाख सुद ७ ने दिने । वर्ष ३३ पदवी भोगवी । सं० १६४४ ना वर्षे कारतक सुद २ दिने, पोहोर ११ सागारी संथारो श्री खंभात मांहि कीधो । आयु वर्ष ८० नो पाल्यो एवं ९ पाट । बीजा लघुवरशीघजी सूरी सादड़ी ना वासी, ओसवाल वंशे, गोत्र वोराना परिवार मां १६०६ ना वर्षे दीक्षा लीधी । सं० १६२० मा पदवी । सं० १६३६ माहे कुंवरजी नी पक्ष नीकली श्री वीकानेर मध्ये नानी पक्ष जाणवी । सर्व आयु वर्ष ७२ नो पोहोर ३ नो संथारो श्री खंभात मांही एवं १० पाट । तत् पटे जसवंत सूरी श्री सोजत ना वासी, ओसवाल वंशे, गोत्र लूंकड् सं० १६४९ नी पदवी । वर्ष ३९ नी पदवी भोगवी । आयु वर्ष ५५, संथारो पोहोर ८ नो श्री अमदावाद मध्ये एवं ११ पाट । तत पटे रूपसिंह जी सूरी गाम गुंदेच ना वासी, गोत्र वोरा, ओसवाल वंशे, पुनमीया गछे सं० १६७४ ना वर्षे देशना सांभली दिक्षा लीधी । वर्ष ८ नी पदवी । सर्वायु वर्ष ३५, पोहर २० नो संथारो पाटण मध्ये एवं १२ पाट । तत पटे ऋष दामोदर सूरी अजमेर ना वासी, लोढा, सं १६८८ ना वर्षे दीक्षा । सं १६९६ मांय पदवी । सर्वाय वर्ष २३, संथारो पोहर १ नो एवं १३ पाट ।

तत्पटे ऋख कर्मसींघ सूरी माता रतना दे, पिता सा० रतनशी, उसवाल वंशे, गोत्र लोढ़ा, अजमेर ना वासी, पोहर ८ नो संथारो एवं १४ पाट। तत्पटे ऋष केशवजी सूरी पिता सा नेतोजी, माता नवरंदे, ग्राम जंतारण, गौत्र कोठारी, कौलादे ग्रामे दीक्षा लीधी। सर्व आयु वर्ष २५ नो पाली दिन ८ नो संथारो एवं १५ पाट। ततपटे श्री तेजसिंघ जी सूरी थया। ओसवाल वंशे, गोत्र छाजेड़, ग्राम जेपुर मध्ये दीक्षा लीधी। सर्व आयु वर्ष पाली संथारो दिन १५ नो एवं १६ पाट। तत्पटे श्री कान्हा जी सूरी ओसवाल वंशे, गाम चाणोद मध्ये दीक्षा। सर्वायु वर्ष संथारो पोहोर ४ नो एवं १७ पाट। तत्पटे ऋष तुलसीदास जी आचार्य तेनो वंश ओसवाल, तेमनो मोटो उपगार जाणवो एवं १८ पाट। तत्पटे श्री जग-रूप जी सूरी ओसवाल वंशे, तेमनो मोटो उपगार जाणवो एवं १६ पाट। तत्पटे श्री जगजीवन सूरी ओसवाल वंशे, तेमनो मोटो उपगार जाणवो एवं २० पाट। तत्पटे श्री मेघराज सूरी ओसवाल वंश, तेनो मोटो उप-गार एवं २१ पाट। तत्पटे श्री सोमचन्द्र जी सूरी ओसवाल वंशे, तेमनो मोटो उपगार जाणवो एवं २२ पाट। तत्पटे श्री हर्षचन्द्र सूरी थया। तेमनो मोटो उपगार जाणवो एवं २३ पाट। तत्पटे श्री धर्म ना दातार श्री पूज्य जी ऋष श्री ६ श्री जयचन्द्र जी सूरी गछाधिराज थया। नगर पालीना वासी, जाते वीसा ओसवाल, गोत्र कर्णावट, दीक्षा वर्ष २०। पद थापना वर्ष ७५। सर्वायु वर्ष ६५, अन्ते संथारो पोहोर ५ नो श्रीवट पद्र नयरे मोक्ष, एवा सूरी सोरोमणी थया एवं २४ पाट। तत्पटे श्रीपूज्य श्री कल्याण चन्द्र सूरी थया। वासी नगर पालीना, जाति ओसवाल, गोत्र कर्णावट, जीरण गढ़ दीक्षा लीधी। वर्ष २१, गादी थापन वडोदे वर्ष २६ ते आजना काले लुंका गछाधिराज वीद्यमान जयवंता विचरे छे। तेनु नामा भी धार लेतां जीवने परम ज्ञान ना दातार चीरंजीवी भूयात्।

॥ इति श्री लोकागच्छ मोटा पक्ष नी पटावली समाप्त ॥

। ली० ऋष मूलचन्द।

---

(७)

लोंकागच्छीय पट्टावली

[इस पट्टावली में भगवान् महावीर से लेकर ५७ पाटों तक का उल्लेख करते हुए आनन्द विमल सूरि के क्रियोद्धार की चर्चा की गयी है। तदनन्तर लोंकाशाह से लेकर तत्कालीन आचार्य खूबचंदजी (संवत् १४२८ से लेकर १९८२) तक के २७ पट्टधर आचार्यों का जन्म-दीक्षा, पदवी, संथारा, स्वर्गवास आदि के उल्लेख के साथ, परिचय प्रस्तुत किया गया है।]

अथ पट्टावली लखी छे श्री लोंकागछ नी परंपराये महावीर ने पाटे थी मांडी ने लखी छे।

१ श्री भगवंत ने पाटे श्रुधर्मा स्वामी २। तत् पटे जम्बुस्वामी ३। तत् पट्ट प्रभव स्वामी ४। तत् पट्टे श्री जंभव स्वामी ५। तत्पट्टे श्री जसोभद्र स्वामी ६। तत्पट्टे श्री संभुती वीजय स्वामी ७। तत्पट्टे थूली भद्र स्वामी ८। तत्पट्टे श्री आर्य महागीरी स्वामी ९। तत्पट्टे आर्य सुहस्ती स्वामी १०। तत्पट्टे सुस्ती प्रतीबोध स्वामी ११। तत्पट्टे इन्द्रदीन सुरि त्यां थी डीगंबर गछ निकल्यो ७०० बोलनु छेद्ध पाडु १२। तत्पट्टे दीन सुरि १३। तत्पट्टे सीहगीरी सुरी थी ७ गछ निकल्या, जमले गछ ८ थीया १४। तत्पट्टे वज्र स्वामी, त्याथी १२ वर्ष दुकाल पड़ो अंगुठा प्रमाणे प्रतिमा पुजीने दाणा मुके तेणे उदर

पूर्णा करे, सं० ६८० नी साले १५। तत्पट्टे वज्रसेन स्वामी १६। तत्-पट्टे चन्द्रदीन सुरी थी गछ ६ निकल्या, जमले गछ १७ थीया १७। तत्पट्टे सांमंत सुरी थी शंप्रथी राजाए डुगंरे २ देराकराव्या १८। तत्पट्टे वृधदेव सूरी ३ गछ निकल्या, जमले गछ २० थीया। १६। तत्पट्टे प्रद्योतन सुरी २०। तत्पट्टे मनदेव सूरी २१। तत्पट्टे मानतुंग सुरी थकी गछ ३ निकल्या, जमले गछ २३ थया। जेणे भक्तांमर २२। तत्-पट्टे वीरचन्द्र सूरी २३। तत्पट्टे जयदेव सूरी २४। तत्पट्टे देवानन्द सूरी २५। तत्पट्टे वीक्रमानन्द सूरी २६। तत्पट्टे नरसींह सुरी थी ६ नव गच्छ निकल्या, जमले गच्छ ३२ वत्रीस थया २७। तत्पट्टे सामंद्र सुरी २८। तत्पट्टे देवढगणी खीमांश्रावणी थी १४ पूर्व वीछेद गया। पुस्तक कागले लखाणां २६।

तत्पट्टे वीबुध सूरी ३०। तत्पट्टे जयनन्द सूरी थी १२ वर्षी दुकाल पडो जती सर्व पोशालधारी थया, पोसालियो गछ थयो। प्रतीमा पथरनी पुजी जमले गछ तेत्रीस थया, ३१। तत्पट्टे रवी प्रभ सूरी ३२। तत्पट्टे जसोदेव सूरी थी गछ १७ निकल्या जमले गछ ५० थया ३३। तत्पट्टे पद्योतन सूरी ३४। तत्पट्टे मानचन्द्र सूरी ३५। तत्पट्टे विमल-चन्द्र सूरी ३६। तत्पट्टे उद्योतन सूरी ३७। तत्पट्टे सर्वदेव सूरी थी गछ १६ निकल्या जमले गछ ७० थीया। कोथलामती जे कोथला नो मोटो बाधी शामायक कोथलामां करे, कोथलामती गछ ३८। तत्पट्टे देवचन्द्र सूरी ३६। तत्पट्टे मानविमल सूरी थी वीजा मती गछ निकल्यो। नवी पछेडीमां जुना लुगड़ा नु थीगडु दीए मोह उतारवाने जमले गछ ७१ थीया ४०। तत्पट्टे जसोभद्र सूरी ४१। तत्पट्टे मुनिचन्द्र सूरी ४२। तत्पट्टे अजीतदेव सूरी ४३। तत्पट्टे विजयसिंह सूरी ४४। तत्पट्टे सोमप्रभ सूरी थी गछ ७ नीकल्या जमले गछ ७८ थीया ४५। तत्पट्टे जगचन्द्र सूरी ४६। तत्पट्टे देवचन्द्र सूरी ४७। तत्पट्टे धर्म गोरव सूरी ४८। तत्पट्टे सोमप्रभ सूरी ४६। तत्पट्टे सोम-

तिलक सूरी ५० । तत्पट्टे देवसुन्दर सूरी थी अंचल गछ निकल्यो । १२ वर्ष दुकाल मां जती मुडेवाल वाणीया थया । दुर्भीक्षम जमले गछ ७९, ५१ । तत्पट्टे सोम सुन्दर सूरी ५२ । तत्पट्टे मुनि सुन्दर सूरी ५३ । तत्पट्टे सेख रत्न सूरी थी खडतर गछ निकल्यो सं० ११५५ मां गछ ८० थया ५४ ।

त० खीमा सागर सुरीथी ऽऽ मासनो पुन्यम करी, पुनोमीउ गछ निकल्यो, जमले गछ ८२ थीया ५५ । त० शुमत साध सुरी सं० १२२७, ५६ । त० हेमविमल सूरी ५७ । त० आण विमल सूरीथी कीया उधार कीधो । संघ १५२ (१५) सा माटा पाटण मां आव्या, वर्षारथे नील फुल उगी, संवत १४२८ मां पाटण मां देरा देव स्थान जोई रीह्या त ए दीवसनो गमे नहीं तराल कोल्यो सीधांत ३२ लखो वेची और पूर्णा करे छे, ते पासे १५२ संघवी जैने ३२ सूत्र सांभल्या तरे संघवी १५२ ने पुछ केहे लकालया भगवंत ने १ लाख ५९ हजार श्रावक थया, तेमा नोटा १२ वृतधारी १० ते एकावतारी, तेनु सूत्र रचु तेणे केणे, शंव न काढो । देव न कराव्यु । प्रतीमा न पूंजी । तेनो पाठ उपाशगदसांग मां केम नाव्यो । ते प्रतीमा तो जुठी माटे, अमारा पैसा संघ काढा ना खराब कर्या, गाडाना पैडा हेठे अनेक जीव मरा माटे, आजीवक मत हो धीगस्तु । संसारने, द्रव्य छया छोकरा.............. पडतां मुकीने १५२ साधु थया । पुस्तक लकालया कने थी नै नके दीक्षा लीधी । १५३ ठाणु वीहार करी वनमा जइ रीह्या । अने पनवणाए महापनवणा ऐ, माहापनवणा मां पाठमां कहूं छे जे भगवंतने इंद्रे वीनती कीधी । अंत शमेहे प्रभु भस्मग्रह वेशे छे, जो वेघडी आउखो वधारो तो तमारी द्रष्टी ने जोगे २ हजारनी २ घडी मां उत्री जासे, प्रभु के, ए मर्थ न समर्थ, तीर्थंकर बल न फोरवे । तरा प्रभु पाछो जीव दया मूल धर्म क्यारी दीपसे । तेरे प्रभुए कहु जे जीवा रुपाडो जीव मवीस्सई १ त्याथी जीव दया मूल धर्म दीपसे पछे लके ३ दिन अणसण करी चवा, मध्ये रात्रे देव आकाशे आवी १५२ साधु ने सूरी मंत्र दीधो ते साधुए सवारे कागले उतार्यो, कहूं जे हूं लको ऋषि देवलोके गयो छु, आलोको गच्छ सत्य छे ।

हवे त्याथी लोकागछनी पेढ़ी स० १४२८ थी लखाणी

१ – ऋ० लकाजी, पाटण ना रेवासी, जात वीसा उशवाल, गोत्रे

लकड, दीक्षा मास ३ नी, सर्व आयु वर्ष ५७। २–ऋ० भाणोजी, गाम अरहटवाडाना, वीसा उशवाल, गोत्रे लोढा, सं० १४३८ मां दीक्षा असदावाद मां। ३—ऋ० भीदाजी,[1] सिरोही ना रेवासी, वीसा उशवाल, सोधरीया गोत्री, जण ४५ साथे दीक्षा लीधी पाटणमां। ४–ऋ० नुनाजी, दीक्षा लीधी नरुलई ना रेवासी, जाते वीसा उशवाल, गोत्रे लोढा। ५—ऋ० भीमाजी, पालीना रेवासी, जाते वीशा उशवाल, गोत्रे उसभ, त्याथी तपोगच्छ निकल्यो। तेणे पन्नवणजीनी टीका मध्ये गाथा २ लखी छे ते के छे। गाथा[2]—पांणी २ सीधी ८ सुसी ५, तास्यु १ प्रमीती मत वछरे, वीदधे। क्रीयोद्धार प्रत्वातु ग्रहकार मी १ आनंद वीमलाकानां, सुरीय सुध भुरीय तपो भी दुस्तरं लभे तपेती वीरुचंदये २ ते संवत १५८२ मां आणंद वीमल सुरीए थी इडरीगढ मध्ये पीत्याई रावलनो वारे ४ मासखमण ईडरना डूंगरनी गुफामां कर्या, पारणे लोका श्रावकने घरे गया, लोट चोखानो धोणमां राख वोरावी, शसरे आवी धोण राख नखावी ने सहेश्र-घर तपगछ काढो। लोकाट त्थी तपा थोया। हजार घर ए गाथा पनवणानी टीका मांथी पादरा मध्ये संतिवीजेनी प्रत्यमाथी उतार्या छे। ६—ऋ० जगमालजी श्रीश्रीमाल, दलीना रेवासी।

७—ऋ० सरवाजी उत्राधरा रेवासी, भाभरीया गोत्रीया सं० १५४४ दीक्षा लीधी (१) तत्पटे श्री पूज्यपद धराव्यो श्री जीवरखजी,[3] जाति उशवाल, गोत्रे देशलहर, रिवासी सुरतना सं० १४७८ दीक्षा लीधी। संवत १५१३ ना जेठ वदि १३ संथारो दीन ३, दीक्ष्या वर्ष ३६ पाली, सर्वाउ वर्ष ६३ नो पालनपुरे (२) तत्पटे रूप ऋ० जी सुरी, जाते उशवाल, गोत्रे लोढा, रेवासी सीरोहिना सं० १५६१ नी दीक्षा (३) तत्पटे श्री पुज्य ऋ० श्री वडवर शंघजी, जाति उशवाल, गोत्रे नाहटा, पाटण ना रेवासी सं० १५८७ दीक्षा, सं० १६१२ वैशाख सुदि ६ गादीए बेठा, सं० १६४४ कार्तिक सुदि ३ अणशण कीधो दीन १५ नो वर्ष ६३ दीक्षा। सं० १६१७ ऋ० कुंवरजीए नानो पक्ष जुदा नीकल्या, नानो पक्ष अमदावाद

१—भीदाजी। २—गाथा का पाठ अशुद्ध है मूल रूप को वैसा ही रखा है। ३—अन्य पट्टावलियों में सरवाजी के बाद पट्टधर आचार्य के रूप में रूपाजी का तथा रूपाजी के बाद जीवाजी का नाम आया है।

मां ठाणा १८ थी, पण मोटी पक्षे शराप आपो (४) तत्पटे श्रीपूज्य जी ऋ० श्री ६ श्री लघुवर संघजी, शादड़ी नां रेवासी, जाते उशवाल, गोत्रे वोरा शाह्लिेचा, संवत १६०६ ढुंढोया निकल्या। लवजी ऋ० ढुढीयो ठाणा ६ थी जुदा क्रिया पाली (५) तत्पटे पूज्य श्री ६ श्री जसवंतजी सुरी, सोजितरा निवासी, उशवाल, गोत्रे लउकड, सं० १६४९ माहा सुदि ३ दीक्षा वैशाख सुदि ६ गादीए वेठा, १६८८ मार्गसीर सुद १५ संथारो दिन १७ नो, सर्व आयुष ५४ (६) तत्पटे श्री रूपसींघजी सुरी, वीकेवाडाना, उशवाल, गोत्रे वोरा सोहलेचा, सं० १६७५ गुरुए मार्गसीर सुद १३ दीक्षा, सं० १६८८ मगसर सुद ८ गादीए, सं० १६९७ अषाढ वद १० संथारो दिन ७ श्री कृष्णगढ़ मध्ये (७) तत्पटे श्री दामोधरजी, अजमेर ना वीसा उशवाल, गोत्र लोढा, सं० १६९२ दीक्षा, सं० १६९७ पदढवा, (८) तत्पटे श्री कर्मसीहजी सुरी, दामोदरजी ना नाना भाई, संवत् १६९८ मा सुदि ३ गादीए, १६९९ मा सुद १० संथारो दीन ७ नो।

(९) तत्पट्टे श्री केशवजी सुरी छपीयारा वासी; वीसा उशवाल, गोत्रे उशभ संवत् १६९९ दीक्षा, संवत् १६९९ मा० वद १३ गादीए। (१०) तत्पटे श्री तेजसिंघजी, चपेटीयाना वीसा उशवाल, गोत्रे उशभ, संवत् १७०६ दीक्षा, संवत् १७२१ गादीए, अषाढ वदि १३ संथारो दीन ९ पालीए (११) तत्पटे श्री कान्हजी, वीसा उसवाल, नरुलीना, संवत् १७४३ वै० सुद ३ गादीए सुरतमां, संवत १७७९ भादवा सुद ८ संथारा दी० ७ सुरतमां (१२) तत्पटे श्री तुलसीदासजी सुरी, संवत १७६८ फागण सुद ३ दीक्षा, सं० १७७९ भादवा सुद ८ गादीए, संवत १७८८ फा० सुद १२ संथारा दी० ९।

(१३) तत्पटे जगरुपजी सुरी, सं० १७८५ दीक्षा, सं० १७८८ फा० सुद ३ गादीए, संवत १७९८ संथारो दीन ११ श्री दीव मध्ये (१४) तत्पटे श्री जगजीवन जी, संवत १७८९ दीक्षा, संवत १७९९ गादीए, संवत १८१२ मा वद ऽऽ संथारो दिन ६ नो दीव मध्ये, (१५) तत्पटे श्री पूज्य श्री ६ श्री मेघराज जी, संवत् १७९९ दीक्षा, संवत १७९९ गादीए, संवत १८१२ मा वद ऽऽ संथारो दिन १३ नो (१६) तत्पटे श्री सोमचंद

जी, सं० १८३६ फागुण वद ६ गादीए, संवत १८५५ संथारो दिन ७ दीव मध्ये (१७) तत्पटे श्री हर्षचंद जी, संवत १८५५ फागुण सुद ६ गादीए, संवत १८६६ भाद्रवे संथारो दिन ३ वडोदरे (१८) तत्पटे श्री पूज्य जी ऋषि श्री ६ श्री जयचंदजी सुरी, पालीना रेवासी, वीसा उशवाल, गोत्र कर्नावट। संवत १८.... मा दीक्षा लीधी वरस ५५ सुरी पद पाली संवत १६२२ ना वैसाख सुद १४ संथारो कीधो पुनसे पोर १। दिन चढते देवांगत पाया श्री वडोदरे (१६) तत्पटे श्री पूज्य श्री ६ श्री कल्याणचंद्र जी सुरी, संवत १८६० ना चैत्र सुद १३ जन्म, संवत १६१० मां दीक्षा, संवत १६१८ मां गादीए सूरी पद, संवत १६५६ मां श्रावण वद १० देवगत पामा दीवस ३ नो संथारो कर्यो श्री उरण मा देवगत पाम्या सांजना ४ बजे। (२०) तत्पटे श्रीपुज्य ६ श्री खुबचंद जी सुरी, संवत १६२४ मां दीक्षा संवत १६४३ मां गादीए सुरीपद पाम्या, संवत १६८२ ना मगसर सुद ६ संथारो दीवस ३ नो मागसर सुद ६ भोमवारे चढते पोर ११॥ बजे वडोदरा मा देवगत पाम्यां ८२ वरसनी उमरे।

(१)

विनयचन्द्र जी कृत पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली स्थानकवासी परम्परा से सम्बन्धित है। इसके रचयिता श्रावक श्री विनयचंदजी उच्चकोटि के कवि थे। इसमें सुधर्मास्वामी से लेकर देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण तक २७ पाट का उल्लेख कर के आगम-लेखन के प्रसंग का वर्णन किया गया है। तदनन्तर विभिन्न गच्छ-भेद, लोंकागच्छ की उत्पत्ति, और लवजी, धर्मदासजी आदि के क्रियोद्धार का वृत्तान्त है। सर्व श्री धर्मदासजी, धन्नाजी, भूधरजी, कुशलाजी, गुमानचन्दजी, दुर्गादासजी और तत्कालीन आचार्य रतनचन्द-जी (संवत् १८८२ पदारोहण) तक के पट्ट-क्रम के संक्षिप्त परिचय के साथ इस पट्टावली का समापन हुआ है।]

द्रुत विलम्बित

समणनाथ महागुन सागरं । अमल ज्ञान अनुग्रह आगरं ॥
प्रबल तेज प्रताप पराक्रमं । निगुण रूप अनूप नमोनमं ॥१॥
नृप किरीटि सिद्धारथ नंदनं । नवल-जीरण-पाप निकंदनं ॥
अतुल तुम्य क्रतूतही उत्तमं । निगुन रूप अनूप नमोनमं ॥२॥

जग सिरोमणि वीर जिनेश्वरु । सकल सेवक तुम्य सुरेस्वरु ॥
सुखद्वानी प्रकाशि सुधासमं । निगुन रूप अनूप नमोनमं ॥३॥

अर्थ—प्रारम्भ में मंगलाचरण के रूप में कवि भूषण विनयचन्द्रजी भगवान महावीर की स्तुति करते हुए कहते हैं कि—हे भगवन् ! आप श्रमणों के नाथ और क्षमा-शान्ति आदि महान् गुणों के सागर एवं निर्मल ज्ञान तथा अनुग्रह–कृपा के आकर (खान) हैं। आपका तेज, प्रताप और पराक्रम प्रबल है। आपके उपमा रहित निर्गुण रूप को मेरा बारम्बार नमस्कार हो। आप राजाओं में मुकुट तुल्य महाराज सिद्धार्थ के पुत्र तथा नये पुराने पापों की जड़ को नष्ट करने वाले हैं। आपके कृत्य अतुलनीय, कीर्तिपूर्ण एवं उत्तम हैं। आपके उपमा रहित निर्गुण रूप को मेरा बारम्बार नमस्कार हो। आप संसार शिरोमणि वीर जिनेश्वर हैं। इन्द्र आदि सकल देव आपके सेवक हैं। आपने अमृत के समान सुख देने वाली वाणी का प्रकाश किया है। आपके उपमा रहित निर्गुण रूप को मेरा बारम्बार नमस्कार हो।

विशेष – रचना के प्रारम्भ में हमारे यहाँ विघ्न-निवारण के लिए मंगलाचरण करने की शास्त्रीय परिपाटी है। यह मंगलाचार तीन प्रकार का होता है—नमस्कारात्मक, आशीर्वादात्मक और वस्तु निर्देशात्मक। प्रस्तुत छंद नमस्कारात्मक मंगलाचरण का उदाहरण है।

दोहा

सासण पति असरण सरण, नमो वीर मुनिनाह ।
पढ़ूं प्रकट पाटावली, उर धर परम उछाह ॥ १ ॥

अर्थ—जो जिन शासन के स्वामी, असहायों के आश्रय-स्थल तथा मुनिजनों के नाथ हैं, ऐसे भगवान महावीर स्वामी को नमस्कार करके, एवं हृदय में परम उत्साह धारण कर मैं प्रकट रूप में पट्टावली को पढ़ता हूँ।

विशेष—यह छंद वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण का उदाहरण है।

छप्पय

चरप वहोतर वीर, प्रगट आयुर्बल पामी ।
व्रत बयालिस वर्प, सर्व पाल्यो जग-स्वामी ॥
साढ़ा द्वादस साल, पच्च एक अधिक प्रसिद्धं ।
मगन रहे छद्मस्थ, विपुल तप करि बहुविधं ॥
करुणा निधान तप कर कठिन, परमुज्जवल निज पद परस ।
तज कर्म चार पाये तुरत, दिव्य ज्ञान केवल दरस ॥१॥

अर्थ—भगवान महावीर ने बहत्तर वर्ष का आयुबल प्राप्त किया जिसमें बयालीस वर्ष तक उन्होंने संयम-जीवन की साधना-आराधना की। उसमें एक पक्ष अधिक साढ़े बाहर वर्षो तक छद्मस्थ अवस्था में अनेक प्रकार के तप किये। करुणा-निधान भगवान महावीर ने अत्यन्त उज्ज्वल आत्म-पद-निज रूप को स्पर्श करने के लिये कठोर तप से चार घाती कर्मों को क्षय कर, दिव्य ज्ञान—केवल ज्ञान-प्राप्त किया।

विशेष—मनुष्य जीवन का परम ध्येय मुक्ति प्राप्त करना है और वह कठिन तपस्या के द्वारा, ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय रूप चार घाती कर्मों को नष्ट कर, केवल ज्ञान की प्राप्ति कर लेने से ही प्राप्त होती है।

दोहा

प्रभु कीन पावा पुरी, चरमकाल चोमास ।
कार्तिक अमावस कर्यो, वर पंचमी गति वास ॥२॥
जनम रास जिनराज की, भस्म आगमन भाल ।
जैण दिवस कर जोरि के, पूछे सक्र सुरपाल ॥३॥
साल दोय सहसलू, कठन भस्म ग्रह काथ ।
उदै उदै मुनि आसता, नाहि हुसे जगनाथ ॥४॥

अर्थ—भगवान महावीर ने अन्तिम समय का चातुर्मास पावापुरी में किया जहाँ कार्तिक कृष्णा अमावस्या को उन्होंने पंचम गति अर्थात् मुक्ति

प्राप्त की। निर्वाण के पूर्व सुरपति इन्द्र ने जिनराज महावीर की जन्म-राशि पर भस्मक ग्रह का आगमन देखकर नम्र निवेदन किया कि प्रभो! इसका परिणाम दो हजार वर्ष तक शासन के लिये अशुभ है। अतः अपने आयु-काल को कुछ घटा या बढ़ा लीजिए ताकि यह योग टल जाय, क्योंकि—ग्रह के प्रभाव से २ हजार वर्ष तक मुनियों की उदय २ पूजा नहीं होगी।

विशेष :— महावीर का अन्तिम चातुर्मास पावापुरी के हस्तिपाल राजा की रज्जुशाला में था, जहाँ कार्तिक कृष्णा अमावस्या को उन्हें निर्वाण-पद की प्राप्ति हुई। उनकी जन्म-राशि पर भस्मक ग्रह का योग था, जिसका दुष्प्रभाव दो हजार वर्ष तक संघ पर पड़ता था-अतः इन्द्र ने निर्वाण की घड़ी को आगे या पीछे करने के लिये प्रभु से निवेदन किया। संसार का रागी जीव भविष्य की चिन्ता में छटपटाता और उसको जैसे-तैसे टालना चाहता है। उसे भान नहीं रहता कि कर्मफल तो अवश्य भोक्तव्य होता है।

छप्पय

टुक मुहूर्त इक टाल, काल धरमारथ कारण।
भाख्यो श्री भगवंत, तत्त अक्खर जगतारण॥
सगत छती मम सक्र, हेमगिरि पकर हलावन।
तदपि समो एक तनिक, बने नहीं आउ वधावन॥
हुई न ह्वै न हूसी न हिव, श्रीमुख कहै सुरेस सुनि।
स्थित वधारण सकै सकति, कल अनन्ते माहि कुनि॥२॥

अर्थ :— इन्द्र ने कहा भगवन्! धर्म-हित का कारण जान कर एक मुहूर्त भर का समय टाल दीजिए। यह सुन कर भगवान ने जगत् हित के लिए यह तात्त्विक उत्तर फरमाया कि-हे इन्द्र! कंचन गिरि-मेरु को पकड़ कर हिलाने की शक्ति मुझमें है किन्तु आयु का एक समय भी बढ़ाया नहीं जा सकता। निश्चित आय में एक समय की भी हानि एवं वृद्धि न तो कभी हुई, न होती और न कभी होगी। अनन्त काल में भी कोई स्थिति बढ़ाने वाला नहीं हुआ।

विशेष :— आयु की अवधि निश्चित होती है, उसको बढ़ाने वाला कोई नहीं है। मेरु को कँपाने वाले भी आयु बढ़ाने में अपने को असमर्थ पाते हैं। त्रिकाल अबाधित मृत्यु की मर्यादा का उल्लंघन करने वाला संसार में कोई भी पैदा नहीं हुआ और न कभी होगा।

छप्पय

सुर नर मुनि समझाय, साम अपवर्ग सिधाये।
गौतम केवल ज्ञान, परम दर्शन पुनि पाये॥
पाट विराजे प्रथम, समन श्री सुधर्म सामं।
चलत संघ विध चतुर, तासु आदेश तमामं॥
बानवे वर्ष आयुर्वला, इन्द्र भूत पामी इति।
वर ज्ञान दर्श द्वादस वर्ष, सर्व बयांलिस संयति॥३॥

अर्थ :— इस प्रकार देव, मनुष्य एवं मुनिजनों को समझा कर भगवान महावीर मोक्ष सिधार गए। उसी निर्वाण की रात्रि में गौतम स्वामी ने केवल ज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त किया। तत्पश्चात् भगवान् के प्रथम पट्ट पर श्रमण सुधर्मास्वामी विराजे। समस्त चतुर्विध संघ में सर्वत्र उनका आदेश चलता रहा। इन्द्रभूति गौतम स्वामी ने ९२ वर्ष की आयु भोग कर निर्वाण प्राप्त किया। ४२ वर्ष के सम्पूर्ण साधु-जीवन में वे ३० वर्ष तक छद्मस्थ रहे और १२ वर्ष तक केवली होकर विचरे, फिर मोक्ष पधारे।

विशेष :— भगवान के निर्वाण-काल में ही इन्द्रभूति गौतम स्वामी को (जो जाति के ब्राह्मण एवं याज्ञिक थे तथा सैंकड़ों विद्यार्थी जिनके पास वेदाध्ययन करते थे) केवल ज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त हुआ। केवली हो जाने से वे भगवान् के प्रथम पट्टाधिकारी होते हुए भी पट्टधर नहीं हुए। क्योंकि केवली पट्टधर नहीं होते, ऐसा नियम है। भगवान् की दूसरी देशना के समय वे ५०० छात्रों के साथ दीक्षित हुए तथा पचास वर्ष तक गृहवास में रह कर अध्ययन—अध्यापन कराते रहे।

छन्द हनूफाल

नित जपूं गौतम नाम, शुभ योग मुद्रा स्वाम ।
भवदुःख विनाशन मूर, साक्षात् गणधर शूर ॥१॥

अर्थ—योगमुद्रा के धारक गौतम स्वामी के शुभ नाम का मैं नित्य जप करता हूं। सकल सांसारिक दुःखों के नाश हेतु गणपति गौतम साक्षात् शूर-योद्धा थे ।

विशेष—भव-दुःख-विनाश में महापुरुषों का नाम-जप शुभ माना गया है। इससे आत्म-बल बढ़ता है ।

छन्द हनूफाल

थिर महा सुख शिवथान, पाये आनन्द प्रधान ।
पुन साम सुधरम पाट, कर कठिन तप अघकाट ॥२॥

अर्थ—गौतम स्वामी ने महासुख रूप अचल आनन्द-धाम शिव पद प्राप्त किया। फिर भगवान के पट्ट पर प्रतिष्ठित स्वामी सुधर्मा ने तप-संयम की साधना करते हुए शासन को दीप्तिमान किया ।

विशेष—गौतम स्वामी के निर्वाण के बाद सुधर्मा स्वामी ने भी कठोर साधना के द्वारा अपने अशुभ कर्मों का क्षय किया। क्योंकि पाप कर्मों का क्षय साधना से ही किया जा सकता है और वह भी अत्यन्त कठोर साधना से ।

छन्द हनूफाल

धरि परम उज्ज्वल ध्यान, गुन लयो केवल ज्ञान ।
गोजीत अति गम्भीर, शतवर्ष आयु शरीर ॥३॥

अर्थ—प्रथम पट्टधर श्री सुधर्मा स्वामी ने परम शुक्ल ध्यान की साधना से केवलज्ञान का गुण प्राप्त किया। वे इन्द्रियजीत एवं अत्यन्त गम्भीर स्वभाव के थे। उनका आयु-काल सौ वर्ष का था ।

विशेष—इन्द्रियजयी और गम्भीर स्वभावी व्यक्ति परम उज्ज्वल ध्यान से केवलज्ञान प्राप्त कर सकता है ।

दोहा

वर्ष आठ केवल विमल, पाल्यो व्रत पच्चास ।
शिव पहुँचा भव कर सफल, निश्चल सिद्ध निवास ॥५॥

अर्थ—अपने ५० वर्ष के संयम काल में वे आठ वर्ष तक विमल केवली पर्याय में रहे और अन्त में मनुष्य भव सफल कर उस अविचल सिद्ध पद को प्राप्त किया जो शाश्वत कल्याण रूप है ।

छन्द शंकर

शुभ पाट सुधरम स्वाम के, कुलवन्त जम्बु कुमार ।
तज आठ परणी नार तरुणी, विमल बुद्धि विचार ॥
वैराग सु जोवन वय में, भेष संयम धार ।
ले अराध्यो चौसठ वर्ष लग, तिरे बहु जन तार ॥१॥

अर्थ—सुधर्मा स्वामी के शुभ पट्ट पर कुलीन जम्बू कुमार, द्वितीय पट्टधर के रूप में प्रतिष्ठित हुए । अपनी विमल बुद्धि से अपनी आठ युवती नारियों को प्रतिबोध देकर वे भरी जवानी में विरागी बने—संयम ग्रहण किया और चौंसठ वर्ष तक संयम की आराधना करके अन्त में बहुत से लोगों को तार कर स्वयं भी तिर गये ।

विशेष—जम्बू स्वामी राजगृही नगरी के श्रीमंत सेठ ऋषभ दत्त के सुपुत्र थे । उनकी माता का नाम धारिणी था । एक वैभवशाली परिवार में जन्म लेकर भी उनका मन वैभव-विलास से प्रभावित नहीं हुआ । भरी जवानी में आठ-आठ विवाहित पत्नियों को त्याग कर उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि जगत को कंपित करने वाला कामिनी का आकर्षण सच्चे साधक को विचलित नहीं कर पाता ।

कवित्त छप्पय

पद केवल पर्याय, वर्ष चमालीस वरनी ।
असी वरस सब आयु, वर्ष धर नाहीं विसरनी ॥
आयु थकित कर अन्त, परम सिद्ध क्षेत्र पधारे ।

जा पीछे भव जीव, संघ चौविध सुरसारे ॥
दश बोल विरह समझत दुखित, सोच करन लागा सही ।
चित्त व्याकुलता पाम्या चतुर, कोविद कौन सके कही ॥४॥

अर्थ—जम्बू स्वामी चंवालीस वर्ष तक केवली पर्याय में रहे और बीस वर्ष छद्मस्थ। उनकी कुल आयु अस्सी वर्ष की थी, जिसे नहीं भूलना चाहिये। अन्त में आयु के समाप्त होने पर वे परम सिद्ध-क्षेत्र पधारे। उनके निर्वाण के बाद संसार के भव्य जीव, चतुर्विध संघ और सभी देवता दस बोल के विच्छेद होने से दुखानुभव करने लगे। उस समय के उनके चित्त की व्याकुलता का वर्णन कौन विद्वान् कर सकता है ?

विशेष—जम्बू स्वामी के निर्वाण से दस बोल का अभाव हो गया जिससे समस्त जीव, मनुष्य और देवगण भी दुःखी हो गए। उस समय के उनके दुःख का वर्णन करना विद्वानों से भी असंभव है, फिर साधारण जनों की तो बात ही क्या ? वस्तुतः सत्पुरुषों का निधन असीम दुखदायी होता है। दशबोल का विच्छेद हुआ, यह आगे बतायेंगे।

दोहा

वीर जम्बु निर्वाण विच, केवलि अन्तर नांह ।
भयो धर्म उद्योत बहु, श्री जिन शासन मांह ॥६॥

अर्थ—भगवान महावीर और जम्बूस्वामी के निर्वाण काल के बीच में केवली का विरह नहीं रहा। अर्थात् वीर प्रभु से लेकर जम्बू स्वामी तक केवलज्ञानी अविच्छिन्न बने रहे और धर्म शासन का बड़ा उद्योत हुआ।

विशेष—वीर प्रभु से लेकर जम्बूस्वामी तक का शासनकाल जैन-शासन के लिये उत्कर्ष का काल कहा जा सकता है क्योंकि इस बीच कभी केवली का अभाव नहीं रहा और धर्म की ज्योति जगमगाती रही।

सवैया इकत्तीसा

चौसठ वर्ष पाछे वीर, निर्वाण हूसे,
जम्बू शिव लहि, दस बोल, विरहो जानिये ।

केवल–अवधि–मन, परजाय त्रिज्ञान येह,
आहरक, पुलाक लब्धि, द्वय मानिये ॥
परिहार विशुद्ध सूक्ष्म–सम्पराय यथा ख्यात हू,
चारित्र तीन नीका ए वखानिये ।
मुनि जिन–कलपी, क्षपक सैण दशमो जू,
याहि दश बोल को विच्छेद पहिचानिये ॥

अर्थ—भगवान् महावीर के निर्वाण से चौंसठ वर्ष बाद जम्बू स्वामी का निर्वाण हुआ, तब से दस बोल का विच्छेद हो गया। उनके नाम इस प्रकार हैं— (१) केवल ज्ञान, (२) मनः पर्यवज्ञान, (३) परमावधि ज्ञान, (४) आहारक लब्धि, (५) पुलाक लब्धि, (६) परिहार विशुद्ध चारित्र, (७) सूक्ष्म सम्पराय चारित्र, (८) यथाख्यात चारित्र, (९) जिनकल्प और (१०) श्रेणी द्वय–उपसम श्रेणी एवं क्षपक श्रेणी। जम्बू स्वामी के पश्चात् साधक को इन दश बोलों का लाभ नहीं रहा ॥

विशेष—इन दस बोलों में—३ बोल ज्ञान से, २ बोल लब्धियों से ५ बोल चारित्र, कल्प व श्रेणी से सम्बन्धित हैं।

दोहा

श्री सुधर्म मुनि आदि ले, पाट सत्ताईस शुद्ध ।
नाम कहूँ जाके प्रकट, सुनियो सकल प्रबुद्ध ॥

अर्थ—श्री सुधर्मा स्वामी से लेकर सत्ताईस पट्ट तक शुद्ध—आचार–परम्परा चलती रही। उनके नाम प्रगट रूप से कहता हूं जिसे सभी विज्ञजन श्रवण करें।

दोहा

सुधर्म[१] जम्बु,[२] प्रभव मुनि,[३] सिज्जंभव[४] जसोभद्र[५] ।
संभूत विजय,[६] भद्रबाहु[७] पुनि, थूल भद्र,[८] शील समुद्र ॥

सवैया इकतीसा

महागिरि[९] सुहस्त[१०], सुपरिवुध[११], इन्द्रदिन[१२],
आरजदिन[१३] वेरसामी[१४], वज्रसेन[१५] नाम है।
आरजरोह[१६] पूषगिरि[१७] फग्गुमित्र[१८] धणगिरि[१९],
शिवभूत[२०] आर्यभद्र[२१] महागुण धाम है ॥१॥
आरजनक्षत्र[२२] आर्यरक्षित[२३] जू नागस्वामी[२४],
जसुभूत[२५] सिढ़ल[२६], मुनीन्द्र अभिराम है।
देवड्ढि[२७] खमासमण, ये सत्ताईस पाट शुद्ध,
आत्म उजाल अरु, सारे निज काम है ॥२॥

अर्थ—१—श्री सुधर्मा स्वामी २—श्री जम्बू स्वामी ३—श्री प्रभव स्वामी ४—श्री शय्यंभव स्वामी ५—श्री यशोभद्र स्वामी ६—श्री संभूति विजय स्वामी ७—श्री भद्रबाहु स्वामी ८—श्री स्थूलिभद्र स्वामी ९—श्री महागिरी स्वामी १०—श्री सुहस्ति स्वामी ११—श्री सुपरिवुध स्वामी १२—श्री इन्द्रदिन्न स्वामी १३—श्री आर्यदिन्न स्वामी १४—श्री वज्र स्वामी १५-श्री वज्रसेन स्वामी १६-श्री आर्यरोह स्वामी १७ श्री पूषगिरि स्वामी १८—श्री फग्गूमित्र स्वामी १९—श्री धनगिरि स्वामी २०—श्री शिवभूति स्वामी २१—श्री आर्यभद्र स्वामी २२—श्री आर्य नक्षत्र स्वामी २३—श्री आर्य रक्षित स्वामी २४—श्री आर्यनाग स्वामी २५—श्री जसोभूति स्वामी २६—श्री आर्य सिढ़ल और २७—श्री देवर्द्धि गणि क्षमाश्रमण ये सत्ताइस पाट शुद्ध आचारी हैं। इन पट्टधरों ने आत्मा को उज्ज्वल किया और अपना कार्य सिद्ध किया।

विशेष—सुधर्मा एवं जम्बू स्वामी का परिचय पहले दिया जा चुका है। शेष आचार्यो का जीवन वृत्त संक्षेप में इस प्रकार है :—

प्रभव स्वामी:—जम्बू स्वामीसे उद्‌बोधन पाकर ये पांच सौ व्यक्तियों के साथ दीक्षित हुए और अपनी अनुपम प्रतिभा एवं ज्ञान के द्वारा आचार्य के तीसरे पट्ट को सुशोभित किया। ३० वर्ष तक संसार में रहे, ५५ वर्ष तक संयम-पालन किया। जिसमें १० वर्ष तक आचार्य पद पर रहे। इनकी

कुल आयु ८५ वर्षों की थी। ये भगवान् महावीर-निर्वाण के ७५ वर्ष बाद स्वर्गवासी हुए।

शय्यंभव स्वामी :—ये याज्ञिक ब्राह्मण थे। एक बार इनके यहाँ यज्ञ हो रहा था, जिसमें प्रभव स्वामी ने अपने शिष्यों को भेजा और कहलाया कि "अहो कष्ट महो कष्टं तत्वं न ज्ञायते" यह सुनकर शय्यंभव सोच में पड़ गए। उन्होंने गुरु से पूछा—'सत्य कहो, तत्त्व क्या है?' गुरु ने कहा—'आर्य प्रभव के पास जाओ वे तुम्हें इसका मर्म समझायेंगे।' शय्यंभव गुरु की आज्ञा पाकर प्रभवाचार्य की सेवा में आये। उनके उपदेश का इन पर इतना प्रभाव पड़ा कि ये यज्ञ को ही नहीं अपनी गर्भवती स्त्री तक को भी छोड़कर दीक्षित हो गए और अपनी योग्यता से प्रभव स्वामी के बाद २३ वर्ष तक आचार्य पद पर रहे। २८ वर्ष तक गृहस्थ जीवन में रहकर ३४ वर्ष तक इन्होंने संयम पालन किया। इस तरह इनकी कुल आयु ६२ वर्ष की थी। भगवान् महावीर के निर्वाण के ९८ वर्ष बाद ये स्वर्गवासी हुए। दशवैकालिक सूत्र की रचना इन्होंने ही अपने दीक्षित पुत्र मनक के लिये की थी।

यशोभद्र स्वामी :—ये तुंगियायन गोत्री थे। २२ वर्ष तक गृहस्थाश्रम में रहकर इन्होंने दीक्षा अंगीकृत की और चौंसठ वर्ष तक संयम पाला, जिसमें ५० वर्ष तक आचार्य पद पर रहे। इस तरह इनकी कुल आयु ८६ वर्ष की थी। भगवान् महावीर के निर्वाण के १४८ वर्ष बाद ये स्वर्गवासी हुए।

संभूति विजय :—ये यशोभद्र के शिष्य थे। इनका गोत्र माठर था। इन्होंने ४२ वर्षों तक गृहस्थाश्रम में रहकर पीछे संयम ग्रहण किया और ४८ वर्ष तक उसका पालन किया, जिसमें ८ वर्ष आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु ९० वर्ष की थी। भगवान् महावीर निर्वाण के ५६ वर्ष बाद ये स्वर्गवासी हुए।

भद्रबाहु स्वामी :—ये संभूति विजय के शिष्य थे तथा चतुर्दश पूर्व के ज्ञाता थे। ४५ वर्ष गृहवास में रहकर संभूति विजय के पास दीक्षित हुए। १७ वर्ष सामान्य मुनि और १४ वर्ष युग प्रधान रूप से कुल ७६ वर्ष की आयु भोगकर वीर संवत् १७० में स्वर्गवासी हुए।

स्थूलि भद्र :—ये आचार्य संभूति विजय के दूसरे शिष्य थे। आचार्य भद्रबाहु के पश्चात् ये युग प्रधान हुए। पाटलिपुत्र के महामात्य शकडाल

के ये पुत्र थे। ३० वर्ष की वय में आचार्य संभूति विजय के पास वैराग्य पूर्वक दीक्षित हुए। ये दशपूर्व के ज्ञाता थे। २४ वर्ष सामान्य मुनिता का पालन कर वीर संवत् १७० में युगप्रधान बने। ४५ वर्ष के बाद वीर सं० २१५ में स्वर्ग सिधारे।

महागिरि स्वामी :—ये स्थूलि भद्र के शिष्य थे। ३० वर्ष गृह-अवस्था में रहकर वीर सं० १७५ में दीक्षित हुए। ७० वर्ष तक शुद्ध संयम का पालन किया जिसमें ३० वर्ष आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु १०० वर्ष की थी। वीर निर्वाण के २४५ वर्ष बाद ये स्वर्गवासी हुए।

सुहस्ति स्वामी :— ये आ० स्थूलिभद्र स्वामी के दूसरे शिष्य थे। ३० वर्ष तक गृह-अवस्था में रहकर दीक्षित हुए। इन्होंने ७० वर्ष तक संयम का पालन किया जिसमें ४६ वर्ष आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु १०० वर्ष की थी। वीर निर्वाण के २९१ वर्ष बाद स्वर्गवासी हुए।

सुपरिबुध स्वामी :—ये आर्य सुहस्ति के पट्टधर शिष्य थे। २८ वर्ष तक गृहस्थाश्रम में रहकर दीक्षित हुए। इन्होंने ६८ वर्ष तक संयम का पालन किया—जिसमें ४८ वर्ष तक आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु ९६ वर्ष की थी। वीर निर्वाण के ३३९ वर्ष बाद इनका स्वर्गवास हुआ।

इन्द्रदिन्न स्वामी :—ये सुपरिबुध स्वामी के शिष्य थे। इनकी दीक्षा छोटी उम्र में ही हुई। ये ८२ वर्ष तक आचार्य पद पर रहे और वीर निर्वाण के ४२१ वर्ष बाद स्वर्गवासी हुए।

आर्यदिन्न स्वामी :—ये इन्द्रदिन्न स्वामी के शिष्य थे। ३० वर्ष गृहवास में रहे। ८५ वर्षों के संयम काल में ५५ वर्ष ये आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु ११५ वर्ष की थी। वीर निर्वाण के ४७६ वर्ष बाद ये स्वर्गवासी हुए।

वज्र स्वामी :— ये आठ वर्ष तक गृह अवस्था में रहकर लघुवय में ही दीक्षित हो गये। इन्होंने ८० वर्ष तक शुद्ध संयम की आराधना की जिसमें ३६ वर्ष तक आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु ८८ वर्ष की थी। वीर निर्वाण के ५८४ वर्ष बाद ये स्वर्गवासी हुए। इनके बाद दस पूर्व का ज्ञान एवं चतुर्थ संहनन और चतुर्थ संस्थान का विच्छेद हो गया।

वज्रसेन स्वामी :—ये कौशिक गोत्र के थे। ६ वर्ष गृहावस्था में रहने के बाद लघुवय में ही इन्होंने दीक्षा ग्रहण करली और ११६ वर्ष तक संयम का पालन किया। ये मात्र तीन वर्ष आचार्य पद पर रहे। इनकी कुल आयु १२८ वर्ष की थी। वीर निर्वाण के ६२० वर्ष के बाद ये स्वर्गवासी हुए।[1]

कुण्डलिया

विवाहपन्नती अंग में, सतक वीस में सार ।
कीन उद्देसे आठ में, प्रश्न प्रथम गण धार ॥
प्रश्न प्रथम गणधार, जोर कर श्री जिन आगे ।
रहसी पूरब ज्ञान कठा—जग कहो अनुरागे ॥
साल एक सहस्र कह्यो जिनराज निग्रन्थी ।
सतक वीस में सार अंग श्री विवाहपन्नती ॥१॥

अर्थ— भगवती सूत्र के बीसवें शतक के आठवें उद्देशक में प्रथम गणधर गौतम स्वामी ने हाथ जोड़ कर भगवान् महावीर से प्रश्न किया कि भगवान्! पूर्वश्रुत का ज्ञान कहां तक रहेगा? भगवान् ने उत्तर देते हुए कहा-एक हजार वर्ष तक पूर्वों का ज्ञान रहेगा, बाद में उसका विच्छेद हो जायगा। यही विवाह प्रज्ञप्ति के बीसवें शतक का सार है।

विशेष— भगवती सूत्र का ही दूसरा नाम विवाह प्रज्ञप्ति है।

चन्द्रायण छन्द

श्री जिन दिन निर्वाण, पछे वरसां असी।
तप कर गया सुरलोक, प्रभव काया कसी ॥
सित्तर ने सत एक, वर्ष जातां हुआ,
भद्रबाहु मुनिराज, जगत दुःखसुं जुआ ॥१॥
चौदेने सत दोय, वरस जातां खरो,
अव्यक्तवादी नाम, निन्हव हुओ तीसरो ।

१—श्री वज्रस्वामी और वज्रसेन के बीच आर्य रक्षित और दुर्बलिका पुष्पमित्र दो आचार्य हुए।

पनरेने सत दोय, वरस बीतां पछे,
थूलभद्र दृढ़ सील, मुनि हुआ अछे ॥२॥

अर्थ— वीर—निर्वाण के अस्सी वर्ष बाद कठोर तप की साधना से अपनी आत्मा को निखार प्रभव स्वामी स्वर्ग लोक गए। वि० सं० १७० वर्ष बाद मुनि भद्रबाहु स्वामी जागतिक दुखों से मुक्त हुए। भगवान् महावीर के निर्वाण से दो सौ चौदह वर्ष बाद अव्यक्तवादी नाम के तीसरे निह्नव हुए। वीर निर्वाण के २१५ वर्ष बाद आचार्य स्थूलि भद्र स्वामी दिवंगत हुए। वे सुमेरु के समान दृढ़ शील व्रती संत थे।

विशेष—१ अव्यक्तवादी निह्नव—आषाढ़ाचार्य के शिष्य थे। आषाढ़ाचार्य एक दिन अपने शिष्यों को शास्त्र की वाचना दे रहे थे कि रात्रि में शूलवेदना से अकस्मात् उनका स्वर्गवास हो गया। वे मर कर देव बने। देव बनने के बाद शिष्यों पर उन्हें अनुराग से विचार आया कि शिष्यों की वाचना अपूर्ण रह गई है, अतः अच्छा है कि मैं पुनः जाकर उसे पूर्ण कर दूं। इस प्रकार विचार कर वे अपने मृत शरीर में पुनः आकर प्रविष्ट हो गए और शिष्यों की वाचना पूरी कराके क्षमा याचना सहित अपना परिचय देकर चले गए। जब शिष्यों ने यह जाना कि हम आज तक जिनको गुरु समझ कर वन्दन—नमन आदि करते रहे वह तो असंयमी देव था। तब वे शंकाशील होकर सोचने लगे कि न मालूम इन साधुओं में कौन खरा साधु है और कौन देव? ऐसा सोचकर उन्होंने पारस्परिक वन्दन—व्यवहार बन्द कर दिया।

२—संयम ग्रहण करने के पश्चात् स्थूलिभद्र स्वामी गुरुदेव की आज्ञा से पाटलीपुत्र की कोशया वेश्या के घर पर चातुर्मास करने पहुंचे। वे संयम ग्रहण के पूर्व भी कोशया के यहां १२ वर्ष तक भोग भाव से रह चुके थे। कोशया ने अपने पूर्व प्रेमी को संयम से डिगाने के लिये पूर्ण प्रयत्न किए किन्तु परम योगी स्थूलिभद्र सुमेरू के समान शील में दृढ़ रहे, अन्ततः वैश्या का भी—उसे सुश्राविका बना कर—उद्धार कर दिया।

सवैया इकत्तीसा

दोय से अरु बीस साल, जात सून्य खिन्नवादी,
भये तिण खिण खिण, नवो जीव मानियो।

दोयसो अधिक अठा, वीस साल जात भयो,
पांचवो निन्हव क्रिया, वादी हू अज्ञानियो ।।
मानी तिन एक समय, उभय क्रिया मिथ्यात,
मूढता पकर विपरीत, मत ठानियो ।
तीन सौ पैंतीस साल, जात भयो प्रथम ही,
कालकाचारज नाम संजती वखानियो ।।३।।

अर्थ—वीर निर्वाण के २२० वष बाद शून्यवादी नाम का चतुर्थ निह्नव हुआ जो क्षण-क्षण में नया जीव उत्पन्न होना मानता था। वीर निर्वाण के २२८ वें वर्ष में एक समय में दो क्रिया को मानने वाला पंचम निह्नव हुआ। मूढ़तावश यह विपरीत मत और मिथ्यात्व का संस्थापक था। वीर निर्वाण के ३३५ वर्ष बाद प्रथम कालकाचार्य हुए जो प्रसिद्ध संयती थे। वे श्यामाचार्य के नाम से भी प्रख्यात हैं।

गीतिका छन्द

सतच्यार बावन वर्ष, दूजो कालचारज भयो।
निज भगिनी सरस्वती वाली, गंधर्वसैन संगे जुध ठयो ।।
चारसे ऊपर वर्ष सित्तर, जात नृप विक्रम थयो।
जिन करी वरणा-चरणी जग में, मेट पर दुःख जस लियो ।।१।।

अर्थ—वीर निर्वाण के ४५२ वें वर्ष में दूसरे कालकाचार्य हुए। उन्होंने अपनी बहिन सरस्वती के लिए गंधर्वसेन से युद्ध किया। फिर वीर निर्वाण के ४७० वर्ष बाद विक्रमादित्य राजा हुए उन्होंने वर्ण-व्यवस्था कायम की। प्रजा जनों का दुख मिटा कर, वे जग में यश के भागी बने।

विशेष :—कालकाचार्य द्वितीय बड़े विद्वान् और साहसी आचार्य थे। उनकी बहिन सरस्वती ने भी दीक्षा ली थी। वह गुलाब के फूल के समान सुन्दर तथा गुण गरिमा से युक्त थी। बाल ब्रह्मचारिणी होने से उसकी तेजस्विता बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। उसकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर राजा गंधर्वसेन ने अपने सुभटों के द्वारा उसका हरण कर, उसे अपने

महल में मंगवा लिया। इस समाचार से कालकाचार्य बड़े दुखी हुए। उन्होंने अपने बुद्धि बल से एक सेना तैयार की और गन्धर्व सेन पर चढ़ाई करवाई। शकों का सहयोग और विद्या बल से गंधर्व सेन को पराजित कर सरस्वती को वहाँ से निकाल लाए।

वीर निर्वाण के ४७० वर्ष बाद उज्जैन में विक्रमादित्य नाम का एक नीति-निपुण-न्यायी राजा हुआ। वह प्रजा-जनों के दुख को अपना दुख मान कर उसे मिटाने का प्रयत्न करता था। उसने वर्ण-व्यवस्था कायम की और वर्णान्तर के सम्बन्ध का निवारण किया।

गीतिका छन्द

पांच से चमालीस वरसे, निन्हव छट्ठो जानिये,
निरजीव थापक जे हुवो, जिन वचन विमुख वखानिये।
चतुरासी पण सत वर्षे हुआ, वैर स्वामी मुनिसरू
सातवों निन्हव गोष्ठमाली हुवो, तिणही छमछरू ॥२॥

अर्थ—वीर निर्वाण के बाद ५४४ वें वर्ष में रोहगुप्त नाम का छट्ठा निह्नव हुआ जो जिन वचन के विरुद्ध निर्जीव राशि का संस्थापक था। वीर निर्वाण के बाद ५८४ वें वर्ष में वैर (वज्र) स्वामी मुनीश्वर हुए। इसी वर्ष में सातवां निह्नव गोष्टा माहिल हुआ।

विशेष :—जैन सिद्धान्त के अनुसार जीव और अजीव ये दो ही मल तत्त्व माने गये हैं। किन्तु इस छट्ठे निह्नव ने इनके अतिरिक्त एक तीसरे मिश्र तत्त्व का भी प्रतिपादन किया, जो जिन वचन के बिल्कुल विपरीत होने से यह त्रैराशिक निह्नव कहलाया।

वज्र स्वामी दस पूर्वो के ज्ञाता थे। उनके समय से ही चतुर्थ संहनन और चतुर्थ संस्थान का विच्छेद माना जाता है। उनके समय में ही सातवां निह्नव गोष्ठामाहिल हुआ। उसकी मान्यता थी कि आत्मा और कर्म का सम्बन्ध सर्प के शरीर से जुड़ी हुई केंचुली के समान है, जबकि प्रभु महावीर की मान्यता के अनुसार आत्मा और कर्म का सम्बन्ध दूध और पानी के है।

गीतिका छन्द

कर्म बंध जिम छै तिम न मान्यो, सात ही निह्नव सही।
बीजें तृ चौथे पंच में, मिच्छामि दुक्कड़ं मुख कही ॥
धुर सप्तमे षष्ठमे मिच्छामि दुक्कड़ं नहीं दाखियो।
इधकार निह्नव सातको, पाटावली में भाखियो ॥३॥

अर्थ--इस प्रकार सातों निह्नवों ने भगवान् महावीर के सिद्धान्त के विपरीत कर्म बंधाने वाली विपरीत प्ररुपणा करके नया मत स्थिर किया। इनमें से दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें निह्नव ने अपनी भूल समझ में आ जाने से 'मिथ्या दुष्कृत' देकर अपनी शुद्धि करली किन्तु पहले, छट्ठे और सांतवें ने शुद्धिकरण नहीं किया। इस प्रकार सात निह्नवों का संक्षिप्त वर्णन पट्टावली में किया गया है।

विशेष--इसके अतिरिक्त दो निह्नव जो भगवान् महावीर के समय हुए उनका वर्णन इस प्रकार है--

भगवान् महावीर के केवल ज्ञान प्राप्त होने के १४ वर्ष बाद श्रावस्ती नगरी में जमाली नाम का निह्नव हुआ। वह संसार पक्ष में भगवान् महावीर का जामाता था। वह पांच सौ राजकुमारों के साथ महावीर के पास दीक्षित हुआ। महावीर की मान्यता थी कि 'कडे माणे कडे' अर्थात् क्रियमाण को किया कहना, मगर जमाली की मान्यता से 'कडे माणे अकडे" विपरीत अर्थ होता था। इसी विपरीत मान्यता के कारण वह महावीर के संघ से अलग होकर विचरने लगा और लोगों के बहुत समझाने पर भी वापिस महावीर के पास नहीं आया।

भगवान् महावीर को केवल ज्ञान प्राप्त होने के १६ वर्ष बाद ऋषभपुर नगर में चतुर्दश पूर्वधर वसु नाम के आचार्य का शिष्य तिष्यगुप्त, जीव के अंतिम प्रदेश में जीवत्व मानने की एकान्त विचारणा से दूसरा निह्नव हुआ।

दोहा

पट सत नव वरसां पछे, भयो साहमल जैण।
अपनी मत सुं थापियो, पंथ दिगम्बर तैण ॥६॥

अर्थ—वीर निर्वाण के बाद ६०९ वें वर्ष में साहमल (सहसमल) नाम का एक जैन साधु हुआ, जिसने अपने मत से दिगम्बर पंथ की स्थापना की।

विशेष—कृष्णाचार्य के शिष्य सहसमल जिसको शिवभूति भी कहा जाता है, गुरु के समझाने पर भी तैयार नहीं हुआ और अपनी मति के अनुसार दिगम्बर पंथ को स्थापित किया। रथवीरपुर से यह दृष्टि चालू हुई।

छन्द मोती दाम

षट सत वीस बरस वतीत, भई चऊ साख सुनो धर प्रीत।
समे तिन द्वादस साल कराल, पर्यो दुखदायक उग्र दुकाल ॥१॥

अर्थ—वीर निर्वाण के छः सौ बीस वर्ष बाद संघ में चार शाखाएँ हो गयीं। उस समय बारह वर्ष का भयंकर दुःखदायी उग्र अकाल पड़ गया था।

छन्द मोतीदाम

हुतें मुनि शुद्ध कियो संथार, थये अति कायर भ्रष्ट तिवार।
केई मुनि उत्तम जाय प्रदेश, महाव्रत कायम राख असेस ॥२॥

अर्थ—उस समय प्रासुक व एषणिक आहार पानी नहीं मिलने से कितने ही संतों ने संथारा ग्रहण करके जीवन को सफल बनाया और जो कायर थे वे आहार-पानी के अभाव में साधु-जीवन यानी संयम मार्ग से गिर गए। कुछ संतों ने अन्य अच्छे देशों में जाकर जहाँ आहार-पानी की सुलभता थी, संयमपूर्ण जीवन व्यतीत किया।

छन्द मोतीदाम

तज्यो नहीं देस तिके व्रतधारी, मिल्यो न आहार भया कु आचारी।
धरे उर जोतस वैदग-जाल, करै बहु औषध मन्त्र कुचाल ॥

अर्थ—जिन संतों ने देश नहीं छोड़ा वे आहार नहीं मिलने से शिथिलाचारी बन गए और ज्योतिष, वैद्यक, तंत्र-मंत्र एवं औषध करने की कुचाल को धारण कर आजीविका चलाने लगे।

छन्द मोतीदाम

आज्ञा जिनराज तणी जेही मेट, असुध आहार भरे निज पेट ।
सदोषन थानक वस्त्र पात्र, गहै अकल्प समारत गात्र ॥४॥

अर्थ—अकालग्रस्त क्षेत्र में रहे हुए संत, जिनराज की आज्ञा के विरुद्ध अशुद्ध आहार से अपना पेट भरने लगे । वे सदोष स्थानक, अकल्पनीय वस्त्र-पात्र ग्रहण करते एवं अपना शरीर साफ सुथरा रखते ।

विशेष – अकाल के कारण साधु, साधु-मर्यादा को भूलकर शिथिलाचारी और प्रमादी बन गये और शरीर की शोभा-विभूषा करने लगे ।

छन्द मोतीदाम

समे तिन एक महाजन तेह, बडो लिछमीधर दीपत जेह ।
घना भ्रात स्वजन था जसु गेह, संतोषत साध हिये धर नेह ॥५॥

अर्थ—उस समय एक बड़ा महाजन लक्ष्मीधर सेठ था जो नगरी में दीप्तिमान था । उनके घर में बहुत से भाई और बंधु थे तथा जो मन में प्रेम धर कर साधुओं को प्रतिलाभ दिया करता था ।

विशेष—तपागच्छ पट्टावलि के अनुसार इस सेठ का नाम जिनदत्त था जो सोपारक नगर का निवासी था । उसकी स्त्री का नाम ईश्वरी था ।

छन्द मोतीदाम

रह्यो गृह रंचक नाज तिवार, निभ्यो अन सेठ प्रते कही नार ।
हुवे जवलु पुन काम चलाय, मिले न द्रव सटे न उपाय ॥६॥

अर्थ—उस समय उनके घर में रंच मात्र भी अनाज नहीं था । यह जानकर उनकी स्त्री ने अनाज की व्यवस्था के लिये उनसे कहा, तो वे बोले—'द्रव्य से भी अनाज नहीं मिलता हैं, कोई उपाय काम नहीं करता अतः जब तक अनाज मिले तब तक किसी तरह काम चलाओ ।'

छन्द मोतीदाम

सुनि इम सेठ वचन सुबाम, कहे अनथोर चले नहीं काम ।
वदे दिल अन्तर सेठ विचार, करो तुम राब पियां विष डार ॥७॥

अर्थ—सेठ की ऐसी बात सुनकर सेठानी बोली—'अन्न बहुत कम है जिससे काम नहीं चल सकता।' इस पर मन से विचार कर सेठ ने कहा कि—'तुम राब बनाओ, उसमें विष डालकर सब पी लेंगे।'

दोहा

सरम रहे जैसो अवर, देख्यो नहीं उपाय ।
करी तियारी रावरी, बांटे जेहर मंगाय ॥१०॥

अर्थ—लाज बचने का कोई दूसरा उपाय नहीं देख कर उसने राब तैयार कराई और जहर मंगाकर पीसने लगी।

दोहा

तिण अवसर एक भेखधर, आयो लेन आहार ।
सेठ कहे कछु राब लै, दो इनको धर प्यार ॥११॥

अर्थ—उस समय एक भेषधारी साधु आहार लेने को वहाँ आए—इस पर सेठ ने सेठानी से कहा कि 'थोड़ी सी राब लेकर इनको प्रेम पूर्वक दे दो।'

दोहा

स्यूं बांटो पूछे भिखु, सेठ कही समझाय ।
भिखु भाखे सुसता रहो, गुरु समीप हम जाय ॥१२॥

अर्थ—भिक्षु ने सेठ से पूछा कि—'तुम क्या पीसते हो?' इस पर सेठ ने सब कुछ समझा कर कह दिया कि 'अन्न के अभाव में परिवार का जीवन चलना असंभव जानकर, हम राबड़ी बना कर उसमें जहर डाल कर पीकर मैं सपरिवार मरना चाहते हैं।' इस पर साधु बोले कि—'कुछ देर रुको! जब तक गुरु के पास जाकर आता हूं।

चन्द्रायण

सकल हकीकत जाय, कही गुरु कूँ जबै ।
गुरु सुन सेठ समीप, आय बोल्या तबै ॥

जो तुम जीवो सरच, कहा मुझ दीजियें ।
सेठ कहे तुम चाह, हुवे सो लीजिये ॥३॥

अर्थ—जब उस साधु ने गुरु महाराज की सेवा में जाकर सेठ से सम्बन्धित सारा वृत्तान्त सुनाया तो तत्काल गुरुजी सेठ के समीप आए और बोले कि—'अगर तुम सब जी सको तो मुझे क्या दोगे ?' इस पर सेठ ने कहा कि—'तुम जो चाहो सो हम से ले सकते हो ।'

चौपाई

जो तुम श्रावक जीवन चाहो, तो मम आज्ञा एह आराहो ।
तुम सुत बहुत च्यार मोय दीज्यो, सेठ कहे निश्चय तुम लीज्यो ॥१॥

अर्थ—गुरु ने कहा कि 'हे श्रावक ! यदि तुम जीना चाहते हो तो मेरी इस आज्ञा का आराधन करो । तुम्हारे बहुत से लड़के हैं, उनमें से चार मुझे दे दो ।' इस पर सेठ ने कहा कि—'अवश्य आप ले लेना ।'

विशेष—गुरु की आज्ञा से सेठ ने सोचा कि दुःख में सड़-सड़ कर मरने की अपेक्षा संयम-साधना से जीवन को ऊँचा उठाना परम श्रेष्ठ है । इसमें आज्ञा-पालन और जीवन-रक्षण दोनों लाभ हैं । कहा भी है—'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पंडितः ।'

चौपाई

जदपि बल्लभ होत कुमारा, तदपि मरण भय लीन विचारा ।
गुरु कहि वचन हमारो गहिये, सदर सप्त दिन लग पुनि रहिये ॥२॥

अर्थ—यद्यपि अपनी संतान हर माता-पिता को प्रिय होती है तथापि मरने के भय से विचारा कि यह अच्छा मार्ग है । गुरु ने कहा कि हमारी बात मानकर सात दिनों तक तुम ठहरो, पीछे संकट दूर हो जायगा ।

चौपाई

दूर दिसावर सु बहु नाजा, आसी समुद्र उलंघ जिहाजा ।
बीते सप्त दिवस तब आई, नाज जिहाज सकल सुखदाई ॥३॥

अर्थ—सात दिनों के बाद समुद्र पार के अन्य देशों से जहाजों के

द्वारा बहुत सारा अनाज आयेगा। गुरुजी के कथनानुसार सात दिन बीतने पर अनाज से भरा सबको सुख देने वाला जहाज आ गया।

विशेष—तपागच्छ पट्टावली में सात दिनों की अवधि का उल्लेख नहीं है।

चौपाई

सेठ वचन वस गुरु पे जाई, सूंप्या पुत्र तजी न बड़ाई।
नागो नगेन्द्र रु लक्षमति जानो, चौथा विजेधर नाम बखानो ॥४॥

अर्थ—सेठ ने अपनी बात के अनुसार गुरु के पास जाकर अपने पुत्रों को सौंप दिया और अपने बड़प्पन को निभाया। उन पुत्रों के नाम नग, नगेन्द्र, लक्षमति और बिजेंधर थे।

चौपाई

गुरु तसु काल भेष जसु दीना, भन गुन पंडित भया प्रवीना।
होत सुकाल साधु आचारी, आये गुन-निधि उग्र विहारी ॥५॥

अर्थ—गुरु महाराज ने उन सबको तत्काल साधु वेश धारण करा दीक्षित कर दिया और वे सब भी अच्छी तरह पढ़ लिख कर प्रवीण पंडित बन गए। सुकाल होते ही आचारवान् गुण निधि और उग्र विहारी साधु फिर देश में लौट आए।

चौपाई

मुनि कहैं चलो शील शुद्ध मांही, निठुर भेषधर मानत नांही।
मिल चिहुँ भ्रात प्रवीण प्रतापी, अपनी मत चिहुँ साखा थापी ॥६॥

अर्थ—देशान्तर से आये हुए मुनियों ने स्थानीय मुनियों को शुद्ध आचार पर चलने को कहा किन्तु उन भेषधारी निष्ठुर मुनियों ने उनकी बात नहीं मानी। इसके बाद प्रवीण एवं प्रतापी उन चारों भाइयों ने अपने-अपने मत के अनुसार चार शाखाएँ स्थापित कीं।

विशेष—जैन संघ में यहीं से शाखाएँ चालू हुईं और गच्छ भेद का गणेश हुआ, जो क्रमशः बढ़ते-बढ़ते जटिल हो गया।

चौपाई

चन्द्र नागेन्द्र निरवृत विद्याधर, साख चतुर्थ भई अति विस्तर ।
सीत अम्बरी दिगम्बर दोई, चल्या तबते दृढ़मति होई ॥७॥

अर्थ—चन्द्र, नागेन्द्र, निर्वृत और विद्याधर इन चार शाखाओं में चौथे का बहुत विस्तार हुआ । श्वेताम्बर और दिगम्बर के भेद भी तभी से दृढ़ होकर चलने लगे ।

त्रोटक छंद

प्रतिमा जिन थापी पुजावन कूं, जग के बहु लोक भ्रमावन कूं ।
उर मांहि विमासन ऐसी करी, खलु है मत थापना वृद्धि खरी ॥१॥

अर्थ—उसी समय जग के लोगों को आकर्षित करने के लिये तथा पूजा पाने को जिन प्रतिमा की स्थापना की । उन्होंने मन में यह सोचा कि निश्चय इससे हमारे मत की वृद्धि होगी और लोग धर्म में स्थिर रहेंगे ।

त्रोटक छन्द

नर नारी उपासी हुसी अपना, इम जान करी प्रतिमा थपना ।
जिन पूजन को उपदेश दिये, बहु श्रावक हु अपनाय लिये ॥२॥

अर्थ—उन प्रतिमा-स्थापकों ने सोचा कि मूर्ति की उपासना करने वाले लोग हमारे भक्त होंगे, ऐसा जानकर प्रतिमा की स्थापना की और जिन-पूजन का उपदेश दिया, तथा बहुत से श्रावकों को अपने मत की ओर कर लिये ।

विशेष—इस समय मूर्ति-पूजा का प्रचार, प्रसार और जोर बढ़ा ।

चौपाई

अपने अपने गछ ठहराई, पुनि श्राविक मन प्रीत बंधाई ।
ठाम ठाम देहरा कराये, उपासरा गुरु के मन भाये ॥८॥

अर्थ—इसके बाद अपने-अपने गच्छ कायम करके फिर उसके प्रति श्रावकों के मन में प्रीति उत्पन्न की और जगह-जगह पर गृह-मन्दिर और गुरु की पसन्द के अनुकूल उपाश्रय बनवाये गये ।

चौपाई

श्रावक जन निज निज अनुरागे, महिमा पूजन करवा लागे।
जात आठ से वर्ष वयांसी, प्रगट थये चैत के वासी ॥९॥

अर्थ—श्रावक जन अपने अपने गच्छ के अनुराग से महिमा-पूजा करने लगे। इस प्रकार वीर संवत् ८८२ वर्ष में बहुत से साधु चैत्यवासी होगये।

विशेष—इस काल में चैत्यवासी अर्थात् मन्दिरों में रहने वाले साधुओं का प्राबल्य हुआ। पं० वेचरदास जी के अनुसार श्वेताम्बर संप्रदाय के स्पष्टतः पृथक् होने के वाद वीर संवत ८८२ वें वर्ष में उनमें का विशेष भाग चैत्यवासी बन गया। –जैन साहित्य में विकार, पृ० ११९ (हिन्दी संस्करण)।

चौपाई

नव से असी वर्ष सूत्र लिखाना, जसु कथा अब सुनो सयाना।
बल्लभिपुर नयरे अभिरामा, मुनि देवड्ढि खमासण नामा ॥१०॥

अर्थ—वीर संवत् ९८० में सूत्र लिपिबद्ध किये गये, चतुर पाठक उसकी कथा को अब सुनें। सुन्दर बल्लभिपुर नगर में देवर्द्धि क्षमाश्रमण गणी नाम के आचार्य हुए।

चौपाई

खम दम बहु समता रस भरिया, एक पूर्व ज्ञानी गुन दरिया।
दिवस एक मुनि करत आहारा, सूंठ गांठिया श्रवन मझारा ॥११॥

अर्थ—देवर्द्धि गणी क्षमाश्रमण शान्त, दान्त और समता रस के सागर और एक पूर्व के ज्ञाता थे। वे एक दिन आहार करते सूंठ की गंठि वापरने को लाये थे। समयान्तर में काम लेने को उसे कान में रख छोड़ा।

चौपाई

धर के भूल गए दिन बीता, करत आवश्यक आये चीता।
मुनि नायक कीन विचारा, जासी सूत्र विछेद तिवारा ॥१२॥

अर्थ—आचार्य सूंठ को कान में रख कर भूल गए और दिन बीत गया। शाम को जब आवश्यक करते समय उस पर ध्यान गया तो मुनि नायक ने विचार किया कि यदि सूत्रों को लिपि बद्ध नहीं किया गया तो इसी प्रकार सूत्र-ज्ञान का भी विच्छेद हो जायगा।

चौपाई

दिन २ बुद्धि अल्प मुनि देखा, लिखाताऽदल सूत्र असेखा।
सतावीस पाट सुखकारी, चले वीर आज्ञा व्रत धारी ॥१३॥

अर्थ—देवर्द्धि गणी ने प्रति दिन होने वाली बद्धि की क्षीणता को देख कर सम्पूर्ण सूत्रों को ताड़ पत्रों पर लिखवाया। इस तरह सत्ताईस पाट तक सुखकारी रूपसे साधु भगवान् की आज्ञा में चलते रहे।

विशेष—शास्त्रों का संलेखन देवर्द्धि गणी के ही समय में हुआ। उनसे पूर्व शास्त्र की परम्परा कण्ठस्थ चलती थी। यहां तक शुद्धाचारी आचार्य परम्परा चलती रही।

सोरठा

पछे केतला काल, व्रतधारी विरला रह्या।
प्रगटे बहुत विचाल, हिंसा धर्मी भेषधर ॥१॥

अर्थ—इसके बाद कितने ही समय तक विरले संयमी पुरुष रहे और फिर बीच में हिंसा-धर्मी, वेषधारी बहुत प्रगट हो गए।

सवैय्या इकत्तीसा

भंडारे सिद्धांत जोरे काव्य सिलोक थुई,
भाषा संस्कृत प्राकृत मन भाये जू।
चौपाई कवित्त दूहा, गाथा छंद गीत बहु,
इत्यादि अनेक जोर करिके सुनाऐ जू ॥
लोप जिन-आज्ञा, हिंसा धरम की पुष्टि करे,
रात जागरण थाप, पुस्तक पुजांये जू।

वजाये वाजिंत्र गीत, गवाये कहाये पूज,
पांव-मंडा कराये, सरस्स माल खाये जू ॥४॥

अर्थ—शिथिलाचारी साधुओं ने शास्त्रों को भंडारों में रख कर नयी रचना चालू की। वे काव्य, श्लोक, स्तुति, और भाषा की रचना मन पसन्द संस्कृत व प्राकृत भाषा में करने लगे। चौपाई, कवित्त, दोहा, गाथा, छंद, गीत आदि अनेक प्रकार की जोड़ें कर लोगों को सुनाते, जिनेन्द्र देव की आज्ञा का लोप कर हिंसा धर्म की पुष्टि करते और रात में जागरण करवाते तथा पुस्तकों की पूजा करवाते, बाजा वजवाते, गीत गवाते, और पूज्य कहाते हुए पांव मंडाकर सरस माल खाते थे।

सवैया इकत्तीसा

शत्रुंजय महातम, रच के चलाये संघ,
त्रिविध प्रकार तेला, त्रिध समझाये जू।
चन्दनबाला को तेलो, जुर तेलो गोला तेलो,
भाथा तेलो समुद्र-डोहन मन लाये जू॥
गौतम पड़गो पंचमादि, तप उजवन लोभ,
वस होय ऐसे तपसादि ठाये जू।
पूजन जिनेन्द्र ओले, न्हाए धोये छैल रहे,
तोरे फल फूल, दया दिल की घटाए जू ॥५॥

अर्थ—'शत्रुंजय-माहात्म्य' आदि ग्रंथ रचकर लोगों को तीर्थ यात्रा के लिये संघ निकालने का उपदेश दिया और अनेक प्रकार के तेलों की विधि समझायी। यथा—चन्दनबाला का तेला, जुर तेला, गोला तेला, भाथा तेला। समुद्र-दोहन, गौतम पड़गा और पंचमी तप आदि के रूप से लोभ वश उजमण कराये। जिनेन्द्र पूजा के निमित्त नहाना, धोना और छैल बने रहना तथा पूजा के लिये फल, फूल, वनस्पति आदि तोड़ने की व्यवस्था देकर हृदय के दया-भाव को घटा दिया।

विशेष :—भगवान् महावीर ने चतुर्विध संघ की स्थापना करके तीर्थ का निर्माण किया—क्योंकि तीर्थ वही है जिसके माध्यम से

साधक संसार-सागर से पार हो जाय। अन्य धर्मों की तरह जैन धर्म में द्रव्य-पूजा और क्षेत्र-पूजा को भव-सागर पार होने का मार्ग नहीं माना है। वस्तुतः पर्वत, नदी, नाला आदि में तारक शक्ति नहीं है। अतः उनका यह मार्ग-दर्शन जैन धर्म की मान्यता के विपरीत है।

चन्द्रायण

नवसत बाणव वरस, लवध नास्ति भई,
नवसत त्राणे चौथ छमछरी धुर थई।
नवसत चाणव (?) करण लगे चवदस पखी,
सहस वरस लग ज्ञान रहे, पूरव अखी ॥४॥

अर्थ—वीर संवत् ९९२ के बाद लब्धियों का विच्छेद हो गया। ९९३ में भादवा सुदी चौथ को पहले पहल सम्वत्सरी की गई अर्थात् सम्वत्सरी पंचमी के बदले चौथ को की गई। ९९४ में चतुर्दशी को पक्खी पर्व मनाने लगे और भगवान् महावीर से एक हजार वर्ष तक एक पूर्व का ज्ञान रहा—बाद में उसका सर्वथा विच्छेद हो गया।

दोहा

जा पीछे नव वरस सूं, पूरव ज्ञान समस्त।
रह्यो नहीं या भरत में, ज्यूं उद्योत रवि अस्त ॥१३॥

अर्थ—भगवान् महावीर के निर्वाण से एक हजार नव वर्ष बाद भरत क्षेत्र में पूर्वों का सम्पूर्ण ज्ञान विच्छेद हो गया, जैसे सूर्य के अस्त होने से प्रकाश नष्ट हो जाता है।

चन्द्रायण

चवदह से चोसठ, वरसे बड़गछ हुआ।
चोरासी गछ ताम, थये जुवा जुवा॥
सोले से गुणतीस, हुयो पूनमियो।
अमावस दिन चंद, उगायो जस लियो ॥५॥

अर्थ—वीर निर्वाण के बाद १४६४ वें वर्ष में वडगच्छ की स्थापना हुई। इसके बाद और चौरासी गच्छ बन गए। वीर निर्वाण के बाद १६२६ वें वर्ष में एक पूनमिया गच्छ उत्पन्न हुआ जिसने अमावस के दिन चन्द्र उगा कर यश प्राप्त किया।

विशेष—आचार्य चन्द्रप्रभ ने पूनम की पक्खी नियत की। अतः पुनमिया गच्छ कहलाया। स्वर्गीय मुनि श्री मणिलाल जी वि० सं० ११४६ में इस गच्छ की उत्पत्ति मानते हैं। तपागच्छ पट्टावली में वि० सं० ११५६ में उत्पत्ति लिखा है।

चौपाई

सोला से अरु वरस चोपन, आंचलियो गछ की उत्पन्न।
सोला से सित्तर छमछर, प्रगट्यो गच्छ तनही ते खरतर ॥१४॥
सतरह से पनावन साले, तपगच्छ प्रगट थयो तिहि काले।
गछ सर्व भ्रष्ट थया तिहिं टाणे, जिन आज्ञा की विहि न आणे ॥१५॥

अर्थ—वीर निर्वाण के बाद १६५४ वें वर्ष में आंचलिया गच्छ की स्थापना हुई और १६७० में खरतर गच्छ प्रकट हुआ। वीर निर्वाण के बाद १७५५ वें वर्ष में तपगच्छ की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार जैन संघ विभिन्न गच्छों में बंट गया। स्वपक्ष मोह से सब गच्छ भ्रष्ट हो गये। सब भगवान् की आज्ञा का पालन भूल गये।

विशेष :—धर्मसागर ने तपगच्छ पट्टावली में वि० सं० १२०४ में खरतर और १२१३ में आंचलिक मत उत्पन्न होना लिखा है। जगच्चन्द्र सूरि से वि० सं० १२८५ में तपागच्छ हुआ (तपागच्छ पट्टावलि के अनुसार)।

चौपाई

एक दिवस गछधारी विचारु, काढ़े सूत्र सम्भालन सारू।
चाट्या सूत्र उदेही विलोका, तब ते करन लगे मन सोका ॥१६॥

अर्थ—एक दिन गच्छधारी यति ने विचारा और भण्डार में से सारे को बाहर निकाल कर संभालना प्रारंभ किया तो देखा कि सूत्रों को दई चाट गई है और तब से वे मन में सोच करने लगे।

चौपाई

तिण अवसर गुजरात मझारा, नगर अहमदाबाद सुढ़ारा ।
ओसवाल वंसी जिह ठामें, वसत दफतरी लुंको नामें ॥१७॥

अर्थ—उस समय गुजरात प्रदेशान्तर्गत अहमदाबाद शहर में ओसवाल वंशीय लुंकाशाह नाम के दफ्तरी रहते थे ।

चौपाई

एक दिन लुंकोशाह हुलासे, गयो उपाश्रय गुरु ने पासे ।
कहे भिखु श्रावक सुन लीजे, कर उपकार सिद्धान्त लिखीजे ॥१८॥

अर्थ—एक दिन लोंकाशाह प्रसन्नता पूर्वक उपाश्रय में गुरुजी के पास गए तो वहाँ साधु ने कहा कि—"श्रावक जी सिद्धान्त लिख कर उपकार करो । यह संघ सेवा का काम है ।"

दोहा

सुन विरतन्त लूंके सकल, कीनो वचन प्रमाण ।
दशविकालिक प्रत प्रथम, ले पहुंते निज थान ॥१४॥

अर्थ—लोंकाशाह ने यति जी से सारा वृत्तान्त सुनकर कहा कि—"आपकी आज्ञा शिरोधार्य है ।" और सबसे पहले दशवैकालिक की प्रति लेकर अपने घर चले आये ।

दोहा

वांच वचन जिनराज के, उसमें कीन विचार ।
ए गछ धारी मोकले, दीसै भ्रष्ट आचार ॥१५॥

अर्थ—प्रतिलिपि करते समय लोंकाशाह ने जिनराज के वचनों को ध्यान से पढ़ा । पढ़ कर मन में विचार किया कि वर्तमान गच्छधारी सभी साध्वाचार से भ्रष्ट दिखाई देते हैं ।

चौपाई

जदपि ए गछधारी अधरमी, तदपि करिये अति नरमी ।
जबलुं सकल सिद्धान्त न पाए, तबलुं इनके चलो सुहाए ॥१६॥

अर्थ—लोंकाशाह ने लिखते समय विचार किया कि यद्यपि ये गच्छधारी साधु अधर्मी हैं तथापि अभी इनके साथ नम्रता से ही व्यवहार करना चाहिये। जब तक शास्त्रों की पूरी प्रतियाँ प्राप्त नहीं हो जातीं तब तक इनके अनुकूल ही चलना चाहिये।

चौपाई

इम विचार सब आलस छंडे, प्रत बेवड़ी लिखनी मंडे।
वांचत सूत्र महा सुख माने, तन मन वच करि अति हरखाने ॥२०॥

अर्थ—ऐसा विचार कर उन्होंने समस्त आलस्य का त्याग कर दो-दो प्रतियां लिखनी प्रारम्भ कीं। वीतराग वाणी (सूत्र) को पढ़ कर उन्होंने बड़ा सुख माना और तन, मन, वचन से अत्यन्त हर्षित हुए।

चौपाई

प्रगटी कछुक मोटी पुन्याई, ताते वस्तु अपूर्व पाई।
प्रथम अध्ययन कह्यो जिन उत्तम, धर्म अहिंसा तप सुध संजम ॥२१॥

अर्थ—अपने लेखन के संयोग को उन्होंने पूर्व जन्म का महान् पुण्योदय माना तथा उसी के प्रभाव से तत्त्व-ज्ञान रूप अपूर्व वस्तु की प्राप्ति को समझा। दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन की प्रथम गाथा में धर्म का लक्षण बताते हुए भगवान् ने अहिंसा, संयम और तप को ही प्रधानता दी है।

विशेष :—दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन की प्रथम गाथा इस प्रकार है :—

धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवावि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सयामणो ॥१॥

लोंकाशह यह पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

चौपाई

ते कल्याण रूप मग त्यागे, देखो मूढ़ हिंसा धर्म लागे।
इम लूंकों मन विसमय होई, लिख दशविकालिक प्रत दोई ॥२२॥

अर्थ—ये गच्छधारी साधु कल्याण रूप अहिंसा के मार्ग को त्याग कर, मूढ़तावश हिंसा में धर्म मानने लगे हैं। इस प्रकार लोंकाशाह के मन में आश्चर्य हुआ। उन्होंने दशवैकालिक सूत्र की दो प्रतियाँ लिखीं।

चौपाई

एक निज गृह राखी सु प्रतापी, एक भेप धारिन कुं आपी।
पुनि २ लिखन काज प्रत ल्याये, इक राखी इक लिख पहुँचाये ॥२३॥

अर्थ—उस प्रतापी लोंकाशाह ने उन लिखित दो प्रतियों में से एक अपने घर में रक्खी और दूसरी भेषधारी यति को दे दी। इसी तरह लिखने को अन्यान्य प्रति लाते रहे और एक अपने पास रख कर दूसरी यति को पहुंचाते रहे।

चौपाई

सूत्र बत्तीस सकल लिख लीना, ले परमारथ भये प्रवीना।
तेहवे भस्म काल नीसारियो, उभय सहस वरसे अतरियो ॥२४॥

अर्थ—इस प्रकार उन्होंने सम्पूर्ण बत्तीस सूत्रों को लिख लिया और परमार्थ के साथ-साथ शास्त्र-ज्ञान में प्रवीण भी बन गए। इसी समय भस्म ग्रह का योग भी समाप्त हुआ और वीर निर्वाण के दो हजार वर्ष भी पूरे होने को आये।

दोहा

बरस उभय सहस्र को, वरन्यो पेटो एह।
अब नृप विक्रम सु चल्यो, समत बरस सोलेह ॥१६॥

अर्थ—इस प्रकार दो हजार वर्ष काल का वर्णन किया गया। अब विक्रम संवत् सोलह सौ वर्ष का वर्णन करते हैं—

चौपाई

पनरे से इगतीसे वरपे, लूंकेसाह धरम सुध परखे।
दुर्लभ पंथ साधु को देख्यो, पंच महाव्रत रूप विसेख्यो ॥२५॥

अर्थ—संवत् १५३१ में धर्म प्राण लोंकाशाह ने धर्म का शुद्ध स्वरूप समझ कर लोगों को समझाया कि साधु का धर्म-मार्ग अत्यन्त कठिन अंहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह रूप पंच महाव्रत वाला है।

चौपाई

सुमत पंचत्रय गुपत आराधे, सतरे भेदे संजम साधे।
पाप अठारे रंच न सेवे, निरवद भंवर भिक्षा मुनि लेवे ॥२६॥

अर्थ—मुनि धर्म की विशेषता बताते हुए उन्होंने कहा कि—पांच समिति और तीन गुप्ति का जो आराधन करते हैं, सत्रह प्रकार के संयम का पालन करते हैं, हिंसा आदि अठारह पापों का कभी सेवन नहीं करते और जो निरवद्य भंवर–भिक्षा को ग्रहण करते हैं, वे ही सच्चे मुनि हैं।

चौपाई

दोष बयालिस टालत सारा, लेत गऊनी परे आहारा।
नव विध ब्रह्मचर्य व्रत पाले, द्वादश विध तप कर तन गाले ॥२७॥

अर्थ—जो बयालीस दोषों को टाल कर गाय की तरह शुद्ध आहार पानी ग्रहण करते हैं, नव बाड़ सहित पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं तथा बारह प्रकार की तपस्या करके शरीर को कृश करते हैं।

चौपाई

वरते शुद्ध इसे विवहारा, ते कहिये उत्तम अनगारा।
ए मत हीन भेष धर मूढ़ा, हिंसा धर्मी लोभ आरूढ़ा ॥२८॥

अर्थ—इस प्रकार जो शुद्ध व्यवहार का पालन करते हैं; उन्हें ही उत्तम साधु कहना चाहिये। आज के जो मति विहीन मूढ़ भेष धारी हैं वे लोभारूढ़ होकर हिंसा में धर्म बताते हैं।

चौपाई

जाते आंकी संगत छंडो, पोते सूत्र परूपण मंडो।
इम आलोचे हृदय ते लूंको, धरम प्रबोध करे तज संको ॥२६॥

अर्थ—इसलिए इन भेषधारी साधुओं की संगति छोड़कर स्वयंमेव सूत्रों के अनुसार धर्म की प्ररूपणा करने लगे। लोंकाशाह ने मन में ऐसा विचार किया कि सन्देह छोड़ कर अब धर्म का प्रचार करना चाहिये।

छन्द गजल

भवि जन परम धर्म प्रियास, ते सब आन लूंके पास।
सुन सुन धर्म आगम न्याय, विकसे मनई मन सुख पाय ॥१॥

अर्थ—जिन सांसारिक लोगों में सच्ची धर्म भावना थी वे सब अब लोंकाशाह के पास आनें लगे और उनसे आगम और न्याय संगत धर्म सुन कर मन ही मन प्रमुदित होने लगे।

छन्द गजल

अरहट वाल श्रावक ताम, जात्रा, करण चाल्यो जाम।
खरचन धर्म काजे आथ, ले सिंघ से ज्वाला साथ ॥२॥

अर्थ—अरहटवाड़ा के सेठ श्रावक लखमसींह ने तीर्थ यात्रा के लिये एक विशाल संघ निकाला। साथ में वाहन रूप में कई गाड़ियां और सेजवाल भी थे। धर्म के निमित्त द्रव्य खर्च करने की उनमें बड़ी उमंग थी।

छन्द गजल

वाटे भयो तेहवे मेंह, पाटन नगर ठवैं एह।
संघवि जाय लूंके पास, नित प्रति सुने सूत्र हुलास ॥३॥

अर्थ—रास्ते में अति वर्षा होने के कारण संघपति ने पाटन नगर में संघ ठहरा दिया और संघपति प्रतिदिन लोंकाशाह के पास शास्त्र सुनने जाने लगे और सुन कर मन ही मन बड़े प्रसन्न होने लगे।

छन्द गजल

एक दिन भेख धारी जेह, सिंघ में हुता बोल्या तेह।
श्रावक सिंघ क्यूं न चलाय, संघवि कहें जसु समझाय ॥४॥

अर्थ—एक दिन संघ में रहे हुए भेषधारी यति नें संघपति से कहा कि—संघ को आगे क्यों नहीं बढ़ाते ? इस पर संघपति ने उनको समझा कर कहा—

छन्द गजल

वाटे भये हरी अंकूर, उपजे जीव चर थिर भूर।
लीलण फूलणादिक जान, ठावे सिंघ करुना आन ॥५॥

अर्थ—महाराज ! वर्षा ऋतु के कारण मार्ग में हरियाली और कोमल नवांकुर पैदा हो गए हैं तथा पृथ्वी पर असंख्य चराचर जीव उत्पन्न हो गए हैं। पृथ्वी पर रंग-बिरंगी लीलण-फूलण भी हो गई है, जिससे संघ को आगे बढ़ाने से रोक रक्खा है।

विशेष :—वर्षा ऋतु में जमीन जीव-संकुल बन जाती है, अतः ऐसे समय में अनावश्यक यातायात वर्जित है।

छन्द गजल

सम्भल वचन करुणा आसु, जपे भेख धारी जासु।
जिन धर्म काजे हिंसा होय, दोष न विचारो मंति कोय ॥६॥

अर्थ—संघपति के करुणासिक्त वचन सुनकर भेखधारी बोले कि धर्म के काम में हिंसा भी हो, तो कोई दोष नहीं है।

छन्द गजल

सिंघवी करें उत्तर बोल, ऐसी धरम में नहीं पोल।
जिन धर्म दया जुक्त अनूप, तुम तो वको अधर्म रूप ॥७॥

अर्थ—यति की बात सुन कर संघपति ने कहा कि जैन धर्म में ऐसी पोल नहीं है। जैन धर्म दया-युक्त एवं अनुपम धर्म है. मुझे आश्चर्य है कि तुम उसे हिंसाकारी अधर्म रूप कहते हो !

विशेष :—जैन धर्म दया-प्रधान धर्म है, जिसकी तुलना अन्य कोई धर्म नहीं कर सकता। अतः धर्म के नाम पर की जाने वाली हिंसा भी अधर्म रूप होगी—धर्म के लिए हिंसा की प्ररूपणा बकवास एवं अनर्गल विचार है।

छन्द गजल

तुम उर नहीं करुणा लेस, सो अब लखी मोय असेस ।
सम्भल वचन ए लिंग धारी, पाछा गया भ्रष्ट आचारी ॥८॥

अर्थ—संघपति ने यति से कहा कि—तुम्हारे हृदय में करुणा का लेश भी नहीं है, जिसको कि अब मैंने अच्छी तरह देख लिया है। एं भेषधारी संभल कर वचन बोल। संघपति की यह बात सुन कर वह भेषधारी यति पीछे लौट गया।

छन्द गजल

सिंघवी जणा पैंतालीस, पौते भयो आप मुनीस ।
सरवोजी अत्यन्त दयाल, भानु नूणजी जगमाल ॥९॥

अर्थ—लोंकाशाह के उपदेश से प्रभावित होकर संघपति ने पैंतालिस व्यक्तियों के साथ स्वयं मुनि-व्रत स्वीकार किया। उनमें भानजी, नूनजी, सरवोजी और जगमालजी अत्यन्त दयालु एवं विशिष्ट संत थे।

छन्द गजल

चारु प्रमुख पैंतालीस, उत्तम पुरुप बिसवा बीस ।
जप तप क्रिया कर गुण धाम, जिन धर्म दीपाये अभिराम ॥१०॥

अर्थ—उन पैंतालिसों में ये चार प्रमुख थे और जो शेष थे वे भी सच्चे अर्थों में निश्चय रूप से उत्तम पुरुष थे। उन्होंने जप, तप आदि क्रिया करके सम्यक् प्रकार से गुण भंडार जिन धर्म को दीपाया।

छन्द गजल

कर भव जीव कु उपदेश, वाध्यो दया धर्म विशेष ।
चौविध सिंघ जाकु आन, प्रण में तरन तारन जान ॥११॥

अर्थ—सांसारिक लोगों को सदुपदेश देकर उन्होंने दया धर्म की विशेष वृद्धि की। चतुर्विध संघ उन्हें तरण-तारण जानकर उनकी सेवा में आता और उन्हें प्रणाम करता।

छन्द गजल

अत उत्कृष्टताई जासु, देखी भेखधारी तासु ।
तप गछ विमल आनन्द सूर, पन से बतीसे पूर ॥१२॥

अर्थ—इन लोगों के जप, तप तथा उत्कृष्ट करणी को देख कर गच्छ-वासी भेखधारियों ने भी क्रिया उद्धार का विचार किया। संवत् पन्द्रह सौ बत्तीस में तपागच्छ के आनन्द विमल सूरि ने क्रिया का उद्धार किया।

छन्द गजल

तप कर भविक बहु भरमाय, हिंसा प्रतीती उपजाय ।
अपनो गछ वधारे अत्यन्त, दुष्टी भया परम कृतन्त ॥१३॥

अर्थ—तपस्या करके उन्होंने लोगों को बहुत भरमाया और हिंसा के आरंभ युक्त कामों में भी प्रीति उत्पन्न की। उन्होंने अपने गच्छ को खब बढ़ाने के लिये लोंकागच्छ के विरोध में पूर्ण द्वेष भाव फैलाया, प्रचार किया।

कुण्डलिया

प्रबल परीषा मुनि प्रते, दुष्ट पणे तिण दीध ।
सो सम्यक् भावे सह्या, किंचित क्रोध न कीध ॥
किंचित क्रोध न कीध, हंटक मन न हुवा हारन ।
लूं के सु व्रत लीध, कहे लूंका तिन कारण ॥
आठ पाट जिन आग्या, आराधी परम उछाहुँ ।
नाम कहूँ धर नेह, सील निरमल सुध साहुँ ॥२॥

अर्थ—सरवोजी आदि मुनिराजों को उन गच्छवासियों ने बड़े-बड़े कष्ट दिये पर मुनिराजों ने सम्यक् भाव से सब कुछ सहन किया और उन पर तनिक क्रोध नहीं किया न अपने मन के हर्ष को ही कम किया। उन मुनियों ने लोंकाशाह से व्रत ग्रहण किये थे, अतः उस दिन से इस गच्छ का नाम लोंकागच्छ पड़ा। आठ पाट तक परम उत्साह से जिन आज्ञा की आराधना की। उन निर्मल स्नेहशील साधुओं के नाम इस प्रकार हैं—

छन्द हणुफाल

धुर जानजी मन धीर, भिक्खु भिदाजी गम्भीर ।
पुन नूनजी व्रत पाल, मुनि भीमजी जगमाल ॥४॥

अर्थ—१—ज्ञानजी (भाणांजी), २—भिक्खु भिदाजी ३—स्वामी ननजी (नूंनाजी) ४—मुनि भीमजी (भीमाजी), ५—मुनि जगमालजी—

छन्द हणुफाल

रिख सरवोजी रिख रूप, क्रिल जीवजी रिखी गुन कूप ।
ए पाट उत्तम अष्ट, कर कठन तप तनु कष्ट ॥५॥
हुए अराधक जिन हुँत, पुरगिर वान पहुँत ।
ताप छै लूंका तेह, जड़ पड्या लाड़ी जेह ॥६॥

अर्थ—६—रिख सरवोजी, ७—रूपजी और ८—जीवाजी । ये मुनि गुण धारण करने में कूप के समान थे । लोंकागच्छ के ये आठ पाट उत्तम हुए जिन्होंने शरीर को कष्ट देकर कठिन तप का पालन किया । आठ पाट तक जिनेन्द्र आज्ञा की आराधना करते हुए, पीछे लोंकागच्छ के ये साधु भी यति बनकर शिथिलाचारी हो गये ।

छन्द हणुफाल

आधा कर्मी थानक आहार, वस्त्र पात्र तज विचहार ।
भोगवन लागा भूर, पुनि करित संचय पूर ॥७॥

अर्थ—लोंकागच्छीय संत भी बाद में आधा कर्म स्थानक, आहार, वस्त्र, पात्र आदि बहुत से अकल्प को भोगने लगे तथा साध्वाचार को छोड़ दिया और पूर्ण संचय भी करने लगे ।

दोहा

तजी रीत भिचा तणी, जीमण न्हूतियां जाय ।
मूक कल्पविध मोकले, खवाड़े सो ले खाय ॥१७॥

अर्थ—अब उन्होंने साधु की भिक्षावृत्ति छोड़कर गृहस्थों के निमन्त्रण

पर भोजन के लिये जाना प्रारंभ कर दिया और साधु का कल्प छोड़कर जैसा गृहस्थ लोग उन्हें बनाकर खिलाते, वैसा ही खा लेते।

विशेष—इस समय साधु की मर्यादा पूरी तरह से ढीली पड़ गयी थी। साधु लोग भिक्षा वृत्ति से जीवन-निर्वाह छोड़कर निमन्त्रण पर गुजर करने वाले बन गए। उन्हें जैसा गृहस्थ वर्ग खिलाते वैसा ही खा लेते। संक्षेप में वे राजसी सम्मान का उपभोग करने लगे।

छप्पय

सतरे सय नव समय, वीरजी सूरत वासी।
कोड़ी ध्वज तिनकाल, विभव संपन्न विलासी॥
धन फुलां जसु धीय, उग्र भागी निन औले।
महा गोत्र श्रीमाल, खलु लवजी तसु खोले॥
अनुक्रमे नाम लवजी उचित, पोसाले गुरु पै पढ़े।
सुध सूत्र अर्थ सुनता, श्रवन, वैरागे जसु मन चढ़े॥५॥

अर्थ—विक्रम संवत् १७०९ में वीरजी बोहरा सूरत निवासी उस समय के कोटिध्वज वैभवशाली सेठ थे। उनकी पुत्री का नाम फूलाबाई था जो उग्रभागी वीरजी के यहां रहा करती थी। संतान नहीं होने से वीरजी ने श्रीमाल गोत्री लवजी को उसके गोद रक्खा। अनुक्रम से लवजी पोसाल में गुरु के पास पढ़ने जाते और योग्य रीति से अभ्यास करते। अनुक्रम से उनको सूत्रार्थ का अच्छा ज्ञान हो गया। सत्संग और शास्त्र-श्रवण से उनके मन में वैराग्य-भावना जागृत हुई।

विशेष—वीरजी वैभव संपन्न श्रीमन्त थे। उनकी इकलौती पुत्री—जिसका सम्बन्ध उन्होंने किसी खानदानी लड़के के साथ किया था, संयोग वश कुछ ही काल बाद वह विधवा हो गई और उन्हीं के घर रहने लगी। वीरजी ने फूलाबाई के लिये लवजी को दत्तक पुत्र बनाया और गुरु के पास उन्हें पढ़ने-लिखने को भेजा। वहाँ सूत्र और उसके अर्थ को सुनते २ उनके मन पर वैराग्य का रंग चढ़ गया।

छप्पय

प्रगट वीरजी पास वदे, आज्ञा दो व्रत की ।
अखे वीरजी आज्ञा, मोरि पै लूंका मत की ॥
जगजी[1] नामे जती, जसु आगल कर जोरे ।
लवजी दीक्षा लीध, तटक जग बंधन तोरे ॥
पढ़के सिद्धान्त सब ग्रन्थ पुनि, बोलचाल सोखे बहु ।
उर मांहि धार आगम अरथ, साधु शील समझे सहू ॥६॥

अर्थ—लवजी संयम धारण करने की आज्ञा लेने के लिए वीरजी के पास प्रत्यक्ष रूप से खड़े हुए और बोले कि मुझे आज्ञा दीजिये। इस पर वीरजी ने कहा—लूंका मत के जगजी नामक यति के पास यदि दीक्षा लो, तो मेरी आज्ञा है। यह सुनते ही लवजी उनके सम्मुख हाथ जोड़ कर खड़े हो गए और क्षण भर में सांसारिक बन्धनों को तोड़ कर दीक्षा अंगीकार कर ली। दीक्षित होकर उन्होंने सम्पूर्ण सिद्धान्त ग्रन्थों का अध्ययन किया और अनेक प्रकार के बोलचाल भी सीखे। हृदय में आगम का अर्थ धारण कर उन्होंने साधु आचार को भी भली भांति समझ लिया।

छप्पय

एक दिवस गुरु अग्र विनय संजुत मृदुवानी ।
दशविकालिक देख, छठे अध्ययन मनंछानी ॥
दृढ़ अष्टादस दोषग्रही, तिनकी दुय गाथा ।
पूछे ते गुरु प्रतै नमो, तुम करुणा नाथा ॥
जिनराज मुखे भाख्यो जिसो, पालो सुध संजम प्रभु (प्रभो) ।
नहीं टले दोष एही निपट, वृथा तज्यो किम घर विभू (विभो)॥७॥

अर्थ—एक दिन लवजी ने गुरु के आगे विनययुक्त मृदुवाणी में निवेदन किया कि दशवैकालिक के छठे अध्ययन के देखने से मन में छान-बीन हुई—वहां अठारह दोष-स्थान बतलाये हैं। उसकी दो गाथाओं में

१—अन्य पट्टावलियों में जगजी के स्थान पर वरजंगजी नाम मिलता है।

साधुओं के लिए जो व्यवहार बताया गया है—लवजी विनय से नमस्कार कर पूछने लगे—हे करुणानाथ ! जिनराज ने श्री मुख से जैसा फरमाया वैसा शुद्ध, संयम आज पाला जाता है क्या ? यदि नहीं तो घर छोड़ने का क्या लाभ ?

विशेष :—यदि शास्त्रानुकूल साधु-मर्यादा का पालन नहीं हो तो घर छोड़ना व्यर्थ ही समझना चाहिए ।

छप्पय

गुरु बोले मृदु गिरा, पले जैसो पाली जै ।
कठिन पांचवो काल वचन जिन केम वही जै ॥
कहे लवजी सू' कह्यो, कृपा निधि मो हित कामी ।
वरस सहस्र इकवीस, शुद्ध रहसी धर्म स्वामी ॥
गच्छ वोसराय वरतो गुनी, हम चेलो तुम गुरु हिवें ।
गुरु कहे मोहि छूटे न गच्छ, नरमी कर लवजी निवें ॥८॥

अर्थ—लवजी के निवेदन करने पर गुरुजी ने कोमल वाणी में कहा—जैसा पलता है वैसा तो संयम पालन करते हैं । बाकी कठिन पंचम-काल में जिन-वचन के अनुसार चलना कैसे संभव हो ? इस पर लवजी ने फिर कहा—हे कृपानिधान, मेरे हितकामी प्रभो ! अभी तो २१ हजार वर्ष तक शुद्ध संयम-धर्म रहेगा । गुरुदेव ! गच्छ को छोड़कर संयम मार्ग में चलो । इस प्रकार हम शिष्य और आप गुरु बने रहें । इस पर गुरु ने कहा—लवजी ! मुझसे गच्छ नहीं छोड़ा जाता । लवजी ने नरमी धारण कर नमन किया ।

छप्पय

हमकुं आग्या होय, प्रगट शुद्ध संजम पालूं ।
वरज अठारह बोल, टेव असंजम टालूं ।
इम कही गच्छ तज अमै, निकसे मृग मां जिम नाहर ।
दुरस वचन सुन दोय, जती निकसे संग जाहर ।

गछ हूँत तीन निकस्या गुनी, थोभण, सखियो, लवजी थिरू ।
जिन वचन अराधन जुगत सु, स्फुट तिन न दीचा लीध फिरू ॥६॥

अर्थ—लवजी ने गुरु से कहा—यदि आप गच्छ नहीं छोड़ सकते तो हमको (स्पष्ट, शुद्ध संयम-पालन की) आज्ञा दीजिए। हम अठारह दोषों को टाल कर शुद्ध संयम का प्रगट पालन करें और असंयम की टेव को दूर करें। यह कह कर उन्होंने गच्छ छोड़ा और मृग-मण्डल में नाहर की तरह निर्भय हो निकल पड़े। उनके दुरुस्त वचन को सुनकर दो यति और भी उनके साथ निकल पड़े। इस प्रकार गच्छ में से थोभण-जी, सखियाजी और लवजी तीन स्थिर गुणी जन निकल पड़े और जिन-वचन आराधन की यक्ति से उन तीनों ने पुनः संयम दीक्षा ग्रहण की।

दोहा

सतरे से चवदे समै, निरमल दीच नवीन ।
लो लवजी गच्छ लोप के, हुआ असंजम हीन ॥१८॥

अर्थ—विक्रम संवत् १७१४ में पूर्व गच्छ परम्परा को छोड़ कर, लवजी ने नवीन निर्दोष दीक्षा धारण की और अपने जीवन को असंयम रहित बनाया।

विशेष :—ऋषि सम्प्रदाय के इतिहास में सं० १६६२ को उनके गच्छ त्याग का उल्लेख है। इस सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पट्टावलियों में भिन्न-भिन्न लेख मिलते हैं।

छप्पय

व्रत आदर सुमवार, मुनि एक ढूंढ़े मांहि,
धरियो निश्चल ध्यान, अचल एकंत उछांही ॥
देखत मुनि दीदार, भली मुद्रा मन भावै,
दरसन कर कर दुनी, सकल गुन जान सरावै ।
भव जीव करन जांकी भगति, मिल्या देख गच्छ मुंढ़ीया,
मन घेख धार अपने मुखे, ढूंका कहवा ढूंढ़िया ॥१०॥

अर्थ– शुभ समय में नवीन दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् मुनि लवजी एक गिरे–पड़े मकान में ठहरे और वहां एकान्त में अचल एवं उत्साह-भाव से निश्चल ध्यान में जम गये। लोग उनकी शांत, सौम्य एवं गंभीर मुख–मुद्रा देखते और देख-देख कर सारी दुनियां उनके गुणों की सराहना करती। उनकी भक्ति करने भव-जीवों को एकत्र होते देख गच्छवासी मन में द्वेष करने लगे और अपने मुंह से ढूंढ़िया-ढूंढिया कहने लगे।

छप्पय

विपुल नगर पुर विचर, घना भवि जन मग घाले ;
सूत्र न्याय समझाय, पाप हिंसा कृत पाले।
दीक्षा खूब दीपाय, कला विज्ञान प्रकाशी।
सुनी सोमजी शाह, विकसि कालुपुर वासी।
कुलवन्त शीघ्र लवजी कनै, गेह त्याग दीक्षा गही।
कर बहु आतापना काउसग्ग, दृढ़ता सु काया दही ॥११॥

अर्थ—फिर लवजी ऋषि ने बहुत से नगर और गांवों में विचर कर बहुत से लोगों को धर्म मार्ग पर लगाया और सूत्र सिद्धान्त की युक्ति से उन्हें हिंसाजन्य पाप से बचाया। इस प्रकार धर्म, कला और ज्ञान के प्रकाश से इन्होंने दीक्षा को खूब दीपाया। कालूपुर वासी शाह सोमजी ने लवजी की वाणी सुनी तो बहुत प्रसन्न हुए और उस कुलवन्त ने घर छोड़ कर शीघ्र ही उनके पास दीक्षा ग्रहण कर ली। दीक्षा के बाद बहुत आतापना और कायोत्सर्ग करके दृढ़ता से उन्होंने अपने शरीर और विकारों का दहन किया।

छप्पय

हरिदास, पेमजी, कान, गिरधर चारु रिख।
निकसै गच्छ वर जंग, सोमजी तणा हुआ सिख ॥
अमीपाल, श्रीपाल, धर्मसीह, हरिदास पुनि।
जीवौ–शंकर मण जाण, केसु, हरिदास लघु मुनि ॥

समर्थ, तोड–गोधो–मोहन, सदानन्द संख ए सहुं ।
सिख भया इत्यादिक सोमके, वोसराय गच्छ कुं वहुं ॥१२॥

अर्थ–हरिदास, प्रेमजी, कानजी और गिरधरजी ये चारों ऋषि वरजंगजी के गच्छ को छोड़कर, सोमजी के पास दीक्षित हुए। अमीपाल जी, श्रीपालजी, धर्मसीजी, दूसरे हरिदासजी, जीवोजी, शंकरजी, केसुजी, लघु हरिदासजी, समर्थजी, मोहनजी, तोडोजी, गोधाजी, सदानन्दजी और संखजी आदि ये सब अपने-अपने गच्छ को छोड़ कर सोमजी के शिष्य बन गये।

छप्पय

गुजराती धर्मदास, जात छिंपा जसु जाणो।
सरधा पोतिया बंध, कान[1] रिख पै समझाणो।
ले दीचा निज–मतै, सुद्ध मारग संमाये।
सेवट कर संथार, सुरग लोके जु सिधाये।
जसु सिख निन्नाणु उत्तम जती, धन जामे दीपत धनो।
रिद्ध त्याग भयो ममता रहित, सुत मूता वाघा तणो ॥१३॥

अर्थ—धर्मदास गुजराती जो जात के छिपा थे, पोतिया बंध की श्रद्धा में ऋषि कानजी के पास बोध पाये स्वयं अपने मन से दीक्षा लेकर शुद्ध धर्म मार्ग पर तत्पर हुए और अन्त में संथारा ग्रहण करके स्वर्ग लोक सिधारे। उनके निन्यानवे शिष्य उत्तम यति थे जिनमें सबसे अधिक दीप्तिमान धन्नाजी हुए, जिन्होंने धन वैभव की ममता छोड़ कर दीक्षा ग्रहण की। वे वाघा मुंथा के पुत्र थे।

विशेष :—आचार्य धर्मदासजी जैन धर्म के महान् प्रचारक संत हुए। मारवाड़, मेवाड़, मालवा तथा सौराष्ट्र आदि प्रान्तों में विचरने वाले अधिकांश संत-सतियों के वे ही मूल पुरुष माने जाते हैं। अहमदाबाद के पास सरखेज नामक ग्राम में उनका जन्म हुआ था। उनके जमाने में पोतियाबंध श्रावकों की परम्परा प्रचलित थी, जो मस्तक पर एक सफेद कपड़ा बांधे रहते और श्रावक धर्म की करणी करते थे। लोगों को

१—अन्य पट्टावलियों में लवजी का उल्लेख है, जो संगत प्रतीत होता है।

धार्मिक शिक्षण देना तथा शास्त्र सुनाना उनका काम था। उनकी मान्यता थी कि इस पंचम काल में कोई पंच महाव्रतधारी साधु नहीं हो सकता। धर्मदासजी ने इन्हीं लोगों के पास रहकर धर्म की जानकारी की थी। शास्त्र का वाचन करते उनको ज्ञात हुआ कि भगवान् महावीर का शासन पंचम आरे की समाप्ति तक चलेगा और उसमें साधु-साध्वी भी रहेंगे। अतः उन्होंने निश्चय किया कि अभी श्रद्धा-विमुख होना ठीक नहीं है। इसके लिए उन्होंने उस समय विचरण करने वाले धर्मसिंहजी म० एवं कानजी ऋषि जी से विचार विमर्श किया और पोतिया बंध की मान्यता त्याग कर सं० १७१६ में अहमदाबाद की बादशाह बाड़ी में स्वयं साधु दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा-धारण के समय वे मात्र १६ वर्ष के थे। परन्तु दृढ़ता से ज्ञान, ध्यान और तपः साधना करते हुए वे विहार करने लगे। एक बार विहार करते हुए वे मारवाड़ के सांचोर नामक गांव में पधारे। वहां के एक श्रीमन्त के पुत्र धन्ना जी उनके वैराग्यमय उपदेश से प्रभावित होकर उनके पास दीक्षित हो गए। दीक्षा लेते ही उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक पूर्ण शास्त्राध्यय नहीं करूंगा तब तक एक वस्त्र, एक पात्र तथा एकान्तर उपवास करता रहूंगा और इस नियम का आठ वर्षों तक पालन करते रहे। सं० १७५६ के वर्ष धार में एक शिष्य के संथारे पर, उसकी जगह संथारा सेवन कर पू० धर्मदास जी महाराज परलोकवासी बन गए।

छप्पय

मंडन—कुल मुहणोत, नाम बूधर निकलंकी।
वसता सोजत वास, धने जी पास धन्नकी।
तज नन्दन अरु त्रिया, ग्रही दीक्षा गरवाई।
सहो दुसह उपसर्ग, एह कीधी इधकाई।
रिख लेन आतापन रेनुकी, सिकता में लुटता सदा।
विचरंत ग्राम कालु विषै, उपजी अणजाणी अदा ॥१४॥

अर्थ—मुणोत कुल के मंडन सोजत वासी श्री भूधरजी ने जिनके नाम पर कोई कलंक नहीं था—धन्नाजी के उपदेश से प्रभावित होकर धन, दारा और पुत्र आदि छोड़ कर कठिन साधु दीक्षा ग्रहण कर ली,

और धर्म मार्ग के दुस्सह उपसर्गो को सहन किया। यह खास अधिकाई रही। एक बार विचरते हुए कालू ग्राम पधारे। वहां रेत में आतापना लेने ऋषि वालू में सदा लेटा करते। संयोग वश उस समय उन्हें अनजानी पीड़ा उत्पन्न हो गई।

छन्द पद्धरी

कालू नजीक सरिता एकंत, तिहां जाय मुनि सिकता तपंत ।
नरनार सकल तप गुन निहार, अरु करे जासु महिमा अपार ॥१॥

अर्थ—श्री भूधरजी म० कालू के निकट नदी के एकांत स्थान में जाकर दोपहर की जलती हुई रेत में, तपस्या करते। उनकी इस कठोर तप-साधना को देखकर सभी स्त्री-पुरुष उनकी अपरम्पार महिमा का गुणगान करते।

विशेष—तपस्वियों का तप प्रभाव वास्तव में अभिनन्दनीय होता है। मनुष्य की कौन कहे, देवता भी ऐसे को नमस्कार करते हैं। कहा भी है—"देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सयामणो"।

छन्द पद्धरी

तत्र सुनि एक अनमती अतीत, उर आन दोख कीनी अनीत ।
ते वाह सोट मुनि कु त्रिकुट, छिप गयो लार भई छूट ॥२॥

अर्थ—उनकी तपस्या की चर्चा सुनकर एक अन्यमती अतीत वहाँ पहुंचा और मन में द्वेष लाकर अनीति का काम कर बैठा। उसने मुनि के मस्तक पर सोट-लट्ठ मारा और स्वयं छिप गया। खबर होते ही लोगों ने उसका पीछा किया।

छन्द पद्धरी

तत्काल पकर जसु दैन त्रास, दृढ़ करी डकर मिल राजदास ।
वर मुनि हिरदय करुना विचार, मम हेत याहि कु देहि मार ॥३॥

अर्थ—तत्काल पकड़ कर उसको राज पुरुषों ने मिल, दंड देने को मजबूत जकड़ा। कहा जाता है कि एक कड़ाव के नीचे उसे दबवा दिया, किन्तु परम्परा से जब मुनि ने यह सुना तो उनके मन में करुणा के विचार हो आये। सोचा कि मेरे कारण उस बेचारे को मार पड़ेगी।

विशेष—चोट खाकर मुनि श्री पानी के पास आए और खून को साफ कर सिर पर पट्टी बांधी और फिर गाँव पहुंचे। मुनि श्री के हृदय में मारने वाले के प्रति तनिक भी रोष नहीं था। किन्तु किसी ने उसको मारते देख लिया, उसने अधिकारी को सूचित कर उसको पकड़ मंगवाया और कष्ट देना प्रारंभ कर दिया। इस पर मुनि श्री ने प्रतिज्ञा की कि जब तक वह कष्ट-मुक्त नहीं होगा तब तक मैं अन्न-जल ग्रहण नहीं करूंगा।

छन्द पद्धरी

इम जान छुड़ायो तेह अतीत, हद करी खिम्या तज अहित हित।
आगमी सिरपे उत्कृष्टी पीर, सम भाव सही हुयकै सधीर ॥४॥

अर्थ—इस प्रकार उस अतीत को कष्ट में जान छुड़ा दिया। हित-अहित भूल कर क्षमा की हद करदी। उनके सिर पर प्रबल पीड़ा उत्पन्न हुई फिर भी धैर्य धारण कर मुनि श्री ने समभाव से सब सहन किया।

विशेष—उत्पीड़क की पीड़ा से द्रवित हो उठना और उसे कष्ट-मुक्त बनाना, वस्तुतः क्षमा का आदर्श उदाहरण है कहा भी है—'अवगुण ऊपर गुण करै, ते नर विरला दीठ।' इसका असर अपराधी के हृदय पर होता भी है और वह ऐसे महात्मा के चरणों में झुक जाता है। उस पीड़क ने भी उनके चरणों में झुक कर क्षमा मांगी और आगे से ऐसा न करने की दृढ़ प्रतिज्ञा की।

छन्द पद्धरी

सिख भये बहुत जाके समीप, दुनियां मांही इधका चार दीप।
बड़ सिख नराण, रघुपति[1] विनीत, जयमल, कुशल परमाद जीत ॥५॥

अर्थ—उनके पास अनेक शिष्य हुए, उनमें चार अधिक प्रभावशाली थे। बड़े शिष्य श्री नाराणजी थे। अन्य तीन शिष्यों में श्री रघुपतिजी गुरु के बड़े विनीत रहे और मुनि श्री जयमलजी तथा मुनि श्री कुशलाजी महाराज प्रमाद–विजयी थे।

विशेष :—आचार्य श्री धन्ना जी महाराज का अन्तिम चातुर्मास मेड़ता नगर में था। वहां शारीरिक क्षीणता देखकर वि० सं० १७८४ में

१—रघुनाथ।

एक दिन का संथारा करके वे स्वर्गवासी बने। उन्हीं के पट्टधर आचार्य भूधरजी महाराज हुए। उनका कुल संयम-जीवन ५७ वर्ष का था।

प्राचीन भण्डारों का निरीक्षण करते हुए आचार्य श्री भूधरजी महाराज के नौ शिष्यों के नाम प्राप्त हुए हैं। उनके शिष्यों के सम्बन्ध में निम्न उक्ति प्रसिद्ध है—

भूधर के सिख दीपता, चारो चातुर्वेद।
धन, रघुपति ने जेतसी, जयमल ने कुशलेश ॥

इस उक्ति में जेतसी का नाम विशेष मिलता है। वे एक बड़े प्रभावशाली संत हुए हैं। वे जोधपुर के पास "सुरपुरा" गांव के ठाकुर थे। एक दिन वे शिकार के लिए जा रहे थे। बाजार में आचार्य श्री भूधरजी का प्रभावशाली प्रवचन था। मुनि श्री के प्रवचन को सुनकर पाप-कर्मों से उनका हृदय कांप उठा और वे मन ही मन सोचने लगे कि मनि श्री जीव-हत्या करने में भयंकर पाप बताते हैं और मैंने तो अपने जीवन में कई जीवों की हत्या की है। मुझे इस भयंकर पाप से कैसे मुक्ति मिल सकती है, यह सोच कर वे मुनि श्री के चरणों में पहुंचे और हिंसादिक त्याग कर आचार्य श्री के शिष्य बन गए।

यहां श्री नाराणजी, रघुपति, जयमल्ल और कुशलाजी ये चार प्रमुख शिष्य बतलाये हैं, जिनका परिवार आगे चला।

छप्पय

मुनि जाय मेड़ते, चरम अवसर चौमासे।
तपत आसाढ़ी तीव्र, पानी रंचक नहीं पासे।
त्रिच नरान जल विना, थया असगत अतिथि कै।
अंबू लेवा अरथ, अखिल मुनि अग्र उच कै।
मेड़ते जाय घिरिया मुनि, तत खिणलै अंबू तितै।
उत्कृष्ट परिसो उपनो, जेज परी मगमें जितै ॥१५॥

अर्थ—एक समय आचार्य श्री भूधरजी शिष्य मण्डली सहित अन्तिम चातुर्मास करने को मेड़ता पधार रहे थे। आषाढ़ की प्रचण्ड गर्मी पड़ रही थी, पास में रंच भर भी पानी नहीं रहा। अतः साथी सन्तों में

नारायण नामक मुनि जल के बिना प्यास से चलने में अशक्त हो गये। तब दूसरे सन्त पानी लेने को आगे बढ़े और मेड़ता जाकर तत्काल पीछे लौटे। वे पानी लेकर आवें तब तक मार्ग के विलम्ब से मुनि का परीषह उत्कृष्ट हो गया।

विशेष :—जैन संतों के लिए जल और आहार ग्रहण का भी एक नियम होता है। एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाते हुए दो कोस से अधिक दूरी पर पूर्व गृहीत आहार-पानी खाने व पीने के काम में नहीं लिया जाता। जलाभाव से एक मुनि नहीं चल सके, तब दूसरे साधु आगे मेड़ता जाकर पानी लाये।

छप्पय

मुनि लारे मग मांह, नैन जल कूप निहारियो।
पैन चल्या परणाम, ध्यान जिनको उर धार्यो।
कर अणसण एकंत, त्याग ए देह औदारिक।
धन नरान मुनि धीर, लही सुरगत सुखकारिक।
जल लेन गया मुनिवर जिके, अविलोके जहां आयके।
मुनि कियो इसो पंडित मरण, ध्रुव परमातम ध्यायके ॥१६॥

अर्थ—पीछे मुनि ने मार्ग में कूप के पानी को आंखों से देखा पर परिणाम चलायमान नहीं हुए। उन्होंने हृदय में जिनेन्द्र का ध्यान धारण करके एकान्त स्थान में अनशन पूर्वक इस औदारिक शरीर को छोड़ कर सुखकारी स्वर्ग लोक को प्राप्त किया। वे धैर्यशाली नाराण मुनि धन्य हैं। इधर जल के लिए गये हुए मुनिवर जब वापस आकर देखते हैं तो विदित हुआ कि मुनि ने भगवान् का ध्यान करके पण्डित मरण प्राप्त कर लिया है।

विशेष :—असह्य तृषा की दशा में सामने कूप देख कर भी सचित्त जल के कारण मुनि ने जल नहीं लिया, किन्तु प्राणोत्सर्ग कर दिया। धन्य है धर्माराधन की यह परम्परा और त्याग का यह उदात्त आदर्श।

दोहा

मुनि भूंधरजी मेड़ते, चरम कियो चौमास।
पांचां वासा पारणे, पद सुर लह्यो प्रकाश ॥१६॥

अर्थ:—मुनि भूधरजी ने मेड़ता में यह अन्तिम चातुर्मास किया और पांच उपवास के पारणे में सुख पद को प्राप्त किया।

विशेष :—वि० सं० १८०४ की विजया दशमी में पांच की तपस्या के पारणे में भूधरजी महाराज मेड़ता नगर में स्वर्गवासी हो गये। उनके तीन बड़े प्रभावशाली शिष्य हुए। जिनकी तीन शाखाएं प्रचलित हुईं। यथा—पूज्य श्री रघुनाथ जी महाराज की परम्परा, पूज्य श्री जयमल्लजी महाराज की परम्परा और पूज्य श्री कुशलाजी महाराज की परम्परा।

छन्द झंफाल

जासु सिख नाम रुघनाथ बड़ जानिय,
विमल गुनवंत जेमल्ल वखानिय।
तिसरा मुनि कुशलेश रीयां तणु,
वंस चंगेरिया जासु सुहावणु ॥१॥

अर्थ—भूधरजी के बड़े शिष्य रघुनाथजी थे। दूसरे विमल गुणों वाले जय मल्लजी थे और तीसरे रीयां के शोभन चंगेरिया गोत्रीय मुनि कुशलेश जी थे।

विशेष—मुनि कुशलाजी पीपाड़ समीपवर्ती सेठों की रीयां गांव के वासी थे। कभी रीयां में ओसवालों की अच्छी बस्ती थी। आज भी यहाँ के निवासी अमरावती, हिंगणघाट, अहमदनगर आदि नगरों में व्यापार के निमित्त बसे हुए हैं। सम्प्रति मुनि कुशलाजी के वंशज अहमद नगर के समीपवर्ती ग्राम सोनई में निवास करते हैं।

छन्द झंफाल

अंब कानु पिता लाधजी एहवा,
जनमिया पुत्र जसु कुशलजी जेहवा।
तात आयुर्वला अंत तन त्यागिया,
लूखमन कुसलजी धंध जग लागिया ॥२॥

अर्थ—माता कानु तथा पिता लाधुजी ने इन्हीं कुशलसी जैसे पुत्र को जन्म दिया। आयु-बल की कमी से पिता ने इनके बचपन में ही शरीर

त्याग दिया। तब कुशलजी रूक्ष मन उदासीन भाव से जग के धंधों में लग गए।

छन्द झंफाल

परणिया सुंदरी पाय जोवन पणो,
एक सुत हेमजी कूख जसु उपनो।
आयु पूरन करयो सुंदरी ए तले,
चिंतवे कुसल रे जीव अब चेतले ॥३॥

अर्थ—तरुणाई पाकर उन्होंने एक सुन्दरी से विवाह किया जिससे हेमजी नाम का एक पुत्र उसके कूख से उत्पन्न हुआ। सहसा उनकी पत्नी आयु पूर्ण कर चल बसी। अब कुशलजी ने मन में सोचा—रे जीव! अब चेतजा—आत्मोद्धार कर ले।

छन्द झंफाल

सुंपियो पुत्र माता भणी सोचके,
आपके जीव को श्रेय आलोच के।
खीनता मोहकी भई मन में खरी,
पंच सहस्र दौलत छती परिहरी ॥४॥

अर्थ—उन्होंने अपने जीवन का श्रेय विचार कर पुत्र को अपनी माताजी के पास सौंप दिया। उनके मन में मोह की क्षीणता हो गयी थी—इसलिए वे पांच हजार की सम्पदा और घर परिवार छोड़कर दीक्षा के लिए कटिबद्ध हो गये।

विशेष—बचपन में पिता चल बसे और जवानी में पत्नी चली गई, इससे उनके मन में संसार की अनित्यता का सही चित्र खिच गया वैराग्य-भाव जगा और वे पुत्र एवं सम्पत्ति का मोह छोड़ कर साधु बनने को तैयार हो गये।

छन्द झंफाल

मांग चारित्र की आज्ञा निज मात पे,
वेष साधु लियो आय गुरु व्रात पे।

निरजरा काज मुनि कबहू सूता नहीं,
लोक में व्रत ले उग्र शोभा लही ॥५॥

अर्थ—दीक्षा लेने के लिए माता से आज्ञा प्राप्त करके वे गुरु (आचार्य श्री भूधरजी) के पास गये और साधु वेष धारण कर लिया। कर्म-निर्जरा के लिए वे कभी सोये नहीं। अहर्निश धर्म-जागरणा में लगे रहे। कठोर व्रत लेकर उन्होंने समाज में बड़ी शोभा प्राप्त की।

छन्द झंफाल

साधु तीना तणां विस्तरे सांवठा,
के तपी के जपी के बुधा उतकठो।
दोय कुशलेश के कहुं सिख दीपता,
जोग्य गुमनेस दुरगेस अघ जीपता ॥६॥

अर्थ—तीनों का विशाल साधु समुदाय वहुत फैला। उनमें कई तपी, कई जपो और कई उत्कट विद्वान् हुए। कुशलाजी म० के दो शिष्य श्री गुमानचन्द्रजी और दुर्गादासजी प्रभावशाली हुए। वे दोनों पाप बंध में विजय मिलाने को योग्य थे।

सोरठा

जाहरपुर जोधान, मांझी अखजी मेसरी।
थिरवासी तिहां थान, लोढो इधकी लायकी ॥२॥

अर्थ—जोधपुर एक प्रसिद्ध नगर है जिसमें लोढ़ा गोत्रीय अखजी (अखेराजजी) नाम के एक माहेश्वरी सेठ थे। वे वहाँ के स्थिरवासी और लायकी से अधिक प्रख्यात थे।

छन्द हनुफाल

तसु गेह चैना नाम, वर सीलवती वाम।
जसु कूख जनमें आन, गुनवंत पुत्र गुमान ॥८॥

अर्थ—उनके घर में श्रेष्ठ शील वाली चैना नाम की भार्या थी, जिसकी कुक्षि से गुणवान् पुत्र गुमानजी का जन्म हुआ।

छन्द हनुफाल

केतले काल विख्यात, थित करी पूरन मात ।
जसु फूल घालन गंग, ले तात कूं निज संग ॥६॥

अर्थ—कुछ वर्षों के बाद उनकी मातुश्री आयु पूर्ण कर चल बसी। उसके फूलों (अस्थियाँ) को गंगा में प्रवाहित करने के लिए वे पिता को संग लेकर गये।

छन्द हनुफाल

सुत पिता दोहु निदान, पहुँता मंदाकिनी थान ।
तन माझ गंग मझार, पुनि फूल जल में डार ॥१०॥

अर्थ--पुत्र और पिता दोनों गंगा के किनारे पहुंचे और गंगा में शरीर को मांज कर फिर उन फूलों को जल में विसर्जित कर दिया।

छन्द हनुफाल

कर सगत सारु दान, साचवि सकल विधान ।
मग परे पाछा जासु, मेड़ते आये आंसु ॥११॥

अर्थ—वहाँ सम्पूर्ण विधान के साथ, शक्ति भर दान करके दोनों पीछे अपने रास्ते चले और शीघ्र मेड़ते आ पहुंचे।

विशेष—गंगा में अस्थि-विसर्जन करना तथा उस अवसर पर दान देना जैन संस्कृति की परम्परा के अनुकल नहीं है। क्योंकि जिन धर्मानुसार स्वकर्मानुसार-सुगति, कुगति मानी गई है।

दोहा

तठे सिख कुशलेस के, कियो हुतो संथार ।
ते महिमा सुणके तिणें, दीठो मुनि दीदार ॥२०॥

अर्थ—उस समय मेड़ता नगर में आचार्य कुशलाजी म० के एक शिष्य ने संथारा किया। संथारे की उस महिमा को सुनकर वे दोनों मुनि के दर्शन ने वहाँ गए।

दोहा

रह दिवस पनरें तिहां, नित आवत मुनि पास ।
सुनता सुनता सीखियां, वीर थुई धर प्यास ॥२१॥

अर्थ—वे दोनों वहाँ पन्द्रह दिन रहे और नित्य मुनिजी के पास आते-जाते । मन में चाह होने के कारण उन्होंने वहाँ सुनते २ वीर स्तुति का पाठ रुचि से सीख लिया ।

दोहा

बुध उत्कृष्टी देख के, दियो मुनि उपदेश ।
ते सुणने वेरागिया, भेट्या गुरु कुशलेश ॥२२॥

अर्थ—मुनि श्री ने उनकी उत्कृष्ट बुद्धि देखकर सदुपदेश दिया, जिसे सुनकर उनके मन में वैराग्य-भावना जगी और पूज्य कुशलाजी के शरण में आ गये ।

दोहा

अष्टादश अष्टादशे, बरस तणी ए बात ।
पिता सहित गृह त्याग के, ग्रही क्रिया अवदात ॥२३॥

अर्थ—विक्रम संवत् १८१८ की यह बात है । गुमानचन्दजी ने पिता सहित घर का प्रपंच छोड़ कर श्री कुशलाजी के पास निर्दोष साधु क्रिया स्वीकार की ।

छप्पय

ले संजम गुण पात्र, पढ़न उद्यम आदरियो ।
पढ़ व्याकरण प्रसिद्ध, ज्ञान अक्खर उर धरियो ॥
सुध वतीस सिद्धंत, अरथ संजुक्त विचारा ।
भाषा काव्य सिलोक, सीखे मुनि विविध प्रकारा ॥
षट् द्रव्य रूप ओलख खलु, नय निक्षेप नव तत्व को ।
कर निर्णय ज्ञाता भये, समझ सरूप निज सत्व को ॥१७॥

अर्थ—गुण पात्र रूप संयम ग्रहण कर उन्होंने पढ़ने के लिए उद्यम किया और प्रसिद्ध सारस्वत व्याकरण पढ़ कर उसका अक्षर-अक्षर ज्ञान हृदय में धारण किया। साथ ही साथ अर्थ सहित शुद्ध रूप से बत्तीस आगम सिद्धाँत तथा काव्य, भाषा, श्लोक आदि विविध प्रकार के प्रकरण भी सीखे। नय, निक्षेप सहित नव तत्त्व एवं षट् द्रव्यों को भली भांति जान कर वे सकल शास्त्र के ज्ञाता हुए। उन्होंने अपने आत्म-बल एवं आत्म-स्वरूप को भली भांति समझ लिया।

छप्पय

गोलेचा शुभ गोत, वसे सालरिया ग्रामे।
दयावंत दुरगेस, जनम लीधो तिह ठामे।
सेवाराम सुतात, मात सेवा सुखकारी।
छोड़ सकल को मोह, भये उत्तम ब्रह्मचारी।
भेटिया पूज कुशलेश कूं, बोध बीज समकित लही।
समत अठारे वीसे वरस, दुर्ग मुनि दीक्षा ग्रही ॥१८॥

अर्थ-सालरिया ग्राम में गोलेछा गोत्रीय लोगों का वास था, वहीं दयावान् दुर्गेश ने जन्म लिया। उनके पिता का नाम सेवाराम तथा सुखकारी माता का नाम सेवादे था। वे सबका मोह छोड़ कर उत्तम ब्रह्मचारी बन गये और कुशलेश जैसे गुरु को प्राप्त कर, बोध बीज सम्यक्त्व का लाभ किया। संवत् १८२० वर्ष में दुर्गादास जी ने मुनि दीक्षा धारण की।

विशेष :—राजस्थान में सोजत के पास सालरिया ग्राम है जहां दुर्गादास जी का जन्म हुआ था। उन्होंने बचपन में ही भीष्म पितामह की तरह ब्रह्मचर्य पालन की प्रतिज्ञा लेली और १८२० में मेवाड़ स्थित उंटाला ग्राम में कुशलाजी महाराज के पास श्रमण दीक्षा ग्रहण की।

सवैय्या छन्द

वर्ष अष्टादश सय चालीसे, महानगर नागोर मंझार।
अणसण कर्यो कुशल मुनि उत्तम, तनु तज लह्यो देव अवतार।

पूठे पूज गुमान प्रतापिक, वधती वुद्ध तणे विस्तार ।
विचरे ग्राम नगर पुर पाटण, समझाये भविजन संसार ।।१।।

अर्थ—संवत् १८४० के वर्ष महानगर नागौर में मुनि श्रेष्ठ कुशलाजी महाराज ने अनशन कर अपना शरीर छोड़ा और देव अवतार को प्राप्त किया। उनके पीछे उनके पाट पर प्रतापी पूज्य गुमानचन्द्रजी महाराज प्रतिष्ठित हुए। उन्होंने अपनी बुद्धि के विस्तार से, नगर, पुर, पाटन में विचरते हुए सांसारिक लोगों को प्रतिबोध दिया।

विशेष :—कुशलाजी ने नागौर में सं० ३४ से ४० वर्ष पर्यन्त स्थिर वास किया। उनके दस शिष्य थे—दामोजी, तेजोजी, पांचोजी, नाथोजी, गोयन्दजी, अखयराजजी, गुमानचन्द्रजी, दुर्गादासजी, टीकमजी और सूजो जी। इनमें अधिक प्रख्यात पूज्य गुमानचन्द्र जी तथा पूज्य दुर्गादास जी महाराज हुए। सूजोजी की कुछ प्राचीन हस्तलिखित प्रतियां भण्डारों में मिलती हैं। कुशलाजी के पश्चात् उनके पाट पर गुमानचन्द्रजी महाराज प्रतिष्ठित हुए।

छप्पय

शाह गंग श्रावगी, वंस निरमल बड़ जाती।
त्रिया गुलाबां तासु, वसे नागोर विख्याती।
तसु नंदन रतनेस, रहे सुखसुं तिह थानक।
पिता गंग परलोक, काल कर गए अचानक।
प्रापते चतुर्दश वर्ष में, समझ लही रतनेश सब।
सुन वान गुमान की, स्रवन सुं, जग्यो हृदय वैराग जब ।।१६।।

अर्थ—उज्ज्वल श्रावगी वंश में बडजात्या गंगाराम जी शाह नागौर में विख्यात होगये। उनकी पत्नी का नाम गुलाबबाई था। उनका पुत्र रतनेश सुख पूर्वक वहीं रहता था। अचानक उसके पिता गंगारामजी की मृत्यु हो गई। चौदह वर्ष की अवस्था में रतनेश ने अच्छी समझ पा ली थी। तत्र विराजित पूज्य गुमानचन्द्र जी महाराज की वाणी सुन कर उसके हृदय में वैराग्य–भावना जग उठी।

विशेष :—रतनचन्द जी गंगारामजी के अपने पुत्र नहीं किन्तु दत्तक पुत्र थे। उनका जन्म ढूंढार देश स्थित कुड गांव में हुआ था।

छप्पय

गुरु आगल कर जोर, कहे लें सूं मम दीक्षा।
मात न दे आदेश, पिता बड़ पे ले शिक्षा।
गुरु सुं कर आलोच, सहर हुती निसरिया।
पांच तथा दिन सात, करी भिक्षाचरी किरिया।
गुरुदेव समझ अवसर इसो, लार मेल लिखमेसकूं।
मंडोर ग्राम आंबा तले, दी दीक्षा रतनेशकूं ॥२०॥

अर्थ—वैराग्य-भाव जगने पर रतनजी ने गुरु के सम्मुख हाथ जोड़ कर कहा कि मैं दीक्षा लूंगा, पर माता मुझे आज्ञा नहीं देती है। बड़े बाप की शिक्षा और अनुमति लेकर दीक्षा ले सकता हूं। इस प्रकार गुरु जी से विचार विमर्श कर वे नागौर शहर से निकल गये और पांच-सात दिन तक भिक्षाचर्या से वृत्ति चलाई। गुरुदेव ने रतनेश की प्रबल भावना और ऐसा अवसर समझ कर पीछे लक्ष्मीचन्द्रजी महाराज को भेजा। इन्होंने मण्डोर नगर में आम्र वृक्ष के नीचे उन्हें मुनि दीक्षा की प्रतिज्ञा ग्रहण करवा दी।

विशेष:—जब रतनचन्द्रजी को अपनी माता से दीक्षा लेने की आज्ञा न मिली, तब वे अपने बड़े बाप नाथूरामजी से आज्ञा लेकर जोधपुर जाने के संकल्प से नागौर से निकल पड़े और रास्ते में भिक्षाचरी करते मण्डोर पहुंच गये। वहां श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज ने (जिन्हें पीछे से गुमानचन्द्रजी महाराज ने भेजा था) पहुंचने पर भाव दीक्षित रतनेशजी को व्यवहार दीक्षा से दीक्षित किया।

दोहा

अष्टादश अड़तालिसे, सुध पंचम वैशाख।
रतन भये मुनिवर रुचिर, लाभ सुगति अभिलाख ॥२४॥

अर्थ—वि० सं० १८४८ की वैशाख शुक्ला पंचमी को मुक्ति लाभ की अभिलाषा से रतनजी दीक्षित होकर उत्तम मुनि बन गए।

छप्पय

तिहांथी कीन विहार, नगर जोधाणे आये।
तिहां मिलिया दुरगेश, जासु सब बात सुनाये॥
सुन बोल्या दुरगेश, लार जननी तुम आसी।
इहां थी करो विहार, कलह उत्कृष्टो थासी॥
सुविचार एम मेवार दिश, विचर गए तत् खिण गुनी।
विद्या अभ्यास करवो विशुद्ध, मांड्यो रतन महा मुनी॥२१॥

अर्थ—वहां से (नव दीक्षित मुनि को साथ ले) विहार कर मुनि श्री जोधाणे (जोधपुर) पधारे। वहां दुर्गादासजी महाराज से भेंट हुई। उन्हें सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उसे सुनकर पूज्य श्री दुर्गादासजी महाराज बोले—मुने! पीछे से तुम्हारी माता आयेगी। अतः यहां से विहार कर दो अन्यथा बड़ा कलह उत्पन्न होगा। इस प्रकार दुर्गादासजी महाराज से विचार कर, वे तत्क्षण मेवाड़ की ओर विहार कर गए और वहाँ रतन महामुनि ने विशुद्ध विद्याभ्यास करना आरम्भ कर दिया।

छप्पय

कर लारो तत्काल, जननी आई जोधाणे।
विजेसिंघ महाराज, राज करता तिह ठाणे।
असवारी अवलोक, दोर फांसो गह लीधो।
पूछ विगत पृथवीस, हुकम कामेत्यां कीधो।
सिधां लिखाय मेली सही, जेतारण सोजत जठे।
मुनि गया मुलक तज, पर मुलक कुण जोवे लाभे कठे॥२२॥

अर्थ—रतनचन्द्रजी की माता भी नागौर से पीछा कर तत्काल जोधपुर आ पहुंची। उस समय वहाँ विजयसिंहजी महाराजा राज्य करते थे। संयोगवश उस दिन दरबार की सवारी निकली, जिसे देखकर वह दौड़ पड़ी और सवारी के फांसे को पकड़ लिया। महाराजा ने उससे सब हाल पूछा और अपने कर्मचारियों को हुक्म दिया और सनद ले आज्ञा पत्र लिखकर जैता-

रण, सोजत आदि परगनों में भिजवा दिये। किन्तु मुनि श्री तो मारवाड़ छोड़कर दूसरे राज्य में चले गए थे। वहाँ कौन जाये और कैसे मिले ?

छप्पय

मोह तणे वस मात, देख दूजाइ साधु ।
बोली मुख गालियां, उपजावी असमाधु ॥
गुरु गुमान पिण गया, देश मेवाड़ मंझारा ।
मिलिया गुरु सिख तठे, साधु दुरगादिक सारा ॥
चउमास तीन कीधा उठे, मालव अरु मेवाड़ में ।
इथ आय चउथ चतुमास मुनि, प्रथम कियो पीपाड़ में ॥२३॥

अर्थ—रतनचन्द्रजी के नहीं मिलने से मोहवश उनकी माता दूसरे साधुओं को देखकर मुंह से गालियां देती और असमाधि उत्पन्न करती। इस बीच गुरु गुमानचन्द्रजी म० भी विहार करते २ मेवाड़ की ओर पधारे, जहाँ दुर्गादासजी आदि सकल साधुओं के मिलने से गुरु-शिष्य का मधुर मिलन संपन्न हुआ। वहाँ मालवा और मेवाड़ में उन्होंने तीन चातुर्मास किये। इधर आकर चौथा चातुर्मास मुनि श्री ने पहले पहल पीपाड़ में किया।

छप्पय

पुन पंचम चउमास, कियो पाली मुनि नायक ।
तेहवे श्री रतनेश, भये पोते अति ज्ञायक ॥
जननी पिण जाणियो, काम गृह का सव मूकी ।
आई तुरंत चलाय, मुनि पै झगरन ढुकी ॥
रतनेश हेत उपदेश कर, समझावी नित मात कुं ।
ते कहै नगीने आवज्यो, दरस देन कुल न्यात कुं ॥२४॥

अर्थ—फिर मुनि नायक श्री गुमानचन्द्रजी ने पंचम चातुर्मास पाली में किया। उस समय तक रतनचन्द्रजीम० स्वयं अच्छे सिद्धान्त के ज्ञाता बन चुके थे। उनकी माता ने भी जब यह बात सुनी तो वह घर का सारा काम-काज छोड़कर शीघ्र ही पाली पहुंची और मुनि श्री से झगड़ने लगी।

मुनि रतनेश ने हेतु और उपदेश देकर अपनी माता को समझाया। इस पर वह गुरुदेव से बोली कि अपनी जात-बिरादरी वालों को दर्शन देने के लिए एक बार नागौर पधारें।

दोहा

मुनि नागोर पधारिया, बहुत हुवो उपकार ।
सज्जन परिजन दरस कर, हरख्या सहु नर नार ॥२५॥

अर्थ—माता की विनती मानकर, मुनि श्री रतनचंद्रजी अपने गुरु के संग नागौर पधारे—जिससे लोगों का महान् उपकार हुआ। नगर के सभी सज्जन एवं बन्धु मुनि श्री के दर्शन कर बड़े हर्षित हुए।

छप्पय

ताराचन्द गुमन के, सिख तपसी वैरागी ।
विगय त्याग पारणो, कियो छठ २ बड़भागी ॥
वरस पचासे जेह, काल कर सुरगत उपनो ।
गुरु गुमान कुं आय, दियो तिण राते सुपनो ॥
गुरुदेव आप मोटा गुनी, मम विनति चित दीजिए ।
वत्थ पात्र आहार थानक चिहुँ, आधाकर्मी न लीजिए ॥२५॥

अर्थ—पूज्य श्री गुमानचन्द्रजी म० के परम वैरागी तथा उग्र तपस्वी ताराचन्दजी नाम के एक शिष्य थे, जो बड़े भाग्यशाली थे। वे बेले बेले की तपस्या के साथ पारणा में पांच विगय का त्याग रखते थे। विक्रम संवत् १८५० में वे काल करके स्वर्गवासी हुए और उसी रात गुरु गुमानचन्द्रजी म० को स्वप्न दिया कि 'हे गुरुदेव ! आप बड़े गुणवान् हैं अतः विनती पर ध्यान दें और आधाकर्मी वस्त्र, पात्र, आहार और स्थानक का उपयोग नहीं करावें।

छप्पय

जाग मुनि परभात, भये विस्मय मन भारी ।
सकल सिखांसु चरच, नवी दीक्षा रुचधारी ॥

गण साधां प्रति कह्यो, वस्तु आधाकर्म त्यागो ।
ते बोल्या नहिं निभे, दोप लागे तो लागो ॥
सुन वचन एह टोला तणो, तोड़ आहार विचरे जुवा ।
मिल साथ चतुर्दश एकठा, हरख मुगत सांमा हुआ ॥२६॥

अर्थ—स्वप्न दर्शन के बाद प्रातः काल जागृत होने पर मुनि श्री के मन में बड़ा विस्मय हुआ । उन्होंने अपने सभी शिष्यों के साथ चर्चा करके नयी दीक्षा का विचार किया तया गण के साधुओं से आधाकर्मी वस्तु छोड़ने की बात कही । पर उन्होंने कहा कि दोप लगे तो लगे किन्तु आधाकर्म का त्याग निभने वाला नहीं है । समुदाय के साधुओं की ऐसी बात सुनकर श्री गुमानचन्दजी ने पारस्परिक आहार सम्बन्ध तोड़ लिया और अलग विचरने लगे । फिर चौदह साधु एकत्र मिलकर प्रसन्नतापूर्वक मुक्ति मार्ग के सम्मुख हुए । मुक्ति मार्ग में आगे आने वाले मुनियों के नाम इस प्रकार हैं—

छप्पय

गुरु गुमान[१] दुरगेश[२], तृतीय गोयंदमल[३] नामी ।
सूरजमल[४] लिखमेस[५], पेम[६] दोलतमल[७] स्वामी ।
रतनचन्द[८] किसनेस[९], दलीचन्द[१०] संजम सूरा ।
मोटरमल[११] अमरेस[१२], रायचन्द[१३] गुलजी[१४] रूरा ।
मुनि सकल एह उत्तम महा, वधिया सुध वैराग में ।
चौपने वर्ष दीक्षा नवी ली, वड़लूरे वाग में ॥२७॥

अर्थ—१—श्री गुमानचन्द्रजी महाराज, २—मुनि श्री दुर्गादासजी महाराज, ३—मुनि श्री गोयन्दमलजी महाराज, ४—मुनि श्री सूरजमलजी महाराज, ५—मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्रजी महाराज, ६—मुनि श्री प्रेमचन्द्रजी महाराज, ७—मुनि श्री दौलतरामजी महाराज, ८—मुनि श्री रतनचन्द्रजी महाराज, ९—मुनि श्री किशनचन्दजी महाराज, १०—मुनि श्री दलीचन्द जी महाराज, ११—मुनि श्री मोटरमलजी महाराज, १२—मुनि श्री अमरचन्दजी महाराज, १३—मुनि श्री रायचन्द्रजी महाराज, १४—मुनि श्री गुलजी महाराज ।

आचार्य श्री जयमल्ल जी महाराज के स्वर्गवास के बाद वि० सं० १८५४ में उपर्युक्त चौदह साधुओं ने बड़लू (मारवाड़) में मिलकर २१ बोलों की मर्यादा की और संयमाचार को सुदृढ़ बनाकर पुनः नयी दीक्षा ग्रहण की।

सवैय्या इकतीसा

आरम्भ सहित मोल, लियो भोग लावे भाड़े।
थानक उपासरो, सदोष ऐसो त्यागे है॥
वस्त्र पात्र सूत्र दस्ता, हिंगलू रोगान ऊन।
मोल लीवी इत्यादि, लेवे की चाय भागे है॥
धोवन उसन जल, लेवो नहीं नित पिंड।
कलाल के गृह को, उदक नहीं मांगे है॥
मिसरू प्रमुख पुट्ठा, वटका न राखे मुनि।
रेशमी रंगीली कोर, धोतियां सु आगे है॥६॥

अर्थ—इक्कीस बोलों की मर्यादा इस प्रकार है:—साधुओं को चाहिए कि वे अपने लिए आरम्भ कर बनाये हुए, खरीद किए हुए, भोग लावे रखे हुए तथा भाड़े वाले सदोष स्थानक या उपाश्रय का त्याग करें। वस्त्र, पात्र, सूत्र, दस्ता, हिंगलू, रोगन और ऊन इत्यादि मोल लाये हुए पदार्थ की चाह नहीं करें। धोवन, उष्ण जल, और आहार भी प्रतिदिन एक ही गृहस्थ के घर से नहीं लें, न कलाल के घर से पानी मांगें। मिसरू आदि से युक्त रंगीन पुट्ठा और वटका भी मुनि अपने पास नहीं रखें, न रेशमी और रंगीन कोर की धोती का ही व्यवहार करें।

सवैय्या इकतीसा

बहु मोला थिरमा धूसादि, वत्थ लेवे नाह्य,
मेण अलसेल तेल, राखे नहीं रात रा।
जीमण आरंभ जठे, सैं दिन वा दूजे दिन,
वेरण आहार मुनि, जावे न ले पातरा।

मरजादा उप्रंत वस्त्र—पात्र को न राखे लेश,
टोपसी पीयन पाणी, नेम लाल भातरा ।
करत पलेवणा दुवगत, भंडोपगरण,
आवते दिन रवि, उदय प्रभातरा ॥७॥

अर्थ—बहुमूल्य थिरमा, धूसादि वस्तु नहीं लें, और मेण अलसी का तेल आदि रात को अपने पास न रक्खें। जिस घर में जीमण का आरम्भ हो उसके यहां उस दिन या दूसरे दिन भी, आहार के लिए मुनि पात्र लेकर नहीं जायें। मर्यादा के उपरान्त वस्त्र, पात्र आदि लेशमात्र भी नहीं रक्खें। पानी पीने के लिए टोपसी भी नहीं रक्खें, न लाल की रोटी लें। दोनों समय (सूर्योदय और संध्या के समय) भण्डोपकरण की प्रतिलेखना—संमार्जन करें।

सवैया इकतीसा

चौमासे उतार, मिगसर वद एकमसूं,
इधका न रहे सुखे, करत विहार जूं ।
थानक में आय कोउ, भावक प्रचारे जाके,
गृह जाय लावे नहीं, किंचित आहार जू ।
वड़ा ने कह्यो विना, वा पूछियां विना कदापि,
साधवी कुं पानो वत्थ, देवे न लिगार जू ।
आपनो जनाय न दिरावे, किनही कूं दाम,
संवर विना न साने, पास संसार जू ॥८॥

अर्थ—चातुर्मास के उतरने पर मिगसर वद एकम से अधिक उस गांव में समाधि पूर्वक नहीं रहें, वहां से विहार कर दें। स्थानक में आकर कोई भावुक भक्त आहारादि की प्रार्थना करे तो उसके घर जाकर कुछ भी आहार नहीं लावें। बड़े संतों को कहे अथवा पूछे बिना साध्वी को शास्त्र का पन्ना, वस्त्र आदि कुछ भी न दें। किसी को अपना बताकर गृहस्थ से रुपये—पैसे नहीं दिलाना और न संवर किए बिना किसी गृहस्थ को रात में अपने यहां सोने दें।

दोहा

ए इकवीसुं बोल इम, वरते सुध विवहार ।
गण श्री पूज गुमान को, सब गण में श्रीयकार ॥ २६ ॥
अष्टादश शत अंठवने, पुर मेड़ते प्रधान ।
कातिक तिथ आठम किसन, गुन निध पूज गुमान ॥२७॥
चार पहर संथार सुं, ललित देव पद लीध ।
अल्प जनम अंतर अपि, सिव जासी हुय सिद्ध ॥२८॥

अर्थ—इस प्रकार इन इक्कीस बोल की मर्यादा से शुद्ध व्यवहार निभाते हुए पूज्य श्री गुमानचन्द्रजी का गण उस समय के सब गणों में श्रेष्ठ समझा जाने लगा। विक्रम संवत् १८५८, कार्तिक कृष्णा अष्टमी तिथि को गुणनिधि पूज्य श्री गुमानचन्द्र जी महाराज ने मेड़ता नगर में चार प्रहर का संथारा पाल कर सुन्दर देव पद प्राप्त किया, वहां से अल्प-जन्म के अन्तर से शिव पद प्राप्त कर सिद्ध होंगे।

दोहा

पाट विराजे पूज के, मुनि दुरग महाराज ।
भविक जीव तारन भनी, जे सुविशाल जहाज ॥२६॥

अर्थ—पूज्य श्री गुमानचन्द्रजी महाराज के पाट पर मुनि श्री दुर्गादास जी महाराज विराजमान हुए। वे सांसारिक जनों के तारने के लिए एक बड़े जहाज के समान थे।

विशेषः—श्री गुमानचन्द्र जी महाराज अच्छे कवि और सुन्दर लिपिकार थे। उनके द्वारा रचित "भगवान् ऋषभ देव का चरित" प्रसिद्ध है, जिसमें भगवान् के तेरह भवों का वर्णन है। उन्होंने अपने जीवन-काल में अनेक शास्त्र, ग्रन्थ, चौपाई तथा फुटकर पत्रों का आलेखन किया। उनकी लेखन कला सुन्दर, स्पष्ट एवं सुवाच्य थी। उनके द्वारा लिखी हुई कई हस्तलिखित प्रतियां अभी उपाध्याय श्री हस्तीमल जी महाराज के पास विद्यमान हैं तथा कुछ संग्रहालय में भी सुरक्षित हैं, जिनका

ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। उनके १६ शिष्य थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं :—

१—मुनि श्री वर्द्धमानजी महाराज।
२—मुनि श्री लक्ष्मीचन्द जी महाराज।
३—मुनि श्री प्रेमचन्द जी महाराज।
४—मुनि श्री दौलतरामजी महाराज।
५—मुनि श्री हीरजी महाराज।
६—मुनि श्री ताराचन्द जी महाराज।
७—मुनि श्री साहिब रामजी महाराज।
८—मुनि श्री दलीचन्दजी महाराज।
९—मुनि श्री अमरचन्दजी महाराज।
१०—मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज।
११—मुनि श्री गुलाबचन्द जी महाराज।
१२—मुनि श्री मोटो जी महाराज।
१३—मुनि श्री स्वामीदास जी महाराज।
१४—मुनि श्री रायचन्द जी महाराज।
१५—मुनि श्री मोतीचन्द जी महाराज।
१६—मुनि श्री प्रतापचन्द जी महाराज।

छप्पय

स्वयं प्रकर का साध, चलत आज्ञा अनुसारे।
प्रबल तेज परताप, विचर जिन मग विस्तारे।
चरम कियो चउमास, जोग्य स्थानक जोधाणे।
संमत अठारे सार, बरस बयांसिय ठाणे।
संथार पहर आठे सरध, क्रोधादिक परहर कुकल।
दुरगेश लह्यो पद देव को, श्रावण एकादसि शुकल ॥२८॥

अर्थ—पूज्य श्री दुर्गादास जी महाराज के अनुशासन में संत और सती वर्ग स्वयं चलने लगे। उनका तेज और प्रताप प्रबल था। उन्होंने गाँव नगरों में विचर कर जैन मार्ग का विस्तार किया। अन्तिम चातुर्मास जोधपुर नगर के योग्य स्थानक में हुआ और वहां सं० १८८२ में शारी-

रिक स्थिति क्षीण देखकर क्रोध आदि की आकुलता छोड़कर, आठ प्रहर का संथारा पूर्ण कर, श्रावण शुक्ला एकादशी को श्री दुर्गादासजी ने देव-पद प्राप्त किया।

छप्पय

तिण हिज वरस तमाम, भये चौविध संघ भेलो।
जो वण काज जहान, मंड्यो लोकन को मेलो॥
मिगसर मास मझार, सुकल तेरस दिन सखरे।
कर उछव सुखकार, उचित मुहुरत लख अखरे॥
थापिया पूज रतनेश थिर, सब गन मांहि सिरोमनि।
ओढ़ाय दीध चादर उचित, भव्य जीव तारन भनी॥२६॥

अर्थ—पूज्य दुर्गादासजी के स्वर्गवास के बाद उसी वर्ष समस्त चतुर्विध संघ एकत्र हुआ। आचार्य पद को देखने दूर २ से सारे लोक आये जिससे लोगों का मेला लग गया। और मिगसर शुक्ल तेरस का शुभ मुहूर्त देखकर सुखकारी आचार्य पद महोत्सव का आयोजन किया गया जिसमें गण शिरोमणि रतनचन्द्रजी म० को भव्य जीवों के हितार्थ आचार्य पद पर स्थापन कर आचार्य की चादर ओढ़ाई।

छप्पय

दे उत्तम उपदेश, रेस संसय नहीं राखत।
मुख अमृत सम मिष्ट, भले वाचक मृदु भाषत॥
रस उपजत सुन राग, सुष्ठु सुर गिरा सुहावे।
उन्मग वाला अटक, अवसकर मारग आवे॥
रजपूत विप्र कायथ रजू, सुन वखान वदंत सही।
तारीफ उक्त सेलन तणी, कब सगला जन री कही॥३०॥

अर्थ—पूज्य रतनचंदजी उत्तम उपदेश देकर मन में रंच भर भी संशय नहीं रखते थे। उनका मुख अमृत के समान मधुर वचन से भरा था। वे एक सुवाचक और मृदुभाषी थे, उनकी सुहानी देवोपमम शोभन वाणी सुन-

कर श्रोता के मन में रस का संचार होता था, जिससे कुमार्गगामी भी रुक कर अवश्य मार्ग पर आ जाते। राजपूत, ब्राह्मण, कायस्थ आदि सब आते और उनका व्याख्यान सुनकर युक्ति मिलाने की तारीफ करते। उन्हें सर्व श्रेष्ठ मानकर स्वयं उनकी स्तुति करते थे।

विशेष—विविध कवियों ने पूज्य रत्नचंदजी म० की स्तुति में,जो पद लिखे हैं, वे आज भी सुरक्षित हैं। उन सबका एक जगह संकलन करने से एक अच्छा सा ग्रन्थ बन सकता है। भक्त कवि सिम्भूनाथजी ने उनकी स्तुति में सर्वाधिक पदों की रचना की है।

छप्पय

गादी धर गंभीर, धीर उत्तम व्रतधारी।
पर उपगारी पुरुष, विज्ञवर उग्र विहारी॥
शीलवंत सतवंत, संत समता के सागर।
निगमागम सुध न्याय, अतुल प्रज्ञा गुन आगर॥
उद्योत करण जिनधर्म अधिक, मानस तनु धार्यो मुनि।
साक्षात जोग मुद्रा सहित, देख देख हरसे दुनी॥३१॥

अर्थ—पूर्वाचार्य की गद्दी को धारण करने वाले आचार्य रत्नचंद्रजी म० गंभीर, धीर, संयमी, परोपकारी, विशेषज्ञ, उग्र विहारी, शीलवंत, सत्यवंत, समता के सागर, निगमागम के अनुकूल न्यायी और अतुल प्रज्ञा गुण के आकर संत थे। उन्होंने जैन धर्म का विशेष उद्योतन करने के लिए मनुष्य का तन धारण किया। उनको योग मुद्रा में देखकर सांसारिक भक्त जन अत्यधिक हर्षित होते थे।

छप्पय

ब्रह्मचरज नववाड़, सुध पालत गन स्वामी।
काटे चार कषाय, करम तोरन हित कामी॥
पाला महाव्रत पंच, जूथ इन्द्रिय पण जीपे।
आराधे आचार, दून दिन दिन व्रत (ग्रत) दीपे॥
प्रवचन अष्ट रतनेश प्रभु, सुमत गुपति धारे सुचत।
पट्तीस गुने सोभत खलु, आचारज पद अति उन्नत॥३२॥

अर्थ—वे गण के स्वामी पूज्य श्री नववाड़ सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करते थे। उन्होंने कर्म बन्धन को तोड़ने के लिए चारकषायों को मन से काट दिया था। पांच महाव्रतों का पालन करते हुए पांच इन्द्रियों के यूथ-समह को जीत लिया था। साध्वाचार को आराधना करते हुए वे प्रतिदिन दुगुने देदीप्यमान हो रहे थे। वे (श्री रत्नचंद्रजी म०) अष्टविध प्रवचन माता जो पंच समिति और ३ गुप्ति रूप है—को धारण करते हुए छत्तीस गुणों से आचार्य पद पर वहुत ही योग्य रूप से सुशोभित होते थे।

छप्पय

रहो पूज रतनेश, चिरकाले तन चंगा।
हाजर सिख हमीर, सदा सोहत है संगा॥
जग में गुरु सिख जोरि, निरख भविजन जुग नेणा।
पासे चित्त प्रसन्नता, वधे सुख सुन मृदु वैना॥
सिख वृंद पूज रतनेश के, वड़ साखा जिम विस्तरो।
पदवंद विनेचंद इम पढ़े, विपुल काल मुनि विचरो॥२३॥

अर्थ—अन्त में इस पट्टावली के रचयिता विनयचन्दजी अपनी शुभ कामना प्रकट करते हुए कहते है—हे रत्नचन्द्र महाराज! आप नीरोग शरीर से चिरकाल दीर्घायु रहें। उनके संग में विनयवान् शिष्य हमीरमल जी सदा सुशोभित होते हैं। जग में उस गुरु शिष्य की जोड़ी को, अपनी दोनों आँखों से देखकर, भावुक जन चित्त में प्रसन्नता अनुभव करते और मृदु मनोहर वचन सुनकर सुख पाते हैं। पूज्य श्री रत्नचंद्रजी म० का शिष्य समुदाय वट शाखा की तरह चतुर्दिश फैले। इस प्रकार विनयचंद्र चरणों में वंदन कर कहते हैं—हे मुनि, आप दीर्घकाल तक धर्मवृद्धि करते हुए संसार में विचरते रहें।
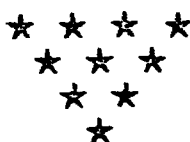
प्राचीन पट्टावली

[इस पट्टावली में सुधर्मा स्वामी से लेकर देवर्द्धि क्षमा-श्रमण तक के पट्टधर आचार्यों का परिचय देते हुए आगम-लेखन, लोंकागच्छ की उत्पति व विभिन्न गच्छ-भेदों का वर्णन दिया गया है। तदनन्तर श्रीलवजी, धरमसी और सोमजी की पारस्परिक चर्चा-वार्ता का उल्लेख करते हुए सर्व श्री अमीपालजी, श्रीपालजी, प्रेमजी, हरजी, जीवोजी, लालचन्दजी, हरिदासजी, गोधोजी, फरसरामजी, गिरधरजी, आशाकचन्दजी और काहनजी का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है।]

हिवइ पाटावली

ॐ श्री जेसलमेर ना भंडार माहिला पुस्तक कढावि जोया तिणां माहि इसी विगत निषलि। समण भगवंत श्री महावीर देव न वांदि नै नमसकार करि न श्रुधर्म इंद्र हात जोडि नै पुछौ—अहो भगवंत तुमारि जनम रास उपर भसम ग्रह बठों छै। तेहनि २ दोय हजार वरष नि थित छै। तिवार पछ श्री भगवंत बोल्या—हे सकेंद्र भसम ग्रह नै प्रतापै समण निग्रंथनि तथा चतुर्विध सिघनि उद २ पुजा न हुवै। इंद्र कहै—स्वामि १ घडि आगि पाछि करो। भगवंत कह य—वात हूइ, हूव, होसि नहि। भगवंत कह २ दोय हजार वरस गया भसम ग्रह उतरचां साध साधवि निग्रथनि उदे २ पुजा होसैं।

चोथै आर थाकता ८९ पषवाडा। एतल तिन वरस साढा आठ महिना रह एतर पावापुरि नगरिने विष काति बद १५ अमावसनि रात भगवंत श्री माहावीर मोक्ष पुहुता। तिण रात्रे १८ रा देसना राजा पोसा

किधा। तिण रात्रे गौतम स्वामि न केवल ग्यांन उपनो। ९२ बाणव बरस नो आउषो। ५० वरस घरहवास। ३० बरस छदमस्त। १२ बरस केवल प्रजाय पालि एवं सर्व ९२ वरष नो। भगवंत पछ १२ वरषें मोक्ष पहुंता। बिजे पाटे श्री सुधर्म स्वामि हूवा। ५० बरष घरहबास। ४२ वरष छदमसत। ८ वरष केवल प्रजाय पालि भगवंत पछ २० वरषें मोक्ष पहुता। तिज पाट जंबु सामीनो आउषो ८० बरष नो। ते मधे १६ बरष गरहबास। २० वरष छदमसत। ४४ केवल प्र०। भगवंत पछै ६४ वर्षे मोक्ष पहुंता। जंबु सामी मोक्ष पहुंता पछ १० दस वोल वीछेद गया। केवल ग्यांन १, मन पजव २, प्रमअवद ३, आहारिक लबध ४, जिनकलपी ५, पुलाक लबध ६, षपक सेण ७, जथाख्यात ८, परिहार बिसूध ९, सूक्षम संपराय १०। एवं १० विछेद गया। भगवंत पछै २७ पाट विबहार सुध हुवा ते कह छै। तिन तो पहलि लिषा छै॥

चोथे पाटें प्रभवसामी ८५ वरष नो आउषो। ३० बरषें गरहबास। ३२ वरस गुरां साथे वीचरयां २३ बरष आचार्जपण बिचरयां। भगबंत पछे ७० वर्षे देवलोके। पांचम पाटें सिजंभवसांभी। ६२ बरष नो आउषो। २८ वरष गरहवासें। ११ वरष गूरू पासेर। २३ वरष आचर्ज थइ वीचरया। भगवंत पछे ९० वरषे देवलोके। छठें पाट जसोभद्र सांमी। ९६ वरष नो आउषो। २२ ग्रहवास। २४ वरष गूरू पासें। ५० वरषे आचार्ज। भगवंत पछ १३८ वर्षे देवलोके। सातम पाटे संभुत विजय सामी। ९० वरष नो आउषो। ४२ बरष ग्रहवास। ४० बरस गूरू पासे। ८ वरष आचार्ज पदवि। भगवंत पिछै १५६ वर्षे देवलोके। आठम पाट भद्रबाहु सामी। ७६ वरष नो आउषो। ४५ वरष ग्रहवास। १७ वरष गूरू पासे। १४ वरष आचार्ज। भगवंत पछें १७० वर्षे देवलोके। नवम पाटें थूलभद्र सामी। ९९ वरष नो आउषो। ३० वरष ग्रहवास। २४ गूरू पासे। ४५ आ०। भगवंत पछें २१५ वर्षे देवलोके। दसम पाटे आर्जगीरी सामी। १०० वरष नो आउषो। ३० ग्रहवास। ४० वर्ष गूरू पासे। ३० वरष आचार्ज पदवि। भगवंत पछै २४५ वर्षे देवलोके।

द्वितिक दसम पाटें वहुल सामी। ३५ वरषे प्रवरत्यां। भगवंत पछ २८० वर्षे देवलोके। त्रीतीय दसम पाटें सुहसति आचार्ज जांणवा। इग्यारज पाटें सामंद्र नाम आचार्ज। ते ५२ वरस परवरत्यां। द्वितिक इग्यारम पाटें सुयडिवुधि जांणवा। वारमै पाटे श्री संढिल आचार्ज। ते ४४ वरष परव्रत्या। द्वितिक वारम पाट इद्रदिन सामी। जांणवा। तेरम पाट सुमूद्र नामे आचार्ज हूवा। ते ३० वरष परव्रत्यां। द्वितिक तेरम पाट आर्जदिन सामी जांणवा। चवदम पाट श्री मंगू आचार्ज ते ४८ वरषें प्रव्रत्यां। द्वितिक चवदम पाटे श्री वय: सामी जांणवा। पनरम पाट श्री वइर सामी ते ५४ वरस प्रव्रत्या। द्वितीक पनरम पाटें वजरसांमी जांणवा। सोलम पाट नंदगूपत आचार्ज ते ८३ वरष प्रव्रत्था। द्वितिक सोलम पाट आर्जरोह सामी जांणवा। सतरम पाट वयरसांमी आचार्ज ते ६३ वरस प्रव्रत्या। द्वितिक सतरम पाट पुसगीरि जांणग्रा। आठारम पाट आरजरिषि आचार्ज ते ३४ वरष प्रव्रत्यां। द्वितिक अठारम पाट पुसमित्र तथा फगूमित्र जांणवा। अगूणविसम पाट नंदिलपमण आचार्ज ते ६० वरस प्रव्रत्यां। द्वितिक उगणीसम पाट धरणगीरि सामी जांणवा। विसम पाट नंदषेण आचार्ज ते ६ बरस प्रव्रत्यां। द्वितीक विसम पाट सिवभूति सांमी जांणवा।

इकविसग पाट नागहसति आचार्ज तें ३४ वरष प्रव्रत्या। द्वितिक इकबिसम पाट आर्ज भद्रसामी जांणवा। वाविसम पाट रेवति नषत्र आचार्ज ते २७ वरष प्रव्र.या। द्वितिक वाविसम पाट आर्ज नषत्र जांणवा। तेविसम पाट दीव्रग नामे आचार्ज ते १२ वरस प्रव्रत्या। द्वितिक तेविसम पाट आर्ज रषित सांमी जांणवा। चोइविसम पाट षंदिल आचार्ज ते ५५ वरष प्रव्रत्या। द्वितिक चोविसम पाट नागसांमी जांणवा। पचविसम पाट पमासमण आचार्ज ते ६ बरस प्रव्रत्या। द्वितिक पचविसम पाट हिलविसनू सांमी जांणवा। छविसम पाट

नागजन आचार्ज ते २७ वरस प्रव्रत्या। द्वितिद छविसम पाट सढलसामी जांणवा। भगवंत पछ ९७५ वरषे देवलोके। सताविसम पाट देवढि पमासमण हुवा। ते भगवंत पछ ९७६ वरषे जांणवा। १८ वरष आचारज पदवि थया। तेहकन पुर्वा रो ग्यांन होतो ते मुढइ ग्यांन छो। तद गाथा। वलहिपुरंमि नयरे। देवढिय मुह समणा। संघेण आगम लिहा। नवसय असिये विरा ॥१॥

देवढि षमासमण एकदा प्रसताव सूंठ नो गांठियो कांन मध धरचो हूंतो ते बिसर गया। काल अति क्रम्यो पछ संभालियो। तिवार जाण्यो बूध हिण पडि। सूत्र विसर जासि। तिणा सू सूत्र लिषना सूरू किया। ९८० मा वरष थी लेइ ९९३ वरष ताइ आप लिष्या, उंराकने सू लिषाव्यां। पछ ९३ तथा ९४ मै काल किधो। ए सताविस पाट सुध आचार विवहार जांणवा।

वलि भगवति सतक २० मे उदेसे ८ मे भगवंत न गोतम सांमि पुछा किनी—देवाणूपिया! तुमारो तिर्थ केतला काल चालसि। हे गोतम! मांहांरो तिरथ २१००० हजार वरष लग चालसि। वले गोतम सांमी पुछयो—अहो देवाणेपीया! पूर्ब नो ग्यांन केतलें काल लगे चालसि। अहो गोतमं! १ हजार वरस रहसी कहेए॥ भगवंत पछ १२ वरष पछै गोतम मोक्ष। भग। पछ। २० वर्ष सुधर्म मोक्ष। भग। पछ। ६४ वर्षे जम्बू मोष। भग। पछ ८० वरषे प्रभवदेव देवदेलोके। भग। पछ। १७० वरषे भद्रबाहू हूवा। भग। पछ २१४ वरषे अवक्त-वादि तिजौ नीनव हूवो। तेहनदेव नी संका पडि। भग। पछ २१५ वरषे थूलभद्र हूवा। भग। पछै २२० वरषें सून्यवादि षिणेकवादि हूवा। भग। पछ २२८ व्ररषें क्रियावादि हुवो। ५ नीनव एक समै दोय क्रिया मांति। भग। पछ ३३५ वरषें प्रथम कालका आचार्ज हुआ। भग। पछ ४५२ वरषें कालकाचार्य सरसति बहिन नै काजै ग्रधभसेन राजा संघातें संग्राम किधो। भग। पछ ४७० वरषें विक्रमादित राजा जिन-मारगी हुवो। वरणा-बरणी ठहराइ। भग। पछै ५४४ वरषे छठो निनव निर्जीव नो थाप कहूवो। भग। पछ ५८४ वरषे बेरसामी हुवा। भग। पछ ५८४ वरषे गोष्टमालि सातमो निनव हुवो। तिण क्रम वंध जिम छै। तिम न मांन्यो।

ए मांहि विजो, तिजो, चोथो, पांचमो मिछादुकडं दिनो। प्रथम, छट्ठो, सातमो एणे न दिधो। ए सात ७ निनव जांणवां। भग। पछ। ६०९ वरषे साहमल तिण दिगंबर मत किधो। ए ८ मो नीनव जांणवा। गुरूवादिक पछे वडि दिधी सो वांधी राषी। पछ मूपती किनी। एक महपती साहमल न दिधी। गुसो षाइ न कपडो छोडो उध। कोइ तो असि कह। भग। पछ ६२० वरषे ४ सापा हुइ। तेहनो विसतार कह छै।

कोइ कह ९८० वरषे पछ हुई १२ वरसी दूकाल पड्यो। तिण करि अंन मिलवो दोहीलो हूवो। तिवार घणा साध आचारि हूंता ते संथारो करि देवलोग पुंहता। श्री विर निरवांणं त आठ पाट लग चोवद पुरव रहंए जावत। १००० वरस पाछ पुरवनो ग्यांन विछेद गयो। जग माहि विजो अंधारो हूवो। ते पछ वारा कालि मधे केतलायक साधू कायर हुवा थका लिंगधारि भिष्टाचारि रह्या। ते कंदमूल फूल फल पानडादिक षाइ रह्या। दिक्षण दिसम बोधमति कान फडावि, दांडो साहि न चाल छै। विन कांन फाड्यो देष तो कूटि मारइ। दिसण दीसमै सुभक्ष जा[illegible]ी नै लिंगधारि कूमत केलवि। दिसण दिसमै गया। तिहा वोधंमति नो[illegible] राजा प्रतिवोध्यो। जैन नि प्रतिमा सथापि। कांन फडावि, दांडो साहि[illegible] मालवा लागा। पाछै १ साहूकार बहु रिंध नो घणो। वहु परिवार नो[illegible] घणो। घणा नै देइ नै षाय। तिवा अन्न षूटो। षावणहारा घणा। [illegible] द्रव्य साटै अन्न मिलै नहि। षावतां २ छेहलै अवसर अन्यें अल्प र[illegible]हेए। सेठ विचार्यो-सरम रहति दिसै नहि। सत्री पीण वोलि—गरमै म[illegible]ाप छै। तिवार सेठ कह्यो—धूंण घ चूंण हूवतो कांम चलावो। ते कहै—[illegible] चालै नहि। थोड़ो छतो सोहि न राव करो। ते मधे विष गोलि नै [illegible]स्यां। इसो वीचार करि नै असत्रि विष वांटै छै।

एतला माहि लिंग धारि साधू नै बेस गोचरि आव्यां। [illegible]तवार सेठ कहै—थोडिसि राबडि एहनै वहिरावो। सेठ न उदास देषी नै पुछ[illegible]चो—आज चिंता किय। सेठ सरब वात कही। ते वात सूणी न साधु कह[illegible]ऐ—हु गुरू कनै जांउ। तेतलै राब म विष घालो मति। जद गुरु कनै जा[illegible] सर्व वात कहि। गुरु सूणी नै सेठ समपै आव्या। सेठ वंदना करि कहेए[illegible] सरब नो मरवो दिस छै। गुरु कहै—सर्ब मरतां नै उबारी। यतो सूं आप[illegible]। तिवार सेठ कह—मांगो ते दिजय। तिंवार गुरु कहै—तुमारै वेटा घणा [illegible] ते माहि थी ४ आपिय। सेठ कहै—दिधा। तिवारै गुरु कहै—एम करो। दोहरा

सोहरा ७ दीहाडा काढो । आज पछ ७ दीन न धाननि जाहाज आवसी । सुकाल होसि । सेठ प्रमाण किधि । सर्व वात मीलि । लोक सुषीया थया । ४ चेला पड्या । प्रविण भया । चारू चेला च्यार मत न्यारा २ थाप्यां । वार वरसि दूकाल उतर्या । सुकाल थयो । तिवारै लिगधारि आपण देस गाम नगर आंव्या । आपं आपणा श्रावग आगले इम कहऐ—भगवंत मोष पहुंता । ते माट. भगवंत नि प्रतिमा करावो । जिम आपण न भगवंत सांभरइ ते मांट घणा लाभ नो कार्ण थासै । ते श्रावग लिंगधारि नो उपदेस सांभलिनइ चेइताला देहरा उपसरा सहित इकरव्या तथा लिंगधारि चइ-ताला देहरानि पुजा करावि । तिंहा प्रतिमा नि प्रतिष्टता करावी । कनी २ प्रतमा थापी । देहरा केराव्या ना फल नफा देषाड्या । पोतानि मत कल्पनाय नवो २ जोडां किनि ।

गाथा

जिण भवण स अठा भार वहंति जे गूणा ।

ते गूण मरिउंणं । वीयंग छंति अमर भवणायं ॥१॥

इत्यादिक अनेक प्रकारै हिंसा धर्म नै विष गाढा बंधाणा चले प्रंपाय केतलाएक जैनी. राजा हूंता तेहनै लिंगधारि प्रतांमानि गाढि आसता गढ मै गालि हंसाधर्म पुरूप्यो । धर्म नै कारण हिंसा करतो माहा नफो निपजै तथा भगवंत ना देहरा न विषै प्रतमानि प्रतिष्टता करवि, नवंगि पुजा कर तेहना नफा नो पार नथि । पछ लिंगधारि नो उपदेस श्रावग जैनि राजा संभालि नै गांम, नगर, डूंगर, परवत, पाहाड, सेत्रूंजो, गिरनारादिक परवत नै विष ठामे २ जायगां २ जेइन ना देहरा कराव्यां । अंसूयादिक देस नै विषै उजलां आरास पांषांणनि षांन छै । इहांथि कारिगर मोकलि नैं मूरति कोरि मगावी । पछै वांहण ना वांहाण भर्या आववा लागा । तिंवारै लिंगधारि श्रावगां नै उपदेस दिनो जे देस पांच प्रभूनि प्रतिष्टता कराबि न मनष जनम सफल करो । विन प्रष्टता कराव्यां श्रावगस्यूं पछ सरावगां लिंगधारि नो उपदेस सांभलि नै जगन तो एके, वी, त्रिण, चार, पांच, दस, पचास, सो, पांचय, हजार, बे हजार, पांच हजार, दस हजार, जेहन जेतलि संपति जेहन तेतली एकक देहरा न विषै लेइन लगावा मांड्यां । रिषभदेव आददे इन चोइस तिरथकरना नाम दिधा । प्रतष्टा करावि । जग, होम, जात्रा, पुजामांनि किधी । लाषा गांम द्रव्य षरच्यां । तिवारै

पछै लिंगधारि श्रावकां प्रतै परूपणा करिजे आबु, गिरनार, अष्टापदादिक नि संघ काढि नै जात्रा जावानो माहा नफो छै।

गाहा

संघाइयाण कजे चूलिजा चकवटि मविजि ए ति।
एल विइ जूं यो लधि पुलाउमूणि यवो ॥१॥
संघाइयाण कजे चूनिजा चकवटि मवि।
न चूरि जइ मूणी यवो ॥ तेहुंति अणंत संसारे ॥२॥
जयथि कर फरिसां अंतरियं कारणें वि उपने।
अरहादि करे जस यं। तं गथं मूल गृमं ॥३॥

इत्यादिक अनेक प्रकारइ पोतानै छांदै। मत कलपनाइ नवी जोड करि न हुंसा रूप धर्म दिषाड्यो। तिण लिंग धारि सिधांत ना पांना हुता ते भंडार म राख्यां ते पछ लिंगधारिय पोता २ नै छांद नवि जोड करि। प्रकरण, रास, तावन, सजाय, प्रमजोत, असतूति, प्राकृत काव्यें छंद, सिलोक, गाथा, सेंतरूंजा माहातम संतोध इतिदिक पोतानि मत कलपनाइ हुंस्या धरम परूप्यो तथा गुर्रानि पूजा करवि उई। पोथी पुजवी गोतम पडगो पुरबे। षमासमणे बहरबो। गुरु नो सांमेलो करवो गुरुनो समाइउं करवो। गाजत वाजत इ चोवटा सणगारि नगर साहि गांम मांहि लेइ आवइ। पाट पाथरणा पथराबो संघ पुजा करावि। संमछरि पांचम रि चोथ करि। पाषी चवदसे करि। चोमासो चवदसे थाप्यो। इत्यादिक गणा बोल सूत्र विरुध परूपणा करि। इम रूढ मारग चालता केतलो काल अतीक्रमी गयो। हिवै भगवंत श्री माहाविर देव मूगते पहूंता पछै ४७० वरस लगें भगवंत नो साको चाल्यो। तिवार पछै बिर विक्रमादित नो साको चाल्यो।

समत १५ रा स ३१ सो आव्यो। तिवार भसमग्रह नी बे हजार बरस नी थीत पुरि थइ। तिवार ते लिंगधारि आपणा गछ ना समुदाय बांधि आपणा श्रावक श्राविका किधा। ते भेषधारि मन म विचार किनो ते पुसतक भंडार मांहि छ। तेहनि संभाल जोइया। ते पानां देषी न वाहिर काढ ए जोया ते तो पाना उदेहि षांदा। तिवार विचारयो जे

पाना उपर थी—विजा पांना लिषाय तो बारू कहतां भला। तिवार लूको महतो श्रावककार कूंन हूंतो ते एकदा प्रसतावें लिंगधारि पासे उपासर आयो हूंतो। तिवार लिंगधारिय कह्यो। साहजि एक जिन-मारग नो कांम छै। ते कह्यो—सूं छै। तिवार ते लिंगधारि बोल्या—सिधांत ना पांना उदेही षादा छ ते अमहेन नवा लिषी आपो तो बारूं तुमहेंन घणो किलांण नो कारण छै। तुमहें घणा उपर्धरि पुरष छो। घणो लाभ थासि। इम कह्यां थकां लूकें महेतो प्रमांण किनो।

तिवार ते लिंगधारिय एक दसबिकाल ना पांना आप्यां। ते लूको महतो वांचि म एहवो विचार कीधो। उ ते तिरथकर नो मारग तो ए दसविकालक सूत्र माहि मोष नो मारग कहेए छइ ते माटै हिवडा कहि तो मांन नहि। ते माट दसविकालक नि दोवडी पडत उतारिनै जोयो। तर प्रथम अधे न दया धरम, तप, संजम, धरम कह्यो छै। अनै साधू ५२ अनाचिरण, ४२ दोष टालणहार कहए। त्रिविधे २ छ काय ना पालणाहार कहए। १८ बोल मोंहिलो १ बोल सेंवतो बोल थकी भ्रष्ट कहिजे वले निरवद वचन बोलवो। गूणवंत गूरू नो विनो करवो कहए। ते वांचि न अति हरख्यो। मन मांहि विचारयो—भगवंत ना वचन जोतां तो भेष धारि मोषनो पंथ दया धरम आचार सादनो ढांकि न हंसा धरम नि परूपण करै छ। पोत मोकला पडया छै। ते माटै हीवडां मांनसि नहि। तिवारे पछं ते लूक मूहतो पोता पोता नैं। घरे सूत्र सिधांतनि परूपणां मांडि। तिवार घणा जिव भव जिव सांभलवा जावा लागा। घणा लोक नें दया धरम रुचवा लागो।

तिण काल अरहटवाडा ना वाणीया ते संघ काढिने सेजवाला लेइ न जात्रा निकलांहूंता तेहन वाट जातां मावट हूइ। तिवार तेहज गांम माहि लूको मूहतो वस छै। दया धरमनि बात परुपणा कर छै। ते गांम मध्ये संघ नो पडाव थयो। तिवार पछ संघविय षवर पडी। लूको मुहतो सिधांत वांच छ। ते अपूर्व वांणी छै। एहवो जांणी न संघवि घणा २ लोक संगातै संभलवा आव्यां। तिवार लूको मूहता पास दया धरम, साधू श्रावग नो धरम सांभलि न संघवि ना मन मांहि दया धरम रुच्यो। तिवार केतला एक दिन संभलवा गया। तिवार संघ माहि संघवि ना गुरु हूता। तेण जांण्यो जो लूका मूहता पास संघवि संभला जाय छै। ते माट भेषधारि संघवि न कहेए। जे संघ जूडावो। लोक षरचि तुट हुवै छै। तिवार

संघवि बोल्या—वांट माहि गाजविज मेह का जोग सु निलण फूलण बेइन्द्रि, तेइंद्रि, इत्यादि अजंयणा घणी छै। तिवार संघवि ना गुरु बोल्या—सोहेजि धरम ना काम मांहि हसा गिणचा नहि। तिवार संघवि विचारचो जे लूका मूहता कन सांभल्या हूंता ते भेषधारि अणाचारि छ कार्यान अणूकंपा रहित छै। तेहवा दिठा तर जबाव दिनो। तिवार वेषधारि जवि रिसावि न पाछा बली गया। ते सिंघवि न सिधांत सांभलतां बइराग उपनो।

तिण पैतालिस जणासु समत १५ रा स ३१ से समंछरे संघवि सहित ४५ इ सुइ संजम लिनो। तेहना नांम सरवोजि ॥१॥ भाणूजि ॥२॥ जगमालजि नूणजि प्रभूष ४५ जांणवा। सूध दया धरम परुपणा किधि। तिवारै घणा भव जिव दया धरम मै समजवा लागा। घणा भव जिव समजि नै दया धरम आदरचो। तिवारे ते भेपधारि धेष भरांणा थका लूंका लूंका एहवो नांम दिधो। पछै भेषधारिय विचारचो—लोक घणा लूंका थइ जासि तो आपणी महिमा गट जासि। इम जाणी न क्रिया उधार किनो। तपसा करि न पारण राष घोलि न पीव। तेहना नांम समत १५ रा स ३२ से तपां क्रिया उधार किनो। ते आंणंद विमलसूरि हिस्यां धरम परूपि। घणा जिवां ने सिंकित किधा। तिणथि वले तपा घणा थया। समत् १६०२ आंचलियां क्रिया उधार किधो। समत् १६०५ षरतरा क्रिया उधार किनो। इम घणा निषलि न प्रतमानि गाढि परुपणा करि। तपसा करि न हंसा धरम परुप्यो। अनेक कष्ट आतापना करवा लागा। तपीया २ एहवो नांम प्रसिध थयो।

पछ लूका हूंता ते सूं सताहूंयां। तिवारै ते जतियां ना श्रावग साध माहापुरषां नै उपसर्ग दिधा ते पीण माहापुरषां षम्यां। तिवार नगर न विष अंसूरा ना राजा हूया। मलेछ अनारज दीस छे। तिणे प्रतमा जिन-मतनि जोइ न हात पग भांगि नांष्यां। पछ जिहां २ अंसुर ना राजा हूंता तिहां २ प्रतमा नें धरति मांहै उतारि। तिवार रुपो साहा पाटण नो वासि। तेह न बषांण सुंणव करि न वइराग उपनो। संजम लेइ निषल्यां। ते रूपरिषी थया। ते लूंकांनो पहिलो पाट ॥१॥

तिवार पछ सूरत ना वासि जिवो साहा संसार पक्ष म पुन प्रकृति घणी हूंति। तिणे जिवो साहा घणो धन छोड रूपरिष पासे संजम लिये। ते रूप रिष ना सिष थया। ते जिव रिष बाज्यां। एवे पाट ॥२॥ लूंका

ना सूध जांणीय छइ। कोइ वांचनांतर। इमभि कह छइ। प्रथम पाट तो जाणसिजि ॥१॥ तत् पाट भदाजि ॥२॥ नूंणजी ॥३॥ भिमजी ॥४॥ जगमालजि ॥५॥ सरवोजि ॥६॥ रूपरिषजि ॥७॥ जिव रिषजि ॥८॥ इत्यादिक आठ पाट थापना हूइ। आठ पाट तांइ विवहार सूध जांणीय छै।

तिवार पछ लूंका संथांनक दोष सेववा लागा। आहार न बिनति सूं जावा लागा। वसतर पातर नी मरजादा लोपि न बावरवा लागा। जोतकनि मत भाषवा लागा। आचार गोचार मै ढिला पड्यां। तिवार पंछै समत् १७०५ नो आथो कोइ कहै समत् १७०६ नो कि साल आइ। तिवारे सूरत नगर ना वासि वोहोरो विरजि साहा श्रीमाल लूका लोकांम कोडिधज कहावता हूंता। तेहनि बेटि फूलबाइ तेहनो बेटो लहूजि षोले आयो। पालवा न लिनो छै। तेहनि तिव्र बूध जाणी न लूंकां न उपाश्र भणवा मेल्यो। तेह लहूजि न सिद्धंत भणावा लागा। तिवारै लहूंजि घणा सिद्धंत भणता थकां वेइराष उपनो। लहूजि नो चित उदास देष्यो। वेइरागवंत जांणी न सिद्धांत भणावो बंध किधो। तिवार लहूजि साहा विचारयो– ते जति सेति ना घणा बि रिषी वज्रांगजि पासै आइ न इम कहऐ। सांमी अमहन भणावो क्यूं नी। तिवार रिषी वज्रांग कह्यो— तेहने भणाव पिण तुमनै बेइराग उपजतो। दिषां अमारे पासे लेबि। एहबो करार करो तो भणावां। तिवार लहूजि साहा कहऐ—सांमी दिक्षा लेसूं तो आपके पासे लेसूं। इम करार करि न भणावा लागा। सरव सिधंत नि वांचणी दिधी। जूगत सहीत अरथ भणाव्यां। लहूजि साहा सिधांत माहि प्रविण हूवा। जवाव साल म षवरदार हूवा।

तिवारै फूलबाइ लूंका ना जति न पास आइ न मांन सहित घणो दरव्यें दिनो। तिवार साधू नो मारग नो आचार गोचार मालम पडवा माड्यों। पछ लहूंजि साहा न वइराग उपनो। साध नो आचार गोचार मालम पडवा लागि। हिवडा तो साधू मरजादा लोपी बावर छै। वसतर, पातर, जोतिकनि मत भाष छै। वसतर, पातर, पोथी विचि नै पइसो, टको राष छइ। तिवारै बिरजि वोहारा पासे संजम लेवानि आगन्यां मांग वानो विचार किनो। तिवार लहूजि बिचार किनो—जे आचार गोचार

तपादिक करि साधू पहीलां तो सूद होता। तेहवा हिवडां तो नथी। ते माटे लहूंजि साहा सिद्धांत उपर उपजोग दिधो। जे साधू न आचार्य, उपाय ध्यानि, आग्यांय प्रव्रत्या जोइये। अनइ साधवी नै आचार्ज नी, उपाधायनि, गुरुं नि ए त्रनंनी आग्याय प्रव्रति जोइय। ते माट साधू वरति होय जिहां जाउ। षवर मंगांउ। ए सूत्रनि रित छइ। षंभाएत देस, अमंदावाद, पाटण, व्राहानपुर, सोरठ, मेवाड़, मारवाड़, दिल्लि, आगरो, लाहोर, संगते इत्यादिक षवर मंगावि। तिहां गांम नगर न विषै कोइ साधपणा नो नांमै जगन्यें त्रिद्वि एक ३।२।१ कोइ धरावतो न थी। ते माटे जांणै सगला एक जणी जायाइ साथ या आचार गोचार सू ढिला पड्यां मोकला थया। तिवार लहूंजि साहा जिण अवसर विरजि वोहरा नैं घणी हेत जूगत सूं परुपणा करि नै आगन्यां आसरि। हीरदा मैं गालि। तिवार विरजि वोहोरो बोल्यो—तुमहे लूंकां ना गछ मांहि संजम लेबो तो आग्यां आपुं।

तिवारे लहूजि साहा विचारयो—जे हीवडां तो अवसर इसोइ दिस छै। कारण सूद साधुनि षवर लागि नही जिसूं अवसर। एहेवोज छै। इम विचार न ऋषि बज्रांग पासें आव्या। आवि न इम कहै—सांमि मूज नै दिख्यां नो भाव छै। ते माटे हूं दिष्या लेउ तो माहार तुमार वे वरष नो करार करो।· तेहनि चिट्ठि लिषावि लिनि। तिवार लूंका ना जति विचारयो—जे अमा मै आव्या। पछै किहां जासि। इम करार करि न पछै पाछा विरजि बोहरा पास आव्यां। उछव सहित मोट मंडांण करि लहूजि साहा ऋिषी वज्रांग पासे दिष्या लिनि। ऋिषी लहूंजि थया। तिवारै पछै ऋष लहूंजि वज्रांग पासे सिद्धात नां घणा अरथ भण्यां। पंडत थया। तिवार पोता न गुरुं नै २ दोय वरष पछ एकांत पुछेए।

गाथा—दस अट्ठयठांणायं॥ इत्यादिक वे २ गाथा कहि साधू नो आचार तो ए दिस छै। जिण रित साधू नो आचार कहऐ छै। तिम हिवडां पाल छ क नहि। तिवार ऋषि वज्रांग वोल्यां—जे आज आरो पंचमो छै। जेहवो पलै तेहवो पालीय। तिवार ऋषि लहूजि वोल ७५ नो सिधांत मांहि थी काढि देषाड्यां। आपणा गछनि समाचारि माहि आचार गोचार नो फेरफार गणो छै। तिवारै रिषी वजरांग जि न कहि—भगवंत नो मारग तो २१ हजार वरष ताइ चालसि। ते माटे हिवडा इसूं कहो छो। तुमे लूकां नो गछ वोसीरावो परो। तुमे हमारा गुरुं। हमे तुमारा चेला। तिवार वजरांगजि कहइ—अमहे गछ छूट नहि। तिवारे लहूंजि रिष लूकां

नो गछ वोसराइ निकल्या। तहनै साथे रिष थोभणजि ।।१।। रिष सषी-योजी ।।२।। ए त्रतिन संगाते लूकानो गछ वोसरावि न निकल्या। तिवारे तिनूइ विहार सूरतबंदर थी करि नै षंभायत बंदर आव्या। पिठ न दर-वाजक पासेनि दूकान उतरचां।

तिहां कपासिनो सेठीयो सांभलवा आयो। तिवार दसविकालक ना १० मा भिखू अघेननि गाथा कही। ते सांभलि न वइराग उपनो। धन छ साधूनो अवतार। यहवा साधू सांमीजि आज दिन होसि। तिवारै लहूंजि रिष वोल्या—सेठजि एहवा साधू पहलि हूंतां ते तो मोकला थया ढिला पडचा। मोह पासे वंधांणा। ते माटे मांहरो मनोरथ वरत छै। सो सेठजि तुमारो साज हूं वतो। एहवो साधूपणो हूं इंगिकार करूं। तिवारे कपासिनो सेठीयो वोल्यो—सांमि अमेह थकि निपजसे ते माहि पाछि नही देउ। ते सांभल न रिष लहूजि जंगल माहि गया। तिहां पुरव सांहमा उभा रही। वे हात जोडि अरिहंत सिध न नमसकार करिं पंच माहावरत नो उचार किनो। तिन साध फेरि ती संजम लिनो। चारि तर अंगिकार किधो। पछ नारसर तलाव ना मारग मांहि पाणी नि परच पालि हूंति तिहां आग्यां मांगि उतरचा।

पछ घणा वाइ भाया सहिर ना साधूनि षबर सांभलि नै धरम कथा संभलवा न आया। तिहां वाइयक पांणी नो विडा सहित उभि थकि सांभले। तिहां जिन मारग मां समजवा लागा। तिवारै लहूंजि अणगार नि वाइ भाइ घणी प्रसंस्या करइ। ते वात विरजि पासे चालि गइ। सांभलि नइ कोपानल हूंया। मांहरा गछ माहि लहुजि भेद पडचो। ते माटे सूरत थकि षंभायत ना हाकम उपर कागल लिष्यो। जे लहूंजि सेवडे कूं षंभायत सें निकाल देणा। पछ हाकम लहूजि अणगार न तेडाव्या। तिहां वठा सजाय, ध्यान करवा लागा। अनइ जिव तूज न अपुर्व लाभ नो ठिकांणो आव्यो छइ। तिहां वठा थकां एक वे त्रिन उपवास हुंवा।

तिवार दासि जावता आवतां देषीनइ वेगम न अरज करि—एक सेवडे कूं नवाव नइ रोका हइ। सारा दिन पढंए करता है। षाता—पिता नही। ते दासी नी वात सांभलि न वेगम कोपाइमान हुइ। पछ नवाव न वे हात जोडि न अरज करि—अब तुमारा षांणा षराव हूवा। हजरथ न पूदाहि फकिरा के उपर नजर गालि उंन क्या तुमारि तकसिर किवि

सों नै स परि फकिरू कूं रोक छोडा है। दो दिन तिण दिन होय गया। षाता-पीता नहि। सारा दिन पडयांइ करता है। साहिव सूं ध्यांन लगाता है। अव तुमारा षांनां षराव हूवा। अछां चो हे तो तुमनै फकिरा कि वे दवा घालि अन सुष साहिवि दोलत चाहे तो सतावि छोड दों। एहवो वचन सांभलि न हाकम दलगिर हूवो। पछै हाकम आविनै लहुजि अणगार न पगे लागो—हे देवानू साहिव मेरि तकसिर नही। मूज कूं सेठजि का कहिन आव्या है। मेरी तकसिर माफ किज्यों। तुम दुसरि ठांमे जाउं। मो साहिव का गूलाम हूं। दुवा दीजियो। इम कहि न हाकम वे हाकम वे हात जोडि न पगे लागो।

पछ लहुजि अनगार विहार करि नै कलोदरोइ आव्या। तिवारै षभायत ना वाइ भाइ घणा एकठां मलि न आव्या। वनणा करि न हरषीत हूवा। तिवार लहूजि अणगार चितव्यो। जे भगवंतइ सूत्र मां कहऐ छइ ते राजानि नेश्राय संजम पलइ ॥ १ ॥ गाथापति नी नेश्राम संज० ॥ २ ॥ सेजार नि० ॥ ३ ॥ टोला नि० ॥ ४ ॥ इत्यादिक घणा नि नेश्राय संजम पालइ। ते माटे कोइयक मोटो क मल ते राजादिक समजइ तो जिन मारगनि सुध परूपणा थाइ। ते माट षंभायत नो हाकम सूरत नो मेल्यौ सेठ ना हाता मां। सूरत नो हाकम अहमदावाद नो मेल्यो सेठन ना हाथ मां। ते माटे कोइक पुन्यावंत पूरष समजइ तो जिन-मारग नो घणो उद्योत होइ। एहवो विचारि न अहमदावाद मनै विहार कीनो। तिहां घणा लोकउं सबाल जुंवहरि समज्यां। तिण करि घणी जिन मार्ग नि महिमा वधी। तेह वइटाएं अहमंदावाद मैं गोचरि फीरतां लूंकानो धरमसि जति मल्यो। लहूंजि अणगार संगाते केतलियक आचार गोचार नि पूंछा किनी। पडउतर हूवो। तिवार लहूजि अणगार धरमसि न उपदेस दिनो—तुमे एहवा जांणपणा नइ पाडचा छो तो गछ मांहि काइ पाडे रहा छो। तिवारे धरमसि वोल्यो—अवसर होसि तिहां रइ जांणसि। तिहां घणा लोक वइरांग पांम्या। जिण मारग सांचो करि जांणवा लागा।

तिवारै गछ वासि लहूजि अणगार न घणा उपसरग दिधा। ते महापुरष षम्या। तीहां काल नि मरजादा पुरि थइ। पछ अहमदावाद थकि सूरत वंदर न विहार करचो। घणा भव जिवां नै गांम नगर न विष समजावता थका घणी वितराग देव न मारगनि परूपणा करि। तीवारै

लूंकां नि सांमगरि वाला लहुजि अणगार न घणा परिसा दिधा। ते माहापुरष सुभं परिणामे अहि आस्यां। तिवार विचारचो—जे विरजि वोहरो समजतो जितिनों वल पातलो पडइ। इम घणां नै सुलभ वोध पमाडता थका सूरत नै नजिक आया। तिवार पहीलां अहमदावाद ना श्रावगां विरजि वोहरा उपरइ कागल लिषो हुंतो जे लहुजि अणगार माहापुरष सूरत नो वीहार करचो छइ। घणा उत्तम गूणवंत फ़ंणी छइ। घणा तरण तारण साधू छइ। ते माट एहवा साधूनि निरदोष वसत्र, पात्र, संथानक, आहार, पांणी नो सार संभाल करसि। तेह न माहा करम निरजरा थासि। घणा गूणवंत साधू छइ। तिरथकर नांम गोत्र वांधवा ठिकांणो दिस छइ। ते माट सेठजि तो घणा जिण मारग ना जाण छै। घणा डाहा छइ। हमारा सिरदार छइ। नायक छो। ते माट लहूजि अणगार आया हुवतो। अमारि वति १०८ वार वंदना करज्यो। पछ अहमदावाद नि विनती करज्यो। माहापुरष तुम बिना श्रावक रूप वाडि सुकाय छै। घणो कसें कहिय।

तिवार पछं थोडा दिन नै अंतरै सूरत वन्दर आव्या। सथानक नि आग्यां मांगि न उतरचां। पहिलि विहेलि गोचरि विरजि वोहरानि पासि गया। तिवारे विरजि वोहरो वोल्या—लहूंजि सारि वाट अेम पुंजता २ आया सो कहि कारण। तव लहूंजि अणगार वोल्यां—वाहिर आगां सू निजर नू वल पुहच छ। जोइन चालूं छूं। घरढंए क्यां मै नजर नो वल पोहच्छतो नथी। ते माटे पुजि न चालूं छूं। जाउ घर मां आहार पांणी वोहरूं घणो घरनि वाइ भाइ सांभलवा लागा। घणा लोक समजवा लागा। पछ चोमासो पुरो थयां।

पछ विहार किनो। गांम नगर विचरतां षंभायत आया। पछ मासकलप करि न असंदावाद नो विहार किनो। तिहां अहमदावाद ना लोग घणा सांभलवा आव्यां। तेह वइटांणे धरमसि ॥१॥ अमीपालजि ॥२॥ प्रभूष घणा जति कूंयेरजि ना गछ थकी फेरि संजम लेइ निकल्यां। धरमसि रिष जू दइ संथानक परूपणा करवा मांडी। तिवार लोकां मां भिन पडवा मांडचो। तिवार लहुजि अणगार धरमसि रिष ने संथांनके चालि गया। जाइ नै कहऐ—आपण विहू एकठा विचरिय। तिवार अमीपालजि वोल्यां—घणो रूडो विचारो। तिहां धरमसि रिष पगे लागो नहि। तिवारै लहुजि अणगार विचारचो—उहनो गछवासि नि पनाय

दिसइ छइ। पछइ सथांनक आया। लोक लहूजि अणगार पासे जाइ धरमसि रिष पासै जाइ तुमारे माहो मांहि सूं फेर छै। तिवार धरमसि रिष बोल्या—एहन अमहे एक छै। लोकां मां पूरि पडवा मांडयो। पछै केतला दिहाडै फरि न गया। जाइ न श्रीपालजि न कहऐ—तुमेहे कहो तो हू पगे लागूं। धरमसि रिष घणा भणनहार छइ। तिवार अमीपालजि वोल्या—सांमी धरमसि रिष करता हूं घणो भणनहार छों। चालिस हजार गरंथ मूड छइ। ते माट भणनहार जाणी न पगे लागो। तो माहार पगे लागो पिण जिण मारगनि रित नहि रहे। तिवार धरमसि हिया मांहि समज्यो। समजि नै कूवूंधी केलवी धरमसि पोताना जति प्रति कहिवा लागो। पोथी तो प्री ग्रह मांहि ठहर छै। ते माट पोथी वोसिरावि न फेरि संजम लिजे तिवारै जति भोला थका तिणे हां भणी। पछ पोथी वोसरावि नै फेरि संजम लिनो। तिवांर धरमसि रिष लहुजि रिष न कहिवा लागा। आज तो पोथी सहीत माहावरत धरतां नथी। ते माटे अमहे पोथी वोसीरावि न फेरि संजम लिनो। तुमहे पीण पोथी वोसीरा-विदो। तिवारै लहूजि रिष वोल्या—अमार तो पांनां नो आधार छै। पाना बेची षरवा नथी। ते परीग्रहे मांही ठर सेइ। तुंमारी बात तो म जांणो। इम कहि न जूदी परूंपणा मांडी। पछ लहूजि अणगारं विचारूं। एवि न मल नाय मारग अनंता। तिर्थकर नो तेह भांजवा नो कांमि थयो।

तिहांथि लहूजि अणगार विहार करयो। केतलक काल वलि। तिहां, आव्या। अहमंदाबाद नगर कालूपुर नो वासि वरजत विसा पोरवाल, उंबर बरस २३ तेइस नै आसर। केतलोक काल श्रावगपणो पांलि नइ रिष लहूँजि पासे दिक्षा लिधि। रिष सोमजि थया। घणा लोकां मै जस-व्याप्यो। तिवार धरमसि रिष पासइ पुजारा लोक चरचा नै आव। तिहां मूडांथि कहेए मांन नहि। सिद्धांत नो पाठ दिषाडतो कबूल करइ। सजाय पिण अटकि मूहडथि विसरवा मांडयों। पोथी विन सिधाववा लागा। सिष न कहइ। आपण पोथी लिजे। सोमजि रिष न पुछि न तिवार सिष वोल्यो—स्वामि आपण पोथी मूकितराइ। तेह न कहीयो। हूंतो हिवडां तेहने मोटाइ दोंछो। लेवि होइ तो आपणी मेलइ लियो। तिहां पोथि जाच्चि लिधी। पछ लहूंजि अणगार विचारउ जे वंदनानि षात्र एतलि कलवकल कर छै। भणों षरो पिण जांणपणो कचो छै। हूं इहाथि विहार करूं। जूंदि परुंपणाइ लेक समजता नथि।

तिहांथि बिहार करचो। घणा गांम नगर नइ विषइ, घणा भव जिव न विषइ, धरम समजवतां थका लहुंजि श्रणगार बूरांहांनपुर श्राव्या। घणा वाइ भायां सांभलवा श्राव्यां। घणो जिन मारग नो उद्योत हुवो। घणा लोक समज्यां। घणा भव जिव समजतां थकां लूकांनि मांनता पातलि पडि। लूकां ना जति षेक पडि बज्यो। पछ मासकलप पुरो थयो। तिवार इदल-पुर श्राव्या। घणा लोक सहर ना गाडि जोडी ने सांभलवा श्राव्या। ते वात लूंका ना जति जांण्यां। तिवार विचारचो जेय श्रापणी मांनता घटा-डस्यैं पछ लूंका ना जति विष घालि न लाडूं किनो। करि न इंदलपुरि मैं रंगारिन छीपण ने श्राप्यो। श्रापीन इम कह्यो—बाइ श्रमाहारा हात नो तो लेवइ नहि। श्रनै श्रमहार एहवा माहापुरष नो जोग किहां मिलै। ते माटे काले छठ नो पारणो छै। तू मार श्रांगण श्रागल थइ न निकलइ। तिवारे तुमहे इम कहिजो ए माहापुरष इम पधारो। श्राहार जोग छै। इम कहि न लाडू बोहराज्यों। पछै तुमेंनै पुछै तिवारै तुमे इम कहिज्यों—माहापुरष माहार लाहांणा नो श्राव्यो छै। श्रमे नही षाउ श्रन तुमन श्रापुं। ते मांहि कांइ षोट छै मांहा नफा नो कारण छै। इम कहि न वंहराव्यो।

तिवार थांनक श्रावि न छठनो पारण कीधो। पछ थोडिक वार मां किलमना थइ। तिवार सोमजि श्रणगार न कहवा लागा—मूज न किला-मना घणी थइ छै। इम कही न सूतां। पछै थोडिसिक वार मां उठिवठा थया। इम कही ते माहारा जिव म वथा छइ। एतलीक वार श्राउषा नो मूजन विसवास नथी। इम कहि न सागारि संथारो किधो। पछ देवलोक पूंहता। तिवारे इंदलपुर ना श्रावग सहीरम जणायउ। श्रावग सहर ना विसमय पाम्यां। हिवाडां वषांण सांभलि न श्राया हुंता। एतलिवार म कही हूंवो। तिवार षवर सांभलि न दोडचां श्राव्या। श्रावि न देषतो श्राउषा नि थीति समाप्ति पुरि थइ। पछ सोमजि श्रणगार न हकिगत पुछि। तिवार सोमजि श्रणगार इम कह्यो—श्रमूकि वाइ न इहांथि श्राहार ल्यावि न पारणो किधो। पछ श्राउषानि थिति समापति पुरि थइ। तिवार ते श्रावक जाइ न पुछचो। ते रंगारि वाइ सांचो वोलि—मूजन तो जति लाडू श्रापि गयो। हुंतो ते वहिराव्यो। ते वात सांभलि न श्रावग श्रावगा कोपायमांन हुवा। हव श्रनेक श्राय उपाय करइ तो सांमी पाछा नहि श्रावइ। ते माटे समता राषो। धरम छते। भला मनसू श्रादरस्यें ते तरसै।

ते रंगारिन थोड दिनान गलत कोढ़ उपनो। पछें सोमजि श्रणगार

मासकलप पुरो करि न सहर म चोमासो आया। घणो जिणमारग नो उदोंत हुवो। लोकां मांहि लिंगधारिनो घणो अवजस हुवो। तिहां घणा वाइ भामा श्रावग ना व्रत धारयां। समकित पाम्या। घणी वितराग ना मारग नि महिमा बधी। पछ बूंर्हानपुर थी चोमासो पुरो करि न सोमजी अणगार विहार करयो।

एकदा सोमजि अ० नै एहवो विचार उपनो जे लहूंजि रिष बडा हूंता धरमसी रिष छोटा हूंता धरमसि रिख वंदना न करि हव। हूं जाइ न धरम रिष न पगे लागूं। ए विनय मूल छ। तिवार पहिला अहमंदावाद थी लहुजि रिष विहार करयो। तिवार पछ धरमि रिष भणवानें। अहं-कार भिन मार्ग विरुध परुपणा किरि जे। इम कहइ जिव मारों मर नहि ते समदरष्टि। इम कह जिव मारयो मरते मिथ्यादष्टि।१।। जे इम कहे साधपणो निश्चथि कह ते समद्रष्टि। साधपणो विवहार थी कह ते मिथ्यां-दरष्टि।।२।। जे समाइक आठ भांगे नि निपजे ते मीथ्यां द्रष्टि।।३।। इत्यादिक। सिधांत नि रित मूकि नै पोता न मतै टोलो जूदो पाडवा नइ विपरित परुपणा करि पोतानि परषदा काठि करि।

पछ केतलाइक वरस न आंतरइ सोमजि अ० विहार करता अमंदा-वाद मां धरमासि रिष न सथांनक आगन्यां मांगी नै भेला उतरया। धर-मसि रिष न बंदना नमसकार करि न साता पुछि सेवा भगत करवा लागा। तिवार धरमसि रिष कहइ—आपण आहार पांणी भेला करिय। तिवार सोमजी अ० कहइ। अमे नै कोइयक वसतुनि संक्या उपनि सांभलि छै ते पुछि नै आंपण वेऊ आहार पांणी भेलो करस्यूं। पछ आहार पांणि आप आपणी मेलल्यावी न करयो।

तिवारे सोमजि आव्यांनि षवर सांभलि नै श्रावग श्रावगा वंदना करवा आव्यां। वंदना करि न सेवा भगति करवा लागा। घणा श्रावग एकठा मिलि न आउषा आ श्री चरचा काढि। तिहां सोमजि अ० भगोति सूत्र ना ७२ अलावा निहत १ निकाचित २ आउषा कर्म आ श्री दिषाडयां। वले समवायंग सूत्र मां आउषा क० नि आकर्षा दिषाडि। वले पनवणा सूत्र में आउषा कर्म नो रसनो जम दिषाडयो। वले अंतगढ़ सूत्र मां आउषा करमनि सथिति भेदी न कालकार सें इत्यादिक घणा सूत्रां ना पाठ दिषाडयां। तिवारे श्रावग नि संका भागि। वले समाइक आसरी चरचा काढि।

तिवार भगवति सूत्र मां ४९ भांगा मां ।। २३ आंक इ समायक नो सवरूप देषाडयों । वे करण नें ३ जोग थी छै । अतित काल अनंता तिर्थंकर देषाडयां । वरतमांन काले संष्याता देषाड छै । आगमे काल अनंता देषासि । बिकरण थी करण वध नहि ३ जोग थि जोग वध नहि । एवि दवाद सूत्र कह्यो छै । ते भांग समायक करि नै तिरथकर नि आगन्या ना अराधेक अनंता थया, थाइछ, थासेइ । ८ भांग समायक करवोए निनवनो वचन छै । ८ भांग समायक करि नै अनंतानि गोद मां रुलिया । संष्याता रुल छै । अनंता रुल सै । ए अनाहूंत वचन अछतापणा माटे ।

तिवारै श्रावग वचन सांभलि नै संक्या में पडयां । पछ बीज दिन आवि नै धरमसि रिष परत कहै--भगवंत श्री माहावीर देव नै एक लाष गूणसठ हजार श्रावग थया । ते मधे कोइ वि ८ भांगेइ समायक करि तेहवो पाठ अमहे नै काढि देषावो । वले आलींभिया नगरि ना, तुंगिया नगरि नां, सावथि नगरि ना इत्यादिक घणा श्रावग एकठा मीलि ने ८ भांग पोसो समाइक करया होइ । तेह पाठ अम्हेन काढि देषाडो । आणंदादिक दस श्रावक न भगवंत उपदेस दिधो होइ ते पाठे अम्हेनै काढि वतावो । तिवारे धरमसि रिष सोच में पडयां । पछ धरमसि रिष नो सिष बोल्यो— श्रावकां प्रते तूम्हे काचो पांणि पिवो जांणो । असत्री सेवी जांणो । तुमहे सिद्धांत कि वात कांइ जाणो । तूमहे गुरु नि असाथना थी विहतां नथि । गुरुं कहै सोइ रुडो कह सै । इम विचारो जे पुज घणा पिंडत छै ।

पछ श्रावग जाण्यो कूहाडि नैं हातो मिल्यो । श्रावग वंदना मूकि न उठयां । वलि धरमसि रिष कह आहार पांणी भेलो करिय । तिवार सोमजि अ० कहै अमाहार कोइक बसतूं पुछवि छै । तिवार धरमसि रिष नो चेलो वोल्यो—सांसी पुछवि होय तो हिवडां पूछो । तिवार सोमजि कहे—आपण ३२ सूत्र ४५ आगनि सथापना ते मांहिथि एहवो पाठ काढि दो जे आउषो घटयो मांन नही ते समद्रष्टि ।।१।। मांनै ते मिथ्यांदरष्टि ।।१।। सामाइक ८ भांगा मांन ते समदरष्टि । ६ भांगा मिथ्यांदरष्टि ।।२।। एहनो पाट अमनं काढि वतावो ।। तिवार अमिपालजि वोल्यां—एहनो पाठ सिधांत मांहि कोइ न थी । तिवार सोमजि अ० कहइ—दोष ठहरावो । तिवार धर्मरिष विचार में पडयो—जो दोष ठहराउं तो प्रायछित मां संजम लगायों जाइ छै । लोका मां अपकिरत थाय छै । ते माटे विचारि रहए । पछ घणी रात्र सूधि चरचा वात थइ । पछै प्रभाते पडीलेहणा करी । कमर

वांधी। सोमजि अ० कह—एतलो उदम करचो ते सगलो पलिमत थयो। में तूमहे न वंदना करि ते मांहरि निरथक गइ। इम कहि विज थांनक उतरचां। धरमसि रिष न घणा श्रावग पण वंदना मूकि। पछै धरमसि रिष ना गुरु भाइ अमीपालजि, श्रीपालजि, माहो मांही विचारचो। विचार करी नै धरमसि रिष न कह्यो—सांमी एक बचन मागूं। आपो तो सोमजि अणगार नै तेडिल्यांउ। तिवार धर्मसि रिष बोल्यां—स्यूं कहो छो। पछ अमिपालजि बोल्यां—सांमी सोमजि अ० कह छै ते माटैं सिधांत मांहि कहिए ते नहि मिलइ। ते माटे तुमहे अतित काल नि परुपणा नो मिछांमि-दुकडं देवो। हवइ आगइ परुपणा करणी नहि। एतलो मूजन कहो तो हूँ सोमजि अ० ने ते मिल्यांउ। तुमारि सोभा थासिइ। धरमसि रिष बोल्यां—एहवो मूरष कूण होसि। थूकि न गलसेंइ।

तिहां अमिपालजि, श्री श्रीपालजि हियामां समज्यां। पछ धरमसि रिष न बोसरावि नें सोमजि अ० नै वंदना करि नै कहिवा लागा—सामी अम्हे धरमसि रिष नो सांग वोसराव्यों। तिवार सोमजि अ० कहे—भलो तुमने जांणपणो लाधो जे तुमहे षोटि बसतूं छांडि वेगला थया। तिवार अमिपालजि, श्रीपालजि कहवा लागा—सामी असहे तूमारो सेवग सिष। तूमे अमारा गुरु। तिवार सोमजि अ० वोल्या—ए जिनमार्ग नि रित छ। तूमहेने न्याय मारग प्रगम्यो छै। तिवार अमिपालजि, श्रीपालजि निकल्या। तिवार घणा श्रावकइ धरमसि रिष न षोटा जांण्यां। घणो अपजस हूंवो। श्रावगां मां फुटाफुट थइ।

तिवार गुजराति लोक लिधो। वोलमेहल नही। अमाहारा गुरु कहते षरो। वले कूयरजि ना गछ थी निकल्यां रिष पेमजि लोहडो, रिष हरजि वडो। ए २ धरमसि रिष ना गुरु भाइ। धरमसि रिष न छोडि ने संजम लेइ न सोमजि अ० ने अंगिकार करि विचरचां। वले मारवाड़ मां नागोरि लूंका नो गछ वोसरावि न जत्रोजि फेर संजम लेइन सोमजि अ० नि आग्यां प्रव्रत्या। वले मारवाड़ मां मेडता मांथो विसा पोरवाल लाल-चंदजि जिवाजि पास संजम लिधो। भणी न प्रविण थया। पछै जिवोजि कह्यो—तूमे जावो। गुजरात म सोमजि रिषनि आगन्यां मांगि ल्यावो। तिवार लालचंदजि साधे संघाते विहार किनो। सोमजि अ० ने आवि वंदना नमसकार करि विचरचां। तिवारै पछ लाहुंर मां उतराधि लूंको नो गछ

वोसरावि हरिदासजि निकल्या। फेरि संजम लिनो। षवर सांभलि जे गुजरात मां साध सांभलि प्रव्रत छै। ते माटे हू जाइ न माहापुरष नि आगन्या मां प्रवरतु। ए जिन मारग नि रित छ। इम कहि न गुंजरात नो विहार किनो। तिहां पहीला धर्मसि रिष न सथानक आवि उतरचा। केतलाक दिन तिहां रया। पछ सोमजि अ० सथांनक आवि उतरचां।

तिवार लोक विचार किनो जे पारसी न वेस पुरा छै। तथा व्याकरण ना जांण छा सिधांत ना पारगांमी छै। वरलि टिकां भासा चूरणनिर जूगलि ना जाँण छै। ए पारपो करसि। ते आपणें वोल। पछ माहोमांहि वेहूनि आचार गोचार नि प्राषां करि न कहवा लागा। तुमहे गछ छांडचो पिण गछ नि रुढ़ छांडी नही। ते माटे ३ पात्रा ना ३ ढांकणां लाकडाना राषो छो। ते सायो नो संधानक सेवो छो। इत्यादिक घणा वोल नो आचार गोचार मां फेर दिसाडि नै धर्मसि रिष न वोसरावि नैं सोमजि अ० नि आगन्या अंगिकार करि। सांमी तूमहे हमारा गुरु हु तुमारो सिष। इम करि विचरचां।

पछ धरमसि रिष नो श्रावग श्रावगा मइ अपजस हूवो। हरिदासजि पुज सरिषां को भणनहार न थी। एहवा गुणवंत पुरष छांडि गया तो जांणीयछ। कोइक अवगुण भरचो छइ॥१॥ तथा वलि धरमसि रिष नि परुपणा छै। जे साध न लषवो नहि। लूकापुरि मांथि भाया वाइ आद देइने घणा श्रावग श्रावगा धर्मसि रिषनि आरज्यांन सथांनक वंदना करवा गया। आरज्यां सराग्नि आवता जांणी न लषवानो संमांन संकेलवा मांडचो। एतलै उताल करतां साहि ढूलि तेणें पछेवडि षरडाँणी। पछ पछेवडि मसलवा लागि। तिवार हात कालो हूवो। लोक वंदना करि उभा रही कहवा लागा—आरज्यांजि आज तो साहि घणी पलालि दिस छै। तिवार आरज्यां सरमाणी थइ।

वाइयावाइ नागोरि लूकांना जति पास ३० सूत्र भण्या। एकदा मध्यांन भाइया वाइ मोटो सोनि आद देइन घणा श्रावग श्रावगा प्रश्न पुछवा गया। तिवार धरमसि रिष जति न सथांनक के आंगण विसारि न लषता हुंता। जति कांमे वलगो। श्रावग श्रावगा उपर जाइ उभा रह्यां। वंदना करि कहिवा लागा—सांमी अं कांइ कर्म करो छो। तिवार मोटो सोनि कहै, सोमजि अ० तो लिष छ। तेह परूपण कर छइ। तमे लषो

छो अन परूपण करो नथी। ते माटे तूमहे माया नो सथांनक सेवो छो। माया छ ते मिथ्यात नो मूल छै। तिवार भाइ वाई यह कहवा लागा— जे अम्हे नागोरि लूकां नो गछ वोसीराइ नै तूमारि सेवा भगति करि तेहनो फल अम्हे न लागो मति। इम कहि न श्रावग श्रावगा विगर वंदना उठि गया।

एनि सच वादिनो मत थपाणों तथा गोधोजि गछ छांडि न फेरू संजम लेवि नीसरचां। ते पीण सोमजि अ० नि आगन्यां म प्रव्रतवा लागा। तेहना सिष फरसरांमजि ते पीण सोमजि अ० न आवि वंदना नमसकार करी नै सेवा भगति करवा लागा। आज अहमनें मोटि जांत्रा हुइ। आहार पांणी भेला करचा। पछै सोमजि अ० नी आगन्यां लेइनें विहार किनो।

अमीपालजि श्रीपालजि नें सोमजि अ० दलि, आगरा नो विहार करायो तथा घरधरजि, मांणकचन्दजि एवे केटिवंध एक यांत्रया सांथि निकल्यां। पोताने मेल संजम लेइनें प्रव्रतवा लागा। घरधरजि रिष सोमजि अ० ने पास आवि ने घणा सिधांत भण्यां। व्याकरण साधि। आगन्यां लेइन विहार किनो। पछै काहांनेजि अणगार नें पीण विहार करायो। तिहां रिष मांणकचंदजि पीण काहानजि रीष सु आवि मिल्यां। आहार पांणो भेलो किनो। आगन्यां लेइ न विहार किनो। ए विनय मूल मार्ग नि रित कही। एतले साधइ तो। टोलो टोलो वंदना कही नथी। अने वडां साधा ने वंदना नमसकार करवें तथा वंदना नमसकार करावें छै। तथा व्रतमान काले एहवि परूपणा कर छै। जे माथ वडेरा करि न विचरउं एतो सूत्र नि रत छै। ए विनए मूल मारग नि रित कहि।

श्री महावीर मोक्ष ।। पहुतां जिण पाछलो विरतंत लिषीए छइ। १२ वरसे गोतम मोक्ष। २० वरस पछै सुधरम मोक्ष। ६४ वरस पछै जंवू सामी मोक्ष। ९८ वरस पछै प्रभावो सांमी देवलोके गया। १७० वरस पछ भद्रबाहु हुवा। २१४ वरस अबगतवादि हूवो। २१५ वरस पछै थूलभद्र हुया। २२० वरस पछै स्यूंन्यवादि चोथो निनव हुयो। २२८ वरस पछै एक सम वे क्रिमां मांनि ते निनव हुवो। ३३५ वरस पछै

कालका आचारज हुवा। ४५३ वरस पछ कालकाचार्ज सरसति वेहेन हुइ। ४७० वरस पछ विर बिक्रमादित राजा जैनधरमी हुयो। ते जातनि वरणा वरणी करी। ५५४ वरस पछै। छठो निनव हुवो। तिरासियो ५८४ वरस पछै वैरसांमी हुया। ६०६ वरस पछै गोष्टमालि डिगंवर मत निकल्यो। ६२० वरस पछै ४ सांषा निकलि चंदा १. नागंदर २, नरवद ३, वरदता ४। ८८२ वरस पछै घरम षाते देहरा मंडांणा। ६०४ वरस पछ विदा मंत्र ना प्रभाव उछा हुवा। ६८० वरस पछ पुसतक लिष्यां तथा वांचवा लागा। ६६३ वरस पछै कालकाचार्ज सनछरि ५ म नि तो उथापि अनै ४ थ नि थापि। ६६४ वरस पछ चवदस थापि पाषि उथापि। १००० वरस पछ पुर्व नो ग्यांन वीछेद गयो। १००८ वरस पछ पोसाल उपासरा मंडायां। १४६४ वरस पछ वड गंछ हुयो। १६२६ वरस पछ पुनेंमिया गछ हुयो। १६५४ वरस पछ आंचलियो गछ हूवो। १६७० वरस पछ षरतर गछ हुवो। १७२० वरस पछ आगमीया गछ हुवो। १७५५ वरस पछ तपागछ पोसालथि निकल्यो। २०२३ वरस पछ लूका निकल्यां। दया धरम थाप्यो। २०६५ वरस पछै रुषि मत हुवौ।

ए जेसलमेर ना भंडार मांथि ए पाटावलि निकलिछई।

॥ इति पटावलि संपूरणं ॥

(३)

पूज्य जीवराजजी की पट्टावली

[इस पट्टावली में गौतम स्वामी से लेकर नाथूरामजी तक के ७० पट्टधर आचार्यों का नामोल्लेख है। तदनन्तर जीवराजजी से सम्बन्धित धनजी, हरजी, फरसरामजी तथा गिरधरजी की परम्परा के तत्कालीन आचार्यों के नाम दिये हैं। संवत् १५६६ में पीपाड़ नगर में तेजराजजी के ६ शिष्यों—अमीपालजी, मयपालजी, हरजी, जीवराजजी, गिरधरजी, हरोजी—के गच्छ छोड़ने के उल्लेख के साथ इस पट्टावली का समापन हुआ है। संवत् १८८९ में पोष वद ७ को ऋषि व्रजलाल ने इसे लिपिबद्ध किया।]

·······यवजी वरयंगजी रे गछ थी नीकल्या संवत् १५३१ वर्ष लवजी १, सोमजी २, अमीचन्दजी, जोगराजजी, जीवराजजी, लोजी इण पाट ढुंढ्या नाम स्थाप्यो संवत्........

१—श्री विर गोतम वर्ष १२ निर्वाण
२—सुधर्मा स्वामी वर्ष २०
३—जम्बू स्वामी वर्ष ६४
४—श्री सयंभव स्वामी वर्ष ७५
५—जसोभद्र वर्ष १४८
६—संभुतवीजें वर्ष १५६
७—भद्रवाहु वर्ष १७०
८—थुलभद्र वर्ष २१५
९—आर्य महागीरी वर्ष २४५
१०—वलसींहाचार्य वर्ष २८०
११—श्री शांताचार्य वर्ष ३३२
१२—सामाचार्य वर्ष ३७२
१३—सांडलाचार्य वर्ष ४०६

१४—जिनधर्म सुरी वर्ष ४५४
१५—आर्यसमुद्र वर्ष ५०८
१६—निदल (नंदिल) वर्ष ५०८
१७—नागहस्त वर्ष ६४४
१८—रेवती वर्ष ११८ (७१८)
१९—षंदील वर्ष ७७०
२०—सिहग (णि) वर्ष ८१८
२१—सिमंत वर्ष ८४८
२२—नागजुण वर्ष ८७५
२३—गोविंद वर्ष ८७७
२४—भुतनंदी वर्ष ९४२
२५—लोहत्याग (लोहित्य) ९४८
२६—द्रोषगणी (दूण्य) ९७५
२७—देवढिगुणी वर्ष ९८०

२८—विरभद्र
२९—संकर भद्र
३०—जसभद्र
३१—वीरसेण
३२—नरीयामसेण
३३—जससेण
३४—हरषसेण
३५—जसेण
३६—जगमाल
३७—देवरिक्ष
३८—भिमसि रिष
३९—कर्मसी रीष
४०—राजरीष
४१—देवसेण
४२—संकरसेण
४३—लक्ष्मीलाभ
४४—रामऋष
४५—पदम ऋष
४६—हरिसम
४७—.... ....
४८—उमण ऋष
४९—जषेण (जयसेण)
५०—वीजा ऋष
५१—देवचन्द्र
५२—सूरसेण
५३—महासिघ
५४—महसेण
५५—जराज (जैराज)
५६—गजसेण
५७—मित्रसेण
५८—विजसिह (विजयसिह)
५९—सिवराज
६०—लालजी
६१—ज्ञानजी
६२—भुना ऋष (भानु ऋष)
६३—रूपरिष
६४—जीवा ऋष
६५—तेजराज

कुंवरजी

६६—जीवराजजी
६७—धनराजजी
६८—विसनाजी
६९—मंनजी
७०—नाथुरामजी

(१)

१—जीवराजजी
२—धंनजी
३—रामजी जी
४—अमरसिंघजी
५—तुलसीदासजी

(२)

१—जीवराजजी
२—लालचन्दजी
३—दीपचन्दजी
४—सामीदासजी
५—रूपचन्दजी

(३)

१—धंनजी जी
२—बालचन्दजी
३—सितलजी
४—देवचन्दजी
५—हीरचन्दजी

(४)

१—धंनजी जी
२—स्यामाजी
३—मुकटरामजी
४—हरकिह्नजी
५—नैणसुखजी

(५)

१—हरजी जी
२—गुलाबजी
३—फरसरामजी
४—खेतसी जी
५—खीमसी जी

(६)

१—फरसरामजी
२—लोकमणजी
३—महारामजी
४—दौलतरामजी

(७)

१—गीरधरजी
२—दयालजी
३—पीथोजी
४—रोडजी

पिपाड नगरे तेजराज जी सीष्य ६ गछ छोडी नीकल्या । १—अमीपाल जी, २—मयपाल जी, ३—हरजी, ४—जीवराज, ५—गीरधर, ६—हरोजी ए साधु संवत् १५६६ वर्षे गछ वसराय नइ नीकल्यां तो पाट संपूर्णः लिषी व्रजलाल को संवत् १८८९ रा मीती पोह वद ७ ।

खंभात पट्टावली

[इस पट्टावली में सुधर्मा स्वामी से लेकर देवर्द्धि क्षमा-श्रमण तक २७ पाट का उल्लेख करके आगम-लेखन के प्रसंग का वर्णन किया गया है। तदनन्तर तत्कालीन शासन में व्याप्त शिथिलाचार का चित्रण करते हुए लोंकागच्छ की उत्पत्ति, विभिन्न गच्छ-भेद और श्री लवजी ऋषि आदि के क्रियोद्धार का वृत्तान्त है। सर्वं श्री लवजी, थोभनजी, भाणजी, हरजी, अमीपालजी, सोमजी, जीवोजी; लालचन्दजी, हरदासजी, काहनजी, गिरधरजी, माणकचन्दजी, फूलमाणजी—इन तेरह ऋषियों के नामोल्लेख के साथ इस पट्टावली का समापन हुआ है। संवत् १८३४ में इसे लिपिबद्ध किया गया।]

पाटवलिक्षतें

श्री माहावीर मोक्ष गया पछइ। सतावीस पाट आचारी ऊयाले (हूयाते) लीषीये छे। १ पेले पाटे सौधर्म सांमी २ पाटे जंबू सांमी ३ पाटे प्रभूयो ४ पाटे श्री जंभव सांमी ५ पाटे जसोभद्र ६ पाटे संभूतिजे आ० ७ पाटे भद्रबांऊ सांमी ८ पाटे थूलभऽद्र ९ पाटे सूहस्ती नमि १० पाटे वोलनामे (बलिस्सह) ११ पाटे सांम नामा आ० १२ पाटे सुंडील नामे १३ पाटे सुमुद्र नामां १४ पाटे मंगु नांमे १५ पाटे जीतधर नांमा आ० १६ पाटे भद्रगुप्त नांमा १७ पाटे वैय सांमी

१८ पाटे आर्य ऋषि नामे १६ पाट पुसगा नामे ऋषि २० पाटे नदी ल पंमण नामे २१ पाटे नागहस्ती नाम २२ पाटे चई (२४६) नक्षत्र नामा आ० २३ पाटे दूवगणी नामा आ० २४ पाटे पंडील नामा २५ पाटे पेमसमण नामे २६ पाटें पंनागार्जण नामे २७ पाटे देवढी पमंण नामे आचार्य २७ ॥

श्री भगती सूत्र मध्ये वीसमें सतके आठमें उदेसें श्री माहावीर देव ने श्री गौतमे पुछो—देवानुं पीयांणं । तीर्थं केटला काल लगे चालसे । तीवारे भगवंत भाषुं—हे गोतम अमाहारु तीर्थ एकवीस हजार वरस लगे चालसइ । वली गौतमे पूछो—देवाणुपीयांणं पुर्व नुं ज्ञांन केटला काल लगे चालसइ । ताते भगवंत कहे—हे गोतस एक हजार वर्स लगी चालसै ।

देवगणी आचार्य भगवंत ने २७ सातावीस मे पाटे हुया । तीवारे भगवंत ने निर्वाण पोहोतां ६८० हुयांछें । देवगणि आचार्य एकदा प्रस्तावे ने सुंठि न गांठियो षावा लावां ते वसरी गयो । षातां काल अति क्रमी गयो । पछे सांभस्यो ते वार पछी देवगणी आचार्य विचार स्युं जेहवे कांईक बुधं हीणी थई । ते माटे सुत्रं मुष थकी वीसरसें । ते माटे सुत्र पुस्तेंके लषुंउं । तेतले भगवंत पाछि ८६० वर्से पुस्तकारंढ हुउ । तिहां लगे सुध मार्ग चाल्यो ।

तीवार पछी बार वरसी दुकाल पडउं । तीवारे घणा आवास साथे संथारा करया । आत्मा नां कार्य सारया । केटलाएक काल थया । ते मोकला थया । लिंगधारी थया । दुकाल उतरा सुगाल थयो । तिवार पछी ते लिंगधारी इं अप आपणा श्रावक आगले इम कह्यो—जे श्री भगवत तो मोक्ष पोंतो । ते माटे भगवंत नी प्रतिमा करावो । जिम आपणणे भगवंत सा मरइ जिणे घणां लाभ ना कारणं थांसइं । तिवारे ते श्रावके लिगधारी नां वचन उपदेस सांभलीने देहरां, चेतालां तथा उपाश्रा तथा चेतालांनं पुजा प्रतिष्टा करावी । ताहां गाम नगरे देहंरा, चेतालां, उपाश्रा हुया ।

श्री माहावीर देव मुगतें पोहोता पछे ४७० नै वर्स लगे भगवंत नो साध्यें चालो । तींवार पछी वीक्रमादीत नो साषो चालो । पछे संमत पनरा १५३१ आव्यो । तिवारे वे हजार वरस नी भस्म ग्रहेनी छीती

पूरी थई। तिवार इ लिंगधारी ये आप आपणा गछना समुदाय बांधां। आप आपणा श्रावक कीधां। तेणे लिंगधारीये सिद्धां पुस्तक हतां ते भंडार माहि राष्यां पोताने छांदे नवी जोडि प्रकर्ण तथा रास तथा कव्य, छंद, श्लोक, गाथा तथा सित्रंजा माहातिम तथा पोतानी मती कल्यणाइ हुंसा धर्म परुपुं। गुरुनी पुजा पोथी पुजावी। गोतम पडगुं षमासण विहरवां गुरुनि समेलो करवो। गुरु ने सामईयो करवो। गाजति वाजति चउटां सणगारी गाम नगर मांहे लेइ आवि। पाट पाथर्णा पथरावे। संघ पूजा करावे छइ इत्यादिक सूत्र विरुध परुपणा करी। ते भंडार महिलां पानां हुतां ते ऊदेइ षाधा। ते पानां जोवा में बाहिर काढां छें हुता। तिवारि वीचारु रा पांना लषीये तोवारुं।

तिवारे लूकुं मेहेतु श्रावक कारकुंण हुंतो। ते एकदा प्रस्तावें उपाश्रे लिंगधारी पासि आव्यो हुतो। तिवारि तें लिंगधारीये इम कह्युं। एक जिन मार्ग छनो काम छे। तेहे सुछे। तीवारि लिंगधारी बोल्यां—जे सीधांतनां पाना उदेई षाधां छेति नवा लषी आपों तो वारुं नी वारे। ते जतीये एक दशवैकालिक नी प्रत आपी। ते लूके मिहिते वांची नी वीचार्युं. जे तीर्थंक नो मार्ग कतो १ दसैकालिक माहि छें। दया धर्म ने साधुं नो मार्ग कहउ छे। तिम जोईये तो वेषधारीये दया धर्म ने साधुं नो मार्ग आचार ढांकीने हुंसाधर्म नि परुपणा करी छइ। पोते मोकला पम्या छे। तेहने हवडां कहिये पण मांने नही। ते माटे दसवैकालक नी दोवडी प्रत उतारी। एक प्रत पोते राषी। एक उणाने दीधी। एम करतां सुत्र सघलां नी प्रत दोवडी उतारी। एके की पोते राषी अेकेकी उणांने दीधी। पछे ते लूंके मिहिते पोते घरे सूत्र सीधांतनी परुपणा मांडी। तिवारे घणा भव्य जीव सांभलवा लागा। घणा जीवने दया धर्म रुचवा लागो।

तेण काले अरटवाडा ना वाणीया संघ कढी ने सजवालां लेईनइ जात्रा नीकल्या छइ। वाटमां माववुथेयुं। तिवारे जे गाम माहि लूकौ मिहितो दया धर्म नी परुपणा करइ ते गाम मध्ये संघ नो पडाव थयो। तिवारइ संघवीइं षवर जाणी जे लूकुं मिहितो सीधांत वाछइ। त अपूर्व वांणी छिए हवुं जाणी ने संघवी घरणा एक लोक संघाति सांभलवा आव्यो। तिवारे ते दया धर्म तथा सासनुं मार्ग सांभली ने संघवी नां मन माहिए मार्ग रुच्यो। तिवारि पछे केतलाऐक दिन सांभलवा गयो। तिवारे संघ मांहि संघवीनां गुरु हता। तेणे जांणुं जे लूंका मिहितां पासे सांभलवा

जाये छइं । ते माटे ते संघवी पासें आव्या । संघवी ने कह्यं —ज संघ जोडो वो लोक घरचीने सांरुमाहुं थाय छे । तिवारे संघवी वोलो—जे वाटे अजयणा छे । वाटि चूडवल प्रमुष जीव पडा छे । तिवारे तेहना गुरु बोलों—साहाजी धर्म ना कांम मांहि हेसा गणिये नही । तिवारे संघवीये मन मांहे जाणु जेहवा मैं लूंका मेतो समीपें सांभलाछें । वेषधारी अणाचांरी, छ कायानी अनुकंपारहित, तेहवाज दीसै छे । तिवार पछि ते वेषधारी पाछा वली गया । तिवारे ते संघवीने सीध्यांत सांभलतां विइराग उपनो । ४५ जणासु संमत १५३१ । संवछरे पस्ताली जणा सुं संजम लीधूं । साध सरवो १, साध भानो २, साध नुंणो ३, साध जगनालि ४, प्रमुष पसतालीस जण साध मीलीने दया धर्म परुपवा लागा । तिवारे घणा भवजीव दया धर्म समझवा लागा । तिवारइ प्रवादीयो ये लूका एहवुं नांम दीधुं । तिवारे लंगधारीय केटले एकइ क्रीयाउधार करी नीकला । तेहनुं नांम तपा धरांणां । तेणे प्रतमानी परुपणा करी ने हंसाधर्म परुंपुं । अनेक कष्ट करवा लागा । लूका घणा घाता ताते सांसता हुयां । ते जती तथा तेहना श्रावक तथा पुजारादिक दया धर्म मार्गी ने साधने उपसर्ग घणा दीधां । तिवारे माहापूरसे परीसा सह्या ।

तिवारे पुछे रूपो सांहा, पाटण ना वासी संजम लेईने निकल्यां । ते रूपो रष थया । ए लूकानुं पहेलु पाट थयु १ । तिवार पछे सूरत ना वासी, जीवो साह संसार पषि पुंन्य प्रतीया हुंता । तिणि रुपऋष पासइ दक्षा लीधी । ते जीव रुक्ष थाया २ तेवेवहार थी सुधा जीणीइं छइ । तिवांरि पछी स्थांनके दोष सेववा लागा । आहार नी वेनतीइं जावा लागा । अने वस्त्र पात्र नी ५ अजादा प्लोपी वेचरवा लागा । एतावता व आवारे ढीला पड्यां ।

तिवार पछी संवत् १७ नुं आसो आव्यो । तिवारे सुरत नगर नो वासी, वीरजी हाया, दशा श्रीमाली, लोकमाहि कोडिधझ हुते । तेहनी बेठी फूलबाई नाम ऊतो । तेणे लऊजी साने पालवा लीधा हुता । ते लऊजी सा लूका ने पासे भणवा मेहेला । ते लऊजी सा सोधांत घणो भण्या । तिवारे लऊसा न विईराग घणो उपनो । विवारे । वाहोर वीरजी हाया से संयम लेवानी आज्ञा ना मांगी ते वारेज वजीसा वेरागी इं साधनु आचार गोचारनी परुपणा घणी संभलांवी । तिवारे वोहुरो वीरजी केहेवा

लागो—जे तुमे लूकाना गछ माहि दक्षा लो 'तो आग्यांनो आपु'। तिवारइ लऊजी साहे विचार कीधो—जे हवरणा अवसर एहवुछे। एहवो जाणीने साहा लऊजीइ। ऋषि वरजांग पासे दक्षा लीधी। रुषी लऊजी थया। तिवार पछि ऋषि वरजांग पासें घरणां सीधांत अर्थ संसकृत्यादिक भणा। घरणा पंडित थया। तिवारे पोताना गुरु नि एकांत पूछो- जे साधनुं आचार छइ तिम पालीये छइ कि नहीं। तिवारइ वरजांग ऋषी बोलों—आज पंचम आरो छइं। तिवारि ऋषि लऊजीयें कहुउं—सांमी भगवंत नुं मार्ग एकवीस हजार वरस लगइ चालते मालि लूकानो गछ मोसरावी ने नीकलो तो तुंम्हे अम्हारा गुरु हु तमारो सिष। तिवारे ऋष्यि वरजांग कहि—अम्हे तो न निकल्या इ। तिवारि ऋषि लहुजी साधनू संघाते गछ वोसराव्यो। साधनू निकला ऋषि लउजी १ ऋष्यि थोभरण २ ऋष्यि सषीयो ३ ए त्रिण साध फरि संजम लेई घरणा गांम नगर देस विचांरा। ताहां वितराग देव नां मार्ग नी परुपणा घरणी करी। तिवारे घरणा लोक समझा। तिवारे लोके ढुंढीया एहवुं नांम दीधुं।

तिवारि अमदावाद नगर ना वासी, कालुपरा ना वासी साहा सोमजी इं केटलोएक काल रहीने ऋष्यि लउजी पासे दष्या लीधी। ऋषि सोमजी नांम दीधो। वरसे २३ दक्षा लीधी अने वरस २७ ने माज ने संजम पालुं। ते मध्ये घरणी सूर्यनी वाठनी अतापना लीधी। घरणा काउसग, आसरण, तप, जप कीधां। घरणा साध साधी नो परवार थयो। तस पाटे सूरतनां वासी ऋष्यि श्री कान्हजीइ वरस २३ ने मांने दक्षा लीधी। वरस २७ ने मांज ने दक्षा पालि। दवांगत पांम्या। तस पाटे ऋष्यि श्री रणछोडजी छ। गरिण परण अमदावाद नगर उघ्यमापुर ना वासी। ऋष्यि श्री सोमजी नो परवार ऋष्यि हरदासजी ऋषि में प्रेमजी प्रमुष घरणा जांणवा।

वरजांगजी ना गछइ थकी नीकला : ऋषी लवजी १ प्रमुष :। ऋषि कुंयरजी ना गछ थकी नीकला-ऋष्यि अमीपालजी १, ऋष्यि धर्मसी २, ऋष्यिं हरजी ३, श्रीपालजी ४, ऋषी जीवो ५, ऋषिह लोहोडो हरजी ६ प्रमष। केसवजी ना गछ थकी नीकला : ऋष्यी

लहुजी १, ऋष्यी सोमजी २, ऋष्यी कानजी ३, ऋष्यी रण-छोडजी ४, तस पाटे ऋष्यी ताराचंद जी ५, तस पाटे ऋष्यी मीठाजी ६, तस पाटे ऋषी तीलोकचंदजी ७, तस पाटे वाहालाजी पूजजी ८। इम घणोइ प्रवार थयो। ऋष्यी कुयरजो ना गछ थकि नीकला छइ।

॥ ॐ ॥ श्री माहावीर मोक्ष पोहुता पछे १२ वर्से गोतम सांमी मोक्ष गया १, श्री वीर पछे २० वर्से सुधर्म सामी मोक्ष पोतो २, श्री वीर पछे ६४ वर्से जंबू सांमी मोक्षइ ३, वीर पछे ९८ वरर्से जंभसांव सांमी हुया ४, श्री वीर पछे १७० वर्से भद्रबाहुं ५। वीर पछे २१४ वर्षे अवगतवादी तीजे निनव थयो ६। श्री वीर पछे २१५ वरसे थूलभद्र हुया ७, वीर थी २२० वर्से सुंनवादी ए सर्वं अनमतो जाणवा ४ नीव ८।

एक समे बे क्रीयां मांने २२८ वर्से पांचमो नीनव हुयो। वीर थी ३३५ वर्से प्रथम कालका आचार्य हुयो ९, श्री वीर थी ४५३ वरसे बीजो कालका आचार्य सरसती बेहेनो वालणहार १०, वीर थी ४७० वरसे राजा विक्रामादीत हुयो ११, वीर थी ५५४ वर्से छगे निनव तिरा सीषो थयो १२, वीर पीछें ५८४ वरसे वेरसांमी थया सठोगिया १३, श्री वीर पछे ५९४ वर्से सातमो निनव गोष्टमहिल थयो १४, वीर थी ६०९ वर्से दिगंबर मत थापो सहेस्रमक्षत्रीये १५, वीर पछे ६२० वर्से चार साषा नीकली इन्द्र१, चन्द्र२, नांगेन्द्र३, वाद्याधर४, चन्द्र १ नांगेन्द्र २ विता हुयाः विद्या धर नामो तवासी थाप्या १६, वीर पछे ९०४ वर्से विद्या मंत्र वीछेद गया १७, वीर थी ९८० वर्से सिधांत पुस्तके चढउ १८। हवे गछ प्रंपरा लषीये छइ।

॥ॐ॥ समण भगवंत माहावीर ने वंदना नमस्कार करीने संक्रेंद्र पुछे छइ—तमारी रासे भस्म ग्रह वे हजार वरसनो बेसे छे। तेथि सुंथा सइं। भगवंत कहिजे—समण निग्रन्थो ना उदे उदे पूजा नहीं थाय। ए वे

हजार वरसे भस्म ग्रह उतरा पछे निग्रन्थोनी उदे उदे पूजा थासे। पछे भगवंत मोथ पोहोता पछे: गोतम ने केवल ज्ञांन उपनुं ते गोतम नु श्रायु क्षो। बानु वरस ने। ५० वर्से ग्रेह वास। ३० वर्स छदमंस्त। १२ वर्ष केवल ग्यांन, सर्वयाउं बानु वर्सनु ६२। पछे सुधर्म सांमी नो। याउषो १०० नो। ५० वर्स घरमां। ४२ वर्स छदमस्त। ८ वर्स केवल। सर्व श्रायु १०० वर्सनुः। तीजे पाटे जम्बू सांमी नो श्राउषो। १०० सर्व-मनो। १६ वर्स धरि। ४० रे वर्स छदमंस्ता। ४४ वर्स केवल। सर्व सोउ वर्ष नुं। ए जगंतर सोमी जाणवी। भगवंत मोक्षा पोता पछे ६४ वर्स केवल पर वरतुं: जवं मोक्ष गया पछे दश बोल विछेद गया ते कहि छै। एक तो मनपरजवग्यांन १, प्रम श्रवधिग्यांन २, पुलांगनिउ ३, श्राहारक सरीर ४, उपसंमसेणि ५, षपक् सेंण ६, जिनकलपी साध ७, परिहार विसउधि चारित्र ८, सुक्षम संपराय चारित्र ९, जथाषायत चारित्र १०।

श्री माहावीर सांमी मोक्ष पोता पछे १२ वर्सें गोतम मोक्ष पोता १, वीर प्रभू मोक्ष पोता पछें सुधर्मा सांमी २० वर्से मोक्ष पोहुता २, श्री वीर मोक्ष पोता पछे ६४ वर्से जंबू सांमी मोक्ष पोता ३, श्री वीर केवल पांमां पछे। १४ वर्से जमांली कडेमरणे कडइं प्रथम नीवन्ह थयो। एक वचन नो लोपणहर १, वीर केवल पांमा पछे १६ वर्से छेहले प्रदेसे जोव मांने ने थाप्यो। ए वीजो नीन्हव थयो २, वीर पछ ७५ वरसे प्रभूयो सांमी देवलोके पोता ४५ पछे सी। माहावीर पछे श्रठांणु ९८ वर्से शिय्यंभ सांमी हुयां ५, श्री वीर पछइ १६९ वर्से श्री जसोभद्र सांमी हुया ५, श्री माहावीर पछे १५६ वर्से संभूत निजय श्रार्य हुश्रा ६, वर पछे १७० भद्रबाहु सांमी थया ७, वीर पछे २१४ वर्से श्रवगतवादी तीजो ननव थये। वीर पछे २१५ वर्से थूलभद्र हुश्रा ८, वीर पछे २२० वर्से सुन्यवादी चोथो नीनव हुये। ए सर्व श्रनमती जाणवा। वीर पछे २२८ वर्से एक समे वे क्रिया मांने पांचमे नीनव थयो।

वीर पछे २४५ वर्से महागीरी श्राचार्य थया ९, वीर पछइ २८० वर्से श्री बलिहसीह श्राचार्य हुया १०, वीर पछे ३३२ वर्से श्री स्वांति

आर्योर्ज ऊयो ११, वीर पछे ३३५ वर्से प्रथम कालका आचार्य हुया; निगोद जीव व्याख्यात अवनीतस पर दृष्टांतः वीर पछइ ४५३ वर्से बीजो कालका आचार्य सरस्वसीती बहेन नो वालणहा गर्दभ भील वेधक। वीर पछे ३७६ वर्से श्री शामां आचार्य हुया १२, वीर पछे ४६ वर्से श्री सांडिल आचार्य हुया १३, वीर पछे ४५४ वर्से श्री जाति धर्म आचार्य हुया १४, वीर पछे ४७० वर्से राजा वीर विक्रमादित राजा हुयो। तीने नातनो वर्ण करचो। तीने नातनो वर्णा-वर्ण करचो सों। वीर पछे ५०८ वरसें श्री सुमूद्र आचार्य हुया १५, श्री वीर पछे ५५४ वर्स छठो नीनव हुयो तो जीवनो अजावनो थापक। वते सिरासियो। वीर पछे ५८४ वर्से वेर सांमी या, वीर पछे ५८५ सातम निनव हुयो गोष्टमाहिल नामें कर्म कवचनो परेमांते छे पण षीरनीर वत। नां मांने। वीर पछे ५६ वर्से श्री निदिल आचार्य थया १६, वीर पछे ६०६ वर्से दिगंवरमता नीकल्यो सहेसमल षत्री थी ब्राह्मण वेंटा थकी नीकल्यो। श्री वीर षठी ६ सें २० वर्से : च्यार सीष्या नीकली : इंद्र १ चंद्र २ नांगंद्र ३ वीजे वांवर ४ छ। चंद्र १ नांइगंद्री २ विजे बावर ३ विदोता हुया। चंद्र १ नांगेद्र २ ए बेनी प्रवती : विष्जे बावर ना ३ मेतवासी थाप्यां। श्री वीर पछें ६८४ श्री वर्से श्री नागहस्ती आचार्य १७, वीर पछें ७६८ वर्से श्री रेवत आचार्य १८। वीर पछे ७८० वरसे सीहगिरि आचार्य १६, वीर पछे ८१४ चोउंद वर्से साहगीण आचार्य हुया २०, वीर पछे ८४८ वर्से श्री हेमंत आ० २१, वीर पछे ८७५ वर्से नागार्जुन आचार्य २२, वीर पछे ८८२ वर्से चोइंतवासी ते धर्म षाते देहरां मंडाव्यां। वीर पछे ८८७ वर्से श्री गोवंद आचार्य हुयो २३, वीर पछे ६०४ वर्से व्रिद्या मंत्र ना प्रभाव उछा थया विछेद गया २४, वीर पछे ६४२ वर्से श्री भूईदन आचार्य, श्री वीर पछे ६४८ वर्से लोहित्या गणि आ० २५, श्री वीर पछे ६७५ वर्से श्री दुष्यगणि आ० २६, श्री वर पछे ६८० वर्से श्री देवगणि आचार्य हुया २७।

नवसें नें असीमें वर्स ६८० वर्से पुस्तकारुढ हुयो सिधां लषांण्णां।

वांचण तरे ९९३ वर्से पंवुसणा पर्व पांचम थी चोथ थपांणी। कालका आचाय थापी। श्री वीर पछे ९९४ वर्षे कालका आचार्ये चौउंदसें पाषी थापी। सुरी भावना षु चोमासी चउंदस थइ। वीर पछे १००० वर्से पुर्व नुं ज्ञांन विछगयुं। श्री वीर थी १००८ वर्से पोसाल मंडाणी। वीर पछे १४६४ वर्से वड गछाना घणा गछ ८४ छ गछ थाया। वीर पछे १६२९ वर्से पुंनमियो गछ थाया। श्री वीर थी १६५४ वरसें आचलीया गछ थयो। श्री वीर थी १६७० वर्से परतर गछ थायो। वीरथी १७२० आगमीया गछ थयों।। वीर थी १७५५ वर्से तप्पा गछ नीकलो। चीत्रावाल माहातमा मांहिथी नकला तेणे घणा बोल फरवा ने हवै जटांणे वाणे कडुयामती नीकला छें।

वीर पछे २०००२३ वर्से जिनमती हुया। परवादीइं लोका कह्यां। वीर थी २०९५ वर्से रुक्षी मती हुया। एहवे टांने कडुया मीती थया। इम हुडाउंप्सप्पीणी कालनें मैले मत थया छें। ते मांहें श्री सीधांते भगवंत ने वचने चाले रसूधे आचार प्रवर्ते ते धंना दया धर्म मार्ग परुपे ते सत्य जाणवुं। छ कायना जीव आत्मां समांन करी पाले। श्री तीर्थंकर ना वचन सत्यंक मांने तेहज धर्म तेज द्रया तेज मोक्ष छे ते जाणजो जीछ। साध पेहिला हता ने ह्वणां छें। तेहनां नांम लंषीये छइ। ऋष्य श्री लव्रजी १, ऋष श्री थोभनजी २, रिष श्री भाणजजी शरष्य ३, श्री हरजी ४, अमीपालजी ५, सोमजी ६, जीवोजी ७, लालचंदजी ८, हरदासजी ९, काहानजी १०, गरदरजी ११, माणकचंदजी १२, रष फूसमामजी १३। एं तेरइ नेइ वंदणा करइ। साध सरधइं। आहार पांणी आपे निरजरा जाणइं। वरु लहुमाईये। वंदणा करे नमसकार करो तेहवा साधनैं ए म्हारइ परमांण छइ। इति पाटावली संपूर्ण संवत् १८३४ वर्षे श्र.०.।।

(५)

गुजरात पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली पूज्य श्री धर्मदास जी के शिष्य मूल-चंदजी स्वामी (जिनका विहार-क्षेत्र मुख्यतः गुजरात रहा है) की परम्परा से सम्बन्धित है। इसमें ४२ आचार्यों का— १—धर्मदासजी, २—मूलचंदजी, ३—वाहुजी, ४—इच्छाजी, ५—हीराजी, ६—कोहनजी, ७—अजरामरजी, ८—तलकसीजी, ९—रवजी, १०—............, ११—नागजी, देवराजजी, १२—तेजपालजी, १३—नरसीजी, १४—मोटा मोनसी, १५—मोटा देवजी, १६—केसवजी, १७—रुघनाथजी, १८—मानजी, १९—करमसी, २०—हरजी, २१—संघजी, २२—कर्मचंदजी. २३—मोनसी, २४—रायमलजी, २५—लघु हरजी, २६—गोवर्धन स्वामी, २७—हरिरख स्वामी, २८—मोटा मूलजी, २९—कुंवरजी, ३०—हरचंदजी, ३१—जेठाजी, ३२—हंसराजजी, ३३—अवचलजी, मूलजी लघु रत्नसी लाधोजी, ३४—रायचंदजी, ३५—दामाजी तपसी, ३६—धर्मसीजी, ३७—आरमलजी, ३८—देवजी, ३९—दमाजी स्वामी, ४०—रायचंदजी, ४१—गोपालजी, ४२—हीरोजी के—पट्ट-क्रम से जन्म-स्थान, गोत्र, दीक्षा, स्वर्गवास आदि के उल्लेख के साथ परिचय दिया गया है।]

प्रथम श्री महावीर स्वामीनी ८ मी पाटे भद्रबाहूस्वामी थया १४ पूर्वोक्त पाहुडा ग्रन्थ मध्ये छे।

१-श्री गुर्जर खंडे अहीमदाबादस्य सामीप्ये सरखेज ग्रामे, जीवन पटेल तेहना पुत्र श्रावक भावसार धर्मदासजी, सूत्र नीरयावलीका नो वर्ग त्रीजो, अध्ययन बीजो सांभलीने जण १७ संघाते संवत १७१६ ना आश्विन सुद ११ दीने, पहोर चोथे, वीजय मुहूर्त, मूल नक्षत्रे स्वहस्ते पातिसाह वाडी में, दीक्षा ग्रहीने जैन मारग उजवालसे गयो धर्म बोध से च्यार दीसों मां चतुविधं संघ थापसे, जुग प्रधान पाट ६२ में थासे इति वृद्ध वाक्यं।

२-तत्पट्टे पूज्य मूलचन्दजी स्वामी दसा श्रीमाली, अमदाबादना सं १७५३ मां दीक्षा लीधो। सर्वायु ८१ वर्षनो, सं १८०२ में दीगवंत अमदाबादे। ३-तत्पट्टे पूज वाहूजी स्वामी ज्ञाति बालंद, अहमदाबादना, संवत् १७७५ मां दीक्षा, सर्वायु ६६ वर्ष। सं १८१४ देवगत सूरत बंदीरे प्राप्तः। ४- इच्छाजी स्वामी सीद्धपरना ने गम, माता वालम बाई, पीता जीवराज संघवी, बेन इछा संघाते सं १७८२ ना आसोज सुद १० सुत्रे दी० लीधी। सं० १७६६ ना फागन सुद ७ में जन्म, ज्ञाति वीसा पोरवाड। सं १८३३ मां देवगत लिंबडी मध्ये, सर्वायु ६७ वर्ष। ५-हीराजी स्वामी ज्ञाते कयडवा, कनवी गुजरातना, सं १८०४ मां दीक्षा, सं १८४२ देवगत. धोराजी ग्रामे, ७४ वर्षनो। ६-कान्हजी स्वामी ज्ञाते भावसार, वढवाणना, सं० १८१२ मां दीक्षा हलवदमां, सं १८५४ मां देवगत सायलां मां. सर्वायु ५४ वर्षनो। ७- अजरामरजी स्वामी ज्ञाते वीसा ओसवाल, पदानाना, सं १८०६ मां जन्म, सं १८१६ मां दीक्षा, मांता कंकुबाई साथे लीधी। गोंडल मध्ये, महासुद ५ गुरुवारे। गोत्र मोरा, पीतां मानेकचंदजी साहजी, सं० १८७० ना श्रावन वद १ मे देवगत, लीबडी में, सर्वायु ६१ वर्ष। ८- तलकसीजी स्वामी वीसा श्रीमाली, धरोलना, संवत १८३७ मां दीक्षा भुजनगर मध्ये हस्ती होडे लीधी। सं० १८८२ देवगत लींबडी मध्ये।

६-रवजी स्वामी दसा श्रीमाली, कुंतीयाणा नां, सं० १८३८ पोस

सुद ६ नी दीक्षा, सं० १८७० मां पोस सुद १० देवगत, लींबडी मध्ये। १०—…… ११—नागजी स्वामी तथा देवराजजी स्वामी वीसा ओसवाल, कांडाकराना। गोत्र डोढीया, सं० १८४१ ना फागन सुद ५ गुरुवारे दीक्षा, रापर मध्ये। सं० १८७९ ना आसो वद १ में देवगत, लींबडी मध्ये, देवराजजी स्वामी। १२—तेजपालजी स्वामी वीसा ओसवाल, देसलपुरना, संवत् १८४६ ना वैषाख सुद ५ नी दीक्षा। सं० १८९१ ना पोस सुद ४ सनीवारे दिन पोहर चढते देवगत, लींबडी मध्ये, अवधि ज्ञान युक्त। १३—नरसी स्वामी वीसा ओसवाल, देशलपुरना, सं० १८४६ दीक्षा, सं० १८६९ ना भाद्रव वद १४ ना देवगत, थानगढमां। १४—मोटा मोनसी स्वामी वीसा ओसवाल, देसलपरना, सं० १८४९ ना कार्तिक वद १३ नी दीक्षा। सं० १८८७ ना प्रथम वैशाख वद १० सुत्रे देवगत, मोजीदड मध्ये पाम्या। १५—मोटा देवजी सामी वीसा श्रीमाली, वाकानेर ना सं० १८५० ना चैत्र वद ६ नी दीक्षा, सं० १८८७ प्रथम वैशाख वद ४ सने देवगत, जेतपरे। १६—केसवजी सामी वीसा श्रीमाली, मानकुवाना, सं० १८५४ मां दीक्षा भागपर मां, सं० १८७० भाद्रपद वद १४ ना देवगत, मुंद्रा बंदर मध्ये। १७—रुघनाथजी स्वामी भावसार, वढ़वानना, सं० १८५५ ना वैषाख सुद ११ नी दीक्षा वढवाण मां, १८७६ संथारो कर्यो वढवाण मां, तेमां अवध उपनो पेलो देवलोकें उपजवो दीठो, देवराजजी स्वामी ने समलामा दीठा गुंबडानी प्रछा नो उतर नहीं मटे सारे दर्शन नहीं थाय दीन २ घडी।

१८—मानजी स्वामी वीसा श्रीमाली, वाकानेरना, सं० १८५५ ना वैषाख सुदी ११ नी दीक्षा वढवाण मां, संवत् १८८७ वैशाष पेला सुद १३ देवलोक, राभोदमां।

१९—करमशी सामी श्रावक भावसार, सुरतना, १८५६ दीक्षा लींबडी मां, १९०६ मां देवलोक वढ़वाण मां, अनसन विराधी ने उपसर्ग वशात्। २०—हरजी स्वामी वीसा ओसवाल, काडागराना, १८५७ प्रथम जेष्ठ सुद ११ नी दीक्षा कांदागरामा। २१—संघजी स्वामी दसा श्रीमाली, खोड़ूना, १८५९ ना जेठ वद १२ नी दीक्षा। १८८३ मा देवगत, धोराजी

मध्ये। २२–कर्मचंदजी स्वामी वीसा ओसवाल, देसलपुरना, १८६० मां दीक्षा रापर मां। १८७० देवगत पाम्या। २३–मोनसी स्वामी लघु वीसा ओसवाल, आसंभीयाना, १८६० में दीक्षा कंडोरडे। १८६८ मां देवगत, लींबडी मध्ये। २४–रायमलजी स्वामी वीसा ओसवाल, खाखरना, १८६१ नी रापरमां दीक्षा, १९०२ मां देवगत, लींबडी मध्ये कार्तिक वदी ४। २५–लघुहरजी स्वामी वीसा ओसवाल, खाखरना, १८६१ फागन सुद ४ नी दीक्षा लींबडी मध्ये लीधी। २६–गुरु गोवर्धन स्वामी श्रावक भावसार, सुरतना, १८६१ ना वैशाख सुद ११ नी दीक्षा लींबडी मध्ये। १८८७ ना मागसर सुद २ दीने ६५ दिन नो संथारो, सायला मां सिद्दो अजवाले। गाड चार माहे थयो। २७–हरिरख स्वामी भावसार, सुरतना, १८६१ मां दीक्षा लींबडी मां। २८–मोटा मूलजी स्वामी दसा श्रीमाली, मोरवीना, १८६३ ना फागन वद ११ नी दीक्षा मोरवी मां। १९०४ मां देवगत, अहमदावाद मां सावन वद ११। २९–कुवरजी सामी १८६५ ना मागसर छठनी दीक्षा, वीसा श्रीमाली, वढवान ना दीक्षा लींवडी मां।

३०–हरचंदजी सामी दशा श्रीमाली, मेथाणाना, १८६६ ना मागसर सुद ५ नी दीक्षा लींबडी मा। १९१४ पोष सुद छठ मा देवलोक, लींबडी। ३१–जेठाजी स्वामी धोल ना, कोगरी, १८६६ ना वैशाख वद ९ नी दीक्षा वढवाण मां, देवगत पाणेसणे। ३२–हंसराजजी स्वामी तथा अभेचंदजी स्वामी, पितु पुत्र, वीसा ओसवाल, आसंभीया ना, १८६७ ना पोस सुद ६ नी दीक्षा रापरमां देवराजजी स्वामी पासे लीधी, देवलोक अंजार। ३३–अवचलजी मूलजी लघु रत्नसी लाधोजी १८६९ ना कातिवद १३ नी दीक्षा, लींवडी मां। ३४–रायचंदजी मालवी, रतलाम ना ओसवाल, १८६७ ना फागन वदी २ दीने दीक्षा अजरामरजी सामी पासे लींवडी मां। ३५–दामाजी तपसी भावसार, धोराजी ना, १८६७ नी दीक्षा लींबडी मां। ३६–धर्मशीजी दसा श्रीमाली, बीलरवा ना, १८६८

नी दीक्षा लींबडी मां। ३७—भारमलजी वीसा ओसवाल, रताड़ीया ना, १८६७ नी दीक्षा, १८७....मां देवलोक, जेतपुर। ३८—पूज्य श्री ७ देवजी स्वामी भुवाणा, वाकानेर ना, १८७० मां दीक्षा, रापर मां देवराजजी स्वामी पासे लीधी, १० वर्ष नी वयमां; ५० वर्ष प्रव्रज्या पाली। सर्वायु वर्ष ६० नो, १९२० ना जेष्ठ शु० ८ ना प्रभाते देवगत पाम्या, लींबडी मध्ये। ३९—दमाजी स्वामी दसा श्रीमाली, कुबडीयां ना। ४०—रायचंदजी सेठीया, रापर ना। ४१—गोपालजी स्वामी मोटा ओसवाल, पाली ना, १८७४ मा दीक्षा, १९१३ मां देवगत लींबडी मां जेठ वदी १। ४२—हीरोजी स्वामी।

॥ इति पटावलि संपूरणं ॥

(६)

भूधरजी की पट्टावली

[इस पट्टावली में भगवान महावीर स्वामी, गौतम स्वामी, सुधर्मा स्वामी, जम्बू स्वामी, प्रभव स्वामी तथा २७वें पट्टधर देवर्द्धि क्षमाश्रमण के उल्लेख के बाद विभिन्न गच्छ भेदों का वर्णन करते हुए लोंकागच्छ की उत्पत्ति का वृत्तान्त प्रस्तुत किया गया है। तदनन्तर लवजी, सोभजी, धर्मदासजी, धन्नाजी, भूधरजी, (स्वर्गवास—सं० १८०४) और तत्कालीन आचार्य रुघनाथ जी तक का संक्षिप्त पट्ट-परिचय दिया गया है।]

॥ ॐ नमः सिद्धं ॥ श्रमण भः श्री माहावीर नै वंदणा करी नै शक्रेंद्र पूछ्यों—जे तुम्हारी रासें भसमग्रह वि हजार वर्ष नी स्थिति नो वैसें छै। ते थकी स्यु थास्यें। तिवारइ पछे श्री भगवंत बोल्या—ए भस्मग्रह वेठा पछै साध निगर्थ की उदै २ पूजा नही थाइ। ए बे हजार वरसनी स्थिति तो भस्मग्रह उतरचा पछी साध निर्गंथनी उवे २ पूजा हुस्यें। चोंथा श्राराना तीन वरस नै साढ़ा श्राठ मास नी छेला थाकतां वीर निर्वाण पोहतां। तिवारै पछै गोतम स्वामी १२ वर्ष केवली पर्याय पाली, सर्व श्राउषो ६२ वर्ष नो पाली मोष पहुंता।

पछें सुधर्म स्वामी २० वर्ष ए केवली नी, ३० वर्ष दिष्या, १०० वर्ष सर्वाउ। पछै जंबू केवल पछै उपनां थकां ४४ वर्ष परवर्जा। भगवंत पछै ६४ वर्षे मोष पोहता, ए जुगंतर भूमिका जाणिवी। जंबू पछै १० वाना

विछेद गया मन पर्यवज्ञान १, परम अविध २, पुलागनि यद्दो ३, आहारिक शरीर ४, उपसम श्रेण ५, षपक श्रेण ६, जिण कलपी साध ७, परिहार चारित्र ८, सूक्ष्म सं० ९, थयाख्यात चा० १०, ए विछेद गया। तीजे पाटे प्रभव स्वामी। इम पाछै कहता त्यां मांहिला २७ पाटे देवढी षमाश्रमण जाणवा। भगवंती सूत्र मध्ये २० सुत षंधवै, आग्में उदेसें गोतम पूछो— ए भगवंतें कह्यो साध साध्वी श्रावक श्राविका रूप तीर्थ २१ हजार वरस लगि रहिसी। १००० वरस पूर्वनो ग्यांन रहिसी। पछै देवढी षमाश्रमण आ० एकदा सूंठ नो गांठीयों ल्याया हुंता। ते षावा वीसरी गया। काल अतीक्रमी गयौ। पछै चींता आव्यो। तिवारे विचारचों। वुध हीण थायै छै, सूत्र मुष थकी वीसरी जास्यै तो धर्म किम चालस्यें। इम जाणी धर्म वृधनि मते ९८० बरसे पुस्तकारूढ ते पुस्तक उपर सूत्र चढायो। २७ पाट लगें सुध मार्ग चाल्यों।

तिवारै पछै बारै वरसी दुकाल पड्यो। तिवारें घणा साधां संथारो कर्यो, आपणा कार्य सार्यां। केतलाएक कायर थया ते मोकला पन्या। भेषधारी थया। दुकाल उतर्या पछै सुगाल थया। तिवारें पछैं ते लिंगधारीयें आपणा श्रावक आगल इम कह्यो—जें भगवंत तो मोष पोहता ते माटें भगवंतरी प्रतिमा करावो जिम भगवंत सांभरै जै थकी घणो लाभ थास्यै। तिवारै श्रावक लिंगधारी रों वचन मांनी देहरा उपश्रा घणा कराव्या। ठांम ठांम गांम नगर में पूजा प्रतिष्टा घणी थई। जिन मुक्त पोहतां पछै ४७० वर्ष पछै भगवंत नो साको थयो। तिवार पछै वीर विक्रमादित नो साको थयो। ५८४ वरसें पांचमो निनव गोष्टमाइल भगवंत पछै साध मांहेंथी टली नै विपरीत परूपणा कीधी। निन्हव हुयो। ६०९ दिगंबर धर्म नीकल्यो, निन्हव हुओ। भगवंत ना वचन उथाप्या। नवाग्रंथ बांध्या। ८८२ हे हरांनी थापना घणी थई। १००० पूर्व रो ग्यांन रह्यो। पछै विछेद गयो। १००८ वरसें पोसाल मडांणी। १४६४ वड गछा हुआ। गछ चोरासी बयांणी। पछै १६२९ पुनमीया, १६५४ आंचलीया, १६७० षरतरगछ, १७२० आगमीया। १७५५ तप गछ पोसालमांहि घर आप आपणा श्रावक कीधा, गछना समुदाय कीधा। ते सिद्धांतना पांना हुता ते भंडारा में राख्या अनें पोतानै छांदै घणी विपरीत जोड कीधी। ते जीव चिंतवें मन देहरै जाइउ। आस तणो फल तेहनै थाय। इत्यादिक सकाय तवन, चौपी, काव्य, छंद, श्लोक, गाथा, सेत्रुंजा माहतम,

पोतानी मत कल्पनाइं हिंसा मइ धर्म प्ररुप्यों । गुरुनी पूजा पोथी पूजावी गोतम पडिगो, षमा श्रमण वोहरवा गुरु नै सामेंलों करिवों । गाजावाजा करी नगर माहि ल्यावणो । जर तेला करवा । गोला तेला, चंदण वाला ना तेला, समद डोवणा तेला, पंचमादि उजमणा इत्यादि । घणी सूत्र विपरीत परूपणा कीधी । पछें भंडारवा सास्त्रांना पत्र उदेइ षाधा ते बाहिर काढ्यां विचारंचो । ए लिषण तो भला ।

पछै कोइ काल साध जै विरला विचरचा छ । अने इहां विरह थयो दीसै छै । वेष धारीए लंका मूहतौ श्रावक कारकून छे ते उपाश्रे आव्यों । तिवारें लिग धारीयां कह्यो जिन मार्ग नो कांम छे । पाना उदेही षाधा छे ते लिषाग्रें तो वारू । तिवारें लंके मूहते कह्यो-ते ल्योवों । तिवारे एक दसवैकालक नी प्रत, आपो । १५३१ सांवत तिवारें भस्मग्रह उतरचों हुंतों । तिवारें लंके मूहते प्रत वाची विचारचो । श्री तीर्थंकर तो दशवेंकालिक माहितो धर्म अहिंसा, तें दया, संयम, तप, धर्म कह्चो छें । अने साधु ५२ अणाचार टालवा, ४२ दोष टालीने आहार लैणो । त्रि विधें छकायनी दया पालवी । १८ दोष मांहिलों एक ही सेवै ते साध पणा सु भिष्ट कह्चौ । टाले ते साधवलो भाषा विचारी नै निर्वद्य बोलवा आचार दृढ पालवौ । गुणवंत गुरु नौ विनय करवौ कह्चौ छै । अने भिखूनां गुणकेहता ते वाची अतंत हिर्दे हर्ष्यों । अपूर्व वक्त थाइ इम विचारचों-वीर वचन जोतां ए वेष धारी दीसे छै । दया धर्मनइ साधनो आचार ढांकी नै रहना हिंसा धर्म नी परुपणा करइ छै । पौतें मोकला पभ्या छै ते माटें एहनो हिमारू कहना ठीक नही । रपै उलटा पड़े ते माटें बेवडी प्रत उतारीये । तो वारु, इम चींतवी सगली बेवडी प्रत उतारी । ते एको की आप राषी एके की तेहनै दीधीं । लंके मूंहते पोते घरे सूत्रनी परुपणा कीधी । तिवारै घणा भव्य जीव सांभलवा लागा । घणा हलूकर्मी जीवने दया धर्म रुचिवा लागों ते काले अरटवाडा ना वांणीया, ते संघ काढीनें से जवाला गारा प्रमुष लेइ जात्रो नीकल्या छै । वाटें मावटों हुयों ।

तिवारै जे गांम मांहि लंको मूंहतों दया धर्मनी परुपणा करै छै । ते गांम मधे संघनो पडाव थयो । तिवारै संघवीए षवर जांणी । जे लंको मूंहतो सिद्धांत वांचै छै ते अपूर्व वांणी छै । इसो जाणी नै संघवी

घणा लोकां संघाते सांभलवा आव्या । तिवारे लंका मूंहता पासें दया धर्म तथा साधनौ आचार धर्म सांभली नै संघवी ना मन मांहै रुच्यों । तिवारें केतलाएक दिहाडा सांभलवा गया । तिवारैं संघ मांहै लिंग धारी हुंता तेणैं जांण्यो । जे लका मूंहता पासे सूत्र सांभलवा जाएछै । ते माटे संघवी पासें आया । संघवी ने कह्यो संघ आघो चलावौ । लोक माहूथाए छै । तिवारै संघवी बोल्यों-वाटें अजयणाछै । वाटें चूडेल प्रमुष घणा जीव थया छै । तेहणा स्पै तिवरें । ते गुरु बोल्या-साहजी धर्म ना काम माहें हिंसा गिणः श्रे नही । तिवारैं संघवी मन मांहै विचारयों जे हवा मे लंका मूहता पासे सांभल्या छै । भेषधारी अनाचारी, छकायनी अनुकंपा रहित तेहवाज दीसैं छै । तिवारैं तै जती पाछा गया । संघवी नै सिद्धांत सांभलतां वैराग उपनौ । पैंतालीस जणां सु संवत १५३१ संजम लीधो ।

साध सरवो १, साध भाणु २, साधु नुणु ३, साध जगमाल ४, प्रमुष ४५ साधरैं मिलीनै दया धर्म परुपवा लागा । तिवारैं घणा भव्य जीव दया धर्म आदस्यों । लूंका लूंका एहवो नाम लोकें दीधो । पछे वेष धारीएं लोक घणा लूंका थया जा स्यैं नें आपणी महिमा घटस्यै । इम जाणी क्रिया उधार कीधो । १५३२ तपा क्रिया उधार कीधो । आणंद विमल सूर हिंसा धरम परुपो, घणा लोकां नै हिंसा धर्म प्रतमानी परुपणा करी । तेथी वलीनथा घणा थयाः । सं १६०२ आंचलीया क्रि २, सां १६०५ परतर क्रियानुधार करी कष्ट कीधा । हिंसा धर्म भाख्यो । घणा लोक लूंका हूंता था ते सूंसता पाम्या पछै । ते जतीयां जतीयां ना श्रावकां घणा साधा श्रावकां नै उपसर्ग दीधा । तेपिण उतम पुरुषां सम भावैं सहना । दया धर्म थकी न चल्या ।

तिवारै पछै रुपो साह पाटण नों वासी, तिणें संजम लीधौ । ए पहिलो पाट थयो । पछै सूरत नो वासी, साह जीवों पुन प्रकतीया हूआ । तेणौ रूपरिष कने दिख्या लीधी । ते व्यवहार सुध जांणवा । तथा पछै थांनक सदोष सेववा लागा । आहारनी वींनतीयें जावा लागा । वस्त्र, पात्र मर्यादा लोपी । आचारें ढीला पड्या । पछै सं १७ नें आश्रें, सूरत ना

वासी, वोहरा वीरजी साहा, श्रीमाली दसा, लोकमें कोडीधज कहींजता। तेहनी बेटी फूलवाई तेणें लवजी साह नै पालवा लीधा हूंता। ते लवजी साहनै लंका नै उपाश्रे सिद्धांत वाच्या, वैराग उपनौ। आचारनी षवर पडी। वोहरो वीरजी कहै-लूंका नै गछ माहै ल्यौ तो आग्या देउं। तिवारइ अवसर जाणीं रिष वरजांग पासै दिष्या लीधी। घणा सिद्धांत २०२३ लूंवगजि २०६५ अर्थ भण्या। पोताना गुरु नै एकांत पूछ्यौ। दस अध्य गणाःयं इत्यादिक हतों आचार साधनौ छै तिम गुरु कह्यौ आज पांचमों आरो छै। तिवारे कह्यो २१ हजार वर्स लगें तीर्थ चालस्यें। तम्हे हिवडां स्युं कहनो छौ। अम्हे तो आत्म उधार करस्यै। तम्हे पणि गछ छोडौ। ते कहै-छूटे नहो, तरै रिष लवजी १, रीष भाणों २, सपीयो ३, ए तीनें गछ छोडी, फेर दिष्या लोधी। गांम नगरादिकें विचरी, घणा जीवनै दया धर्म सुध धर्म पमाम्यो। लोके ढूंढीया एहवौ नांम दीधो।

पछे अंमदावाद कालूपुर ना साह सोमजी २३ वरसमे, ४७ वरस दिष्या पाली। ताढ ताप सहना। काउसग्र कीधा। घणो पिरवार साधनो थयौ। पछै हरीदासजी १, पेमजी २, कांनजी ३. गिरधरजी ४, गछ लूंकामासुं निकल्या। वरसींगजी रा सुं: कंवरजी रा सुं निकल्या ते कही यै छै— अमीपालजी १, धर्मसाहजी २, हरजीजी ३, श्रीपालजी ४, जीवौजी ५, इम घणा नीकल्या, दिष्या लीधो वली समर्थ जी १, टोमुजी २, मोहणजी ३, सदानंदजी ४, वेदांजी ५, संघजी ६, आदि गणा गछ छोडी दिष्या लेई जिण धर्म दीपायौ।

अने गुजरातका वासी धर्मदासजी पोतीयावंध था ते पोतीवौ छोडी दिष्या लीधी। गछ छोडी नै आपणै मैलै घणां दिष्या लीधी। तिम धर्मदासजी पिण आपनै मेलै दिष्या लीधी। घणा साधारों पिरवार हुओं। घणा वैरागी साधू हुआ। घणां जणां पोतीयौ छौडी साधपणो लीधौ, जिणमारग दीपायौ। चिलत सिष नै ठांमे आप धर्मदासजी धार नगर मै चौमासौ मैं संथारौ कीधौ। चढतें परणामै ज्यांरा साध घणा गुजरात मै विचरता हुआ। साध धनोजी मालवाडो साचौर दिसी, तिणरा कांमदार

धागा मूहता ना बेटा । तिणे घणा हजारांरी ममता छोडी, सगाइ छोडै सूं पोतीयाबंध थया । पोतीयौ छोडो ने धर्मदासजी कनै दिख्या लेइ मारवाड में विचरया । छतपुरी उवंरात विगै ए त्याग कीयौ । रात्रै बेठा रहता घणा कालतांइ एकंतर कोधा । पछै ६ मास बेलै २ पारणो करतां कह्यो-गोडां उतर दीवो दीसे छै । तरै साध बोल्या-स्वांमी बेलो २ करोइज छो । तरे पूज बोल्या—अबै तो थांभो धांन खाजै तो धनो धान खाजै । वि दिनरो संथारो आयो ।

ज्यांरै पाट पूज धुधरजी स्वामी नागपुरना वासी,पूं जातरा मूह-णोत सजन पछै सोजत में थकां अस्त्री नै बेटी घणो धन छोडी दिख्या लोधी । घणो तपसाडा तापना अभिग्रह कीधा । घणा जीवां नै प्रतवो धीया, दिख्या दीधी । जेणा रै तीन बडु परवार सिष्य हुआ-ते रुघनाथजी १, जैमलजी २, कुसलोजी ३ पंच महा व्रत धारी । नव विध ब्रह्मचारी, विसुद आहारी, उग्र विहारी, छ कायना प्रतिपाल, सर्व जीवां सा दयाल, बहु सास्त्र संभाल कि बहुना गुण माल इस्या मोटा पुरस छै । तिणां पिण घणो उद्यो जिणमार्ग नो कीधो । अने पुज्य धुधरजी घरमैं थकां सूसकीधोथो संव १७१७, दिख्या १८०४ फा० सु १५ पछै संथारो धारयौ थो । ते आणूंच मंडतै चोमासइ पांच ५ नै छ छ पारणो करता । आसोज सुद १० परभाते पारणो लेइ गया संथारो करयो । साधां पिण वा चार धवी वै वार सावधान मन मैं जांणीयै । पछै ज्यांरै पाट पूज्य रुघनाथजी नगर सोजत ना वासी । पाछली राते आगला पाछला भव जोवतां न सूजै तरे माता सां वडा उपर धरणो ते एतलै । सं १७८९ वुध० पधारया लोक जांतां देखी गया । समण्या लरै माता साधां कनै जावनौ सूं सक रायौ । तो पिण धर्म उपर गैरातै आदै १७ वरस न समण्या छोड करी पछै सं १७८७ वरस २२ मै माता बेटा बेहु जणा दिख्या लीधी । घणा भव्य जीवांनै जिनमार्ग आंण्या । पोतीय बंधांनै सम-तेरै पंथी नवा निनव उग्रा । तेह सूं वार ९ घणो गांमे चरचा करी । मिथ्यात उथापा, जिन धर्म नै दीपा, समान दुर्ग तप पुतांनै आधार भूत घणां ना मिथ्यात सल मेटए

---

(७)

मरुधर पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली में मध्यवर्ती विभिन्न घटनाओं का यथा प्रसंग वर्णन करते हुए भगवान् महावीर से लेकर तत्कालीन प्रमुख मुनि श्री सौभाग्यमल जी महाराज (संवत् १९५७) तक के ८४ पट्टधरों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। देवर्द्धि क्षमाश्रमण तक के २७ पाटों का वर्णन अन्य पट्टावलियों के अनुसार ही है। बाद के २८ से लेकर ८४ तक के पट्टधर आचार्यों के नाम इस प्रकार हैं—२८-वीरभद्र, २९-संकरसेन, ३०-जसोभद्र, ३१-वीरसेन, ३२-वीरजस, ३३-जयसेन, ३४-हरिषेण, ३५-जयसेन, ३६-जगमाल, ३७-देवरिख, ३८-भीमरिख, ३९-किशनरिख, ४०-राजरिख, ४१-देवसेन, ४२-शंकरसेन, ४३-लक्ष्मीवल्लभ, ४४-रामरिख, ४५-पद्मनाभ, ४६-हरिशरम, ४७-कलशप्रभु, ४८-उमणरिख, ४९-जयषेण, ५०-विजयरिख, ५१-देवरिख, ५२-सूरसेन, ५३-महा सूरसेन, ५४-महासेण, ५५-जीवराज, ५६-गजसेन, ५७-मित्रसेन, ५८-विजयसिंह, ५९-शिवराज, ६०-लालजी, ६१-ज्ञानरिख, ६२-नानगजी, ६३-रूपजी, ६४-जीवराजजी, ६५-बड़ा वीरजी, ६६-लघु वीरसिंघजी, ६७-जसवंतजी, ६८-रूपसिंघजी, ६९-दामोदरजी, ७०-धनराजजी, ७१-

चिंतामणजी, ७२–खेमकरणजी, ७३–धरमसिंघजी, ७४–नगराजजी, ७५–जीवराजजी, ७६–धर्मदासजी, ७७–धनराजजी, ७८–भूधरजी, ७९–रुघनाथजी, ८०–जीवणचंदजी, ८१–तिलोकचंदजी, ८२–धनराजजी, ८३–दौलतरामजी, ८४–सोभाग्यमलजी।

इस पट्टावली को सोभाग्यमलजी के शिष्य अमरचंद जी ने संवंत् १९५७ श्रावण शुक्ला पूर्णिमा, शुक्रवार को पीपाड़ में लिपिबद्ध किया था। पट्टावली के अन्त में पूज्य श्री रुघनाथजी महाराज के शासनवर्ती १०५ मुनियों, तिलोकचंदजी, सोभाग्यमलजी व धनराजजी महाराज के विभिन्न शिष्यों तथा वर्तमान में प्रचलित स्थानकवासी परम्परा की सम्प्रदायों का नामोल्लेख मात्र है।]

॥ ॐ नमः सिद्धं अथ पटावली लीषंते ॥

श्री जेसलमेर ना भंडार मांहे थी पुस्तक तारपत्रां मी लव्याना, तीण मुजब ए पटावली परपरा ना पाटांनपाट उतारीया छै। तेनी वीगतः। चोथा आराना पचोत्र वरष साडा आठ मास बाकी रह्या जद देवानंदा व्रांमणी ने माहा पुन्यने उदये गरभ मांहे भगवंत आइने उपना ते गरभ ने बयासी दीवस हुवा पछे तयांसी दीन नी रात्री हरणगमेषी देवताए क्षत्रीय कुडलपुर नगरना राजा सीधारथ तेहनी पटराणी त्रीसला राणी ना उदर मां ते गरभ मुक्यो। उपरला सघला दीवस गणतां व्रण बरस वा नव मास वदीत हुवा पछै चैत्र सुदी तेरस ने सोमवारनी रात्रीए माता त्रीसला ने पेटे कुवर प्रसव्यो जनम मोंछव नो वरण जंबूपंनथी जाणवो। रांणी त्रीसला ने पेटे गरभ रह्यां पछी तेहना घरमां धनधांन आदेन सरबनी वृधी हुइ तेथी कुवर नु नांम वरधमांन दीधोः॥ बीजु माहावीर नांम पारवा नु कारण प्रसीध छे के वरधमांन कुवर बाल क्रीरा करता हता। ते समे तेमना बल नी परीक्षा करवा सारु एक बलवांन देवता आव्यो। ते देवता ने अने

वरधमांनए बेने माहोमीहे जूध थयो । ते समे वरधमांन कवर तीण देवता नै वांधी लीनो । ते देवता ने माहा महनेत इंद्र तेने छोड़ाव्यो । ते दिवसथी माहा वलवान जांणीने ते कुवरनु माहावीर ए नाम स्थाप्यो । तेहनो जनम कास्यप गोत्र ने, इक्षाग कुल मां थयो हतो।

वरधमांन कुवर सात वरष जाजेरा थया । तीवारे सुभ महुरत सुभ लगन मां सीधारथ राजा वरधमान कुवरने कलाचारज नी पासे पढवा मेल्या: तीन समय कलाचारज वरधमान कुवर ने प्रथम ॐ नमो सींघं तथा भले तथा क को तथा वाराषडी प्रारभ करावी । तीन समय पहेला देवलोक नो इंद्र सूधरमी सभाने विषे सीगासण उपर बेठा हुवा चोरासी हजार समानीक देवता मुष आगले बेठा हे । तीन लाष छतीस हजार आतमरषी देवता, च्यार लोग-पाल, तेत्रीस गुरु स्थानीक । और पीण असंख्याता देवता का परवार सू: इंद्र सभा मां बेठा। तीन समये सकेंद्र माहाराजनो आसन कंप्यो। ते वारे अवध ग्यांन दीयो—जंबु दीपना भरत क्षेत्रमें क्षत्री कुंडलपुर नगर में वरधमान कुंवर ने कलाचारज पडावता देष्या । ते वारे इंद्र ने वडो अचरज उतपन हुवो ।। ए त्रणग्यांनी पुरषनेः ए अंग्योनी सू भणावै छैः, तीवारे इंद्र माहाराज ब्राह्मण नु रूप करीने लोकामें भगवंतनी महीमा वतावा ने क्षीत्री कुंडलपुर नगरमां आवीने कलाचारज ने प्रश्न पुछता हुवा ॐ नमो सींघं तथा भले क को एहनो अरथ कीम छै । ए व्राह्मण नो वचन कलाचारज सुणी ने मन में प्रश्न नो जवाब देंवीने असकत हुवोः । पछे वरधमांन कुवर नो सरव अरथ समजाव्यो । तीवारे कलाआचारज वरधमांन कुंवर ने पगे पड्यो । इंद्रपण आवी पगे पडाने गुणग्राम करया । इंद्र आपणे ठांमे गयो । पछी कलाचारज ने बहु द्रव्य आपीने वरधमांन कुवर पीछा घरे गया ।

वरधमांन कवर सतरे वरषना हुवा जव विंवाह हुवो । समर वीरं राजानी यसोदा पुत्रि साथे पांणी ग्रहण कराव्यो। तेहनो आउषो नेउ वरसनो हुतो । वरधमांन कवर तीस वरष गृहस्थाश्रम मां रह्यो । पछी संसार अथीर ने असार जांणीने त्याग करी न दीष्या धारण करी । ते वषते समण भगवंत एवु नांम आप्यो । जे दीने भगवंत दीष्या लीनी ते देने भगवंत ने चोथो ग्यांन उपनो । दीष्या लीयां रे वाद साडी वारा वरष ने एक पष सूधी छदमस्त रह्याः । छदमस्त पणा मां अनेकं परीसाहा उतपन हुवा ।

सुख प्रणामें रह्या । अनेकांत तप करीनें अपरमादपणे रहीनें केवल ग्यांन उतपन हुवो । केवल प्रव्रज्या साडा गुणतीस वरष मे एक पषनणो पाली नें चोथा आराने अंते, त्रण वरष साहा आठमास बाकी रह्या त्र पावा पुरीमां चरम"" सो वीर प्रभू नो हुवो ।

श्रमण भगवंत श्री माहावीर सामीनें अंत समीपें एकवार शकेंद्र देवइंदेव राजा वंदणा करीने प्रभू पत्ये कहेवा ग्या के हो भगवंत—तमारा जनम नक्षत्रे भस्म नामे ग्रह ओसमो बेहजार बरनी स्थीती नो बेठो छेः। तेथी करी तेनो प्रभाव कांइ थासे । तिवारे श्री भगवंत बोल्या के हे शकेंद्र—भसमग्रह बसवा थी बेहजार बरष में जेन धरमनी पुजा प्रतिष्ठा कम रहेसे न तीवारे पछें जेन मत ना साधु साधवीमी उदय उदय पुजा सतकार कम थासे । ए संग पडानी साष छैः । पावापुरी मां चरम चोमासी विर परभु नो हुतो । काती वद अमावस नि आधी रातेना माहावीर सामी निरवांण पोहोता । तीन समय अनेक मछर तथा डांसादीक नी उतपती बोत हुइ । तिवारे सकेंद्र तथा अठारे देश का राजा गौतम सांमी प्रत्ये प्रश्न करता हुवा—के वीर प्रभू का निरवांण समयें खूदरी तथा दुष्ट जीव की उतपती बोहोत हुई तेनू सू कारण । तेना उत्रमां गौतम स्वांमी सरव चतुरविध संघ प्रत्ये वांणी वावरता हुवा—के पंचमा काल में साधु साध्वी आददेन चतुरविध संघनें अनेक तरेहनो परीसा उपजावनहार मीथ्याती षूदरी जीव समांन घणा होसी । श्री भगवंत मोक्ष पधारीयां पीछे लारली डोढ पोहोर रात्री रही तें समय गौतम स्वांमीने केवल ग्यांन उपनौ । भगवंतना मुष आगल अगीयारे गणधर हुता । ते दुवादशांगी चउदे पुरवना धरणहार हुता । पहेला इंद्रभूती नांमे । एहनो आउषो बाणु वरसनो । बीजो अग्नभूती नांमे एहनो आउषो छीमंत्र वरसनो। तीजा वायुभूति नांमे एहनो आउषोः सीत्र वरसनो । ए तीन गणधर सगा भाइ हुता । एह गौतम गौत्री ना हुता । चोथा विकट स्वांमी नामे एहनो आउषो असी बरस नो । एहनो भारदाइ गोत्र हुतोः । पांचमा सूधरमा नांमें गणधर । एहनो आउ० । एहनो गोत्र अग्नी वेस हुतो । ए पांच गणधरा नै पांच २ से शीष्य हुता । छठा मंडी पुत्र नांम । एहनो आउषोः ८३ वरसनो । वासिष्ठ गोतर हुता । सातमा मोरी पुत्र नांमे । एहनो आउ पचोणु वरसनो,

काश्यप गोत्र हुती । ए दोउ गणधरोने साडात्रण सेहू शीष्य हुता । आठमा अकमपित नामे । एहनो आउखो इट्ठत्र वरस नो, गोत्र हुता । नवम अचलात नामे । एहनो आउखो बोहत्र वरस नो, हारियण गोत्र हुती । ए बे गणधर ने त्रणसे शीष्य हुता । दसमा मेतारज नामे । एहुनो आउखो बांष्ट वरसनो, कौडिन गोत्र हुतो । अने अगीयारमा श्री प्रभत्रा नामे । एहनो आउखो चालिस वरसनो, कौडिन गोत्र हुती । दसमा अने अगीयार मा ए दोय गणधर ने त्रण त्रण से सीस हुता । सरब एकांद्र अगीयारे गणधर ने शीष्य चमालीसे हुता । पेहेला अने पांचमा गणधर टालने, नव गणधर राजग्रही नगरीमा पादुगमन संथारो एक मासनो करी ने मोक्ष पधारीया । इंद्रभूती नामे गोबर गांम ना वासी हुता । तेमना मीतानो नांम वसुभूति हुतो । अने मातानो नाम पृथविसेना हुतो । गोतम स्वामी पचास वरष गृण्दाश्रम मां रह्या दिख्या लोनी पछे त्रीस वरष छदमस्त रह्या । बारे वरस किवल प्रज्या पाली । माहावीर स्वामीना निरवाण पछे बारे वर्ष पछी राजग्री नगरी मां निरवांण मोहोंच्या । गौतम आउखो बांणु वरसनो हुती ।

माहावीर स्वामी ने पाट प्रथम पाट सुधरम स्वामी बेठा । ए पहलो पाट हुवो । सुधरमा स्वांमी कोलक गांममां जनम्या हुता । तेह गृहण्दाश्रम मां पचास वरष रही ने दख्या लीधी । बेतालीस वरष दिख्या लीधां बाद छदमष्ट रहया । पछी अठ वरष केवल परज्या पाली । सरव सो वरष नो आउखो सुधरमा स्वांमी नो हुवो । वीर प्रभु पछी वीश वरषे नीरवाण थया ॥२॥ सुधर मा स्वामी ने पाट जंबू स्वामी बेठा, ए दुसरा पाटवी ॥ जंबू स्वांमी राजगरी नगरी ना वासी, काशप गोत्र ना शेठ रीषभ दत्तने धारणी ना कुवर हुता । ते जंबू कुवर सोल वरष तो गृहस्था श्रम मां रहया । पछी सुधरमा स्वांमी पासे दीख्या लीनी । दीक्षा लीधां पछी वीश वरष छदमस्त रह्या ने चमालीस वरष केवल प्रज्या पाली । सरव आउखो जंबु स्वांमी नो असी वरष नो हुवो । विर निरवांण हुवां पीछे चोष्ट वरष लगी केवल ग्यांन भरत क्षेत्र मां रहयो ने जबु स्वांमी मोक्ष पधारीया ते दीन पीछे भरत क्षेत्र मां दश बोल वीछेद हुवा तेनो वीगत ।१। केवलग्यान ।२। मन प्रजव ग्यांन ।३। परम अवध्याग्यांन ।४। पुलाग लबध ।५। आहारीक लवधि ।६। उपसमसेण षपक सेण ।७। जीन कल्पी ।८। परीहार विसध ।९। सक्ष्म संप्राय ।१०। जंथाख्यात । ए तीन

चारीत्र एवं दश बोल वीछेद गया भरत्र षेत्रमां ।।३।। जंबू स्वांमी ने पाट प्रभत्रा स्वांमी वेठा, ए तीसरा पाटवि ।। प्रभवा स्वांमी ते कात्यायान गोत्र ना हता । तेहनो तीस वरष गृहस्थाश्रम मां रह्या । चमालीस वरष समान प्रज्या पाली । अने इग्यारे वरष आचारज पदे रह्या । तेहनो सरब आउषो पंच्यासी वरष नो हुवो । वीर पछी पीचंत्र वरष देवगत हुवा ।।७५।।४।। प्रभवा स्वामी ने पाट सीजंभत्र स्वांमी वेठा, ए चौथा पाटवी ।।४।। सिजंभव स्वांमी ते राजग्रही नगरी ना रहेवासी, अने वातसयन गोत्री ना हता । अठावीस वरष गृहस्था मां रह्या । अगीयारे वरष समान प्रवरजीया पाली । अने तेवीस वरष आचारज पदे रह्या । एवं चोतीस वरष दीष्या प्रज्या पाली । तेमनो सरबर आउषो वासठ वरस नो हुवो । वीरना नीरवांण पछे अठाणु वरष स्वरग पद पांम्या ।।९८।।५।। सिजंभ भत्र स्वांमी न पाट जसोभद्र स्वामी बेठा ।।५।। जसोभद्र सांमी, हस्त नागपुर ना रहवोसी हता । ते अनोतू गयायन) गोत्रना हता । बावीश वरष गृहस्थावास मे रह्या । चउदा वरष समान्य प्रवरज्यां पाली ने पचास वरष आचारज पदे रह्या । एणी रीते चोष्ट वरषं दीष्या पाली । तेमनो आउषो छियासी वरस नो हुवो । वीरना नीरवांण पछी एक सो ने अडताअलीस वरसे स्वरग पद पांम्या । तेमना सीष्य बे हुता । तीणांरा नांम संभूत विजय १ अने भद्रबाहु ।।२।।१४८।।५।। जसोभद्र स्वांमी ने पाट (संभूत विजय स्वांमी ने पाट) संभूत विजय स्वांमी बेठा ।। ए छठा पाटवी ।।६।। संभूत विजय स्वांमी ते राजगृही नगरी नां रवासी हता । तेहनो मांटर गोत्र हुतो । ते बेतालीस वरष गृहस्थावास मे रह्याने । चालीस वरष समान प्रवरज्या पाली ने आठ वरष आचारज पद रह्या ने एवं अडतालीस वरष दीष्या पाली । तेमनो सरब आउषो नेउ वरषनो हुवो । वीर नीरवाण हुवां पछी एक सो ने छपन वरषे स्वरग पद पांम्या ।।१५६।।७।। संभूत विजय ने पाट भद्र बाहुं सांमी बेठा, ए सातमा पाटवी ।।७।।

भद्रबाहु स्वांमी ते प्राचीन गोत्र ना हता । ते पतांली वरष ग्रहस्था श्रम मां रह्या । सतरे वरष समांन्य प्रज्या पालीयां पीछे चउदे वरष आचारज पदे रह्याः एवं इकतीस वरष दीष्या पाली । तेमनो आयुषो छियंत्र वरषनो हुवो । वीरना नीरवांण पिछे एकसो सीत्र वरषे स्वरग पद

पांम्या ।।१७०।। भद्रबाहु सांमीनी वारानी हकीकत । चंद्रगुपत राजाने सोले सूपनां नो निरणय । भद्र बाहु स्वांमी एक रीयोन. पंचम काल नो स्वरूप वधो वतायो । तेनी साष व्यवहार सूत्र नी चुलका मा छे । चंद गुपत राजाने प्रतिवोध दीधो न तेमने दीष्या दीवी । ते राजा दीष्या पाली स्वरग पद पांम्यां । विरना नीरवांण पछे । एकसो सीतर वर्ष तांहि । मंडलीक तथा माहा मंडलीक राजा आददेन दीष्या लीनी । त्यारे बाद राजा नी दीष्या वंद हुइ । भद्रबाहु स्वांमी चउदें पुरवना जांणकार हुता । भद्र वाहु स्वामी ना वषतमां एह पली..... .....काली पडी....... .. बारे वरष नो माहा मोहोंटो दुकाल पडयो हतो । तीन समये घणा साध साधवी ने खुध्या नो परीसा घणो हुवा ना जोगथी अनेक सासत्र भणवानो उदम वन्यो नहि । तेथी घणा सास्त्र विसरजन हुआ । घणी वीद्या विछेद हुइ । तेमां साधु साधवी श्रावक श्रावीका ने पण संकट घणो पडीयो हतो । ते दुकालना समय मां पाडलीपुर सेहेरने विषे श्रावक संघ एकठो थयो । अने अधेन उदेसीदीक मेलवा मांडीया । पण तेमांना कतेलाक मीलया नहीं । तेथी च्यार संग मीलने विचार करियों । पीछे इम बोलता हुवा के नेपाल देसमां भदरवाहु स्वांमी चउदे पुरबीक साधु छै । तै परथी तेमने बोलाववा सारु बे साधु ने मोकल्या । ते साधु वां त्यांजइ ने भद्र बाहु ने बे हाथ जोडी ने । वंदणा करीने कहवा लागाः क पाडली पुर सहरे मां आपन संघ वोलावे छैः । तीवारे पोते ध्यान धरी कह्यु-के बारे वरषनो माहाकाल छै । हमणां हु आवीश नही । पिण सरब देस मां सूषसाता हुसी । त्रे आवसू ने सूभ असुभना अरथ ना नीरणे करसू । ए वोचन सूणो ने साधू पोछा गया । तीवारे पछे वारे वरस नो काल वडीत हुवो । सारा देसमे सूषसाता हुइ । त्र पीछे भद्रवाहु स्वांमी पाडलीपुर मा पधारीयां । च्यार सीध एकठो करीने । साधु साहवी अधेन उदेसा विसरजन हुवा। ती के सरब सूध कराया ।।८।। भद्र वाहु स्वामी ने पाट थूल भद्र स्वांमी वेठा ए आठमा पाटवि ।।८।।

थूल भद्र स्वांमी ते पाडलोपुरना वासी हुताः । ते गोतम गोत्री ना हुताः तेमना पीतानो नांम सकडाल हुतो । ते श्री संभूतविजय नां सीष हता । तीस वरष गृहस्थाश्रम मां रह्या । चोविस वरष समान प्रवरज्या पालीः । पतालीस वरष आचारय पद रयाः एणी रीते गुणत्र वरस दीप्या पाली, सरब आउषा नोनांणु वरसनो हुवो । विरना नीरवांण पछे दोयस

ने पनरे स्वरग पद पांम्या ।। २१५ ।। ९ ।। थूलभद्र स्वांमी ने पाट आरज माहागीरी स्वांमी बेठा, एनवम पाटवी ।।९।। आरज माहागारी स्वांमी । तेहनो बासीष्ट गोत्र हतो । तीस वरष गृहस्थाश्रम मां रया ने चालीस वरष समान प्रवरज्या पाली ने । पीछे त्रीस वरस आचारज पद रया न सरब सीतर्वरष दीष्या पाली । तेमनो सरव सो वरष नो आउपो हुतो । विरना नीरवाण पछे दोयसे ने पताली वरस स्वरग पद पांम्या ।।२४५।।१०।। आरज माहागीरी स्वांमी न पाट वलासीह स्वांमी पाट बेठा ए दसमा पाटवी ।।१०।। बलसींह स्वांमी ते व्याघ्रपात गोत्र हता । ते एकतीस वरष गृहस्थाश्रम मा रह्या ने तीस वरस समान्य प्रवज्या पाली ने । पंतीस वरष आचारज पदे रह्या ने पंण्ट वरष दीक्षा पाली एवं सरव आयुषो छिनू वरषनो । वीरना नीरंवांण पछे दोय से ने असी वरषे स्वरग पद पांम्या ।।२८०।।११।। वलसीह स्वांमी न पाट सोवन स्वांमी एह नो दुजो नांम सूहस्ती छै तै पाट बेठा ।। ए इग्यारमा पाटवी ।।११।। सोवन स्वांमी ते बाइस वरस गृहस्था श्रम मां रया ने छतिस वरस समान्य प्रज्या पाली । अने वावन वरस आचारज पद रया । सरब अटीयासी वरस दीष्या पाली न सारब आउषो एक सो दस वरसनो । विरना निरवांण पछे । तीन से बतीस वरषे स्वरग पद पांमीया ।।३३२।।१२।। सोवन स्वांमी ने पाट स्यांमा आचारय स्वामी, एह नो दुजो नांम विरष सीह स्वांमी, तीस रो नांम इन्द्रन स्वांमी पाट बेठा ।।ए बारमा पाटवी ।।१२।। स्यांमा आचार्य स्वांमो तीस वरषं गृहस्थश्रम मा रह्या ने अडतालीस वरस समान प्रज्या पाली । पीछे छमाली वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या वोणु वरस पाली । तेमनो सरब आउषो सवा से वरसनो । विरना नीरवांण पछे तिनसे छियंत्र वरसे स्वरग पदे पांम्याः ।।३७६।।१३।। स्याम आचारय स्वांमी न पाट सडिलाचारंज तथा एह दुजो नांम अरजदीन स्वांमी पाट बेठा ।।ए तेरमा पाटवी ।।१३।। आरज दीन स्वांमी तेहनो गोतम गोत्र हुतोः । ते पचास वरस गृहस्थाश्रम मां रया ने बावीस वरस समान्या प्रवज्या पाली । पीछे तेतीस वरस आचारज पद रया, सरब पचावन वरस दीष्या पाली । तेहनो आउषो सरव एक सो पांच वरस नो । वीरना नीरवांण पछे च्यारसे नव वरसां स्वरग पद पांम्या ।।४०९।।१४।। आरज-दीन स्वामो न पाट जीतधर स्वांमी पाट वेठा ए ।।१४।।पाटवि।। जितधर

स्वांमी ते नव भरस गृहस्था आश्रम मां रह्या नें अढारे वरस समान प्रवरज्या पाली। ने पतालीस वरस आचारज पद रया। एवं तेष्ट वरस दीष्या पाली। तेमनो सरब आउषो बहोत्र वरसनो। वीरना नीरवांण पछे च्यारसे चोपन वरसे स्वरगवास पांम्या ॥४५४॥१५॥ जीतधर स्वांमी ने पाट अरज समुद्र स्वांमी पाट वठाए १५ मा पाटवी ॥ आरज समुद्र स्वांमी ते सोले वरस गृहस्था आश्रम मां रया ने सतावीस वरस समान प्रवरज्या पाली। पीछे चोपन वरस आचारज पद रया न इकीयासी वरस दीष्या पाली ने सरव आउषो सतांणु वरसनो। वीरना नीरवांण पछे पांचसे न आठ वरसां देव गत हुवां ॥५०८॥१६॥ आरज समुद्र स्वांमी ने पाट नंदिला आचारय स्वांमी एहनो दुजो नांम वैर स्वांमी पाट वेठा ए सोलमा पाटवी ॥वहर स्वांमी नूवन गांम मां जन्म्या हता। तेहनो गोतम गोत्र हतो। ते नव वरस गृहस्था आश्रम मा रया। तीन वरस समान प्रवरज्या पाली पछे'। तयासी वरस आचारज पद रया। सरव दीष्या छीयासी वरष पाली। सरब आउषो पचांणु वरसनो। वीरना नीरवाण पछे पांच से इकाणु वरेसे देवगत हुवा ॥५९१॥

अथ वैर सांमीनि कथा लीपंतो। जंवुदीपना भरत षेत्र मां नूववन गाम हुतो। तीहां धन गृही नामा सेठ हुतो। तीणरे सूनंदा नांमे अस्त्री हुतो। ते अस्त्रि ने आसा हुती। ते समे धनन गृही नांमे सेठ दीष्या लेने गुरु साथे विहार कीधो। पीछे ते अस्त्री ने पुत्र हुवो। तेहनो नांम मनदिला नांम कुवर दीधो। ते कवर मास ६ नो थयां। तीवारे कुवर ने जाति समरण ग्यांन उपनो। तीवारे आपणो पुरव भव संभाल्यो। तिवारे बालक वोहत रुदन करिवा मांडयो। ते रुदन करी माताने बोत दुष देवे। माता दुष सू बोल काइ होगइ। तिवारे गांमानुगांम विचरता माहाराज आरज दीन पधारिया। पीछे गोचरी वषते धनगीरी मुनि ने आग्या दीनी के तंमे गोचरी जावो। त्रे तमने सचीत तथा अचित बोहोरावे ते लेता आवजे। तिवारे धनगीरी मुनी वचन प्रमांण करीयो ने गोचरी पधारीया। ते गोचरी करते करते जीन घरसे आपनी कल्पा हता। तिण घरे आप आया। सुनंदा ए पोताना पती मुनी ने ओलषतां बोत रीस चढी। पेली तो बालक सूषीजी हती ने पोताना पती ने देषी ने मोह करम सू रीस बोत चढीने। तेने वशते बालक ने पात्रा मां वोरायो। ते लेइन गुरु

पासे आवीने सुप्यो । तेवारे बालक रोहतो रही गयो ने संतोष पाम्यां । ते बालक ने सुनंदा नांमे मोटी श्रावका ने सुप्यौ । तीण पाली पोसी मोटो कीधो । ते वालक नु नांम वहरीलाया तीणसु वहेर नांम दीधौं । ते बालक नव वरसनो थयो । जींणी ने माता सूनंदा ए ते पाछो लेवा जघरो करीयो । समसत संघ मलीने कहु के ए बालक ने वेरावीया तेथी ते दीष्या लेसी । तमारो नथी ।

दो जग्गा लडते लडते राज मे गया । ते राजाने विचार करीयो के ए न्याय करु तो आपणे नुकसान नो कारण छै । राजा ए उतपात बुधी करीने । बालक वेहर कुवर पासे नीचे मुजब न्याव कराव्यो ।

राजा एक कांनी ओगा पात्रा लावी धराय दीना ने एक कानी एक कन्याने सणगार कराय उभी राषी । वेहर कुवर ने राजा हुकम दीयो के—तुमारी इच्छया, ओघा पात्रा लेवानी होय तो साधपणो लेवो परसे, ने जो तमारी इछया कन्या लेनी की होयतो संसार मी रवो पडसे । ए दोय वचन राजाना सांभलीने वेह कुवर एक दम उठीयो ने ओगा पात्रा ने गृहण करीयाः । तिवारे राजाए तेनी माताने समजावि कए । छोकरो तो संजम लेसी । ए समजावी माता ने घरे मुकी । ते बालक नो ओछव मोहटे मंडाण करीने । चतुरविध संघ तथा राजा मीलने दीक्ष्या दीरावी ।। वेर स्वांमी ने पाट नागहस्ति आचारज पाट बेठा एहनो दुसरो नाम वज्रसेन स्वांमी ।। पाट बेटा ए सतरमा पाटवी ।।१७।। वजरसेन स्वांमी, ते कोसीस गोत्र ना हुता, ने दस वरस गृहस्थ आश्रम मां रया ने सोले वरस समान प्रव्ररज्या पाली । पीछे तेरांणु वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या एक सो नव वरस दीष्या पाली ने सरव आउषो एक सो ने उगणीस वरस नो । विरना निरवांण पछै । छसेन चोरासी वरसे स्वरग पद पांम्या ।।६८४।। हुवा ।।

वजरसेन स्वांमी ना वारा मे जेज कांम हुवा तेहनी हकीकत लीषंते ।। विरना नीरवांण सू छ से न नव भरसां (वरसां) पीछे डीगंबर मत नीकल्यो । तेहनी हकीकत आगे आवसी । वीरना निरवांण सू छ सो न वीस, वरसां सू बारा काली परी । ए दूजो बारा काली जांणवी । बारा वरष मां वीलकुल वरसाद हुवो नहि । घणा लोक आकुल व्याकुल थया । जेम उंछे पाणी मे माछला टलवले तेम अन पांणी विगर माणस टलवलवा लागा । एहवा वषतमें घणा साधु साधवि ने सुजतो आर पांणी नो आचारी

ने साधु ने सांसा परीया । तीरण समे माहापुरष आतमा अरथी । कोरीयापात्र ने सुजतो आहार पांणी नो जोग देष्यो नहि । तिवारे सात से हने चोरासी साधु जुदा जुदा ठीकांणा संथारो करी देवलोक हुवा ने अराधक हुवा, केइ कायर थया । ते तिणां सूं संथारो थयो नहीः । परीसोहो षम्यो नंहि । जावाथी मोकला पडीया । केइ माहापुरस स्मरथवान हुता ते वषत दश पुरवनी विद्या थी देषी ने बारा कालीनी हद छोडी । प्रदेश कांनी विहार कोधोः । ते वच्या ने जे बाकी रह्या ते भीष्ट हुवा । खुध्या षमी शक्या नहि, सुजतो अन पांणी मीले नहीः । कदाच मीले ता भिख्यारी रस्ता मां खोसी लेवेः । साधु ने आहार हाथ लाग सके नहि । तिवारे साधु लाकरी डांगां हाथमां राषवा सरु करीने । कटलाक साधु ए नवी जूक्ती करी । इण मुजब हाथ मे मुषपती राषनी सरु कीनी ने । ओगानी डांडी छोटी राषने उघाने छांने राषवा लागा । एक पचेवरी मांहे डाडी बांधवा लागा । उपर दुजी पीछेवरी उदवा लागा नै आहारनी जोली पीछेवरी माह राषनै हाथने आंटा देवा लागा । पातरान तथा लोटने मटकीने डोरां बांधवा लागा । माथे पचेवरी उंढव लागा । ए आदेन अनेक नवी जुगत करवा लागा । आहार ने निमतेः आधाकरमी असूजतो आहार आददे न सरब वस्तु दोषीली भोगवा लागा । तीरण समे साधु ने सुजतो आहार पांणी मीले नहि । तीरणसु दुषी हुवा तेथी संसार मे पेट भराइ करवा लागा । आप आपना नांमना मुकांमे रह्या । जंत्र मंत्र ओषद वेषद जोतक करवा लागा । लाग-धारी वेस थया ते छतां पेट पुर आहार ना सांसा परीया ने लोकाना संकट नो पार न रह्यो । गरीब ने श्रीमंत सरीषो दुष परीयौ । पैसा षरचतां पण अन न मीले ।

तेवा समय मां जितशत्रू राजा नी राजग्रहि नगरी मां एक जोनदत्त श्रावक वसतो हुतो । तेहना घरमां तेहनी श्री (स्त्री) नु नाम इश्वोरी हतो । सीयल करी सोभायमांन हती । तेहना घरमां पुत्र पुत्री नो पीरवार बहु हुतो ने तेहना घरमां द्रव्य बहु हुतो । दुकाल ने लीधे तेहना घरमां अन नो टोटो बहु परीयो । अने कुटंब परवार बहु पीरा पांमवा लागा । तीवारे सेठाणी सेठ परते कहवा लागी क घरमे अन बोहत कम रयो छे । ए वचन सूणीने सेठ कहवा लागा चले जित्रे कांम चलावोः । द्रव्य साथ अन न मीले सरम हेंजसो अवसर देष्यो नहि । सेठ दलगीर होकर इम कहवा लागा के रावरी करीने मांहे जहर घाली ने सगला पीने सूयरो । इसो वीचार करीने

सेठ जहर मंगाइ ने वांटवा लागा । तीन समय एक भेषधारी आहार लेवणने आयो । सेठ कहे कछु राब इण ने देवो । त्रे भेषधारी बोलीया के तमे सू वोटे (वाटो) । त्रे सरब हकीकत कहि । तरे भेषधारी कयो के म गुरु के पास जाइ करके पीछो आउ जित्रे तुमे धवो । इतरो कहि ने गुरु पासे आवी ने बोल्यो । सरब समाचार कया । गुरु सुण न विचार करीयो । आपणे तो आचार मे ढीला छो ने । आपणे बुधमलीन होय गइ । इण वातरी तो वजर स्वामी न षवर होसे के उवे पुरबधारी छेः । इसो वीचार कर भेषधारी वज्र स्वांमी के पास आयने सरब हकीकत कहि । ए वात सूणने व्रज स्वांमी सूरत ग्यांन सू देष ने सेठ ने घर आया । ते वजर स्वांमी ने देष न श्रावक श्राविका अत्यंत राजी थया । अने चितवीत अने पात्र ए त्रणे परी पुरण थया । एवो जांणी ने पेली राबरी सूध हती ते पुरण भाव थी मुनि ने अरपण करी । ती वरे मुनिश्व बोल्या के तमे सू दुषी उदासी मां केम छो ने आ वाटका मां कांइ घोलो छो । तिवारे श्रावक इम कहवा लागो के । अन वगर अमारा थी रहेवातो नथी । अने दुकाल नो संकट सहातू नथी । द्रव्य षरचंता पण अनाज मलतो नथी । ने माहामेहनते लाष रुपीयानो सवासेर अनाज मोलीयो छै । ते माट जीववा करतां मरवु भलु । एम धारी मरवानी तयारी माटे विष षावा नी तयारी करी छे । पछे मुनिश्वर आ वात सांभली, दया उपनी तेथी सेठ प्रत्य इम बोल्या—एतला अबारु मरो छो तो तूमाने सराने जीवाउ । मने कांइ देसां । पाछो सेठ बोल्या । तुमे कहो सोइ देसां । जदी बोल्या तुमारे बेटा घणा छेः । ते माहेथी च्यार बेटा अमने देज्यो । सेठ कहे तुमे लेजो, पण जीवता राषो । गुरु कहे दोए सोरा सात दीन काढो । आजथी सात दीन पछे । उत्र दीस थी बंलायत मांहेसू धांननी जाजां आवसी । देसमा सूकाल सु पुरण होसीः । सेठ वचन प्रमांण करीयो । ते सात दीन वीत्यां पछी । आठमें दीन उत्तर दिशमां सू अनेरी वीलायत मां सू जीहांजां मां जवार आददेन अनेक जातना ध्यांन आव्या । शेर जवारी ना सेर मोती लीधा । ए रीते भाव थइने सरव धान विक गयो । काल नीकलीने परम सूगाल थयो। आरज देसनो धन हिरो पनो मांणक मोती जवरात आददईने वीलायती लोक धांन आप्रिने । धन सू जाजां भरी ने लेइ गया । भरत षेत्र आरज देसमां मगधा आददेन देसमां अनेक कला आंहती तीकां ने नांकर करीने पोता ने देश ले गयाः । तेथी आपणा देशमां धन नो टोटो बोत हुवो । तेथी कला जाती रहि । संपुरण सुगाल हुवो । सरव देस मां सारी वातनो आनंद थयो ।

जदि शेठजी ने इकवीस बेटा हुता । सारा पुत्रां ने घहणा कपरा पहरावी ने जीनदत सेठ आपरे साथे लेइने वजरसेन स्वांमी कने आया । इंम वोल्या । ए मां थी च्यार पुत्र आछा होय सो आपल्यो । तिवारे वज्र-सेन स्वांमी च्यार पुत्र लीधा । ते पुत्र ना नांम । १ नगजी २ नागोदरजी ३ नदमति ४ वियज्ञधर । च्यार पुत्रां ने दीष्या आपी । थोडी मुदत मां अनेक सास्त्र ने विषे कुसल थया । पछे वज्रसेन स्वांमी सुभ कीया करी-सलेषणा संथारो करी देवलोक थया । वज्रसेन स्वांमी ना च्यार सीस हुता तीणरी च्यार साखा हुइ । तेहना नाम । १ नंगीइ साषा ।२। चंद्र साषा ।३। निवृत शाषा ।४। विद्याधर साषा । इन शाषाओं से पहिलि वारे वरसनोः तथा सात वरसनो काल पडीयो । तिसके बाद यह शाषा निकलीः । ओर परदेसा में साधु हुता । तिके पाछा आयाने अवे धीला परीया । तेहने उपदेस दीयो । तिके हलू करमी हुता । तीके पाछा संजम ले सूधं हुवा । च्यार साषां मां सू दोय तो दीगंबर म मीलीया । दोय तो सीतंवर म रह्या । जे सूध न हुवा तीके आचार मे ढीला परीया । ते आपणी अजीवका नीमते नवीन मत चलायो । तीवारे लींघधारी. आपणा आपणा श्रावक मत मां कीधा ने श्रावक ने एम कहवा लागा के श्री भगवंत मोक्ष पोहोता । ते माटे भगवंत नी प्रतमा तथा मंदीर करावां के आपणे भगवंत ने स्मरीय ने भगवंत नो नाम याद आवसे । एवी कल्पना लोक नाम तमा घाली । घणो लोंभ वतायो । तिवारे श्रावक लोंका लीगधारी ना उपदेस सांभली वचन मांनी ने भगवंत ना निरवांण सू छसे हने बयासी वरषे प्रतमा थपाणी । विक्रम राजा ना समत सू चोके ने वारारे वरसे वैशाष सूद तीज ने दीन प्रतमा थपाणी । ते दीवस थि छतीस वरस सूधी एतले वारा वरस सू लेने अडतालीस री साल सूधी कागल उपर भगवंतनो तसबीर राषी ने पुजन करतां । ने तेमां केसर्नी छांटां नाषतां । तेथी तसवीर नो आकार ढकवा लागोय छे ।

लीगधारी रतन गुरुए विचार करीयो के आपणो ओ मत चालसे नही । छतीस वरस सूधी कागद उपर तसवीर पुजांणीः । ते दीन थी काष्ट नी भगवंतनी प्रतमा करावी । समत चोकोने अडतालीस ना माहा-सुद ७ सातम थो काष्ट नी प्रतमा पुजणी सरु हुइ । सो गुरु पचास वरस तांइ पुजांणी । फेर लीगधारी गुरु ने विचार कीयो के काष्ट नी प्रतमाने

त्यीत्य नवराव वाथी लीला तथा आली रहे। तेथी लीलण फुंलण निगोद आववा लागी। तथा लीलीने लीघे उदेइ लागवा मांडी। तेथी वीचार करीयो के ओ मत चाले नहि। तदीस-वत चोके न सतांण वारे वरस चैत सुद १० ने दीन मंदीरनी थापना पाषाणनी तथा धातुनी प्रतमा सरु कीनी। देहरा तथा चे..ाला उंपासरा घणा कराव्या। पण लोक नवामतने लीधे घणा आवे नहि। तेथी प्रभावना तथा सांमी वत्सल करवा मांड्या। तथा भोज कांकने अनेके त्रेहना नाटक करावा मांड्याः। तीवारे केटलाक लोक तो नाटक देषवा वास्ते केटला प्रभावना लेवा मांटे तथा केटलाक षावा वासते मतडाली लीधा। अनेक तरहनी पुंजा सरु हुइ। गांम २ मे नगर २ मे घणा देरासर करावा उपदेस दीयो। घणा मोटा सेठीयां ने जोतक नीमत मंत्र जंत्र ना परचा वतावीने पोताना श्रावक कीधा। हिंस्या मां धर्मनी परूपणा कीधी ने संग कडावाने अनेक जातनी सावज करणी सरु करि न, असंजती नी पुजा ठेरावी नेः हंस्या धरम प्रगटीयो। आठसेहने वयासी वरसे पंचम काल मे प्रगट थयो ॥१८॥

वजसेन स्वांमी ने पाट खेत गिरी स्वांमी पाटे वेटा ए—अगरमा पाटवी ॥१८॥ रेवंतगिरी स्वांमि इगतालीस वरस ग्रहस्था आश्रमा मा रह्या। पछे अटारे वरस समान परज्या लीने चोतीस वरस आचारज पद रह्या। ने सरव दीष्या बावन भरस पाली। सरब आउषो तेराणु वरसनो हुवोः। वीरना नीरवांण पछे सातसेन अठारे वरसे देवलोक हुवा ॥७१८॥

१९॥ रेवतगिरी स्वांमी ने पाट सीहगण स्वांमी पाट वेटा ॥ ए उगणीस मा पाटवी ॥१९॥ सोहगण स्वांमी ते पचिस वरस ग्रहस्था आश्रम मां रया। पीछे पनरा वरस समांन प्रवरज्या पाली। पीछे बाष्ट वरस आचा-रज पदे रया। सरव दीष्या सीतंत्र वरस पाली। सरब आउषो एकसोन दोय भरस नो। वीरना नीरवांण पछे सात सेन असी वरसे सुरग पद पांम्या ॥७८०॥ ॥२०॥ सोहगण स्वांमी ने पाट थंडिला आचारज पाट वेठा ए वीसमा पाटवी ॥२०॥ थंडिल आचारज ते वारे वरस ग्रहस्था-श्रम मां रया। पीछे संतावीस वरस समान प्रवरज्या पाली। पीछे चोंतीस वरस आचारज पदे रया। सरब दीष्या इगष्ट वरस पाली, सरव आउषो तीयोत्र वरस नो हुवोः। वीरना नीरवांण पछे आटसे चउदे वरसे स्वरग पद पांम्या ॥८१४॥ ए २१॥ थंदीला आचारज ने पाट हेमवंत आचारज

पाट बेठा ए इकीसमा पाटवी ।।२१।। हेमवंत आचारज ते इगतालीस वरस ग्रहस्था आश्रम मां रया । आठ वरस समान प्रवरज्या पाली । पछे चोतिस भरस आचारज पद रया । सरव दीष्या बयालीस भरस पाली । सरब आउषो तयासी भरस नो । विरना निरवांण पछे आठसे अडतालिस वरसे स्वरग पद पाया ।।८४८।। ।।२२।। हेमवंत आचारज ने पाट नागजिण स्वामी पाट बेठा ए बाविस मा पाटवी ।।२२।। नागजिण आचारज ते उगणीस वरस ग्रहस्था आश्रम मां रया । पचिस वरस समान प्रवरज्या पाली । सताइस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या बावन भरस पाली । सरब आउषो इकोत्र भरस नो । विरना नीरवांण पछे आठसे पीचंत्र भरसे देवगत हुवा ।।८७।। ।।२३।। नागजिण आचारज रे पाट गोविन्दा आचारज पाट बेठा । ए तेइसमा पाटवी ।।२३।। गोविन्दा आचारज ते इकतिस भरस ग्रहस्था आश्रम मां रह्या । सतरे वरस समांन प्रवरज्या पाली । बारे वरस आचारज पद रया। सरब दीष्या गुणतिस भरस पाली । सरब आउषो साठ वरष नो । विरना नीरवांण पछे अटसे सत्यासी वरस स्वरगवास पांम्या ।।८८७।।२४।। गोवंदा आचारज रे पाट भूतिदीन आचारज पाट बेठा । ए चोविस मा पाटवी ।।२४।। भुति दीन आचारज ते अडतिस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रया । उगणीस वरस समान प्रवरज्या पाली । सतावीस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या छियालीस भरस पाली । सरब आउषो चोरासी भरस नो । विरना नीरवांण पछे नवसे न चवदे भरसे देवगत हुवा ।।९१४।।२५।। भूतिदीन आचारज रे पाट लोहगण आचारज पाट बेठा ए पचिसमा पाटवी ।।२५।। लोहगण आचारज ते चोविस भरस गृहस्था आश्रव मां रया । पछे बावन वरस प्रवज्या पाली । पछे अटाविस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या असी भरस पाली । सरब आउषो एकसो च्यार भरसनोः । वीरना नीरवांण पछे नवसे बयालिस वरस देवलोक हुवा ।।९४२।। ए २६।। आ लोहगण आचारज ने पाट दूससेन (दूष्यसेन) गणी आचारज पाट बेठा एहनो दूसरो नांव शटील मुनिद्र आचारज पाट बेठा । ए छविसमा पाटवी ।।२६।। दूससेन गणी आचारज ते पंतालिस भरस ग्रहस्थाश्रम मां रया । चोविस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे तेतीस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या सतावन वरस

पाली। ने सरब आउषो एकसो ने दोय वरस नो। विरना निरवांण पछे नवसेने पीचंत्र वरसे स्वरगवास पोहुता ॥९७५॥ दुससेन गणी ने पाट देवाधी षमासमण पाट बेठा। ए सतावीस मा पाटवो ॥२७॥ देवढी गणो ते पनरेंवरस ग्रहस्था आश्रव मां रया। पछे बावन वरस समान प्रवरज्या पाली। पछे चोतीस वरस आचारज पद रया। सरव दीक्षा छियासि वरस पाली। सरब आउषो एंकसो न दोय वरसनो। विरना नीरवांण पछे एक हजार ने नव वरसे देवलोक हुवा। सूत्र जिषांण तेहनी याद आ प्रमाणे उपरला सताविसमा पाटे आचारज देवद्धिगणी थया। ते विरना नीरवांण पछे।

॥ गाथा ॥

वल्लहीपुर नयरेः देवद्दिय मुह सीसाण संघणे।
पुछे आगम लिहियाः नवसे असीयाउ वीराउ ॥१॥

नवसेहने असी वरसे वलभीपुरमां सीधंत सूत्र लीषांना। त्यां सूधी एक पुरब नो ग्यांन हुतो। तेहनी साष भगवतीसूत्र मधे वीसमे सतक आठमे उदेसे। श्री माहावीर भगवंत ने गोतम स्वांमीए पुछीयो क—हे भगवांन तमार नीरवांण पछि कीतनां वरसे पुरब नो ग्यान क्यां सूधि रहसे ॥उत्र॥ भगवंत बोल्या—हे गोतम पुरब नो ग्यांन एक हजार वरस सूधि रहे। भगवंतना निरवाण पछी नवसेहने असी वरस हुवा। त्रे देवाधी षमासमण आचारज एकदा प्रस्तावे सूठ नो गांठीयो लाव्या। आथमनी बषत चोविआर चुकावी ने गांठीओ खासू। ते गांठीआ ने पोता न कांन मा राख्यो। प्रमादना जोगथी षावणो विसर गया। दीन अष्ट होवानी देवसी परतीकमण करतां आद आयो। तीवारे ते गांठीयो परठी दीधो। पछी देवाधि गणी आचारज विचारं कीधो के कांइक बुध हीणी थइ। तीवारे सूत्र मुष थकी वीसरसां ने ते विसरवा थी धरम नो वीछेद जवे। ते कारणे धरमवृधी होवांना नीमते वलभीपुरमे सूत्र लिषांया। आचारंगनो सातमो अध्यमें महाप्रग्यां नांमे। तेहना उद्देसा १६ ते कांइ कारण जाणी दिवढी खिमा समणं लिष्यो नहि। ते विछेद्यो। एठले भगवंत पचे नवसेहने असी वरसे पुस्तक लिखी जिया ते समत पांचे न दसा री साल में लीषाणा सूत्र ॥ अष्ट नीनवनी उतपती लीषंते ॥

माहावीर स्वांमी ने ग्यान उपनो पछे चवदे वरसे जमाली उलटी परुपणा करवा मांडी । करेमांणं अकरे ए श्रधा नवीन स्थापी ।१। महावीर पछे सोले वरसे त्रीसगुपत निनव थयो । ते एक प्रदेसी जीव मान्यो ।२। वीर पछी दोयसेने चवदे वरसे अवक्तावादी नांमे नीनव थयो । ते सूत्र नमान ३ । वीर पछे दोयने वीस वरेसे चोथो निनव सून्यवादी । धरम पाप अने नरक स्वरग न मांन तो एह नीनव ४ । वीर पछी दोय से न अटावीस भरसे क्रीयावादी पांचमो नीनव थयो । एक समय मां दोय क्रीया मांनी । एवी रीते एक दीने विहार करतां रस्तामां गंगा नदी मां पांणी वहेता मे नीकल्या ने पगां नी पगतली ठंडी देखी । पछे ने आकासमे सूरजनी तप लागी । ते माथे एक समये वे परीसाहा उपज्या शीत अने ताप । एम नाम नमे एवो डोलो उतपन हुवो के एक समा मां दोय परीसा उपजे । एवी सरदा वेठी । पछे परुपणा करवा मां ते नीनव ५ । वीर पछे पांच सेहने चोपन वरसे रोहगुपत तीरासी नांम नो निनव थयो । तिणे तिजि रास थापी । तेनो अजीवनी अजीवनी रास वधारे थापी ।६। वीर पछे छसो न नव वरसे ने वीक्रम ना सवत एक ने उगणचालीस वरषे गोष्टमांहील नामनो सेसमल निनवे डोगवर मत थाप्यो ॥

॥ अथ दिगांबर मत की उतपती स्थेवरकल्पी साधुवां से है ते लिपंते ॥ श्री महावीर के निर्वाण पीछे नव ६०९ वर्स गये । तब सातमो महा निन्हव वहुत विसम्वादी शिवभूती वोटिक हुवो । रथवी पुर में दीपकोद्यांन आर्य कृष्णाचार्य समोसरे । तिन अवसरे एक राजा का शिवभूती नांमें सहश्रमल सूभट राजा को वहोत प्यारा था । तिसनें माता तथा स्त्रीसें क्रोध कर श्री कृष्णा आचार्य पास दीक्षा लीधी । तब तिहांसे और देसमें विचरने लगें । फिर कितने क वरसां पछे रथवीर पुर में आये । तब राजा वंदनार्थ आय कर गुरां की आज्ञा सें शिवभूति को अपने घर लाया । पहिले विशेष राग करि के रतनकंबल दीधा । ते लेइ गुरु पास आण दिखाया । गुरुने कह्या के यह वहु मोल का वस्त्र है । एह तुमको लेना जोग नहीं था । परन्तु अबतो तुम इसको अपने सरीर में धारण करो । आगें असा वस्त्र नही धारण करना । असा सुनते शिवभूति ममता भाव सें घर लीया । कवी कवी पडिलेहणा करतां देख कर खुसी होता

था। तब गुरु नें देखा के इसको रतनकंवल का ममता भाव होगया। तब गुरुनें उसके विना पुछे तिस रतनकंबल के खंड खंड कर साधवां को पग पुछने वास्ते बांटदी ए जब सिष्य वहोत क्रोध में हुया। परंत कुछ गुरुको केह ने सवया। एक दासमें गुरुजी ने साधुवांके कलप का व्याख्यान दिया। तिसमें ६ प्रकार के कल्प के साधु कह बृहत्कल्प सूत्र से जाण लेने।

छव्विहा कप्पठिई पन्नता। तंजाहा समाइसं जय कप्पठिय ।१। छे उवगणिय संजम कप्पट्ठिए ।२। णिविसमाण कप्पठिई ।३। निव्विट्ठकाईय कप्पट्ठिय ।४। जिण कप्पट्ठिई ।५। थेवर कप्पट्ठिई ६ तिवेमी।

इन छहों कल्पस्थिति की जुदी मर्याद है। जिसमें जिनकल्प का वर्णन करा की जिनकल्पी मुनी ८ प्रकार के होते हैं। तिनमें सें सर्व उत्कृष्ट जिनकल्पपी मुनि के दो उपकरण हे। एक तो रजोहरण १ मुख पोतियं २। जब सिष्य पूछने लगा की तुम अैसा मारग की जती क्यों नहीं करते। गुरुने कहाके जंबु स्वांमी पछें १० वोल व्यवछेद होगये। यथा ख्यात चारित्र ।१। सुषमं संप्राय चारित्र ।२। परिहार विशुद्धि चारित्र ।३। परमावधिज्ञांन ।४। मनःपर्यायज्ञान ।५। केवलज्ञांन ।६। जिन कल्प ।७। पुर्लका लवधी ।८। आहारिक लबधि ।९। उपसमसेरण षपक सेण। ।१०। मुक्ति होवा १०, सो जिन कल्प मार्ग इस काल में नहीं। तव शिष्य नें कहा—क्यों नही। जो परलोकार्थी होय तो अैसा कठिन मारग धारण करे। सर्वथा परिग्रह रहित होय ते श्रेष्ठ है। गुरुने उत्सर्ग अपवाद मार्ग दर्शाया। सिष्य प्रतें उक्त जो धरम उपकरण है ते नही परिग्रह में, संजम निर्वाह अर्थ है। तव सिष्य नें कह्या के ये सब वस्त्रादि परिग्रह में है। गुरु ने कह्या की—मुछा परिगाहो वुतो। ममत्व करे तो परिग्रह मे होय इत्यादि उपदेस माना नहीं। तब सिष्य ने कह्या—तुमसे यह वृत पलता न ही, में पालूंगा। इम कह वस्त्र छोडी दीया। तिसकी बहन उतरा ने उनको देख बस्त्र तज दीये। जव नगर में आहार के वास्ते आई तव एक गणिकानें उपर से वस्त्र गेरा तो उसका नग्नपणा दूर किया। भाई से कहा कि मुजको देवांगणा ने वस्त्र दिया है। जव भाई ने समज कर कह्या के तु वस्त्र ले परंत इस कारण से स्त्री को मुक्त न होय। अैसा कथन

करा। तब शिवभूति के चेले २ हुये कोडिन्य १ । केप्टलीर २ । तब तिनके सिष्य भुतिवल और पुष्पदंत ने श्रीमहावीर से६८३ वर्ष पीछे ज्येष्ट सुदी ५ के दिने ३ सास्त्र रचो । धवल नांमा ग्रंथ ७०००० श्लोक प्रमाण, जय धवल नांमा ग्रंथ ६०००० श्लोक कम हा। धवल नामा ग्रंथ ४०००० श्लोक। ए तीनो ग्रंथ करणाटक देस की लिपी में लिषे गये। ओर शिवभूति के नग्न साधु वहोत से करणाटक देसकी तरफ फिरते हैं। क्योंकि दक्षण देसमे शीत कम है। जब उनके मत की वृद्धि हो गइ तब महावीर से १००० वर्स पीछे इस मत के धारक आचार्यो के ४ नाम परसिद्ध किये नंदीसेन देवसिहने— जैसें पद्मनदि । १ । जिनसेन । २ । योगिन्द्रदेव ।३। विजयसिंह ।४। इनके लगभग कुंदकुंद नेमचंद्र । विद्यानंदी । वसूनंदी आदि आचार्य जब हुये तब तिनो श्वेतांबर को निंद्या तथा हीनता करने वास्ते मुनी के आचार विवहार के अपने बुद्धी प्रमणक छे क जिनबैण। क छे स्वकुं बुद्धि कर स्वमत कल्पित अनेक ग्रंथ रचे। जिनसे श्वेतांबरों को कोई साधू न मानें। बहुत कठिन वृती वर्णन करी ओर दीगांबरों ने अपने मन की उक्त से श्वेतांबर धर्म के अवगुणवाद करे। परत सनातन धर्म श्वेतांवर का उत्सर्गापवाद मार्ग जाणा नहीं। एकांतवादी होकर वहोत निंद्या शास्त्रों में करी। सोइ इनके शास्त्र परसिध है जिसको संदेह होय वह देख लेना। श्वेतांबर के शास्त्रों में इनके मत की कही निंद्या नही। इस वास्तें निश्चै मालुम होता है कि श्वेतांबर मत में से दिगांबर मत निकला। परंत इन दिगांबर के ग्रंथकरताओं ने दिगांबर मत के गुरु का विछंद कर दीया। क्योंकि एसी कठिन वृती पालंने वाला भरत क्षेत्र के इस पांचमें आरे में हो नहीं सक्ता। क्योंकि एसा संघेण अर्थात बलधरक शरीर नही होता। और एसा समें आरो का नहीं है। द्रव खेत्र काल भाव की अपेक्षा नहीं जांणी। तब दिगांबरों में कुंपाड् उत्पन्न भई। जब इनके ४ संघ हुये— काष्टा संघ १ । मूलसघ २ । माथुरसंघ ३ । गोप्प संघ। गो चमरी गायके वालों की पीछी काष्ठा संघ में रखते हैं। माथूर संघ में पीछी रखते नही और गोप्प संघ में मोर पीछी रखें और स्त्री को भी मोक्ष कहे हे। बाकी ३ में स्त्री मुक्त नहीं कहे। और गोप्प संघ वाले को धर्म लाभ कही। बाकी ३ धर्म वृद्धि कहे।

अब इस पांचमें आरसे इस मत के २० पंथी वार, १३ पंथी वा गुमान पंथी इत्यादि भेद वरतमांन काल में वरत रहहें। तिनमें २० पंथी पुरान कहलाते हे बाकी दोनों नवीन कहलाते हैं ॥७॥

॥ तरेपंथ नी धर्म नी उतपती लीषंते ॥ वीरना निरवांण सू बाइसे पिचियासी वरस गया तब आठमो भिषन नांमे निनव हुवो। समत अठारन पनरारी साले पुज माहाराज श्री श्री रुगनाथजी स्वांमी ने शीष्य तेवीस हता। ते माहे सातमो सीष्य भीषन हुतो। तिवारे ते पुज्य माहाराज पासे ते दीष्या लेवा आव्यो। तीवारे अपलक्षण देषी ने पुज्य महाराज ना कह्यो। तिवारे पुज्य माहाराज ना शीष्य दूसरा नगजी स्वांमी हुता। तेमने पासे कालु गांममे समत अठारे सातरी साले दीष्या लीनी। भीषनजी पुज रुगनाथजी रो चेलो हुवो। आ षवर पुज्य रुगनाथजी माहाराज सांभली ने बहुसूरती पुरसां विचार करीयो के पंचम कालमे ए भिषन मिथ्यात गणो वधारसी। घणा जीवांने मीथ्यात मांडवो वसे। पिण निश्चय नय मां भावी पदारथ कोइ टालवा समरथ नथी। समत अठारे तेरेनी सालमें भीषनजी ए जीनरी षने जिनपालनो। चोढालीयो नवो जोडीयो ने। ते पुज माहाराज ने वतायो। ते देषी ने पुज्य माहाराज फुरमायो के तेमां दद अषर परीयो छै ते अषर नीकाल दो। त्रे भिषनजी अहंकार आंणीने बोल्यो-के मारी जोडमा कुंण षोट काढे। एवी मांन आणीयो पछे पुज्य माहाराज पासे समत अटारे तेरेनी साल नो चोमासो देस मेवार में राजनगर में करवानी आग्यां मांगी। त्रे पुज्य माहाराज फुरमायो के चोमासो करण रो अवसर नहि। पछे विण अग्या राजनगर मे चोमासो कीधो।

ते चोमास मे एक दीन रे समे पांणी वेहरी लाया। ते पाणी घणो उनो हतो। ते उघारो रहि गयो। तेमां एक वेंसूदरी अचानक आवी परी। तिवारे नगजी स्वांमी ए कह्यो के तेने जतने काढो। पण पांणी घणो गरम हुतो। तेथी काढता पेहली तुरत वेसुंदरी पीरांण छोडया। पछे नगजी स्वांमी कहो के पंचद्रीनी घात थइ। तेतो बहु मोटो दोष थयो। तेनु प्रायचीत लो। त्रे भीषन वोल्यो मे एहने मारी नथी। तेनु आउषो छूटवाथी मरण पांम्यो। उदराजेवावी कल जाती। अटारे पाप स्थानक ने सेवणहारने वचावा में स्यो नफो छे। एहवी मांन ने चडे अनारज वचन बोलवा लागो-

ने षोटी परुपणा करीके जीव मारतां ने वचावा नहि । चोमासो उतरीयो । पुज माहाराज पासे आव्या । तीवारे सरब षवर परीवाथी पुज माहाराज दोय वार परायचित दीनो । पीण दील मांहृ लोभ हल छांडीयो नहि । तेथी पुज्य रुगनाथजी माहाराज समत अठारे पनरारी साले चेत सुद ६ नमीने वार श्रूक्रवार नें तेरा साधु ना परवार सू देस मारवारमें गाम वगडी सू न्यारा कीधो । ते मांह थी दश साधु तो भीषन छोड़ने पाछ आया । दस साधांमां सू छ साधू तो पुज्यजी माहाराज पांसे आवीने प्राछत लेने सूध हुवा । नें माहाराज ने सांभल हुवा ने रूपचंदजी स्वांमी ने जेठमलजी स्वांमी ठाणे च्यार सू देस गुजरात तरफ विहार करीयो । जुना २ भंडार मां सु पुसतक देषी ने, वांची ने ते मत षोटो जाणी ने समत अठारे ३६ नी सालमां तेरेपंथी नी सरदा मोसराइने पुज रुगनाथजी महाराजनी श्रधा कायम करी । भिषनजी पासे तीन साधू रया । जठा से तेरापथी नो मत चाल्यो । श्रोर भद्रवाहु स्वांमी ते सीधपावरीयो ग्रंथ वनायो । ते माकलो के पंचम कालमा पुज रुगनाथजी नो चेलो भीषन हुसी अष्टमो निनव थासे ८ । वीजो । तीजो । चोथो । पांचमो । ए च्यार नीनव अंत समय सरधा वोसरावी ने माहावीर स्वांमी ना वचन प्रमाण साचा सरध्याः । पहलो । छेटो । सातमो । अष्टमो । ए च्यार नीनव अंत समातक सरधा मोसरावी नही ने अनंत संसारी हुवा ।

पांचम नी छमछरी उथापीने चोथनी छमछरी थापी तेह नी व्याद ॥ प्रथम कालका आचारज भगवंत ना निरवांण पछे । तीनसे ने पतिस वरसां पछे पहेला कालकाआचारज थया । ने वीरना निरवाण पछी च्यारसेहने बावन वरसां पछे वीजा कालका आचारज थया । पांचमनी छमछरी उथापी चोथनी थापी तेहनी हकीकत । कालका आचारज पोतांनी बेन जेनु नांम सरस्वती हतो । तीणे साधवी नी प्रज्या धारण करी । सरस्वतीजी साधवीजी बोत रूपवांन हता । जेनो वरणव कर सकतां नथी । सरस्वती साधवीजी गांमानुगांम विचरता उजेणी नगरी पधारीया । ने उजेणी नगरीनो राजा गंधरपसेन राजो हतो । ते सरस्वती साधवीने देषी ने मोहवित पांम्यो । ने साध्वीने उचकायने आपणा मेहल मे बुलाय लीधी । आ षवर कालकाचार्य ने पडी । तीवारे कालका आचारज आवीने गंधरपसेन ने वोहत समजाव्यो । पिण ते समज्यो नहि ।

आपणी वेन ने छाडावा लागा पण छूटि नहीं। कालका आचारज ने उत्तम विद्या याद हुति ने मेली विद्या वोत याद नही। तेथी मेली विद्या आगल उत्तम विद्या को जोर चालीयो नहीं। तीवारे कालका आचारज करणाटक देश मे गया ने सात राजने प्रत्यवोध देइ ने सात राजा ने जेनमत नी विद्या सीषावी ने विद्या मां नीपुण हुवा। तीवारे सातवरस पोताने देश पाछा आयावानी तयारी कीनी। तीवारे सात राजा हाथ जोडी ने बोल्या। आप अमारा विद्या गुरु छो। सो अमारा लायक काम फरमावो। तीवारे कालका आचारज कह्यु—के एक मारु कांम करो तो तमारी विद्या सफल होवे। तव ते राजा वचन कबूल करीया थी हुक्म आप्पो—उजेणी नगरी ना राजा गंधरपसेन सु जुधकर मारी वेन मन सूप्रत करावो।

तिवारे सात राजा लसकर लेइने कालका आचारज साथे वहिर हुवा ने उजेणी नगरी आवीने संग्राम मांड्यो। तेमां भादवा सुद चोथ आवी ने राजा ने कहरव्यो के अमारे पंचमी छमछरी छे। तीणसू लडाइ बंध राखो। ते वचन मांनी ने संग्राम बंध राख्यो। पछे कालका आचारज विचार करियो के आपणे लडाइमां संजम जातो रह्यो तोहि पीण जेनमतनी सेली मे तो रहणो छहिजे। पछे चोथनी छमछरी परकमो लेवी। एवो विचार करीने आपना परीवार मां चोथनि छमछरी करी। गंधरपसेन राजा निशंक रया तिवारे दगाथी पांचम ने दीन फौजलेइने चडगया ने गंधरपसेन राजा ने मारीयो ने आपणी बेन ने छोडावी पाछी लाव्या। पण सर्स्वतीनो सीयल षंडने न हुवो नही। कारणक गंधरपसेन राजा ए सरस्वतीने चलावीने अनेक उपाय कीवा। पीण सरस्वतीजी चल्या नहि। तेथी तेउ सीयल व्रत कायम रयो हुतो। चोथनी छमछरी श्री कालकाचारज ना केरायत मांनी। केतलाक चोथनी मांनी ने घणा जणे ते प्रमाण मांण-मांना नहि ने तेथी एके मांनी ने वीजे न मांनी। तेम चालतो हुवो विरना नीरवाण पछी वसेह ने वीस वरषे लागधारी वीजी बारा काली मां थयो। तेमना रायतां ने वीर ना नीरवाण सूं नवसेन ने तेराणु वरसे। तथा समतने न्याय समत पांचे ते वीसनी साले तिसरा कालका आचार्य ने पांचम थी चोथनी छमछरी कायम करी। नवसे बोणु वरसे विद्या मंत्र लवदि विछेद गइ। पीण छमछरी सूत्र ने आधारे जोतां असाडनी चोमासी सू दीन गुणपचास दीने छमछरी करवी। वगती सूदनो चोमासी सू पाछला दीन गुणंत्र तथा सीतर दीवसे छमछरी करवी। ए सीधांतां नो न्याय छे।

विरना निरवांण पछी नवसेहने चोराणु वरषे पछी चउदसनी कायम करी ने समत पांचे ने चोवीसमी सालमे पषी चउदसनी कायम करी ।।

॥ राजा विक्रम सू वरणावरणी थपी तेहनी हकीकत लिषंते ॥

विर प्रभू सू च्यार से सितर वरसां पछे। पर दुष भंजन विक्रम राजा थो। तानो सवत चलू करीयो। ते जेनधरमी हतो ने पर दुष भंजन केह वरणो। तेणे वरणावरणी वाध्वी। वरणावरणि वांध्यवानो कारण एक हेवाय छै। के तेना राजनगर मां वे शेठीया घणा रोधीवंत हुता। ते मांहे माहे पुत्रीनो सगपण करीयों पछी थोरा दीवसमां पुत्र ना बाप नोधन हिणो थयो। ए वषते निरधन लोकां ने उजेणी नगरी वाहिर वसता हता तेथी ते पण कोट वाहर जइने वस्या। पिछे दीकरी ना बाप विचार करीयो के मारी पुत्री नीरधन रे गरे देसू तो दुषी हुसी। अने नही परणावसू तो ते राजा पासे पुकार जासे। ने राजा विक्रम पर दुषन भंजन छे एटले मने बीजे ठीकांणे परणाववा देसे नहि। तीण सू राजा विक्रम न ए कन्या परणावी देउ तो सघली पीरा टलजावे। एम धारी ने विक्रम साथे पोताना पुत्री परणावावाने ठराव करीयो। थोरा दीवसे लगन नो दीवसे मुकर करी थापीयो। अने राजा वीक्रम ने परणावांने माट जांन वणायने परणवा चाल्या। तेथी उजेणी मां धवल मंगल होय रया छ। ए वारता सेठांणी सांभली मारा वेटानी वहु राजा परणे छ। एवो जाणी ने सेठाणी ने बहुत दुष उतपन हुवो। रुदन करवा लागी। ए वारता राजा सांभली ने विक्रम ने बहुत सोक थयो अने पोताना प्रधांन ने मोकल्यो ने। ते रुदन नो कारण सेंठाणी ने पुछियो। तेनो उत्र न दीधो न जाजो रुदन करवा लागी। तेथी परधाने खुलासा विगर विक्रम पासे गयो। अने सरब हकीकत सूणीने पोते राजा वीक्रम वाइने जाय न कयो के कीण कारण तुमे रुदन करो छै। सूं संकट छे जे होय तेमने कहो। हु राजा वीक्रम छु। सरव तारा संकट टाल सूं। एवो वचन राजा ने सांभली ने ते बोली—हे प्रतिपाल परदुषन ना भंजणहार राजा, तमे कीयां परणवा ने जावो। ते कन्या नो संगपण मारा पुत्र ने साथे प्रथम करेलो छे। ते कन्याने आप परणवा ने माटे आज जावो छो। आपरी जांन देषी ने हु दुष करु छू। आपने परणावतां मारा पुत्र ने कुण परणावे न मारो वंस आज दीन वीछेद जासी। कारण के ज्यारे राजा अन्याय करे तरे गरीबनी कोण सांभले। एवा वचन सेठाणी

ना सांभली ने राजा विक्रम बोल्यो—हे बाइ तू किसी फीकर करजै मति। ए कन्या तारा कुवरने अवि परणावसू ।

उसी वखत शेठना कवरने बोलावी ने राजाना आभूषण सरव ते सेठना पुत्र ने पेराव्या। सेठना पुत्र ने हस्ति ने होडे बेसारी ने ते सेठनी बेटीने ते कवर ने परणावी। राजा साथे जायने धन दोलत बोत आपी ने सेठ ना कवर ने सूषी करीयो। उण अवसरे राजा विक्रमे विचार करीयो के हु जेनधरमी राजा छु। ने ए वात नी तो मने षवर परी तरे ए कांम नो वंदोवस्त मे कीधो। अब तो दीन दीन उतरतो समो आवे छे। सो लोक मां बोत विषवाद वधसे। घणा लोक दुषी होसी। तेथी राजाए सरव रतने भेली करी। नीचे मुजब वंदोवस्त करीयो। आपणी आपणी न्यातमे आपणा बेटा बेटी परणावना ओर न्यात मां परणावसे तेने राजा दंड करस्ये। आपणा २ बेटा बेटी ना सगपण करने पीछे छोडसी ने दुजा न परणावसी तो राजा दंड करसे ने वीजाने परणाववा देसे नही। जेनीं साथे सगपण करे तेने परणावणो। ए वंदोवस्त कीधो। वरणा-वरणी नि मरजाद वांधी। विर प्रभू निरवांण पधारीया तिण दीनथी च्यार सेहने सीतर वरसां सूधी तो राजा नंदीवरधन नो संवतर ह्यो। ने नदीवरधन राजा नो समत उथापी ने वीक्रम राजा ए पोताना समत चेत सुद एकमथी सरु करीयो। ज्यां ज्यां आरज देस हुतो त्यां त्यां विक्रम नो समत चाल्यो। समत कीण रीत सू सरु कीनो। ए हकीकत घणी छे। पीण वीस्तार गृंथ घणो वधे तीणसू लीषीयो नही।

देवधि षमासणने पाट विरभद्र स्वांमी पाठ बठाए, अठावीस मा पाटवी ।।२८।। वीरभद्र आचारज ते सतावीस वरस ग्रहस्थाश्रम मां रह्या पीछे तेवीस वरस समान प्रवरज्या पाली ने पचावन वरस आचारज पद रह्या। सरब दीष्या इठंत्र वरस पाली। सरब आउषो एकसो पांच वरसनो। वीर नीरवांण सु १०६४ वर्ष पछे समत पांचे ने चोरांणु वरसे देवगत हुवा। ५९४। विरभद्र ने पाट संकरसेन आचारज पाट बेठाए गुणतिस मा पाटवी ।।२९।। संकरसेन आचारज ते वावीस भरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने तीवीस वरस समान प्रवरज्या पाली, पीछे तिस वरस आचारज पद रह्या। सरब दीष्या तेपन वरस पाली। सरब आउषो पीचंत्र भरसनो। विर नीरवाण सू १०९४ वर्ष पछे समत छ केन चोविसे वरसे देवगत

हुवा समत ६२४ ।। संकरसेन आचारज ने पाट जसोभद्र स्वांमी पाट बेठा ए तिसमा पाटवी ।।३०।। जसोभद्र आचारज ते सतावीस भरस ग्रहस्थ आश्रवमां रह्या । तेविस वरस समान प्रवरज्या पाली, पीछे बाविस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या पतालिस वरस पाली ने सरब आउषो बहोत्र वरस नो । विर निरवांण सूं १११६ वर्ष पछे समत छके नवर छियालिसे देवगत हुवा ।। समत ६४६ ।। जसोभद्र आचारज ने पाट विरसेन आचारज पाट वेठा ए ३१ पाटवि ।। विरसेन आचारज ते पंतिस वरस ग्रहस्था आश्रव मा रह्या । पीछे इकतालीस वरस समान प्रवरज्या पाली पीछे सोले वरस आचारज पद रह्या । सरब दीष्या सतावन वरस पाली अने सरब आउषो बांणु वरसनो । विर निरवांण सु ११३२ वर्ष पछे समत छके वरस बाष्टे देवलोक हुवा ।।स०।।६६२।। विरसेन आचारज ने पाट विरजस आचारज पाट वेठा ३२ पाटवी ।। विरजस आचारज तेपन रे वरस ग्रहस्थ आश्रव मां रह्या ने चवदे वरस समान्य प्रवज्या पाली, पीछे सतरा वरस आचारज पद रह्या । सरव दीष्या इकतीस वरस । आउषो छियालीस वरसनो विर निरवाण सु ।। ११४९ वर्ष पछे समत छ के वरस गुणीयासि ये देवलोक हुवा ।।स०।।६७९।। विरजस आचारज ने पाट वेठा जयसेन आचारज ।। ३३ ।। पाटवि ।। जयसेन आचारज पतिस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या । पीछे चवदे वरस समान्य प्रवरज्या पाली, पीछे अटार वरस आचारज पद रह्या । सरब दीष्या बतिस वरस पाली । सरब आउषो सितष्ट वरसनो । विर नीरवांण सू ११६७ वर्ष पछे समत छके न सताणु वरस देवलोक हुवा ।।स०।।६९७।। जयसेन आचारज ने पाठ हरिषेण आचारज पाट बेठा ।। ३४ मा पाटवि ।। हरिषेण आचारज ते अडतिस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या । सतविस वरस समान्य प्रवज्या पाली, पीछे तिस वरस आचारज पद रह्या । सरब दीष्या सतावन वरस पाली ने सरब आउषो पचांणु वरसनो । विर निरवांण सु ११९७ वर्ष पछे समत सातने सतावीस नी साल देवलोक हुवा ।।स०।।७२७।।

हरिषण आचारज ने पाट वेठा जयसेन स्वांमी पाट वठा ए ।।३५।।पाटवी।। जयसेन आचारज ते बतिस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने तेइस वरस समांन प्रवरज्या पाली । पीछे बाविस वरस आचारज पद

रया। सरब दीष्या गुणपचास वरस पाली ने सरब आउषो इकीयासी वरसनो। विर निरवांण सु १२२३ वर्ष पछे समत साते न तेपन रे वरस देवलोक हुवो ॥स०॥७५३॥ जयसेन आचारज ने पाट जगमाल स्वांमी पाट बठा ॥ ए ३६ ॥ मा पाटवी ॥ जगमालजी आचारज ते सतावित वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने नव वरस समान प्रवरज्या पाली पीछे छ वरस आचारज पद रह्या एवं पनर वरस दीष्या पाली। सरब आउषो बयालीस वरसनो। विर निरवांण सू १२२६ वर्ष पछे समत सातेन गुणसाट वरस देवलोक हुवा ॥स०॥७५६॥ जगमालजो आचारज ने पाट देव रीषजी सांमी पाट वठा ॥ ए ३७ ॥ मा पाटवी ॥ देवरीषजी आचारज ते इगतालीस वरस ग्रहस्था श्रवमा रह्या ने गुणचालीस वरस समान प्रवज्या पाली पीछे पांच वरस आचारज पद रह्या। सरब आउषो पीचियासी वरसनो। विर वीरवाण सु १२३४ वर्षे पछे समत सातने चोष्ट वरसे देवलोक हुवा ॥स०॥७६४॥ देवरिषजी आचारज ने पाट भीम रीषजी स्वांमी पाट बठा ॥३८॥ मा पाटवी ॥ भीम ऋषजी महाराज ते इकावन वरस ग्रहस्था आश्रव मा रह्या ने तेइस वरस समान प्रवरज्या पाली। पछे गुणतिस वरस आचारज पद रह्या। सरब दीष्या वावन वरस पाली। सरब आउषो एकसो तीन वरसनो। वीर नीरवांण सू १२६३ वर्ष पछे समत साते ने तेराणु वरसे स्वरगवास पांम्यां ॥स०॥७६३॥ भीम रिषजी आचारज न पाट कीसन रिषजी स्वांमी पाट वेठा ॥ ए ३६ मा पाटवी ॥ कीस्न ऋषीजी महाराज ते चोविस वरस संसारमा रह्या ने इकतिस वरस समान प्रव्रज्या पाली। पीछे इकीस वरस आचारज पद रह्या। सर्व वावन वरस दीष्या पाली। सरव आउषो छियंत्र वरस नो। विर नीरवांण सू १२८४ वर्ष पछे समत आठने चवदे वरसे देवलोक हुवा ॥स०॥८१४॥ कीस्न रिषजी आचारज न पाट राज रीषजी स्वामी पाट वेठा ॥ ए ४० ॥ मा पाटवी ॥ राज रीषजी माहाराज ते उगणीस वरस ग्रहस्थावास मां रह्या ने तेवीस वरस समान प्रवरज्या पाली, पीछे पनरे वरस आचारज पद रहचा। सरव दीष्या अरतीस वरस पाली। सरब आउषो सतावन वरसनो। विर नीरवांण सू १२६६ वर्ष पछे समत आटे न गुणतिसारे वरसे देवगती पांम्या ॥४०॥८२६॥

राज रीषजी आचारज ने पाट देवसेन स्वांमी पाट बठा ।। ए ४१ मा पाटवी ।। देवसेने आचारज ते अठावन वरस ग्रहस्थावास मां रह्या । पीछे वीस वरस समान प्रवरज्या पाली । पीछे पचिस वरस आचारज पद रह्या । सरब दीष्या गुणपचास वरस पाली ने सरब आउषो एकसो न सात वरस नो । विर नीरवांण सू १३२४ वर्ष पछे समत आटने चोपन वरस देवलोक हुता ।।स०।।८५४।। देवसेन आचारज ने पाट संकर सेन स्वांमी पाट वठा ।। ए ४२ ।। मा पाटवी ।। संकर सेन आचारज ते पंतालीस वरस ग्रहवास रह्या पीछे चालीस वरस समांन प्रवरज्या पाली । पीछे तिस वरस आचारज पद रह्या । सरब दीष्या सितर वरस पाली । सरव आउषो एक सो पनर वरस नो । विरना नीरवांण सू १३५४ वर्ष पछे समत आटे ने चोरासीये वरस देवलोक हुवा ।।स०।।८८४ संकर सेन आचारज ने पाट लच्मी वलभ स्वांमी पाट बठा ए ४३ मा पाटवी ।। लक्ष्मी वलभ माहाराज ते गुणतिस वरस ग्रहस्थावास मे रह्या पीछे तेतीस वरस समांन्य प्रवरज्या पाली पीछे सतरे वरष आचारज पद रह्या । सरब दीष्या चावन वरस पाली । सरब आउषो गुणीयासी वरस नो । वीर नीरवांण सू १३७१ वर्ष पछे समत नवेन एक री साल देवलोक हुवा ।। स०।। ६ एक री साल ।।

लक्ष्मी वलभ आचारज न पाट रांम रीषजी स्वांमी पाट वेठा ए ।। ४४ ।। मा पाटवी ।। रांम रीषजी माहाराज ते चोतीस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने तेतीस वरस समांन प्रवरज्या पाली । पीछे इकतिस वरस आचारज पद रह्या । सरव दीष्या चोष्ट वरस पाली । सरब आउषो अटांणु वरस नो । विर नीरवांण सु १४०२ वर्ष पछे समत नव ने वतिस री साले देवलोक हुवा ।।स०।।६३२।। रांम रीषजी आचारज ने पाट पदम नाम स्वामी पाट वेठा ए ४५ ।। मा पाटवी ।। पदम नाम आचारज महाराज तिस वरस ग्रहवास वस्यां पीछे तेतीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे वतिस वरस आचारज पद रह्या । सरब दीष्या पण्ट वरस पाली । सरब आउषो पचाणु वरस नो । वीर नीरवांण सु १४३४ वर्ष पछे समत नवने चोष्ट वरसे देवलोक हुवा ।।समत।।६६४।। पदम ना आचारज ने पाट हरीशरम स्वांमी पाट वेठा ।। ४६ मा पाटवी ।। हरीशरम आचारज ते इकीस वरस ग्रोहस्त पणे रह्या । ने तयालीस वरस समांन प्रवज्या

पाली पछे सत्तावीस वरस आचारज पद रया। सरब दीध्या सित्र वरस पाली। सरब आउषो इकांणु वरसनो। वीर नीरवांण सू १४६१ वर्ष पछे समत नवने इकांणु वरस देवलोक हुवा ॥स०॥६६१॥ हरीशरम आचारज ने पाट कलश प्रभू स्वांमी पाट वठा ए ४७ मा पाटवी ॥ कलश प्रभू आचारज ते छाव्द वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या नं अठाइस वरस समान्य प्रबज्या पाली पीछे तेरे वरस आचारज पद रया। सरव दीध्या गुणचालीस वरस पाली। सरब आउषो एकसो पांच वरसनो। वीर नीर-वांण सू १४७४ वर्ष पछे समत दसे न च्यार री साल देवलोक थया ॥ स० १० मे ४ ॥ कलश प्रभू आचारज न पाट उमण रीषजी स्वांमी पाट वेठा, ए ४८ मा पाटवी ॥ उमण रीषजी आचारज जी ते बयालीस वरस ग्रहस्थ पणे रया ने पचिस वरस समान्य प्रवरज्या पाली पछे वीस वरस आचा-रज पद रह्या। सरव दीध्या पंतालीस वरस पाली। सरब आउषो सित्यासी वरसनो। वीर निरवाण सू १४६४ वर्ष पछे संमत दसे न चोविस वरसे स्वरगवास पोहता ॥स०॥१०२४॥

उमण रीष आचारज न पाट जयीण स्वांमो पाट बठा ए ४६ मा पाटवी ॥ जयषीण आचारज ते पंतालीस वरस ग्रहस्थ पणे रहोने गुणतीस वरस समान प्रवरज्या पाली। पछे तिस वरस आचारज पणे रहीया। सरब दीध्या गुणसाट वरस पाली। सरब आउषो एकसो च्यार वरस नो। वीर नीरवाण सु १५२४ वर्ष पछे समत दसे न चोपन वरसे देवलोक हुवा ॥ समत १०५४ ॥ जयषीण आचारज ते पाट विजेरीष स्वांमी पाट वठा ए ५० मा पाटवी ॥ विजेयरिष आचारज ते सोले वरस ग्रहस्थ पणे रया ने इकीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली। पंव्ट वरस आचारज पद रया। सरब दीध्या छियासी वरस पाली। सरबे आउबो एकसो दोय वरस नो। वीर नीरवांण सु १५८६ वर्ष पछे समत ११ ग्यारेन उगणी वरसे देवलोक हुवा ॥स० ११११॥ विजय रीषजी आचारज न पाट देव रीषजी स्वांमी पाट वेठा ए ५१ मा पाटवी ॥ देवरीषजी आचारज ते दस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने पचिस वरस समन्य प्रवरज्या पाली पछे पंचावन वरस आचा-रज पद रह्या। सरब दीध्या असी वरष पाली। सरब आउषो नेउ वरसनो। वीर नीरवाण सू १६४४ वर्ष पछे समत इग्यार ने छिमंत्र वरस देवलोक हुवा ॥स०॥११७४॥ देवरिषजो आचारज ने पाट ॥ सूरसेन स्वांमी पाट

बेठा ए ५२ वा पाटवी ।। सूरसेनजी आचारज ते बावीस वरस तो ग्रहस्था आश्रव मां रह्या । ने इकीस वरस ते सामान्य प्रवरज्या पाली । पीछे चोष्ट वरस आचारज पद रह्या । सरब दीख्या पिचायासी वरस पाली । सरब आउषो एकसो सात वरस नो । वीर नीरवाण सु १७०८ वर्ष पछे समत बार ने अडतीस वरसे देवलोक हुवा ।।स०।।१२३८।। सूरसेन आचारज न पाट माहा सूरसेन स्वांमी पाट बेठा ए ५३ मा पाटवी ।। माहा सूरसेन आचारज ते पचिस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या न चोपन वरस समान्य प्रवरज्या पाली पीछे तीस वरस आचारज पद रया । सरब दीख्या चोरासी वरस पाली । सरब आउषो एक सो नव वरसा नो । वीर नीरवांण सु १७३८ वर्ष पछे समत बार ने अरष्ट वरसे देवलोक हुवा ।। समत १२६८ ।। माहा सूरसेन्य आचारज ने पाट माहासेण आचारज पाट वठा ए ।।५४।। मा पाटवी ।। माहासेण आचारज ते इग्यार वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने छियंत्र वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे वीस वरस आचारज पद रया । सरब दीख्या छिनू वरस पाली । सरब आउषो एकसो सात वरस नो । विरना नीरवांण सू । १७५८ वर्ष पछे समत १२ वार ने इटीयासी ये वरस देवलोक हुवा ।। समत १२८८ ।।

माहासेण आचारज न पाट जीवराजजी स्वांमी पाट बेठा ए ५५ वा पाटवी ।। जिवराजजी आचारज ते तेर वरस ग्रहस्था आश्रव मां रह्या ने छतीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे इकीस वरस आचारज पदे रह्या । सरब दीख्या सतावन वरस पाली । सरब आउषो सीत्र वरसनो वीर नीरवांण सु ७७६ । वर्ष पछे समत तेरने नवे वरसे देवलोक हुवा ।।समत ।।१३०६।। जिवराजजी माहाराज ने पाट गजसेन स्वांमी पाट बेठा ए ५६ मा पाटवी ।। गजसेन्य माहाराज ते तेवीस वरस ग्रहस्थाश्रव मां रया ने पंतिस वरस समान्य प्रवरज्य पाली । पीछे सतावीस वरस आचारज पदे रया । सरब दीख्या बाष्ट वरस पाली । सर्ब आउषो पचियासी वरस नो । विर नीरवांण सु १८०६ वर्ष पछे समत तेरने छतिस वरसे देवलोक हुवा ।। समत १३३६ ।। गजसेन आचारज न पाट मंत्रशेन स्वांमी पाट वठा ए ५७ मा पाटवी ।। मंत्रसेन्य आचारज ते बावीस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रया । तीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे छतीस वरस आचारज पद रया । सरब दीख्या छाष्ट वरस पाली । सरब आउषो इटीयासी वरसनो ।

वीर नीरवांण सू १८४२ वर्ष पछे समत तेरने वहोत्र वरसे देवलोक हुवा ॥समत॥१३७२॥ मंत्रसेन्य आचारज न पाट विजय सीह स्वांमी पाट वठा ए ५८ मा पाटवी ॥

विजयसिह स्वांमी विस वरस ते ग्रहस्थपणे रया ने दस वरस समान्य प्रज्या पाली । पीछे इकोत्र वरस आचारज पद रया । सरव दीष्या इकीयासी वरस पाली । सरव आउषो एकसो एक वरस नो । विर निरवांण सु १९१३ वर्ष पछे समत चवदेने तयालीस वरसे देवलोक हुवा ॥ समत १४४३ ॥ विजयसीह आचारज ने पाट शीवराजजी स्वांमी पाट वठा ए ५९ मा पाटवी ॥ शीवराजजी आचारज ते अटारे वरस ग्रहस्था आश्रव मां रया ने तेर वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे छमालीस वरस आचा-रज पद रया । सरव दीष्या सतावन वरस पाली । सरव आउषो पीचंत्र वरसनो । वीर नीरवांण सु १९५७ वर्ष पछे । समत चवदे न सितीयासिये वरसे देवलोक हुवा ॥ समत ॥ १४८७ ॥ सीवराजजी माहाराज ने पाट लालजी स्वांमी पाट वेठाए ६० मा पाटवी ॥ लालजी आचारज ते अड-तीस वरस ग्रहस्था आश्रमां रया ने उगणीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली पीछे तीस वरस आचारज पद रया । सरव दीष्या गुणपचास वरस पाली । सरव आउषो सित्यासी वरसनो हुवो । विर नीरवाण सुं १९८७ वर्ष पछे समत पनरे न सतरे देवलोक हुवा ॥ समत १५१७ ॥

लालजी सांमी ने पाट ग्यांन रीषजी पाटवी ॥ ग्यांन रीषजी आचा-रज ते सोले वरस संसार मे रही ने छमालीस वरस समांन्य प्रवरज्या पालि । विस वरस आचारज पद रया । सरव दीष्या चोष्ट वरस पाली । सरब आउषो असी वरस नो । वीर नीरवाण सु २००७ वर्ष पछे समत पनरे ने संतिस वरसे देवलोक हुवा ॥समत॥१५३७॥ ग्यांन रषजी माहाराज ने पाट नांनगजी स्वांमी पाट वठा ए ॥ ६२ ॥ मा पाटवी । नांनगजी स्वांमी छाइस वरस संसार मे रया । संतिस वरस समान्य प्रवरज्या पाली पछे पचिस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या वाष्ट वरस पाली । सरव आउषो इटीयासी वरसनो । वीर नीरवांण सू २०३२ वर्ष पछे समत पनरने वाष्ट वरसे देवलोक हुवा ॥समत॥१५६२॥ नांनगजी माहाराज ने पाट रूपजी स्वांमी पाट वठा ए ६३ मा पाटवी ॥ रूपजी आचारज ते वतीस वरस ग्रहस्था आश्रव मां रया ने अठाइस वरस समान्य प्रवरजा

पाली । पीछे विस वरस आचारज पद रह्या । सरब दीख्या—अडतालीस वरस पाली । सरव आउखो असी वरसनो । वीर नीरवांण सु २०५२ वर्ष पछे समत पनरे ने बयासी वरसे देवलोक हुवा ।। स० १५८२ ।। रूपजी आचारज जी ने पाट जीवराजजी स्वामी पाट बठा ए ६४ मा पाटवी ।।

जीवराजजी माहाराज ते अटावीस वरस गृहस्थपणे रया ने पंस्ट वरस समान्य प्रवरजा पाली ने पांच वरस आचारजपणे रया । सरब दीख्या सीत्र वरष पाली । सरव आउखो अटाणु वरसनो । वीर नीरवांण सु २०५७ वर्ष पछे समत पनरे न सत्यासी ये देवलोक हुवा ।।समत।।१५८७।। जीवराजजी आचारज जी ने पाट वडा विरजी स्वांमी पाट बठा ए ६५ मा पाटवी ।। वडा वीरजी आचारजजी ते छाइस वरस गीरस्तपणो रया ने इगतालीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली पीछे आट वरस आचारज पद रया । सरब दीख्या गुणपचास वरस पाली । सरव आउखो पीचंत्र वरसनो । वीर नीरवांण सु २०६५ वर्ष पछे समत पनरे पचाणु वरसे देवलोक हुवा ।। स० १५९५ ।। वडा वीरजी आचारजजी रे पाट लघूवीर सींघजी स्वामी पाट वेठा ए ।।६६।। मा पाटवी ।। लघुविर सींघजी आचारजजी तीस वरस ग्रहस्थपणे रया । सीटच्ट वरस । समान्य प्रवरज्या पाली । पछे दस वरस आचारज पणे रह्या। सरव दीख्या सीतंत्र वरस पाली। सरब आउखो एकसो सात वरस नो । वीर निरवाण सु २०७५ वर्ष पछे समत १६०५ सोला न पांचरे वरसे देवलोक हुवा ।। समत १६०५ ।।

लघूवीर सीघ आचारज जी ने पाट जसवंतजी स्वांमी पाट वठा ए ६७ मा पाटवी ।। जसवंतजी आचारज जो ने इगतालीस वरस ग्रहस्थ पणे रहीने तयालीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे इग्यार वरस आचारज पणे रही । सरब दीख्या चोपन वरस पाली । सरब आउखो पचोणु वरसनो । वीर नीरवांण सु २०८६ वर्ष पछे समत सोले ने सोले वरस देवलोक हुवा ।। समत १६१६ ।। जसवंतजी आचारज जी ने पाट रूप सींघ जी स्वांमी पाट वेठा ए ६८ मा पाटवी ।। रूपसींघ जी आचारज जी ने अड़तीस वरस ग्रहस्थ पणे रहीने बयालीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे वीस वरस आचारज पणे रहीया । सर्व दीख्या बाव्ट वरस पाली । सरव आयुषो एक सो वरसनो । विरना नीरवांणसु २१०६ वर्ष पछे समत सोले न छत्तीस वरस देव लोक हुवा ।। समत १६३६ ।। रूपसींघ जी आचारज जी

ने पाट दामोद्रजी स्वांमी पाट वटा ए ६९ मा पाटवी ।। दामोद्रजी आचारज जी ते पंतालीस वरस संसार म रहीने सतरे वरस समान्य प्रवर्ज्या पाली । पीछे बीस वरस आचारज पणे रहीया । सरब दीष्या सतीस वरस पाली । सरब आउषो बयासी वरस नो वीर नीरवांण सु २१२६ वर्ष पछे समत सोल ने छपन वरस देवलोक हुवा ।। स १६५६ ।। दामोदरजी आचारज जी ने पाट धन राजजी स्वांमी पाट वठा ए ७० मा पाटवी ।। धन राजजी आचारज जि सतावीस वरस ग्रहस्थ पणे रया ने अड़तालीस वरस समान्य प्रवरजीया पाली । पछे बावीस वरस आचारज पणे रया । सरब दीष्या सीत्र वरस पाली । सरब आउषो संताणु वरसनो वीर निरवांणसु २१४८ वर्ष पछे समत सोले ने इटंत्र वरसे देव लोक हुवो ।। समत १६७८ ।। धन राजजी आचारज जी ने चिंता मणजी स्वांमी पाट वठा ए ७१ मा पाटवी ।। चीतामण जो आचारज जी ते चवदे वरस ग्रहस्थ पणे रया ने इकावन वर्स समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे पनरं वरस आचारज पणे रया । सरब दीष्या वाष्ट वरस पाली । सरव आउषो असी वरस नो । विर नीरवाण सु २१६३ वर्ष पछे समत सोले न तेराणु वरसे देव लोक हुवा ।। समत १६९३ ।। चितामणजी आचारज जी ने पाट पेमकरणजी सांमी पाट वेटा ए ७२ मा पाटवी ।। खेम करणजी आचारज ते पचिस वरस ग्रहस्थपणे रया, गुणीयासी वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे पांच वरस आचारज जो पणे रया । सरब दोष्या चोरासी वरस पाली । सरब आउषो एक सो नव वरसनो । विर नीरवांण सू २१६८ वर्ष पछे समत सोले न अठाणु वरसे देव लोक हुवा ।।सन ।।१६९८ ।।

प्रमाणे उपरला गुणतिस मा पाट वाला ना बारा में । विर निरवांण पछ एक हजार इटीयासी वरसां पछे समत ६ के वरस १८ रे पोसाला मंडाणी । कुलगर माहातमानी पोसाला मांह थी गछ निकल्या । तेहनी विगत ।

वीरना नीरवाण थी चवदसे चोष्ट वर्स से समत नवने चोरांणु वरसे वडग गछ हुवो । सोले से गुणतीसे वरसे पुनम्यो गछ हुवो । सोले से चोपन वरसें आंचल्यों गछ नीकल्यो । सोलेसे ने सीत्र वरसे पूंत्र गछ नीकल्यो । ते मांथी दस गछ निकल्या । सतरेसे न वीस वरसे

आगमीयो गछ नीकल्यो । सतरेसेन पचावन वरसे पोसाला मांथी तपोगछ निकल्यो । ते माहंथी तेरे गछनी कल्पाए आददेने तयासी गछ नी थापना हुइ । सरब गछनी उतपती नो बीसताकरतां समास गणो बध जावे तीणथी इहां लीषीयो नहि । जूदा जूदा मत निकलवानो कारण माहावीर सांमी ना जनम रासे भसम ग्रह परीयो ते कारण थी आरज देसमां बारा काली च्यार परी ने आट मोटा निनब थया । जतीयों ना गछ चोरासी चाल्या । अनंता काल थी हुडा सरपणी ना जोग थी । पांचमा आराना दूषम समये आवे त्यारे असंजती पुजानो अछरो दसमो हुवो । ते जोगे वांका अने जडपणा करीने भ जीवना हिया मां मीथ्याती ओ ए घोचा पाडीया । भसम ग्रह नो जोग वध्यो ।

तीवारे हूंस्या में धर्म प्रगट थयो । सीधांत भंडार मां नाव्या ने पोताने छादे विपरीत नवी जोरां कीधी । सजाय, तवन, रासने, चोपइ, कथा, सीत्रूजानुधार, सीलोक, काव्य, प्रकरण, व्याकरण, छंद, मंत्र-तंत्र, पोता नी मती कल्पनी करी । हूंस्यामा धरम परुप्यो । देवगुरुनी पुजा करवी । गोतम पडधो करवो खमासण वे रावणो । गुरांने सांमलो करावो । पगमंडा करावो, गाजे वाजे गीत ग्यांन करीने गांम मां प्रवेस करावो । जूरते लोकरा वोग वालीया तेलो, चंदन बाला नो तेलो, समुद्र मोलण तेलो, डोली ते धर्म नी पोल उघाडी । मुगतनी नीसनि गुरुने वेरावो । ग्यांन पंचमी तप करीने उजमणो करो । सग पुजन उजमणो करो । चउदस पषीनो उजमणो करावो । तेलो पांच अटाइ उपरांत तप करे तेनो वरघोड़ो तथा उजमणो करावो ने गुरुने पछे वडी द्रव्यादीक आपो । रात जागण करावो । पुस्तक पोचावो ने कल्पसूत्र वचावो ने पुस्तक ना यांना जीलावोने पुस्तक नी पधारामणी करावो ने पजूसणां में मुषपती नो टको गुरु ने देवो । वांजंत्र वजावो प्रभावना स्वांमी वछल करावो । शत्रूजा माहातमा रचावो । गीरनारजी नो पट करावो । नाइ धोइ छेल रही फल फुलादीक चडावो । इत्यादीक आददेइने अनेक जीन वचन विपरीत परुपणा कीधी । दोय हजार वरसनो भसमग्रह हतो तीन सू एवीप्रीत वात हुइ । अनेक सूध धरमनी उदय उदय पुजा कम परी ।

भसमग्रह कदी उतरीयो तेहनी हकीकत कहे छे । भगवान माहाराज जे दीने मुगत पधारीया ते दीन भसमग्रह नो प्रभाव वरतांणो । वीरनां

नीरवांण पाछे च्यार सेहने सीतर वरसे पछे विक्रम राजा ए समत चलाव्यो ने संवत पनरे न इगतीसे रा साल सूधी दोय हजार ने एक वर्ष हुवो। त्यां सुधी तो असंजतीना मतनी उदय उदय पूजा थई। हवे भस्मग्रह उतरवाथी तेहनु जोर हटियो। तीवारे निरमल धर्म प्रगट हुवो ने उदय उदय पुजा चलू थइ। इण रीते समत पनरे ने पचीसे मां गुजरात देस ने विषे अमंदावाद मां ओसवाल वंस मां गोत दयतरी हुतो। लुका साहा मोटा सहुकार हुता। ते पेली तो सीरकार नं दयत्र नो कांम करता हता। ते सरकार नः कांम मां पाप वोहत जाणी, पोते पाप जांणीने पातसाह नी रजा लेइ न दफत्र नो काम छोडीयो। पछी नांणावटी नो वोपार करणो सरु कीनो। एक दीवस एक जवन तेमने दुकांने आव्यो। तेणे महेमुदी नाम ना सीकाना दो करा लीधां ते दो करानी चीडीमार ना पासे थी चिडीयो वेंचाती लीधी। ते हणवाने पोताने घर लेइ चाल्यो। ते परथी लुको साए वो अधरम वोपार जांणी वोपार उपरथी वेराग उपनो। तूरतज संवेग भात आंणी नांणावटी नो वोपार करवा नो नीयम धारण करीयो। अने धर्म उपर पुरण भाव हतो।

एक दीनरे समे एक लीगधारि रतन सूरी फीरत अमदांवाद आव्या। अमंदावाद मां एक वडो उपासरो देष्यो। तेमा जुना पुस्तक नो भंडार देष्यो ने श्रावक ने बोलावी ने पुस्तक बाहार कडाववाना कह्या। श्रावक तमामा मलीने भंडार षोलाव्यो ने पुस्तक बाहार काडवा लागा। घणा पुस्तको मां शरदी आइ गइ ने घणा पुस्तक न उदइ पाधी। तेवारे सा लषमी साहा आदने मोटा २ शेठ हुता। तेमणे पुस्तक नो भंडार षराब थयोलो देषी लगी रहु वा शेठजीए तमाम श्रावकां ने तथा लींगधारी ने ए पुस्तक नवा लिखाववानो हुकम दीधो। कारण के ते लीषावसां तो जेन धरम कयाम रहेसीए। ए मोटो उपगार जांणी सारा श्रावके वचन प्रमाण कीधो ने घणा श्रावक विचारी ने वोल्या के कोइ आदमी घणो चतुर घणो हुसीयार हुवे ते तेने पुस्तक लीषवा नो आपो। उस बषत मोटा शेठीया रतनचंद भाइ हुता। ते बोल्या के आपणी न्यात मां तथा जेनधरम मां जांणकर लुकोसा जात ना श्री श्रीमाल वीशा छे। तेना जेवो हुसीयार वीजो छ नही। तेथी तेना पासे सूत्र लषावो। त्यारे घणा श्रावक बोल्या लुको सेठ तो आपणा मां घणा धन वालो छे। ते पुस्तक लिष से नही।

तिवारे अमीपाल सेठ तथा लषमजी भाइ तथा रतनजी भाइ आद देइने समसत श्रावके विचारी ने कह्यु के संगतु कांम तो संग करे से। एवो वीचार करीने सघसमसते लुकासा ने बोलाव्या। तीवारे लंका सा उपासरे आव्या। समसत श्रावक ने जतीजी बोल्या—के जीन मारग नों कांम छे। तब लूका मेतो बोल्या—क सू काम छै। तीवारे जवाब आपीयो—के आपणा धर्मना सासत्र बोत उदेइ षाधा छे ने पुस्तक जीरण होय गया छै ने आप लषसो तो मोटा उपगार नो कारण छे। तीवारे घणो संघनो हठ करी तथा लूका मेता ने मांन घणो देइने कांम कराव्यो। तीवारे लुका मेता ए वीचार करीयो के मोटो कल्यांण नो कारण छे। एक तो न्यात नो कहवी थी ने एक धर्म नो कांम जाणी लकासा ए वचन प्रमांण कीधो।

तीवारे भंडार मां थी दसवीकालीक सूत्र नी परत लीषवाने लूकाजी आपी। लूकाजी ए वांची ने विचारीयो—के तिरथंक्र नो मारग तो दशवी कालक सूत्र मांहे छे। ते धर्म प्रमाण छै। धर्म मंगलीक छे। एवु वीजो धर्म नथी। धर्म अहंस्या ते दया संजम तप एहमां धर्म कहो छे न साधु नै बावन अनाचार टालवा, छ कायनी दया पालवी, वेतालीस दोष टालवो न आहार पाणी लेवो। अष्टाद दोष मांहलो एक दोष सेवे तो साधपणा सू भिष्ट कह्यो, एता दोष टाले जीण ने साधू कहीजे। साधु ने भाषा विचारीने बोलवी। आचारदोष पालवो। गुणवंत गुरुनो विनय करवो कह्यो न मुनि ना सतावीस गुण कया। एवा वचन दसवीकालक वांची ने हिरदेय मां अत्यंत हरष्यो। अपुरव वसतू पाइ जांणी नै दीलमां विचार करयो के एतो जती ढीला पडीया छे। सीधांत देष्यां थी जाणीयो भगवंतनी वांणी षाली न जावै। अन तीण समये लुकाजी ए वीचार करीयो कोइ ठिकाणे उत्तम मुनिराज छे तेनी हवे षवर करावी जोइए। एम नकी करीने हवे भसम ग्रहनो दोष टल्यो ने उदेय पुजा थइ। जोइ ए एह अवसर आव्यो तेथी भली बुध उपनी। लुका मेंता ए विचारीयो के वीर वचन जोतां तांए भेषधारी दया धर्म साधनो आचार ढांकी ने हींस्या धम नी परुपणा करे छे। ए तो छकाय जीवनी हिंस्या करवी। धर्म अरथे परुपे छे। पोते मोकला पडीया छे। ते माटे आवारु एहने कह्यां मांनसे नहि तेथी कहवो ठीक नहि रषे। उलटो परे। ते भणी सघला प्रारतां बेवरी उतारी ने एक आपे राषा ने एक लींगधारी तेने देवे। तीवारे पछे घणा सूत्र तो आप लष्या ने घणा सूत्र आपना घरसूं दांम देइने लीधो। तीवारे पछी लुका मेता ए घणा सूत्र नो धारणा करी ने यो

ते आपणे घरे सूत्र वांचवा शरु कीया । तिवारे मोटा शेटीया लिषमी साहा रतनसीहजी आद देने घणा भव्य जीवो सांभलवा आववा लागा । घणा हलु करमी भव्य जीवो ने दया धर्म रचु ।

ते समये सहर सीरोइ नो रहेवाशी, नगर शेठ नागजी मोतीचंदजी, दलीचंदजी, शंभूजी आद देइने आपणो सरव परीवार घरनो लेइने शहरनो लोकपण साथे मोकलो लीधो तथा सीरोइ पासे अरठ गांम नो पण संघ साथे लेइने जात्रा सिधाचलनी करवा चाल्या । चलतां चालतां अमंदावाद आव्या । तीवारे वरसाद घणो हुवो । तीण सू सिंघ नो पडाव हूवो । तिवारे अमंदावाद मां लुका सा मेहतो दया धर्म नी परुपणा करे छे । संघवी ने षवर परी के लुका मेहतो सीधांत वाचें छै । ते तो अपुरव नांणी छै । एम जांणी ने संगवी घणा लोकां साथे सांभलवा आव्यो । तीवारे लका मेहता पासे दया धर्म, साधनो, श्रावक नो आचार सांभली ने अत्यंत हरष्यो । मारग रुच्यो । घणा दीन जातां ने हुवा । तीवारे संघ माहे संगवी ना गुरु हता । तेमने मनमां जांण्यो के लुका मेहता पासे सूत्र सांभलवा जाय छे । ते माटे संगवी पासे आवी ने एम बोल्या—के हे संघवी, संघ आगल चलावो । लोक सहु षरची वीना दुषी थाय छे । तिवारे संघवी बोल्या के वरसाद वहु हुवो छे । तीण कारण वाट मांहे अजयणा घणी छे । एकंदरी जाव पचंदरी देदका प्रमुष घणा छे । लीलण फुलण घणी छे । ते चालण सू घणा जीव मारीया जासी । ते माटे हमणो ढवो । पछे रस्तो सफा थयां चालसू । तीवारे गुरु बोल्यो—के संघवी धरम ना कांम मा हुंस्या गणीजे नही । एवा लीगधारी ना वचन सांभली ने संगवी ए वीचारीयो के ए तो कुगुरु छे । मे लका मेता पासे सांभल्यो छे । भेषधारी अणाचारी ने छ कायनी अनुकंपा रहित भेषधारी देषाय छे । तीवारे संगवी ए हुकम करीयो के मारे तमारी संगत न करवी । तीवार संगवी ए भेषधारीने रजा दीधी । ते संगवी ने सीधांत सांभलतां वेराग उपनो । समंत पनरे ने इगतीसेरा साल में शेठ सरवोजी, दयालजी, भांणजी, नुनजी, जुगमालजी आददेइ न पीस्तालीस जीणा ने वेराग भाव उपनो । आपणा कुंटबनी अग्या लेइने लुकाजी प्रत्य बोल्या के अमारे संसार त्यागन करवो, संजम धारणा करवानो विचार प्रगट करीयो ।

तीवारे लुका मेता एवो कह्यु के हुतो गरिस्ती छु । दिक्ष्या तो मुनि होय तो चेला करे । तिवारे लुकासा ए वीचार करीयो के सूत्र श्री भगवती

जीना सतक विसमा नो, उदेसे आठ मे, गोतम स्वांमी ए प्रश्न कीधो के पंचम काल में आपरो सासन कीतना वरस चालसें । तिवारे भगवंत माहाराज गोतम प्रत्य कहो के मारो सासन निरंत्र आंत्रा रहित इकोस हजार वरस सूधी चालस्ये । एवो सूत्र वाचन लूका जी ए वीचार कीधो के वीर प्रभूना साधू हाल भरत षेत्र मां छे । सूत्र नो उनमांन देषतां छे । ज्यारे लुका सा लक्षमि साहा ने तथा अमीपाल तथा श्रीपाल आद देइने घणा शेठ सहुकारने भेला करी । लुकासा बोलाया के जेन मारग नो मोटो उपगार नो कारण छे ने सूत्रनो समास देषतो भरत षेत्र मां साधू छे । तेथी आप महनत करीने षवर कढावो तो मुनिराज ने अहो बोलावो । ए तो पीस्तालीस जणा दीक्ष्या लेसी । एह थी सरब श्रावक मली ने सइकरां रुपीया षरचि ने देशां न देस षवर करावतां सींधनी हिदराबदना जिला मां ग्यांन रीषजी माहाराज इकवीस ठाणे सू विचरे छे । एवी षवर मीली । तीवारे सींधनी हिदरावाद सू अमंदावाद वोलावतां रसता मां घणा परीसा उत्पन हुवा । पण साह सोंह आतमाअरथो माहा प्राकरम ना धणो, साहासोकपणो धारो ने अमंदावाद पधारोया । तेमना सांमा घणाज वाटसू, जेनमारग नो उदीयोत करी माहाराज ने सेहरमा लाया ने ग्यान रीष जो माहाराज नी वांणी सांभ ली । घणा जणा प्रतिबोध पांम्या । सरवोजी, दयालजी, भांनुजी, नूनजी जगमालजी आददेइ ने पीस्तीलीस जणा समत पनरे न इगतीसे वेसाष सुद तेरस न दीवसे ग्यांन रीषजी महाराज ना चेला हुवा । मोटे मंडणे दीष्या लीधी । जेन धर्म नी उदे पुजां हुइ । अमदावाद मां घणा जिणा मोथ्यात वोसराया ने दया धर्म अंगीकार कीधो ।। ग्यांन रीषजी माहाराज इगण्टमा पाटवी छे ।। और पीण बतीसनी साले ग्यान रीषजी ने दोय चेला हुवा । तेहना नांम छोटा नांनजी स्वांमी ते गांम भोमपाली ना वासी तथा जगमालजी, जातना सूरांणा ए आददेन बहोत्र चेला ग्यांन रीषजी महाराज रे हुवा । समत पनरे ने अडतास री साल मीगसर सुद पांचम ने दीने. अमंदावाद उवाला लूकाजी दफत्री पीण दीष्या लीधी ग्यान रीषजीना, चेला सूनती सेन जी रे पासे लूकाजी दीष्या लीधी । पांच चेला लुकांजी ने हुवा । लुका नाम थपीया ।

तीणरी याद—लुकाजी दीष्या लीनी तिणरो परवार गणो बधीयो । तिणरो नाम लुका नांम थपीयो छे और लूकाजी गुजरात मारवार और

दीली तक पधारीया । ओर दीली माहे पातसांह आगल चरचा थयी । श्री पुजजी सू लूकाजी रे चरचा हुई करीने घणो मीथ्यात हठावी ने घणां श्रावक ने प्रतीबोध दीधो । एनी साष सूरतना सेठजी कल्यांणजी भंसालीना भंडारमा पटावली संस्कृत मां छै । तेमां लूकाजी नी दीष्यानी हकीकत छै । तथा ग्यांन सागर जतीनी जोर नो ग्रंथ नाटक तेमां पण लूकाजी ए दीष्या लीधी नो लष्यू छे । देया धर्म नो उदीयोत घणो थयो । देस देस में गांव नगर में दया धर्म नी परुपणा घणो वधो । घणा ना मोह मीथ्यात काढ़ीया । घणाने दया धरमां आणीया । एसो जेन मारग नो महिमा देषी ने पनरेसेह वतीसे नी साल मां साधुआंनी महिमा आगले जतीयो नो जोर वहु कम परीयो । तीवारे जतीयां वीचार करीयो क आपणो मत हवे चालसी नहीं । तेथी पोता नो मत नीभावा वासते समत पनरे वतीसे मां आनंदवीमल चंदजी जतीए क्रिया उधार तप आदरीयो । समत १६०२ री सालमां आंचल्या कीया उधार कीयो । समत १६०५ वर्षे षरत्रा क्रिया उधार कीधो । अने घणा लोंका ने हंस्या धरम मा घाल्या । प्रतमा नी परुपणा घणी कीधी । तेथी तपा घणा वध्या । तेथी तपाजी स्वांमी (द्वेष आंणीने) ५ जगमालजी स्वांमी ६ सरवोजी स्वांमी ७ रुपजी स्वांमी ८ जिवाजी स्वांमी ए आट पाट उतम आचारी हुवा । ए आटमां पाट उवाला जीवाजी स्वांमी ने सरीरे रोगादीक नी उतपती हुइ । ओषद रे वास्ते आनंद वीमल जती रे पासे गया । त्र जांणीने ओषद रे बदले नांम थापन हुवो ।

लूकाजी ना आठ पाट सूध आचारी हुवा तेना नांम १ जांनजी सांमी २ भीषमदासजी स्वांमी ३ नूनजी स्वांमी ४ भीम जरनी पुडी दीधी ते ओषद ने भरोसे ते पुडी जीवाजी स्वांमी ए षाधी । तीवारे शरीरमां जर प्रागम्यां न जहर जांणीयो त्रे संथारो कीधो ने देवगत हुवा । तीणांरे लारे चला हुता ते बगत समत १६६७ व० चोथी बरा काली परी । तीणमे लूकाजी ना नव मा पाट उवाला आचार में ढीला परीया । जतीय जेवा हुवा । आधा करमी आहार थांनक वस्त्र पात्र भोगववा लागा , बोलावे ते नगरे गोचरी जावे तेथी लूका गछनी थापना हुई । एह रीते चोरासी गछनी थापना हुइ । पोतीया बंधनी उतपती लिखंते, समत सोले ने पीचंतरनी सालमे वीरना निरवांण सू इकीसे पंतालिस वरस गयों, पोतिया बंध धर्म प्रगट थयो । पाट

सीत्र मे धनराज जी स्वांमी ना चेला, देस कीटीयावार, गांम राजकोट ना रवासी वीसा सीरमाली जसाजी नांमे हुता। तीणने धनराज जी पासे दीष्या लीधी। वरष पांच दीष्या सां रह्या ने परीसहो षमी सकीया नहीं। तीवारे साधपणो छोड़ दीधो। तेथी लोकां मा मानता पीण तेहनी रही नही। तेथी पोते पोतानाम तथा पोतीयाबंध श्रावक नो धर्म नवो परुप्यो ने उलटी परुपणा कीधी के पंचमा कालमें साधूपणो पले नहि ने साधु छे ते ढांगी छे। साधपणा नी एकंत न षंद न कर दीधी और पीण घणी वातां उलटी परुपणा कर दीदी ने बोल्या के पंचमा काल मां श्रावक पणो पले छे ते जसाजी ए गांम गांम मे ए रीते परुपणा करवा मांडी। तिवारे जसाजी ने घणा चेला तथा चेलीया थइने श्रावक ना व्रत धारण कीधा। उनका चेला चेलीए संसार त्यागी ने भीष्याचारी रुपे श्रावक ने वेस, माथे एक चोटी राषी ने पोतीया बांधता, ओघानी डांडी उघारी राषता नन सीतीयो उंगारे बांधता नही ने गोचरी करता। ए रीते मारग धारण कीयो। घणा वरष विचरीया ने तेनो मत गणा देसांम फेलाव हुवो। समत उगणीस ने पचीस नी सालमां पोतीया बंधनों मत विछद गयो ॥ इति ॥

सूरतना वासी वोहरा वीरजी, दशा सीरमाली, कोडीधज हुता। तेनी वेटी फुला बाई ए लवजी ने षोले लीया। ते लवजी ने लुका ने उपासरे भणवा मोकल्या। ते लवजी सीधांत सुणता। ते लवजी ने वेराग उतपनं हुवो। साधुना आचारनी षवर पडी। त्रे वोहोरा वीरजी पासे दीष्या नी आग्या मांगी। तीवारे वीरजीए लका गछ मां दीक्षा ले तों आपु ने तमे साधु मुनिराज नी पास दीष्या लेवतो आग्या नही आपु। तिवारे लवजी बीजे ठीकांणानी दीष्या लेवा न घणी आजीजी करी, पण वीरजो वोहोराए आग्या दीधी नही। तेथी लवजी ए वीचार करीयो के हमणो एवो ज अवसर छे तो लुका गछ मां दीष्या लेहु। एवो नीश्चय करी ने ते अजंगजी जती पासे गया, ने कह्यु के स्वांमी मने दीष्या आपो। पण ते साथे तमारे उमारे एवो करार के तमारा शीष्य हुवां पीछे वे वरस लुका गछ मां रही सूं ने पछी मारो मन होसी ते गछ मां जसू। एह लवजी ना वचन सूणीने अजंगजी एम बोलता हुवा-तुमारी इछीया हुवे जीवक करजो। एम ठराव करीने वीरजी वोरानी आग्या लेरने दीष्या लीधी। समत १७१२ मां लवजी थया। घणा सूत्र सीधंत भणीने पंडीत थया।

ते पछी वे बरसे पोताना गुरुने एकतेलेइ ने पुछियो के तमे साधने आचार जीमम्छै तीम पाली छो के नही । तीवारे व्रजागजी बोल्या के आज पांचमो आरो छे तो भगवंत ना वचन प्रमांणे, संजम पले नहि । पले जसो पाली जे। तिवारे रीष लवजी बोल्या के स्वांमी भगवंत नो मारग तो इकीस हजार वरस लग भगवंतनो सासन चाल सी तुमे एम केम बोलो छो । आप लुका गछ छोडी ने नीकलो ने ए पीचंतर मा पाटवी जीव राजजी स्वांमीनी नेश्राय तथा आ प्रमांण वीचरो तो तमे अमारा गुरुने अने आपरा सीस । तीवारे वरजंगजि जति बोल्या अमाराथी तो गछ छोडीस नहीं । तिवारे हाथ जोरी ने लवजी बोल्या-हे स्वांमी मन रजा हुवे ! तीवारे एक तो लवजी एक भाणजी ने एक दोभजी ए त्रण जण गछ छोडीने स्वमत समत सतरेन चवदे नी सालमे दीष्या लीधी ।

वजंगजी ने वोत रीस चडी । गांम गांम में कागद दीधा के लवजी मराथी न्यारो फंटी ने गयो छे । तेने जागा तथा आहार पांणी दीजो मती । एवो वरजंगजी ए वंदोवसत कीधो । लवजी स्वांमी ए वीहार करीने एक गांम मां गया । तिवारे जायगा मुनी ने उतरवा देवे नही । तीवारे मुनी पडेली जायगा मां उतरीया त्यां तेमना ग्यांन घ्यांन संजम नी रीत देष कर घणा श्रावक श्राविका तेमने पासे आवी सुध वांणी सांभली ने साधुनो धर्म घणा जिणे अंगीकार करीयो । लवजी स्वांमी नी महिमा देषकर जती लोकां ने धेस उतपन हुवो । तीवारे धेसी लोक एम बोल्या-के लवजी स्वामी ने ढुढामां उतरीया देख्या । तिवारे ढुढीया नाम तपा लोकां ए थापना कीयो । सवत सतरेने चउदाने वरसे पोस वद तीजने दीवसे ढुढिया कह वांणा । ढुढीया नांम कानजी रीष नां सांधां रो नाम छे। बावीस संपरदाय रा साधां नाम ढुंढीया नहि छै । ढुढीया नाम कहवाणा । ते दीन सू आज दीन सुधी समत उगणीसे ने तेपन रा आसोज सुद १० सूधी दोय से गुणचालीस वरस हुवा मटेरा चेतम तो तथा हंस्या धर्म कहेक साधांने हुवां ने तोन से वरस हुवा । इम कहे ए वात एकंत जुठ कहे छै। ढुंढीया नांम कहवांणा तीणने दोयसे गुण चालीस वरस हुवा ।

॥ लवजी सांमी ने सीप थया तेना नांम लीपंते ॥ अमंदा मां कालुपुरना रहेवासी, पोरवाड, सोमजी तेवीस वरसनी उमरनो श्रावक हतो । बहु वेरागथी सोमजी ए लवजी स्वांमी पासे दक्ष्या लीधी । लवजी

स्वांमी गांमांनुगांम वीचरता विरानपुर आव्या । त्या सीधांत वांणी सांभलवा घणा श्रावक श्राविका आव्या ने मुनीनी वांणी सांभली ने ए जसहरना इंद्रपुरना नांमना वाहीरना पाडामां लवजी स्वांमी पधारीया त्यां घणो धर्म नो उपदेश हुवो । तेथी लुंकागच्छना जतीयां वहु द्वेष करीयो ने अमकी बाई रंगा री मारफत जेरनी लाडवा वेराव्या । लाडु पाधाथी लवजी स्वांमी ने जेर उपनो । तीवारे जेर जांणीने संथारो करीने देवगत हुवा । तेमना पाट सोमजी स्वामी हुवा । तेमना चेला हरीदासजी, प्रेमजी, कांनजी, गीरधरजी, अमीपालजी, श्रीपालजी, हरीदासजी, जीवाजी सेहरकरणीमलजी, केसुजी, हरीदासजी, समरथजी, गोदाजी, मोहनजी, धुदानंदजी, संखजी आददेइने अनेक चेला सोमजी स्वामीना हुवा । ए तमाम गछ छोडी ने चेला थया ।। ए ष्यात कांनजी रीषनी संप्रदाय छै ।।

षेमकरणजी आचारजजी ने पाट धरमसिंघजी स्वामी पाट बठा ए ७३ मा पाटवी ।। धरमसीघजी आचारजजी ते तेरवर्स ग्रहस्थ पणे रयान पचावन वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पछे चार वरस आचारज पणे रया । सरव दीष्या गुणसाठ वरस । सरब आउषो वहोत्र वरसनो । वीरना नीरवाण सू इकोसे वहोत्र वरस हुवा पछे समत सतरे न दोयरी साल देवलोक हुवा ।।स०।।१७०२।। धर्मसिंगजी आचारजजि ने पाट नगराज जी स्वामी पाट बठा ए ७४ मा पाटवी ।। नगराज जी आचारज जि छवीस वरसा गृहस्थाश्रव पणे रहिने वाण्ट वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे छ वरस आचारज पणे रह्या । सरव दीष्या अस्ट वरस पाली । सरब आउषो चोराणु वरस नो । विरना निरवांण सू इकोसे इठंत्र वरस हुवां पछे समत सतरे न आट री साल देवलोक हुवा ।।समत १७०८।। नगराजजि आचारजजि ने पाट जिवराजजी स्वांमी पाट बठा ए ७५ मा पाटवी ।। जिवराजजी आचारजजी बारे वरस संसार मे रहीने । पचीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पछे तेरे वरस आचारज पणे रया । सरब दीष्या तेप्ट वरस पाली । सरव आउषो पीछंत्र वरस नो । वीरना नीरवांण सू इकोसे इकांणु वरस हुवा पछे समत सतरने इकीसे वरसे देवलोक हुवा ।।सं०।। १७२१ ।।

॥ अथ संवेगी धर्म नी थापना कीसे वरस हुइ ते कहे छे ॥ समत । १७ ने पनरा की साल मे गुजरात देसे गोल ग्रांम मध्ये तिलोके पीत वस्त्र कीधा । तिण दिन थी संवेगी कहाणा इत्यर्थ ।

जिवराजजी आचारजजि ने पाट धर्मदासजी स्वांमी पाट वठा ए७६ मा पाटवी ॥ धर्मदासजी आचारजजि पनरे वरस संसार पणे रया । पीछे पांच वरस जाजेरा वारे व्रतधारी सरदा पोत्या बंध नी रहिने पनरे दीन समान्य प्रवरज्या पाली पीछे बावन वरस आचारज पणे रया । सरब दीख्या बावन्य वरसा जांजेरी पाली । सर्व आउषो बहोत्र वरस नो । वीरना नीर-वांण सू बाइसे तयालिस वरस हुवा पछे समत सतरे ने तीयोत्रे वरसे देवलोक हुवा धार नगर्मधे ॥स०॥१७७३॥

॥ धर्मदासजी माहाराजनी हकीकत लिषंते ॥ समत सतरन पन-रीरी साल मां अमंदावांद पासे आवेला सरखेज गाम मां धर्मदासजी करीने रहता हुता । तेमना पितानो नांम जीवण भाइ करीने हुतो । ते तेमनी न्यात मां मुख्य मालक हता । ते जातना भावसार हुता । धर्म दासजी बालपणा थीज वहु भाग्यवंत हुता । ते लुकाजती पासे सूत्र सिधात नो अभ्यास कीधो । अने जेन धर्म ने विष नीपुण थया । वहु सिधांत सूत्र भगवा थी तेनो मन अथीर संसार उपर थी उठी गयो । ते समय पोतीया बंध श्रावक पेमचंद जी मिल्या । उन को उपदेस सांभली ने संसार त्यागी ने प्रेमचंदजी ना चेला हुवा । उण के पास समत सतरे सोला रे वरसे सांवण सुद तेरस दीने सरावक पणो धारण कीयो । वरष पांच श्रावक पणो पाल्यो । पछे उतम मुनी नी संगत सू सरधा आइ । त्र पोत्या बंधनो सरदा मोसराइ । पीछे संजम लेणे की इछ्या हुइ ।

त्रे एवो विचार करी बीजा इकीस जोणा संघाती साथ लेइ ने प्रथम ते लवजी अणगार पासे आव्या । अने धर्म चरचा चलावी । तेहनी परुपणा मां सात बोलनो फर पडोयो । तीण सू एहने पासे दीष्या न लेवी पछे ते दरीयापुरी ना धरमसि मुनी पासे आव्या ने चरचा चलावी । तो परुपणा मां इकीस बोलनो फेर पडयो । तिण सू एहने पासे दीष्या नं लेवी । पछे जीवराज जी स्वांमी सू चरचा चलावी गणी । जेजे प्रसन पुछ्या तेहना जबाब सीधंत ने नाय दीना । त्रे धर्मदास जी दिल मां विचार करीयो क एह महा

मुनी पासे दीष्या लेणी मन जोग छे। एहवो वीचार करीने एक तो पोते आप, इकिस जिणा दुजा, एवं बावीस जीणां साथे अमदाबाद वाहीर पात साही वाडीमां समत सतरे इकिसरी साले मास काती सूद पांचम ने जिव-राजजी स्वांमी ने पासे दीष्या धारण करी धर्म दास जी, माहाराज, धन-राजजी आदे दे इकीस जिणा पुज्य श्री धरम दास जी ना चेला हुवा काती सुद पांचम ने। पछे माहा पंडत श्री धर्मदासजी पहेले दीवसे गोचरी कुमार पाडा मां गया। आहार पाणी नो पुछयो-त्र एक कुभारे कह्यो रष्या छे। तिवारे धर्मदास जी माहाराज कह्यो के तमारा भाव होय तो वेरावो। एम कहीयो तानो पात्रो धरीयो। तीवारे पेली बाइए पात्रा मा सुडले करी ने उचेथी राष नांषी। ते राष उडीने बाहीर पडी। थोडी घणी पातरा मां पडी। ते वेरी लाया ने पुज्य श्री जीव राजजी स्वांमी आगल धरी। पछे गुरु माहाराज एम बोलता हुवा-हे सीस आज प्रथम गोचरी में आहार सूं भील्यो छे। तिवारे धर्मदासजी हात जोड़ी ने, इम बोलता हुवा—हे स्वांमीजी माहाराज आज मने रख्या मीलषी नी वात कही ते सांभलिने श्री जीव-राज जी माहाराज सूरत ग्यांन सू दीष्ट लगाय ने एम बोल्या-के हे सीस तुमे तो माहा भगवंत छो। जेम रख्या लीना घर नही तेम तमारा श्रावक वाइ भाइ विना गांम रेसे नहीं ने पात्रा मां थी उडीने राष वाहर पडी तेथी तमारे घणा सीष्या होसी। तमारा थी तुमारा चेलाना घणा जुदा जुदा शींगारा थास्ये। एवो गुरु माहाराज नो वचन प्रमांण करी गोचरी गया तिहनी इरीयावहि परकमीने पछे थोडी घणी पातरा मां पडी ते रख्या कपड़ा सू छांणने उना पांणी मां नाषीने माहामुनीजी पीगया।

धर्मदास जी दीक्षा लीधां पछी पनरे दिवसे समत १७ वरस २१ सा मीगसर वद पांचम जीवराज स्वांमी देवलोक हुवा।। तेथी लोकां मां एवी वात वीस्तरी के धर्मदासजी ए स्वमते दीक्षा लीधी गुरु नही। ए वात लोक मां जुटी वीस्तरी छै। दुसरो कारण क धर्मदास जी माहा-राज माहा भागसाली हुवा ने तेमना गुरु दीक्षा लीधि पछी पनरे दीवस रह्या ने धर्मदासजी नो प्रताप नाम करम तुरत वोत वध्यो। तेथी धर्मदासजी नो नाम प्रगट रह्यो छै। थोडी मुदत मां श्री धर्मदासजी ए सिधांत मारग ने अनुसारे जेन धर्म प्रवरतायो अने देसो देस विचरी ने जेन धर्म नो माहिमा वधाइ। घणा श्रावक वेराग पांम्या।

अल्पकाल मां माहा मुनि धर्मदासजी ने नीनाणु सीस थाया तेहनां नांम ॥ १ ॥ धनराजी ॥ २ ॥ लालचन्द जी ॥ ३ ॥ हरीदासजी ॥ ४ ॥ जीवाजी स्वामी ॥ ५ ॥ वडा पीरथी राज जी स्वांमी ॥ ६ ॥ हरीदासजी सांमी ॥ ७ ॥ छोटा पीरथी राज जी स्वांमी ॥ ८ ॥ मुलचंदजी स्वांमी ॥ ९ ॥ तांराचंदजी स्वांमी ॥ १० ॥ अमरसींगजी स्वांमी ॥ ११ ॥ पेताजी स्वांमी ॥ १२ ॥ पदारथजी स्वांमी ॥ १३ ॥ लोकपनजी स्वांमी ॥ १४ ॥ भवानी-दासजी स्वांमी ॥ १५ ॥ मलुकचंदजी स्वांमी ॥ १६ ॥ पुरसो-तमजी स्वामी ॥ १७ ॥ मुगटरायजी स्वांमी ॥ १८ ॥ मनोरजी स्वांमी ॥ १९ ॥ गुरु सायजी स्वांमी ॥ २० ॥ समरथजी स्वांमी ॥ २१ ॥ वागजी स्वांमी ॥ समत सतरे वरसे इकोस री साल मास काती सूद पांचम ने एह इकोस जीणां री दोष्या एक दीन हुइ : धर्मदासजी रा चेला हुवा ।

॥ २२ ॥ भेलजी स्वांमी ॥ २३ ॥ ललुजी स्वांमी ॥ २४ ॥ रणछोरजी स्वांमी ॥ २५ ॥ लवजी स्वांमी ॥ २६ ॥ वागजी स्वांमी ॥ २७ ॥ अमरसींघजी स्वांमी ॥ २८ ॥ वलदेवजी स्वांमी ॥ २९ ॥ घोरधनजी स्वांमी ॥ ३० ॥ राजमलजी स्वांमी ॥ ३१ ॥ मणीलालजी स्वांमी ॥ ३२ ॥ मोहणजी स्वांमी ॥ ३३ ॥ उत्तम-चंदजी स्वांमी ॥ ३४ ॥ रंगलालजी स्वांमी ॥ ३५ ॥ मोरसींग जी स्वांमी ॥ ३६ ॥ वगसीरामजी स्वांमी ॥ ३७ ॥ धर्मचन्दजी स्वांमी ॥ ३८ ॥ दीपचंदजी स्वांमी ॥ ३९ ॥ देवीचंदजी स्वांमी ॥ ४० ॥ मालचंदजी स्वांमी ॥ ४१ ॥ कील्यांणजी स्वांमी ॥ ४२ ॥ जगभांणजी स्वांमी ॥ ४३ ॥ रतीरामजी स्वांमी ॥ ४४ ॥ न्यालचंदजी स्वांमी ॥ ४५ ॥ केसरजी सांमी ॥ ४६ ॥ भिखणजी स्वांमी ॥ ४७ ॥ मनरूपजी स्वांमी ॥ ४८ ॥ चंद्र-णजी स्वांमी ॥ ४९ ॥ लिछमणजी स्वांमी ॥ ५० ॥ जसरूप-

जी स्वांमी ॥ ५१ ॥ गढामलजी स्वांमी ॥ ५२ ॥ कुसालजी स्वांमी ॥ ५३ ॥ केवलचंदजी सांमी ॥ ५४ ॥ सीरदारमलजी स्वांमी ॥ ५५ ॥ चोथमलजी स्वांमी ॥ ५६ ॥ उदेसींगजी स्वांमी ॥ ५७ ॥ वालकिस्नजी स्वांमी ॥ ५८ ॥ सिवलालजी स्वांमी ॥ ५९ ॥ जसींगजी स्वांमी ॥ ६० ॥ जताजी स्वांमी ॥ ६१ ॥ हीरालालजी स्वांमी ॥ ६२ ॥ प्रश्नचन्दजी स्वांमी ॥ ६३ ॥ किसनचन्दजी स्वांमी ॥ ६४ ॥ जसरूपजी स्वांमी ॥ ६५ ॥ फुलचंदजी स्वांमी ॥ ६६ ॥ फतेचंदजी स्वांमी ॥ ६७ ॥ जेठमलजी स्वांमी ॥ ६८ ॥ रुगलालजी स्वांमी ॥ ६९ ॥ वारीलालजी स्वांमी ॥ ७० ॥ कालीदासजी स्वांमी ॥ ७१ ॥ कनीरांमजी स्वांमी ॥७२॥ अगरचंदजी स्वांमी ॥७३॥ करणीदानजी स्वांमी ॥ ७४ ॥ दांनमलजी स्वांमी ॥ ७५ ॥ हमीरमलजी स्वांमी ॥ ७६ ॥ गेनमलजी स्वांमी ॥ ७७ ॥ मंगलचंदजी स्वांमी ॥ ७८ ॥ नेणचंदजी स्वांमी ॥ ७९ ॥ उंगरजी स्वांमी ॥ ८० ॥ कालूरामजी स्वांमी ॥ ८१ ॥ सोमजी स्वांमी ॥ ८२ ॥ वालुजी–स्वांमी ॥ ८३ ॥ रायभाण जी स्वांमी ॥ ८४ ॥ देवजी स्वांमी ॥ ८५ ॥ अजरामलजी स्वामी ॥ ८६ ॥ सूरजमलजी स्वांमी ॥ ८७ ॥ वनेचंदजी स्वांमी ॥ ८८ ॥ भारमलजी स्वांमी ॥ ८९ ॥ रांमनाथजी स्वांमी ॥ ९० ॥ लवजी स्वांमी ॥ ९१ ॥ रतनचंदजी स्वांमी ॥ ९२ ॥ वीरभाणजी स्वांमी ॥ ९३ ॥ मेगराजजी स्वांमी ॥ ९४ ॥ पुनमचंदजी स्वांमी ॥ ९५ ॥ रणजीतसींगजी स्वांमी ॥ ९६ ॥ खूबचंदजी स्वांमी ॥ ९७ ॥ मानमलजी स्वांमी ॥ ९८ ॥ हस्तीमलजी स्वांमी ॥ ९९ ॥ खूमिरमलजी स्वामी ।

ए निनांणु चेला ॥ पुज्य श्री धर्मदासजी माहाराज रे हुवा ॥ तेहना नांम जांणवा । एम घणो परीवार थयो । निनांणु चेलाना तथा उणारा चेलाना । चेलानो परीवार वहुत वध्यो । ते मारवाड, मेवाड । मालवो ।

मीमाड । षानदेस । दीक्षण देस । गुजरात । काठीयायाड । झाला-वाड । कच्छ देस । वागर देस । सोरठ देस । पंज्याव देस । आददेन अनेक देसा मां विहार करीयो । ञें जेन धर्मनी उदीयोत गणो हुवो । अथ वाविस समुदायनी थापना कोन से वरस हुइ ते कहै छै ।

पुज्य श्री धर्मदासजी माहाराज रे नितांणु सीष हुता । ते माह सू इकिस समुदाय थपांणी । देस मालवो । सहर धार नगर मधे । समत सतरे वरस वहोत्रे चेत सुद तेरस दीने ..वाविस समुदाय थपाणी तेहना नांम लिख्यते ॥१॥ पुज्य श्री धर्मदासजी नो सींगारो ॥२॥ पुज्य श्री धनराजजी नो सीगांडो ॥१॥ पुज्य श्री लालचंदजी नो सींघाडो ॥४॥ पुज्य श्री हरीदास जी नो सीघांडो ॥५॥ पूज्य श्री जीवाजी नो सींघाडो ॥६॥ पुज्य श्री वडा पीरथीराजजी रो सींघाडो ॥७॥ पुज्य श्री हरीदास जी नो सींघाडो ॥८॥ पुज्य श्री छोटा पीरथीराज जी नो सींघाडो ॥९॥ पुज्य श्री मुलचन्द जी नो सींघाडो ॥१०॥ पुज्य श्री तारा-चंद जी नो सींघाडो ॥११॥ पुज्य श्री प्रेमराज जी नो सींघाडो ॥१२॥ पुंज्य श्री खेता जी नो सींघांडो ॥१३॥ पुज्य श्री पदारथ जी नो सींघाडो ॥१४॥ पुज्य श्री लोकपन जी नो सींघाडो ॥१५॥ पुज्य श्री भवानीदास जी नो सींघाडो ॥१६॥ पुज्य श्री मलुकचन्द जी नो सींघाडो ॥१७॥ पुज्य श्री पुरुसोतम जी नो सींघाडो ॥१८॥ पुज्य श्री मुगदरायजीनो सींघाडो ॥१९॥ पुज्य श्री मनोरजी नो सींघाडो ॥२०॥ पुज्य श्री गुरुसाह जी नो सींघाडो ॥२१॥ पुज्य श्री समरथ जी नो सींघाडो ॥२२॥ पुज्य श्री वाग जी नो सींघाडो ॥ ए बावीस समुदाय ना नाम जाणवी ॥ वडी समुदाय रो नाम श्री धर्मदासीरा नाम री थपांणी इकीस समुदाय नाम ॥ पुज्य श्री धर्मदास जी ना चेलारा नाम री थपांणी ए वावीस सींघाडो ना नाम जांणवा ॥

ए वावीस संप्रदाय मांह सइकरां तथा हजांरां साधु साध्वी हुवा । तेनो वरतारो अनेक देशमां धरमनो फेलाव थयो । पछे च्यार संप्रदाय फेर थपांणी तेना नाम ॥१॥ मलुकचंदजी लाहोरीया ॥२॥ अंजरामल जी स्वामी ॥३॥ श्री कांनजी रीपजी नी ॥४॥ श्री धरमसींहजी नीं ए च्यार संप्रदाय ना नाम जांणवा । देस मालवा मां नगर उजेणीमा । पुज्य श्री धर्मदास जी ना दरसन करवा । च्यार जीणा पधारीया तेहना नाम-पुज्य श्री मलकचंद जी । पुज्य श्री कांनजी रीष । पुज्य श्री अजरामल

जी । पुज्य श्री धर्मसींह जी एह च्यारे मुनीए । पुज्य श्री धर्मदासजी ने कहयु क आपतो वोत भागवान हुवा ने आपनो परवार बोत बध्यो सो बावीस संगारा तो आगल छे ने च्यार अमने सांमल करी ने बावीस सींगाडा थापन करावो ते बपते पुज्य श्री धमदासजी ए फुरमाव्यो के बावीस सींगारा ना नांम तो जाहेरात मां थप गया सो अबे बावीस भेला करसू तथा फेर लारे होसी तिणने भेला करसु तो चतुरविध संघ ने मालूम परे नहीं तो चतुरविध संघ ना मनमां डावाडोल रहसी । इण मुदे बावीस सींगाडा तो कायम राषसाँ ओर आपरो पीण बहवार वोत आछो छतो ठीक एह दीवस थी च्यारे सींगारा पुज्य श्री धर्मदास जी नी नेसराय तो नहीं पीण नेसराथ जे जेह वारह्या पुज्य श्री धर्मदासजी एम फुरमायो के ए च्यार सींगारा वाला साधू साध्वी माहा भागवांन छे।

धर्मदास जी आचारजजि ने पाट ।। धनराजजी स्वामीं पाठ बेठा ए ७७ वा पाटवी ।। धनराज जी आचार जी इकोस वरस संसार में रही ने इकावन वरस समांन्य प्रवरज्या पाली । पीछे इग्यारे वरस आचारज पणे रया । सरव दीष्या बाष्ट वरस पाली । सरव आउषो तयासी वरसनो । वीरना नीरवांण सू वाइ से चोपन वरस हुवा । समत सतरे ने चौरासी ये देवलोक हुवा ।। समत १७८४ ।।

अथ श्री पुज्य श्री धनराजजी माहाराजजी री उतपती लिषंते ।।
पुज्य श्री धरमदास जी माहाराज ने निनांणु चेला थया । ते मां वडा चेला धनराजजी स्वांमी हुवा । देस मारवाड, प्रगनो साचोर नो गांम, मालवाडो तिणरा कामदार मुता वागाजी, जातरा पोरवाड, तीणा रां बेटा धना जी नो जनम समत : सतरे एकारी साल आसोज सुद बीजे दसमी रो जनम हुवो । तिणां रे घरे हजारां रो धन छोडी. सगाइ छोडी ने समत सतरे ने तेरा रे वरसे पेमचन्दजी कने पोतीयाबंध उ बालां कने सरावग पणो धारण कीनो । तिणां रा चेला हुवा । पेमचन्दजी कने वरस आठ रे आसरे रह्या । पछे समत सतरे वरस इकोसे काती सुद पांचम ने पोत्या बंध छोडीने पुज्य धर्मदास जी कने दिष्या लिधी ।। मारवार मे घणा विचरीया । एक धी राषी ने च्यार विगे रा त्याग कीना । घणी तपस्या कीनी । घणा वरस तक रात रा आडो आसण कीनो नहीं । घणा काल तांइ एकंत्र कीधा । पछे घणा वरस मेरते थांणे विराजीया रया । नव मास बेले २ पारणो करतां सरीर री संगती थकी देषी ने कयो क अब तो

सरीर उत्र दीयो दीसे छे । अ साध बोल्या के पुज्यजी महाराज आप तो बेले २ पारणो करो इज छे । अ पुज्यजी बोल्या—अबे तो थांभो धान खाय तो धनो धान खाय । चोविहार संथारो पछषीयो । दोय दीन रो संथारो आयो । समत सतरे चोरासीये आसोज सुद विजेदसमी ने दोय गरी दीन छडीयां संथारो सीजीयो । सरव आउषो तयासी वरस नो हुवो ।।

धनराज जी आचारजजी ना पाट बुधरजी महाराज पाट बेठा ए ७८ वा पाटवी ।। बुधरजी माहाराज पचास वरस संसार मे रही ने सात वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पीछे वीस वरस आचारजपणे रया । सरव दीष्या सताइस वरस पाली । सरव आउषो सीतंत्र वरस नो हुवो । विरना नीरवाणसु वाइसे छी मंत्र वरस हुवा । समत अठारेन च्यारं री साल देवलोक हुवा ।। समत ।।१८०४।।

पुज्य श्री धनराज जी रे पाट पुज्य श्री बुधर जी विराजीया समत सतरे चोरासीया रा काति वद ५ (पांचम) ने तेहनी ब्यात लीषंते ।।

पुज्य श्री बुधरजी माहाराज नागोर ना वासी, जातना मुणोत । समत सतरे सताइस रा जेष्ट सूद इग्यारस रो जनम । पुज्य बुधरजी ना पीता मांणकचंदजी पछै नागोर सू जायने सोजत मे रया थका । बुधरजी माहाराज अस्त्री बेटा घणो धन छोडीने समत सतरे ने सीतंतरा रा सांवण सूद छटे रे दीन दीष्या लीधी । वेले २ पारणो आदि घणी तपस्या अतापना लीधी । अभीगृह कीधा । नाना प्रकार ना घणा जीवान धर्म पमाडी ।

पुज्य श्री बुधरजी ने सीस नव थया तेहनां नांम लीषंते ।।१।। श्री रुगनाथजी ।। २ ।। श्री जतसीजी ।। ३ ।। श्री जमलजी ।। ४ ।। श्री कुसलो जी ।। ५ ।। श्री नारायणजी ।। ६ ।। श्रीरूप-चंदजी ।। ७ ।। श्री रतनचंदजी ।। ८ ।। श्री गोरधनजी ।। ९ ।। श्री जगरूपजी । ए नव चेला थवा । घणो उदीयोत कीयो धर्म नो, समत सतरे ने चोरासीये माहा सूद दसमे ने दीने बुधरजी माहाराज ने आचारज पद दीधो । श्री बुधरजी माहाराज समत अठारे ने चोकारा फागु सूद पुन्यम पछे तिन आहारना पचकांण घर मे थकां कीया थां । सो

अबं समत अठारे ने चोकारा चोमसमे पुज्य श्री बुधरजी माहाराज पांच उपवास नो पारणो करीयां पछे सरीर में खेद हुइ। त्रे संथारो करीयो। संथारो दोय पोर रो आयो। समत अठार ने चोकारे वरसें आसोज सूद विजेदसमी ने देवगत हुवा ॥

बुधरजी माहाराज ने पाट पुज्य रुगनाथजी माहाराज पाट बेठा ए ७६ मा पाटवी ॥ रुगनाथजी माहाराज इकोस वरसने तीन मास जाजेरा संसार में रही ने सतरे वरस संमन्य प्रवरज्या पाली। पीछे बयालीस वरस आचारजपणे रया। सरब दीक्षा गुणसाट वरस पाली। सरब आउषो असी वरस नो हुवो। वीरना नीरवांण सू तेइसे ने सोले वरस हुवा। समत अठारे छीयालीसे देवलोक हुवा ॥ समत ॥१८४६॥

पुज्य श्री बुधरजी ने पाट पुज्य श्री रुगनाथ जी माहाराज विराजीया ॥ समत अठारे ने चोकार वरसे आचारज पद दीधो। जोधपुर मध्यै ॥ पुज्य श्री रुगनाथजी सोजत ना वासी हता जातना वरलावत हता। पुज्य रुगनाथ जी ना पीता नो नाम.... .... समत सतरे छासटारा माहा सूद पांचम रो जनम। संसार पक्षमां अनेक सास्त्रना जांणकार हुवा। वेराग पाम्यां ने आतमाने तारवा माटे अनेक मत मतांत्र जोया, पण आतमा तिरे जेवो एकहि धरम देक्षयो नहि। तिवारे सहर सोजत ने बाहिर एक चामुडा देवी नो मन्दीर हुतो। ते वषत मां चामुडा देवी नो प्रत्यक्ष परचा पडे। जेना जेना भाग मां जेवी प्राप्ती होय तेवी चामुंडाजी तेहनी आसा पुरण करे। तिवारे रुगनाथजी ए विचार करीयो क अमारे तो संसारना सुखनी चायना नथी। एवो विचार करीने चामुडा ना मन्दीर रुगनाथजी जायने तेलो पचषीयो। ध्यान धरीने बेठा। तेलानी तीसरा दीन मी रातरा प्रतक्ष देवी आवीने, हाजर हुइ के तुं त्रण दीव थी भूषो केम वठो छै। जे इंछीया ते मांग।

तिवारे रुघनाथजी माहाराज कह्या के अमारे कोई संसार ना सूषां नी चायना नथी। एक मारे तो जन्म मरण मेटवा नी छायना छ। एक मुगतीना मारगनो जरुर छे। तेनो साचो मारग बतावो। तिवारे चामुंडाजी ए ग्यान मां देषोने कह्यो-के आज दीन उग शहर सू पुरव दीसे गांम बगरी के रस्ते पुज्य बुदरजी माहाराज गंणे सात थी आवसे। तेना तमे शीश हुजो सो तुमारो आतमानो कल्यांण होय जासी। इतरा-

समाचार देवीना सूण ने दीन उगां पछे सांथी उठीने पाधरा देवीए वतोयो तीण रसते गया। आगे रस्तां मां पुज्य श्री बुदरजी माहाराज ना दरशन करती बखते मनमां संतोक आवी गयो । पुज्य श्री बुदरजी माहाराज शहरे मां पधारीया ने तेहनी भांणी सांभलीने समत सतरे न बयासीया ए पुज्य श्री बुधरजी नो चोमासो सोजत मां हुवो। त्र श्री रुगनाथजी पुज्य श्री बुधरजी सू प्रशन रुप चरचा बोत गणी कीनी। प्रस्न न उत्र देतांइ दीलमां साचि समजीक ए जेन धर्म साचो जांणीयो। बयासिया ना आसोज में श्री रुगनाथजी पुज्य श्री बुधरजी माहाराज रे पासे प्रतिबोधांणा। उण बगत मे संतर वरस रा हुता। चोरासीये फागुण सुद इग्यारस ने श्री रुगनाथजी शील व्रत धारण कीनो। पुज्य श्री बुधरजी कने समत सतरे न वरस सीत्यासीया रा जेठ वद बीज बुधवार ने सोजत में दिष्या, इकीस वरस ने तीन मास भाफेरा हुता रुगनाथजी दीष्या लीधी, मोटे मंडाण सू पुज्य श्री बुधरजी कने श्री रुगनाथजी माहाराज ने तेवीस चेला हुवा। पुज्य श्री बुधरजी माहाराज रे पाट पुज्य श्री रुगनाथजी बठा समत अठार ने चोकारी साल ।

पुज्य माहाराज वडा अत सयंत (वंत) हुवा। घणा पाषड ने मीटावी ने पोत्याबंधनो तथा मींद्र आंमना रो धरम घणो हुतो ते मीथ्यात मीटावी, गणा भवी जीव ने धर्म मे आंणीया। जेन मारग नो उद्योत गणो कीनो। पुज्य माहाराज री ने सराय मे साध साधवी गणा हुवा। समत अठारे ने चालीस मा पुज्य श्री रुगनाथजी सूं श्री जेमलजी माहाराज न्यारा हुवा, पीण पुज्य श्री रुगनाथजी माहाराज वीराजीया रया जा तक श्री जमलजी माहाराज पुज्य पदवी री चाद्र उदी (ओडी) नही। पुज्य रुगनाथजी माहाराज समत अठारे ने छियालीस रा माहा सुद ग्यारस दीन सहर मेडते देवलोक हुवा। प्रणांम सुध आलोवणानी दवणा करीने आतम नो सुध करीने निरवाण पद हुवा। समत अठार ने चोपना रे वरस श्री गुमांनचंदजी माहाराज न्यारा हुवा। समत अठारे इकोतरे चोथमलजी न्यारा हुवा। समत अठारे चोरासीये श्री माहाचंदजी माहाराज न्यारा हुवा। समत अठारे पिच्यासीये श्री मांणकचंद जी माहाराज न्यारा हुवा।

पुज्य रुगनाथजी माहाराज ने पाट पुज्य जिवणचंदजी माहाराज पाट बेठा ए ८० मा पाटवी ॥ जिवणचंदजी माहाराज बिस वरस संसार

में रया पछे चोपन वरस संमन्य प्रज्या पाली। पीछे पनर वरस आचारज पणे रया। सरव दीख्या गुणंत्र वरस पाली। सरव आउषो निवियासी वरस नो हुवो। विरना नीरवांण सूं तेइसे ने इगति वरस हुवा। समत अठार ने इगण्टे देवलोक हुवा ॥१८६१॥

पुज्य श्री जीवणचंद जी माहाराज री ष्यात लिपंते॥ देस मारवाड मे गढ जोधांणा रे पास गांम तांमडीया के रवासि, वोरा वसत पालजी के पुत्र जीवणचंद जी का जनम समत सतरे ने बहोत्र की साल बेसाष सूद तिज के दीन उत्तम लगन मे हुवा। विस वरस गृहणश्रवमां रह्या। समत सतरे वोणवा रे वरसे आसाड सूद नम री दीख्या हुइ। पुज्य श्री रुगनाथजी रे पास दीख्या लीवी। वडा शीष थया। पुज्य माहाराज ना विनेवंत भगतीवंत बहु हुवा दीयावंत। सताइस सीधंत कटे मुष पाठ सिषीयां। अठारे हजार जिनंद ब्याकरण रा सीलोक कंठे कीना। कोस छंदनाय अलंकार स्वमत परमत रा अनेक सासत्र नां जांणकार हुता। गणा सासत्र नां पारगांमी हुता।

पुज्य श्री जीवणचंद जी माहाराज रे तेरे चेला हुवा तेहना नांम ॥ १ ॥ उरजनजी स्वांमी ॥ २ ॥ तीलोकचंदजी स्वांमी ॥ ३ ॥ माइदासजी स्वांमी ॥ ४ ॥ जचंदजी स्वांमी ॥ ५ ॥ राय भांण जी स्वांमी ॥ ६ ॥ फतेचंदजी स्वांमी ॥ ७ ॥ अनोपचंदजी स्वांमी ॥ ८ ॥ नवलमलजी स्वांमी ॥ ९ ॥ भिमराजजी स्वांमी ॥ १० ॥ जसरूपजी स्वांमी ॥ ११ ॥ धिरजमलजी स्वांमी ॥ १२ ॥ पेमराजजी स्वांमी ॥ १३ ॥ चोथमलजी स्वांमी ॥

उरजनजी स्वांमी रे चेला पांच हुवा तेहना नांम ॥ १ ॥ माइदासजी स्वांमी ॥ २ ॥ गंभीरमलजी स्वांमी ॥ ३ ॥ नथमलजी स्वांमी ॥ ४ ॥ संकरलालजी स्वांमी ॥ ५ ॥ केसरचंदजी स्वांमी।

समत अठारे न छियालीस री साल पुज्य श्री रुगनाथजी माहाराज रे पाट पुज्य श्री जिवणचंदजी माहाराज वटा। च्यार सीग मीलने आचारज पद दीधो।

पुज्य श्री जिवणचंदजी माहाराज ने तेरे चेला हुवा ते मां एक चेला

नु नाम चोथमलजी हता । पुज्य श्री रुगनाथजी माहाराज ना चेला ने पुज्य श्री जीवणचंदजी ना गुरु भाइ श्री अमिचंदजी हुता । ते अमीचंदजी ने एकहि चेलो हुतो नहि ने अमीचंदजी माहाराज ने गांम वरलु मे असात रही । तीवारे पुज्य श्री जीवणचं(द)जी ने त्यां बोलयाव्या । पुज्य शाहेब ने अमीचंदजी ए कह्य कं चेलो आपरो मन आपो । मारी बंधगी करवा रे बासते । तिवारे पूज्य श्री जिवणचंदजी माहाराज आपरा चेला चोथमलजी ने अमीचंदजी ना चेला करीया । अमीचंदजी माहाराज तो वरलु मां देवलोक हुवा । चोथमलजी माहाराज माहा भागवांन थया । तेमने चेला मोकला थया । आपरा नांम नो सिघाडो न्यारो थापन कीधो । पुज्य श्री जीवणचंदजी माहाराज माहा भागवांन हुवा । समत अठारे न वरस इगण्टे भाद(व)ना वद तेरस न अलोवणानी वदणा करी संथारो कीधो ने पुज्य श्री जीवणचन्द जी महाराज भादव सुद पुनम रो संथारो सीज्यो जतारण मध्ये । आउखो निवीयासि वरस नो हुवो ।

पुज्य जिवणचंद जी माहाराज रे पाट पुज्य तिलोकचंदजी माहाराज पाट बटा ए ८१ मा पाटवी ।। तिलोकचंदजी माहाराज तेइस वरस संसार मे रया पछे चोतीस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पछे अठार वरस आचारजपणे रह्या । सरब दीष्या बावन वरस पाली । सरब आउखो पोछंत्र वरस नो हुवो, वीरना निरवांण सूं तेइस ने गुण पचास वरस हुवा । समत अठारने गुणीयासीये देवलोक हुवा ।। समत १८७९।।

।। पुज्य श्री तिलोक चंदजी माहाराज जी ख्यात लिषंते ।।

पुज्य श्री तिलोक चंदजी माहाराज जतारण ना वासी हुता । जातरा नाहटा हुता । पिता नो नांम अजवाजी । माता रो नांम विजयादे । जीके अंगजात पुत्र तिलोक चंदजी को जनम समत अठार न चोकानी सालनो जन्म हुतो । तेइस वरस संसार मे रया । समत अठारे न सताइसनी साले गांम घघरांणा मां दीक्षा लीधी । बडा बुधिवंत हुता । सतरे सीधंत मुदे कीधा । षट सास्त्र जांणकार । स्वमत ना परमत ना अनेक सासत्र ना पारगांमी हुता । गणा षेत्र नवा नीकाल्या । गणा भव जिवांने उपदेस दे न मीथ्यात मोसराय न गणां न समत धारावी । सोले वरस सीयालानी १६ वरस उनालानी अतापना लीधी । छोथ भगवंत सू लेने बावन तांइ तपस्या कीधी । छूटगर तपस्या

रो थोकड़ा मोकला कीधा । समत अठारने इगण्टारी साल पुज्य श्री जीवण चंदजी माहाराज रे पाट पुज्य श्री तिलोक चंदजी विराजिया ।

पुज्य श्री तिलोक चंदजी माहाराज रे च्यार चेला हुवा तेहना नांम ॥१॥ पनराजजी स्वांमी ॥२॥ जसराजजी स्वांमी ॥३॥ नदरांमजी स्वांमी ॥४॥ हरषचंदजी स्वांमी । समत अठारेने गुणियासीरा आसोज वद चोथ ने सोमवार न संथारो कीधो । हजार लोक दरसण करवा आव्या ने त्याग पचषांण षंद मोकला हुवा । ओर संथारो सीजवा ने दिन देवता पालषी लेइन आव्या । ते हजारां लोकां नजरे देषी । देवलोक शहर जतारण में हुवा । ते वषत निरवांण ओछब घणो जबर हुवो । पुज्य श्री तिलोक चंदजी ने स्मसाने ले गया । जठे सवाइमल जी छाजेर तेरा पंथी नी सरधानो पको श्रावक हुतो । तेणे मसकरी रुप बगतमल जी डागा प्रेत्य बोल्या के पुज्य श्री तिलोक चंदजी तो महा भागवान छे । जेनो उत्तम जग्या देषी ने दाघ देनो चइजे । तिवारे उसी वषत सासन ना देवता ए जीणो जीणो पांणी नो छटकाव करीयो ने जग्या उतम हुइ जेथी तेरा पंथीनो श्रावकनी बात नीची गइ ने जेन मारग दीप्यो । महाराज नो डाघ (दाग) चंनण माहे हुवो । तीवारे पछी सवाइमलजी फेर मसकरी रुप बगत मलजी डाघ ने कह्यो के माहाराज नी भसमी ने नीच लोक हाथ लगाडसे ते आछी वात नही कारके भस्मी मां सोनो चांदी घणो छे । उणी बगते सासन ना देवता ए वरसाद करवा थी नदी आवी ते भस्मी लेगइ ने नीच लोक ना हाथ लगावणा पडीया नही । सो जेन धर्म नी वात उची रही । इसो परचो जांणी ने सवाइमलजी ए तेरेपंथी नी श्रधा वोसराइ ने पुज्य पनराजजी माहाराजनी गुरु आंमना धारण करी । पूज्य श्री तिलोक चंदजी माहाराज तेइस वरस संसार म रया पछे चोतिस वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पछे अठारे वरस आचारजपणो रह्या । सरब दीख्या बावन वरस पाली । सरव आउषो पीछंत्र वरस नो हुवो ।

॥ पुज्य तिलोक चंदजी माहाराज ने पाट पुज्य श्री पनराजजी माहाराज पाट बेठाए ८२ वा पाटवी ॥ पनराजजी माहाराज तेइस वरस संसार मे रया छे । नव वरस समान्य प्रवरज्या पाली । पछे सताइस वरस आचारज पणे रया । सरब दीख्या छतिस वरस पाली । सरब आउषो गुण

साठ वरस नो हुवो । वीरना निरवांण सू तेइसेने छियंत्र वरस हुवा । समत उगणीसे ने छकानी साल देवलोक हुवा ।। समत ।। १६०६ ।।

पुज्य श्री पनराजजि माहाराजरी ष्यात लिपंते ।। देस मारवाड गांम गीरी मे, बोरा करमचंद जी री बहु नांम देवादेजी । तेहना अंगजात पुत्र पनराजजी रो जनम समत अठारे सेतालिस वरसे फागुण सूद १४ जन्म हुवो । तेइस वरस संसार में रया । समत अठारे ने सितर रि साले भादवा सूद आठम ने दीवसे दीष्या लीधी । समत अठारे ने गुणियासियारा काति वद तेरस रे दीन चतुरविध सिग मीलने आचारज पदनी थापना कीधी । पुज्य श्री पनराजजी माहाराज ने माहा पंडीत बहुसुरती । अनेक सासत्र ना पारगांमी । समत उगणिसे छकानी साल फागुण वद अमावस ने दिन गांम बलुदा मध्ये संथारो किधो । हजारां लोकां दरसण करवा आव्या । छप्पन गाम रा लोक दरसण करवा आव्या । त्याग वरत षंद पंचबाण वोत हुवा ने फागुण सुद चवदस ने दीन माहाराज देवलोक हुवा । माहाराज तेइस वरस संसार मे रया पछे नव वरस समान्य प्रवज्या पाली । पछे सताइस वरस आचारज पणे रया । सरब दीष्या छतिस वरस पालि । सरब आउषो गुणसाठ वरसनो हुवो ।

।। पुज्य श्री पनराजजी महाराज ने पाट पुज्य श्री दोलतरामजी महाराज पाट बठा ए ८३ मां पाटवी ।। दौलत रामजी महाराज बारे वरस संसार मे रया पछै नव वरस समान्य प्रवरज्या पाली । वीस वरस आचारज पद रया । सरब दीष्या गुणतीस वरस पाली । सरब आउषो इगतालीस वरस नो हुवो । वीरना निरवांण सू तेइसेने छिनू वरस हुवा । समत उगणीसने बावीस री साल देव लोक हुवा ।। समत १६२२ । वरस हुवा ।।

।। पुज्य श्री दोलत रांमजी माहाराज रि ष्यात लिपंते ।। देस मारवाड मे सोजत नगरे साहा उंटर मलजी तेहनी असत्रि चंनणा देजी । तेहना पुत्र मोती चंदजी दोलत रामजी । तेहनी जात दरला हुता । पुज्य श्री दोलत रामजी नो जनम समत अठारे पिच्चियासीयै काति सूद ग्यारस नो जनम हुवो । समत अठारे सतोणवै वैशाष सूद छठ दीन माता चंनण देजी तेहना पुत्र एक तो मोती चंदजो, दुजो दोलत रामजी । ए तिन जिणां दीष्या सहर जतारण म हुइ । मोटे मंडांण सू माहा पंडत बारे सूत्र कंठे किना । एक लाष सीलोक कंठे कीना । स्वमतना परमतना अनेक सासत्र ना जांणकार हुता । पाषंडियाना मदना गालणहार माहा तपसी

वेरागी ओर तपस्या चोथ भगत सू लेकर तेइस उपवास तांइ कीधा। अनेक तपस्याना थोकड़ा छुडता वढता कीना। समत उगणिसे ने सांत नी साल सहर जतारण मधे च्यार सींग मीलने आचारज पद दीधो। पुज्य श्री दोहोलत रांमजी माहाराज ने तप जप नो उद्रम बोत कीधो। गणा वरस तांइ विचरीया। गणा भव जिवां ने मीथ्यात छूडायने जेन धरम मे लाया। सवत गुणीस बाविस नी साले शहर जतारण मां चरम चोमासो कीधो। पुज्य श्री दोलत रामजी माहाराज आपरा अंत समो आयो जांण ने तिन दोन पेली अवसर आव्या ३ फुरमायो ते बषत सरीरमा कीचत मात्र असाता हुता। आपनी पकी सावचेती थी आलोवणा नीदवणा चतुर विध संगनी साष थी संथारो कीधो। दीन तिन नो संथारो आव्यो काति वद १० दीने लारलो दोय धडी दीन रयो त्र देव लोक हुवा। काति वद इग्यारस नो दाघ हुवो। तेनो निरवांण उछव अत्यंत जादा गणो हुवो। पुज्य श्री दोलत रामजी माहाराज बारे वरस संसार मे रया पछे नव वरस सामान्य प्रवरज्या पालि। वीस वरस आचारज पणे रया। सरव दीष्या गुणतिस वरस पाली। सरब आउषो इगतालीस वरस नो हुवो।

पुज्य श्री दोलत रामजी ने पाट पुज्य श्री सोभागमलजी माहाराज पाट विराजिया ए ८४ मा पाटवी॥ देस मारवाड सहर जेतारन मे साहा बुदमलजी। तेहनी असत्री तीजांजी। तेहना अंगजात। सोभागमलजी जातना लुणीया हुता। समत उगणीसे दसारी साल मा सावण सूद पांचम नो जनम सोभागमलजी माहाराज नो। समत उगणीसे इकीसरा माहा सूद पांचम री दीष्या, सहर गंगापुर मे हुइ। सोभागमलजी माहाराज[1]

१—सादूर्ल समही गाज पाषंडी रह्या भाज,
चरण वंदत मुनि सोभाग चित धार है।
जिवण तिलोक मुनि पंनराज बहुत गुणी,
दोलत दोलत वृधी करत अपार हैं॥
छतिस गुणा के धार, वाणी हे अमृतसाद,
समजावे नरनार षिम्या चीत धार है।
सटकाय रिछ पार, करे न तन की सार,
करणी ... .

स्वमत परमत रा जाण अनेक सासत्र ना पारगांमी बोहत हुता। तेरा पंथी तथा समेगीयाथी चरचा बोहत कीधी। पाषंड ने घणी जग्याए षंडन करीया। ते आदेसमां मारवाड। मेवाड। मालवो। खान देस दीक्षण देस। पंज्याब विचरता गुजरात पधारीया। असंदाबाद लीबडी। समत उगणीसे तेपन री साल मां अंतरे पधारीया। अमंदाबाद लिबडी आददेन घणा गांम मां अतापना लेता रह्यां। हजारा लोक दरशन करवा आवतां। तेथी स्वमती ने अनमती मां जेन मारग घणो दीप्यो ओर काठीआवाडथि पधारीने पालनपुर ठाणे च्यार सूं चोमासो हुवो। पुज्य माहाराज श्री सोभागमल जी स्वांमी, तपसीजी माहाराज श्री अमरचंदजी स्वांमी जी माहाराज। चंदनमलजी स्वांमी जी माहाराज। कुनणामलजी स्वांमी जी माहाराज। राजमलजी स्वांमी जी माहाराज। लालचंदजी स्वांमी अत्रे अमरचंद जी माहाराज। तपस्या सास चार कीना। जिणरा दिन एकसो इकिस उपवास करीया। तिणरो पारणो काती बद आठम रो हुवो। तिण पारणा उपर षंड लीलोतीरा तथ चोवीरा ना तथा शील वरत ना तथा काचा पांणी ना षंद त्याग जाव जिवना हुवा। एक सो पचीस जिणां रे हुवा ओर उवास तथा बेला तेला आददे अनेक मोटी तपस्या पीण गणी हुइ। ओर अभेदांन तथा छूटगर त्याग वर पचषाण घणा हुवा। ओर पालनपुर ना हजुर निबाव श्री सेरमहमदषांजी आपरो पीरीवार लेने तथा उमराव सीरदार पलटण लेने मोटे मंडांण असवारी वणाय ने पुज्य माहाराज श्री सोभागमल जी तथा तपसीजी ना दरसण करवा आव्या ने त्याग। ५। बरत धारण कीना तीण सू जेन धर्म नी महीमा गणी हुवी।

॥ दूहा ॥

शशण नायक समरिये, वंछित फल दातार।
तिर्थ थाप मुक्ते गया, वर्त्या जै जै कार॥ १॥
पंचम गणधर पाटवि, प्रतक्ष जिन समांन।
इंद्रादिक सेवन करे, वंदे सूर नर आन॥ २॥
जेष्ठ शिष्य जंबु भलो, पाटांतर शिरदार।
चोरासी अत्र क्रम सूं, दाष्या हे भ्र विचार॥ ३॥

जेन दर्पण नांमे भलो, अध्दभूत रस अपार ।
मुनि सोभाग इम वदे, दर्शण को तार ॥ ४ ॥

सवैया ॥ ३१ ॥

मुर्धर मंडल मांय, कियो धर्म को उछाय;
पाषंड विडार, किवि मिथा तकी बार है ।
चंद्र सम तप तेज, उदय भयो हे रवि;
समक्त वृत वेइ, तारया नर नार है ॥
मुनिंद गावत गुण; नर नारी स्वाथूण;
पूज रूपं त गछ, सोषर सु धार है ।
करे अपार मोक्ष, सेति प्यार है ।
अनेक गुण हें सार, कहेतां न लहूं पार ।
चंर्णा की बलीहार, सोभाग चित धार है ॥ १ ॥

आसोज सूकल सार, तिथि पंचमी धार ।
कियो हे ग्रंथ त्यार, ज्ञान कुं विचार हे ।
उगणीसे सनचार, तेपन की साल वार,
पालणपूर मडार, देश गुजर धार है ॥
केइ ग्रंथ अनुसार, केइ परंपरा धार;
सिधांत के आधार, कियो ग्रंथ को उधार है ।
नुनाधीक हौय पंच प्रमेष्टी को साथ ही सें,
सोंभाग कहे मिथ्या दूक्रत वारंवार है ॥ २ ॥

पूज्य श्री माहाराज श्री श्री श्री १००८ श्री श्री रुगुनाथा जी तथ पाट पुज्य जी माहाराज श्री श्री श्री १००८ श्री श्री जित्रणचंदजी तथा पूज्य जी माहाराज श्री श्री १००८ श्री श्री दोलतरांमजी तथ पाट पुज्य जी माहाराज श्री श्री श्री १००८ श्री श्री सोभागमलजी लिंपते ॥ तत शीष में अमरचंद मुरधर देश सहर पीपाड मध्ये ॥ चोमासो कीनो । गणां तीन सुंतर ए परत लिषी छं ॥ समत १९५७ शालीवाहनं शा १८२२ हिजरी सन १३१७ इसवी सन १९०० सांमाण मास सूकलं पषे ।

पुनम दीवसे शूक्रवार दीने ॥ ए परत रि नेसराय पूज्य श्री श्री १०८ श्री श्री सोभागमल जी तत शीष अमरचंदजी छै ॥ ए परतनो नाम भीलले जीणने अनंत सीधांरी आंण छै ॥ श्री ॥ सूभ वस्तु ॥ कल्प ॥

पुज्य श्री रुगनाथजी माहाराज नी संप्रदायमां आज तक मुनिराज हुवा तेहना नांम लीष्यंते ॥१॥ जिवराजजी स्वांमी ॥ २ ॥ धरमदास जी स्वांमी ॥ ३ ॥ धनराज जी स्वांमी ॥ ४ ॥ वुधर-जी स्वांमी ॥ ५ ॥ रुगनाथ जी स्वांमी ॥ ६ ॥ जीवणचंद जी स्वांमी ॥ ७ ॥ तीलोकचंद जो स्वांमी ॥ ८ ॥ पनराजजी स्वांमी ॥ ९ ॥ दोलतराम जी स्वांमी ॥ १० ॥ सोभागमल जी स्वांमी ॥ ११ ॥ श्री जतसी जी स्वांमी ॥ १२ ॥ श्री जमल जी स्वांमी ॥ १३ ॥ श्री कुसलो जी स्वांमी ॥ १४ ॥ श्री नाराण जी सांमी ॥ १५ ॥ श्री रूपचंदजी स्वांमी ॥ १६ ॥ श्री रतनचंदजी स्वांमी ॥ १७ ॥ श्री गोरधनजी स्वांमी ॥ १८ ॥ श्री जगरूपजी स्वांमी ॥ १९ ॥ श्री लालजी स्वांमी ॥ २० ॥ श्री जोगराज जी स्वांमी ॥ २१ ॥ जीवराज जी स्वांमी ॥ २२ ॥ ठाकूरसी जी स्वांमी ॥ २३ ॥ कांनजी स्वांमी ॥ २४ ॥ केसरजी स्वांमी ॥ २५ ॥ नेमीचंदजी स्वांमी ॥ २६ ॥ सुरजमल जी स्वांमी ॥ २७ ॥ जेठ-मलजी स्वांमी ॥ २८ ॥ थिरपाल जी ॥ २९ ॥ फतेचंद जी ॥ ३० ॥ रूपचंदजी सांमी ॥ ३१ ॥ पुसालालजी स्वांमी ॥ ३२ ॥ हीरजी स्वांमी ॥ ३३ ॥ हीराचंद जी स्वांमी ॥ ३४ ॥ नाथोजी स्वांमी ॥ ३५ ॥ तेजसीजी स्वांमी ॥ ३६ ॥ नाथाजी दुजा सांमी ॥ ३७ ॥ देवीचंद जी स्वांमी ॥ ३८ ॥ नगजी छोटा सांमी ॥ ३९ ॥ अमीचंदजी स्वांमी ॥ ४० ॥ रायचंदजी स्वांमी ॥ ४१ ॥ अजबचंदजी सांमी ॥ ४२ ॥ रामचंदजी सांमी ॥ ४३ ॥ लिप-मीचंदजी सांमी ॥ ४४ ॥ गुलाबचंदजी सांमी ॥ ४५ ॥ दली-चंदजी सांमी ॥ ४६ ॥ आसोजी सांमी ॥ ४७ ॥ हेमजी स्वांमी

॥ ४८ ॥ साहमलजी सांमी ॥ ४६ ॥ नगजी सांमी ॥ ५० ॥ सीरेमलजी स्वांमी ॥ ५१ ॥ जेचंदजी स्वांमी ॥ ५२ ॥ कुसलोजी सांमी ॥ ५३ ॥ गोकल जी सांमी ॥ ५४ ॥ देवीलाल जी सांमी ॥ ५५ ॥ उजादेव जी सांमी ॥ ५६ ॥ चांदोजी स्वांमी ॥ ५७ ॥ चंद्रभाणजी सांमी ॥ ५८ ॥ जीतमलजी सांमी ॥ ५६ ॥ तेजसी छोट सांमी ॥ ६० ॥ चंदोजी छोट ॥ ६१ ॥ जोतोजी छोटा ॥ ६२ ॥ चोथमल जी सांमी ॥ ६३ ॥ माहासीग जी सांमी ॥ ६४ ॥ ठाकुरसी जी सांमी ॥ ६५ ॥ सतीदास जी ॥ ६६ ॥ सवाइमल जी ॥ ६७ ॥ हस्तीमलज सांमी ॥ ६८ ॥ छोटा अमीचंदजी सांमी ॥ ६६ ॥ पेमराज जी सांमी ॥ ७० ॥ नगराज जी स्वांमी ॥ ७१ ॥ तुलछिदास जी सांमी ॥ ७२ ॥ मालजी सांमी ॥ ७३ ॥ वृधोजी सांमी ॥ ७४ ॥ कचरदास जी सांमी ॥ ७५ ॥ इदेजी सांमी ॥ ७६ ॥ दीपचंदजी सांमी ॥ ७७ ॥ रोडजी सांमी ॥ ७८ ॥ कीसन जी सांमी ॥ ७६ ॥ धीरोजी सांमी ॥ ८० ॥ कानजी सांमी ॥ ८१ ॥ जेतसीजी वडा ॥ ८२ ॥ नेण सुखजी सांमी ॥ ८३ ॥ वैणो जी सांमी ॥ ८४ ॥ नांनगजी सांमी ॥ ८५ ॥ नाहनजी सांमी ॥ ८६ ॥ हंसराज जी सांमी ॥ ८७ ॥ लाधुराम जी सांमी ॥ ८८ ॥ तपतमलजी सांमी ॥ ८६ ॥ छोटा जेठमल जी सांमी ॥६०॥ भीमजी सांमी ॥ ६१ ॥ वड़ा जेठमलजी सांमी ॥ ६२ ॥

पुज्य श्री जीवणचंद जी माहाराज ने तेर चेला हुवा जेहना नाम कहै छे ॥ ६३ ॥ उरजन जी सांमी ॥ ६३ ॥ तीलोकचंदजी सांमी ॥ ६४ ॥ मलुकचन्दजी सांमी ॥ ६५ ॥ जे चन्दजी सांमी ॥ ६६ ॥ राय भाणजी सांमी ॥ ६७ ॥ जगरूपजी सांमी ॥ ६८ ॥ अनोपचन्द जी सांमी ॥ ६६ ॥ नवलमल जी सांमी ॥ १०० ॥ भिम-

राजजि सांमी ॥ १०१ ॥ जसरूप जी सांमी ॥ १०२ ॥ धिरज-मलजी स्वांमी ॥ १०३ ॥ पेमचन्दजी सांमी ॥ १०४ ॥ चोथ-मलजी सांमी ॥ १०५ ॥

उरजनजी सांमी पांच चेला हुवा तेहना नांम के है छै ॥ माइदास जी सांमी ॥ ६ ॥ गंभीरमलजी सांमी ॥ ७ ॥ नथमलजी सांमी ॥ ८ ॥ संकरलाल जी सांमी ॥ ९ ॥ केसरचन्दजी सांमी ॥ १० ॥

श्री तिलोकचन्द जी सांमी रा चेला रा नांम कहे छै ॥ पनराज जी सांमी ॥ ११ ॥ जसराजजी सांमी ॥ १२ ॥ नंदरामजी सांमी ॥ १३ ॥ हरषचन्दजी सांमी ॥ १४ ॥

पनराज जी स्वांमी रे चेलां रा नांम कहे छै ॥ १५ ॥ मोती-चन्द जी सांमी ॥ १६ ॥ दोलतराम जी सांमी ॥ १७ ॥ इंद्र-भाणजी सांमी ॥ १८ ॥

माइदासजी ने चेला नांम कहे छे ॥ केसरचन्द जी सांमी ॥ १९ ॥ जिवराज जी सांमी ॥ २० ॥ फतेचन्द जी सांमी ॥ २१ ॥ जुवारमल जी सांमी ॥ २२ ॥ कपुरचन्द जी सांमी ॥ २३ ॥

श्री सोभागमल जी माहाराज रे चेला रा नांम केहे छै ॥ अमरचन्द जी सांमी ॥ २४ ॥ चनणमल जी सांमी ॥ २५ ॥ कुनणमल जी सांमी ॥ २७ ॥ राजमल जी सांमी ॥ २८ ॥ लालचन्द जी सांमी ॥ २९ ॥ टोडरमल जी सांमी ॥ ३० ॥ भरुदासजी सांमी ॥ ३१ ॥ लिषमीचन्दजी सांमी ॥ ३२ ॥ फोज-मलजी सांमी ॥ ३३ ॥ रामचन्दजी सांमी ॥ ३४ ॥ चोथमल जी सांमी ॥ ३५ ॥ सांतोकचन्द जी सांमी ॥ ३६ ॥ चनणमल

जी सांमी ॥ ३७ ॥ धंरजमल जी सांमी ॥ ३८ ॥ हंसराज ज़ी सांमी ॥ ३६ ॥ जोदराज जी सांमी ॥ ४० ॥ वगतराम जी सांमी ॥ ४१ ॥ रोडजी सांमी ॥ ४२ ॥ हुकमचन्द जी सांमी ॥ ४३ ॥ छगनमल जी सांमी ॥ ४४ ॥ कीस्तुरचन्द जी सांमी ॥ ४५ ॥ हजारीमल जी सांमी वडा ॥ ४६ ॥ हाजारीमल जी छोटा ॥ ४७ ॥ धनराज जी सांमी ॥ ४८ ॥ छोगालाल जी सांमी ॥ ४६ ॥ तखतमल जी सांमी ॥ ५० ॥ .... ॥ ५१ ॥ भोपतराम जी ॥ ५२ ॥ गीरधरलाल जी ॥ ५३ ॥ केसरचन्द जी सांमी ॥ ५४ ॥ वेणीदास जी सांमी ॥ ५५ ॥ मानमल जी तपसी ॥ ५६ ॥ कनिराम जी सांमी ॥ ५७ ॥ जतसी-जी सांमी ॥ ५८ ॥ सिरदारमल जी ॥ ५६ ॥ उमेदमलजी सांमी ॥ ६० ॥ जियाजी सांमी ॥ ६१ ॥ देवीचन्दजी सांमी ॥ ६२ ॥ फुसाजी सांमी ॥ ६३ ॥ दलिचन्दजी तपसी ॥ ६४ ॥ सूरतांन-मलजी सांमो ॥ ६५ ॥ माइदासजी सांमी ॥ ६६ ॥ हिरालाल जी सांमी ॥ ६७ ॥ गुमांनीराम जी सांमी ॥ ६८ ॥ वडा मांन-मलजी सांमी ॥ ६६ ॥ वडा दोलतराम जी स्वांमी ॥ ७० ॥ माणकचन्द जी सांमी ॥ ७१ ॥ विजेराज जी सांमी ॥ ७२ ॥ रतनचन्द जी सांमी ॥ ७३ ॥ हंसराज जी सांमी ॥ ७४ ॥ नग-राजजी सांमी ॥ ७५ ॥

पुज्य धनराज जी नी संप्रदाय साधु मुनिराज आज दीन मारवाड मे बीचरे छै ॥ जिण मांह सूं इतनी संप्रदाय न्यारी न्यारी हुइ छै ॥ १ ॥ ए को पुज्य रुगनाथ जी री संप्रदाय ॥ २ ॥ एक पुज्य जमलजी महाराज नी संप्रदाय छे ॥ ३ ॥ एक रतनचंद जी नी संप्रदाय छे ॥ ४ ॥ एक चोथमलजी नी संप्रदाय छे ॥ ५ ॥ एक माहाचन्द

जी नी संप्रदाय छे । ए पांच संप्रदाय पुज्य धनराज जी माहाराज ना टोला-मांह सूं फंटी छे ।। २ ।। पुज्य श्री हरिदास जी ना टोला ना साधू । आज दीन पंज्याव मां विचरे छे । वर तमांममा अमरसींग जी रा नाम रो सीगारो कहवावे छे ।। ३ ।। पुज्य श्री जीवाजी ना टोला साधु आज मारवाड़ मां विचरे छे । वरतमान मे नाम अमरसींगजी नी संप्रदाय छे ।। १ ।। नांनक जी नी संप्रदाय छे ।। २ ।। सांमीदास जी नी संप्रदाय ।। एन संप्रदाय नी बीजी महाराज नी संप्रदायनी छे ।।

(८)

मेवाड़ पट्टावली

[इस पट्टावली में सुधर्मा स्वामी से लेकर देवर्द्धि क्षमा-श्रमण तक के २७ पाट का परिचय देते हुए आगम-लेखन प्रसंग, लौंकागच्छ उत्पत्ति तथा अन्य मध्यवर्ती घटनाओं का उल्लेख किया गया है। तदनन्तर मेवाड़ सम्प्रदाय के आचार्यों-एवं श्री पृथ्वीराज जी, दुर्गादास जी, नारायण जी, पूरणमल जी, रामचन्द्र जी, रोडीदास जी, नृसिंहदास जी, मानमल जी, एकलिंगदास जी तथा तत्कालीन आचार्य मोतीलाल जी तक-का परिचय प्रस्तुत किया गया है। अन्त में पूज्य मानमल जी म० की परम्परा के शिष्य-प्रशिष्यों का नामोल्लेख करते हुए, तपस्वी संत श्री बालकृष्ण जी के संबंध में प्रचलित अनुश्रुति दी गई है]

॥ अथ श्री पाटावली लिख्यते ॥

श्री महावीर भगवान के मोक्ष पधारने के बाद । विक्रम संवत् । १५३१ । में जेसलमेर का भंडार से श्री लोंकाशाहजी ने ग्रन्थ निकाल कर देखा । उस में यों लिखा हुआ था कि श्री महावीर स्वामी ने राजगृही नगरी के गुणशिला उद्यान में विराज कर धर्मोपदेश दिया। तदन्तर भगवान गौतम स्वामी हाथ जोड़ कर वंदना कर पूछने लगे । हे विभो । आपके प्रवचन (जैन धर्म) भारत वर्ष में कब तक रहेंगे ? । हे गौतम । २१ हजार ३ वर्ष ८॥ मास पर्यंत । अर्थात पांचवें आरे के अंत तक । दुप्पसह नामा साधु । फालुनी नामा साध्वी । नागल नामा श्रावक । सतश्री नामा

श्राविका होंगे। तावत पर्यन्त यह विमल जैन धर्म रहेगा। उसी समय शक्रेन्द्र पूछते हैं। हे परमदयानिधे भगवन् । आपकी जन्म राशि पर जो भस्म ग्रह बैठा है, उसकी स्थिति कितनी है ? और इसका क्या फल होगा ? हे देवानुप्रिय देवेंद्र ! भस्मग्रह की स्थिति २००० वर्ष की है। भस्मग्रह बैठने के बाद श्रमण निर्ग्रंथ चतुर्विध संघ का उदय सत्कार न होगा । धर्म में शिथिलता व्यापेगी। तब इन्द्र ने कहा-हे ज्ञान सागर। एक घड़ी आगे पीछे कीजिये,। जिससे ऐसा अशुभ फल न हो सके। प्रभु ने कहा-भो इन्द्र। घड़ी को आगे पीछे करने की सामर्थ्यता किसी को नहीं है। भस्मग्रह उतरने के बाद धर्म का विकाश होगा। चतुर्विध संघ की कान्ति चमकेगी। तब देवेन्द्र वंदन करके इन्द्र भवन को गया और मुनीन्द्र भूमण्डल पर विचरने लगे।

चौथा आरा पूर्ण होने में ३ वर्ष ८।। महीने शेष रहे । तब श्रमण भगवंत पावापुरी में कार्तिक कृष्णा। ३०। दीपावली की अर्द्ध निशा में मोक्ष पधारे। भगवान निर्वाण के बाद ३ पाट केवली के हुवे।। १ श्री गौतम स्वामी। (५० वर्ष गृहवास, ३० वर्ष छद्मस्थ, १२ वर्ष केवली। सर्व ९२ वर्ष आयु)।। २ श्री सुधर्मा स्वामी। (५० वर्ष गृहवास, ४२ वर्ष छद्मस्थ, ८ वर्ष केवली, सर्वायु १०० वर्ष) ३ श्री जंबू स्वामी (१६ वर्ष गृहवास, २० वर्ष छद्मस्थ, ४४ वर्ष केवली सर्वायु ८० वर्ष। भगवान निर्वाण के बाद श्री सुधर्मा स्वामी पाट विराजे। ९ गणधर तो प्रभु की उपस्थिति में मोक्ष पधार चुके। गौतम स्वामी केवली होने से पाट न विराजे। भगवान के बाद ६४ वर्ष केवल ज्ञान रहा। १२ वर्ष श्री गौतम स्वामी, ८ वर्ष श्री सुधर्मा, ४४ वर्ष श्री जंबू स्वामी । वीर प्रभु के पाट पर। २७। आचार्य हुवे। इनके नाम और गुण नंदीसूत्र की प्रस्ताविक गाथा में हैं।

२७ पाट के नाम। १ सुधर्मा स्वामी। २ जंबू स्वामी।३ प्रभवा-स्वामी।४। सिजंभव स्वामी।५ यशोभद्र स्वामी।६। संभूति स्वामी।७ भद्रबाहु स्वामी।८। स्थूलिभद्र स्वामी ।। ९। महागिरि स्वामी। १०। वहुल स्वामी। ११ साइण स्वामी । १२। श्यामाचार्य। १३। संडिला-चार्य। १४। आर्य समुद्र स्वामी। १५। आर्य मंगु स्वामी। १६। आर्य धर्म स्वामी। १७। भद्र गुप्त स्वामी। १८। वइर स्वामी। १९। आर्य-नंदील स्वामी। २०। आर्य नागहस्ति स्वामी। २१। रैवती आचार्य। २२। ब्रह्म दीपक स्वामी। २३। खंदिलाचार्य । २४। नागार्जुनाचार्य। २५। गोविन्द आचार्य। २६। भूतदिन आचार्य। २७। देवड्ढी खमासमण ।

अब जिस आत्मा ने धर्म का मार्ग दर्शाया है उनका कथन लिखा जाता है। प्रथम आचार्य श्री सुधर्मा स्वामी हुवे। आप वीर निर्वाण के बाद २० वर्ष से मोक्ष पधारे। वीर सं० ६४ में जंबू स्वामी मोक्ष पधारे। १० बोल विछेद हुवे। १ परम अवधि ज्ञान, २ मन पर्यव ज्ञान, ३ केवल ज्ञान, ४ पुलाक लब्धी ५ आहारिक शरीर, ६ क्षायिक समकित, ७ जिन कल्पी, ८ पडिहार विशुद्ध चारित्र, ९ सूक्षम संपराय चरित्र, १० यथाख्यात चारित्र। यहां जंबू स्वामी का अधिकार कहना। वीर सं० ६५ में श्री प्रभाव स्वामी हुवे। सारा वर्णन करना।। वीर सं० ७६ में श्री शय्यं भव स्वामी हुवे। आपने माणिक नाम के पुत्र को छोड़ कर दीक्षा ली। विचरते हुवे सांसारिक क्षेत्र में पधारे। और माणिक को साधु बनाया। ज्ञान में उसका आयुष ६ महिने का देखा। तब १४ पूर्व में संसार ज्ञान के द्वरा दशवै कालिक सूत्र का निर्माण किया। माणिक का उद्धार किया। वीर सं० ९८ में श्री यशोभद्र स्वामी हुवे और सं० १४८ में श्री संभूति स्वामी हुवे। वीर सं० १५६ में श्री भद्रबाहु स्वामी हुवे।

पुरपइठाण में ब्राह्मण वंशीय वाराहमेह और भद्रबाहु दोनों भाई थे। दोनों ही स्नान करने को गंगा नदी गये। वहां स्नान करते मरी मछली भद्र बाहु की जटा में उलझ गई। मन में विचार किया कि पवित्र होने के स्थान अपवित्र हुवे। उदासही नगर की ओर चले। रास्ते में देखा कि मेंढक मच्छरों को खाता है। और मेंढक को सांप पकड़ता है। सांप पर मोर। मोर पर बिल्ली। बिल्ली पर कुत्ता। यों मारा-मार देखकर वैराग्य पाये। श्री संभूति स्वामी के शिष्य बने। बड़ा भाई १४ पूर्व में कुछ कम ज्ञान पढ़ा। भद्रबाहु ४ ज्ञान, १४ पूर्व पाठी हुवे। तब संघ ने भद्रबाहु स्वामी को योग्य देखकर आचार्य बनाये। इस पर वाराहमेह ईर्षा में धधक ऊठा। और साधु वेष छोड़कर गृहस्थ बना। निमित्त कहता फिरे। एक दिन राजकुमार का जन्म हुवा। तब बाराह-मेह ने राजपुत्र की १०० वर्ष की ऊमर कही। और राजा से चुगली करी कि सर्व जनता जन्मोत्सव में आई, परन्तु जैनाचार्य नहीं आये। राजा ने मन्त्री से कहा। मंत्री ने आचार्य से कहा। आपने राजपुत्र की ७ दिन की आय कही। आने में क्या हैं? मंत्री ने राजा से कहा और वैसा ही हुआ। एक दिन फिर निमंती ने कहा—आज वर्षा होगी सो मांडले में

५२ पलका मच्छ गिरेगा आचार्य जी ने कहा ॥ ५१ ॥ पलका मच्छ मांडले के बाहिर गिरेगा। आचार्य का कथन सत्य निकला। आपने ही पाडिलपुत्र के राजा चन्द्रगुप्त को १६ स्वप्नों का अर्थ बताया था।

वीर सं० १७० में श्री स्थूलि भद्र स्वामी हुवे। आपने वेश्या की चित्र शाला में चौमासा करके वेश्या को श्राविका बनाई। आपका चरित्र जैन समाज भली भांति जानता है। वीर सं० २४५ में श्री आर्य महागिरि स्वामी हुवे। वीर सं० ३३५ में श्री श्यामाचार्य हुवे। आप शिष्य मंडली सहित उज्जयनी में विराजे। शिष्य प्रमादी हुवे। तब गुरु ने समझाया है परन्तु न समझे। तब संघ ने कहा—आप स्वर्णबालुका नगरी में बड़े शिष्य सागरचंद के पास पधारिये। आचार्य श्री चुपके से विहार कर पधार गये। शिष्य ने पहचाना नहीं। व्याख्यान वांचने के बाद आचार्य से पूछा क्यों जी! महाराज, मैंने व्याख्यान कैसा अच्छा दिया। गुरु ने विचारा यह आरे का ही महत्व है। उज्जयनी से शिष्य ढूंढते हुवे सागरचंद से पूछा—क्या यहां आचार्य पधारे हैं। उसने कहा मैं नहीं जानता। किन्तु एक वृद्ध अवश्य आया है। शिष्यों ने अपना अपराध खमाया तब आचार्य श्री ने पन्नवणा सूत्र की रचना करी।

एकदा शकेन्द्र ने श्रीमंदर स्वामी से निगोदिया के भाव सुनकर पूछा कि हे दयानिधे—क्या कोई भरत क्षेत्र में ऐसा भाव कहने वाला है? प्रभु ने श्यामाचार्य को दिखाया। शकेन्द्र विप्र रूप में आचार्य से मिला। वार्तालाप किया। गुरु को हाथ दिखाया। दो सागर की आयु रेखा देख कर कहा। आप तो इन्द्र हैं। निज रूप में प्रगट हो। शीश झुका कर जाने लगे तब गुरु ने कहा। शिष्य भोमका से आवे तब तक ठहरो। इन्द्र ने कहा गुरुदयाल! मुझे देखकर नियाणा करले अतः नहीं ठहरता। सहनाणी के लिये इन्द्र ने उपाश्रय का द्वार फेरा और इन्द्र लोक को गये।

वीर सं० ४५३ में श्री कालका आचार्य हुवे। धारा नगरी में वेरसिंह राजा, गुण सुरी राणी के काली कुमार और सरस्वती कन्या जन्मी। दोनों ही ने वैराग्य प्राप्त कर दीक्षा ली। कालीकुमार मुनि को आचार्य पद दिया। एकदा सरस्वती आर्या उज्जयनी पधारे। वहां का राजा गर्दभी

सती की कान्ति पर ललचाया । और महलों में रखली । किन्तु सती ने शील को नहीं छोड़ा । यह बात जब कालाचार्य ने सुनी तो उज्जयिनी पधारकर गर्दभी को बहुत समझाया । तब भी न समझा । तब आचार्य श्री ने गच्छ का भार योग्य शिष्य को भलाकर गृहस्थ बन सिंधु देश के साखी राजा की राजधानी में पहुंचे । वहां राजकुमार जड़ाव से जड़ा हुवा गेंद खेल रहे थे । अकस्मात वह गेंद उछलकर कूप में जा गिरा । निकालने का यत्न किया पर न निकला । बड़े उदास हुये । तब आपने गेंद पर गोबर डालकर अग्नि से सुखाया । फिर तीर में तीर बींधकर गेंद निकाला । राजकुमार प्रसन्न हो बुद्धिमान जानकर राजमहल में ले गये । एकदा राजा साखी को चितांतुर देख, चितां का कारण पूछा । राजा ने-कहा महाभाग ! यह छुरी और कटोरा भेज कर बादशाह ने कहलाया है कि मेरी आज्ञा मानों या मस्तक काटकर भेज दो । आपने धैर्य बंधाया । और बादशाह से संग्राम कर साखी राजा को जिताया । बाद में आपने अपनी सारी हकीकत राजा साखी को सुनाई । साखी राजा ने उज्जयिनी पर चढ़ाई कर सती का उद्धार करा । साखी राजा का संवत चला । दोनों ने फिर से मल दीक्षा ली और जैन धर्म का उद्योत किया ।

वीर सं० ४७० में राजा विक्रम हुवे । इनको सिद्धसेन दिवाकर ने श्रावक बनाया । यह राजा पुरुषार्थी और परोपकारी हुवा । वीर सं० ५०० में श्री कपटाचार्य हुवे । वीर सं० ५८४ में श्री वेहर स्वामी हुवे । तुंबवन ग्राम में । धन ग्रही सेठ । सुनंदा सेठानी थी । सिंहगिरी गुरु पास में सेठ ने गर्भिणी नारी को त्याग दीक्षा ली । विचरता सांसारिक ग्राम में आया । सेठानी के पुत्र हुवा । वह अति रुदन करता । धनग्रही मुनि गोचरी पधारे । सुनंदा ने पुत्र वहरा दिया । मुनि ने श्रावक को सौंपा । विहरकुमार नाम रक्खा । दीक्षा की तैयारी होने लगी । माता ने दंगल मचाया । राजा ने कुंवर के सामने साधु वेष और गृहस्थ के अलंकार धर कर कहा-तुम्हारी इच्छा हो सो उठा लो । कुंवर ने साधु वेष ले लिया । गुरु विनयकर प्रसिद्ध आचार्य बने । एकदा पाडलीपुर में सेठ कुमारी रूखमणी ने वेहर स्वामी की महिमा सुन प्रतिज्ञा ली कि वेहर स्वामी सिवा किसे भी न ब्याहूंगी । आचार्य नगर के बाहिर

पधारे । रुखमणी शृंगारित हो पास पहुंच प्रार्थना करी । आचार्य ने उपदेश दे साध्वी बनाई । दोनों ने कल्याण किया ।

वीर सं० ६०९ में दिगम्बर धर्म निकला राज । पुरोहित का लड़का सहश्रमल घर पैं देरी से आ किवाड़ खटखटाये । माता ने कहा-सदैव ही यह पंपाल मुझ से नहीं होता । यहां से चला जा । अपमानित-हो गुरु के पास दीक्षा ले ली । प्रातःकाल राजा वंदन के लिये आया । प्रोहित कुमार को मुनि रूप में देख एक कंबल बहराई । सहश्रमल बुद्धि-शाली था । परन्तु कंबल को मोह भाव से बांधी रखे । गुरु नें बहुत समझाया, पर न समझा । एक दिन सहश्रामल वन में गया । पीछे से गुरु ने कंबल को तोड़ कर टुकड़ों को बांट दिये । इसने आकर कंबल न देखी तो क्रोध में झल्ला कर नगन हो कर बोला-जो वस्त्र रखे, वह साधु नहीं है । गुरु ने कहा दशवैकालिक के ॥६॥ अध्याय को देख-

गाथा

जंपि वत्थं च पायंवा, कंबलं पाय पुछणं ।
तंपि संजम लज्जठा, धारंति परिहरं तिय ॥१॥
न सो परिगा हो वुत्तो, नायपुत्तेण ताइणा ।
मुच्छा परिगेहो वुत्तो, इइवुत्तं महेसिणो ॥२॥

यद्यपि साधु वस्त्र, पात्र, कंबंल, पाद पुंछना संजम की लज्जा के लिये ही धारण करते हैं परन्तु ज्ञातपुत्र ने इसे परिग्रह नहीं कहा है, मूर्च्छा परिग्रह है । अतः तूं जिन वचन की उत्थापना मत कर । इसने—कहा शास्त्र तो विच्छेद गये । ये शास्त्र झूठे हैं।·यों हठाग्रह कर निकल गया । ८४ वेश्याओं को समझाई । दिगम्बर मत की स्थापना करी । इसकी बहिन जो साध्वी थी । वह भी वस्त्र रहित हो गई । एक श्रावक ने लज्जा से उस पर वस्त्र डाला । तब भाई ने कहा-बहिन, वस्त्र तुझे दिया है तो रहने दे । उसने ५वां गुणस्थान की स्थापना करी । स्त्री को मोक्ष नहीं, आदि कुप्ररूपणा करी ।

वीर सं० ८८२ में बारावर्षीय दुकाल पड़ा । उस समय श्री पालिताचार्य शुद्ध संयमी हुवे । आप दूर देशो में संयम गुण सहित

विचरने लगे। पीछे से कई महापुरुषों ने संथारा कर लिया। कोई एका भवतारी हुवे। जो कायर थे वे शिथिलाचारी हुवे। भिखियारियों से पृथ्वी भर गई। खाने को पूरा अन्न नहीं मिलता। तब श्रावक लोग किवाड़ जड़े हुवे रखते थे। तब श्रावकों और शिथिलाचारियों ने यह नियम बांधा कि द्वार पर आकर धर्म लाभ कहना। इस संकेत से किवाड़ खोलकर आहार बहरा देंगे। अस्तु। ऐसा ही होने लगा। भिखारी लोग इन साधुओं से रास्ते में अहार, पानी छीन लेते थे। साधुओं ने सोचा कि मुहपत्ति की अपनी पहचान है सो इसे उतार कर हाथ में ले लो। बोलते समय मुँह के लगाकर बोलेंगे। इस रीति से उन्हें कुछ दिन आराम मिला। भिखारी इनकी चाल को समझकर फिर अहार लुटने लगे। तब इन्होंने भी हाथ में डण्डा पकड़ा। डण्डे को देख कर भिखारी डरने लगे। इस भांति इनने धर्म को कलंकित कर डाला। जीवन की उच्चता को नष्ट कर दी। बारा वर्ष का दुश्काल समाप्त होने वाला था कि एक धनाढय श्रावक के घर में अन्न खूट गया। तब सकल परिवार ने विचारा कि अब मरना अच्छा है। सेठानी जहर को रावड़ी में मिलाने के लिये बांट रही थी। उस समय वहां एक साधु आया। सेठ ने सेठानी से कहा—जहर न मिलाया हो तो थोड़ीसी बहरा दे। साधु ने पूछकर पता चलाया कि अन्न धन से भी मंहगा है। अन्न के बिना यह मर रहे हैं। साधु ने सेठ से कहा—मैं तुम्हें बचाऊं तो तुम मुझे क्या दोगे ? सेठ ने कहा—मेरे निकट जो वस्तु पदार्थ है उनमें से जो आपकी इच्छा हो वही। तब साधु ने कहा—मुझे तुम चार पुत्र दे दो। दिगावर से ७ दिन में अन्न की जहाजें आने वाली हैं। ऐसा ही हुवा। चारों पुत्रों को साधु बनाये। नाम १—चन्द्रभान २—नागेन्द्र ३—निर्वतन ४—विद्याधर। वर्षा हुई। दुष्काल पूर्ण हुवा। मनुष्यों में शान्ति छा गई। श्री पालिताचार्य भी देश में पधारे। तब साधुओं का पतित आचार देख कर उन्हें समझाया। परन्तु मिथ्यात्व के उदय न समझे। और आचार्य श्री से द्वेष करने लगे। इन स्वयं की क्रिया में विशेष की कठिनाई न होने से समुदाय बहुत संख्या में बढ़ने लगा। शुद्ध संयमी इने गिने रह गये। उस वक्त उन चारों भ्राताओं ने चार शाखाएं निकालीं। १—चंद २—नागेंद्र ३—निवर्तन ४—विद्याधर। इन्होंने अपनी पूजा के लिये चोंतरा, चैत्य, पगल्या, मन्दिर, देहरा बंधवाये।

अलग अलग गच्छ बंधी करी। धर्म के ढोंगी बने । जगत का अधिक हिस्सा अज्ञान अंधकार में डूब चुका। आचार्य ऋषि, मुनि आदि शब्दों को तोड़कर विजय सूरि, पन्यास, यति आदि शब्दों को जोड़ने लगे।

वीर सं० ९८० में देवड्ढी खमाश्रमण हुवे। आप एक बार औषधी के लिये सूंठ लाये। कान में रख कर भूल गये। सांयकाल का प्रतिक्रमण के सलिये वन्दना करते समय सूंठ नीचे गिरी। तब आपने दृढ विचार किया कि अब भूल होने लगी है। संभव है कि शास्त्र गाथाओं की भी भूल होगी। अतः शास्त्रों को लिख लेना चाहिये। वल्लभीपुर में चतुर्विध संघ को एकत्रित करके शास्त्र लिखे। आचारांग सूत्र का महा प्रज्ञा नाम का ७ वां अध्ययन। १६ उदेशा वाला कोई कारण से न लिखा। वह विच्छेद गया। उसमें जंत्र मंत्र तंत्र विद्या थी सो लुप्त हो गई। वीर सं० ९९३ में ४ की संवत्सरी करी। कालकाचार्य (यह दूसरेहैं) विहार कर पइठावपुर में पधारे। राजा के आग्रह से चतुर्मास किया। वहां भादवा सुदि ५ को नगर उत्सव परम्परा से मनाया जाता था। इसमें राजा का जाना परमावश्यक था। तब राजा ने कहा—गुरुदेव! लौकिक उत्सव में जाने के कारण ॥६॥ को पोषा मेरे से होगा। गुरु ने कहा—धर्म को पीछे न कर आगे को करना। अर्थात ४ को पोषा कर लेना। यों १४ को चौमासा और ४ को संवत्सरी थापी।

वीर सं० १०१५ में शुद्ध संयमी अणगार इने गिने रह गये। मिथ्यात्वी लोग इन्हें अनेक प्रकार से उपसर्ग देने लगे। शास्त्रों को भण्डार में रख दिये। पढ़ने के लिये किसे भी दिये न जाते। ढालें, गौतम, पड्या, स्तोत्र, शत्रुंजय, पगमंडा आदि अनेक मन कल्पित काव्य बना कर लोगों को भ्रम जाल में फँसाने लगे।

वीर सं० १४६४ में वेड़गच्छ निकला। वीर सं० १६२९ में पुनमिया गच्छ निकला। वीर सं० १६५४ में आंचलिया गच्छ निकला। वीर सं० १६७० में खरतर गच्छ निकला। वीर सं० १७२० में आगमिया गच्छ निकला। वीर सं० १७५५ में तप गच्छ हुवा। वीर सं० १८५० में ८४ गच्छ हुवे। यों जैन धर्म विभिन्न गच्छों में बंट गया। मन मानी प्ररूपणा करने लगे। तीर्थ यात्रा को संघ निकालने में, मन्दिर बनवाने में धर्म कहने लगे। अहिंसा धर्म में हिंसा को भी धर्म मानने लगे। यों पवित्र

जैन धर्म भारतवर्ष से विदा होने की तय्यारी में ही था कि भव्य, भाग्य से धर्म प्राण लोंकाशाह का जन्म सुसंस्कार हुवा। आपके पिता का नाम हेमा भाई था। और माता का नाम गंगा बाई था। जब आप कारकुंड नगर के देश दिवान थे। एक दिन द्रव्यलिंगियों के स्थान चर्चा चली। भण्डार में शास्त्रों के पन्ने उद्दइयों ने खाये हैं। अतः लिखने की पूर्ण आवश्यकता है। श्री लोंकाशाह के सुन्दर अक्षर आते थे। अतः यह भार आप ही के ऊपर डाला गया। सर्व प्रथम दशवैकालिक सूत्र लिखा। उसमें अहिंसा का प्रतिपादन देखकर आपको इन साधुओं से घृणा होने लगी। परन्तु कहने का अवसर न देखकर कुछ भी न कहा। क्योंकि ये उलटे बन कर शास्त्र लिखाना बन्द कर देंगे। जब कि प्रथम शास्त्र में ही इस प्रकार ज्ञान रत्न है तो आगे बहुत होंगे। यों एक प्रति दिन में और एक प्रति रात्रि में लिखते रहे।

एकदा आप तो राज भवन में थे और पीछे से एक साधु ने आपकी पत्नी से सूत्र मांगा। उसने कहा--दिन का दूं या रात्रि का। इसने दोनों ले लिये और गुरु से कहा कि—अब सूत्र न लिखवाओ। लोंकाशाह घर आये। पत्नी ने सर्व वृतांत कह दिया। आपने संतोष दे कहा—जो शास्त्र रत्न हमारे पास हैं उनसे भी बहुत सुधार बनेगा। आप घर पर ही व्याख्यान द्वारा शास्त्र परूपने लगे। वाणी में मीठापन था। साथ ही शास्त्र प्रमाण द्वारा साधु-आचार श्रवण कर बहुत प्राणी शुद्ध दया धर्म अंगीकार करने लगे।

एकदा अरहट्टवाडी के रहने वाले संघवीजी की मुख्यता में तीर्थ यात्रा के लिये संघ निकला। कारकुंड में आये। वहां वर्षा होगी। गाडियों का चलाना बंध हुवा। कुछ दिन वहां ठहरे। संघवीजी भी लोंका शाह की वाणी पर श्रद्धा करने लगे और व्याख्यान में हमेशा जाने लगे। संघवीजी से साधु ने कहा—यहां बहुत दिन हो गये हैं। यहां से प्रस्थान करो। तब संघवीजी ने कहा—मार्ग में वर्षा से अंकुर उग गये हैं। अजयणा बहुत होगी। कुछ समय बाद चलेंगे। साधुओं ने कहा—धर्म मार्ग में हिंसा है, वह भी धर्म है। संघवीजी ने सोचा कि लोंकाशाहजी कहते हैं कि भेषधारी अनुकंपा रहित होते हैं सो आज प्रत्यक्ष दिख रहे हैं। लोंकाशाहजी पर दृढ श्रद्धा हुई। साधुओं को बहुत ललकारा। वे चले गये। संघवीजी वहीं रहे। लोंकाशाह के उपदेश से

सं० २०२३ में ४५ आत्माओं ने स्वतः भगवती दीक्षा धारण करी। सरसघ जी, भानुजी, लूणाजी आदि महापुरुषों में देश-देश में सत्य धर्म का बहुत प्रचार किया। चार संघ की स्थापना हुई। शुध धर्म की झलक संसार में पैदा हो गई। पाटण निवासी श्री रूप ऋषि जी सूरत के वासी श्री रूप ऋषि जी ये महा पुनवंत थे। इनका नाम निशीथजी में पहले ही लिखा हुवा था। परन्तु इन उन्मार्गियों ने उस अलावे को पानी में नष्ट कर डाला।

वीर सं० २१७६ में श्री लवजी ऋषि हुवे। सूरत निवासी क्रोड़ाधीश वीर जी बोहरा की पुत्री फूलाबाई के अंगजात थे। ये नानाजी के यहां रहते थे। इनकी श्रद्धा लोंकाशाह जी की थी। नाना जी की श्रद्धा विपरीत थी। लवजी वैरागी हुवे। आज्ञा मांगी। नाना ने कहा—हमारे गुरु वजरंग जी का शिष्य बने तो आज्ञा दूं। अवसर जान उन्हीं पै दीक्षा ली। पढ लिख चातुर हो वजरंग जी से कहा—आप प्रमाद अवस्था को छोड़ो। गृहस्थ के भाजन मत वापरो। अनाचार लगता है। गुरु ने कहा—इस········संयम शुद्ध नहीं पलता। तब आप ने कहा—देखिये! अमीपालजी आदि पालते हैं। यों कह—लवजी, थोभजी, सोमजी अमीपालजी की आज्ञा में शुद्ध चरित्र धारण कर जैन धर्म का खूब उद्योत किया।

वीर सं० २१८६ में आसोज सुदि ११ सोमवार को पूज्य श्री धर्मदासजी महाराज ने स्वतः दीक्षा धारण की। आप भावसार छींपा थे। आपने जैन धर्म का खब प्रचार किया। आपके एक शिष्य ने धार नगर में संथारा किया, तब आप वहां पहुंचे। चेला संथारे से विचलित हो गया और उस स्थान पर आप संथारा करके स्वर्गवासी बने। सिधपाहुडि में आपको एकाभवतारी कहा है। आप श्री के ९९ शिष्य हुवे। जिनमें पूज्य श्री मूलचन्दजी। पूज्य श्री हरजीजी। पूज्य श्री गोदाजी। पूज्य श्री गांगोजी। पूज्य श्री फरसरामजी। पूज्य श्री श्रीपालजी। पूज्य श्री इच्छाजी। पूज्य श्री पृथ्वीराजजी। आप मेवाड़ देश में पधारे। पूज्य श्री दुर्गादासजी। पूज्य श्री नारायणजी। पूज्य श्री पूरणमलजी। पूज्य श्री रामचन्द्रजी। पूज्य श्री रोडीदासजी।

आप सदा काल बेले बेले पारण करते थे। एक महीने में दो अठाई और वर्ष में दो मासखमण करते। हाथी तथा सांड का अभिग्रह सफल हुवा था। महा उग्र तपस्वी थे। पूज्य श्री नृसिंहदासजी म०। आप महान् विद्वान आचार्य हुवे। पूज्य श्री मानमलजी म०। आपकी प्रभा अधितीय थी। राजा राणा आपके चरण किंकर बनकर सेवा में लीन रहते। आपकी सेवा में दो भैरव और एक देवी सदा रहते। आपको वचनसिद्धि प्राप्त थी। पूज्य श्री एकलिंगदासजी म०। आप प्रकृति के बड़े सरल थे। आपके पाट पर वर्तमान देश प्रख्यात, गुण निधान, शान्ति निकेतन, मार्तण्ड तेजस्वी, शशि सम शीतल, सागर वर गंभीर, माया मदहारक श्री जैनाचार्य मेवाड़ पूज्य श्री श्री १००८ श्री मोतीलालजी म० विराजमान हैं।

पूज्य श्री मानजी स्वामी की शिष्य परम्परा ॥

मेवाड़ के ज्योतिर्मयी पूज्य श्री मानजी स्वामी का देदीप्यमान स्थान है। उनकी शिष्य परंपरा में कई सुयोग्य विद्वान तथा तेजस्वी संत रत्न हुए। श्री रिखभदासजी महाराज बड़े विद्वान् व सिद्धहस्त योगी एवं महा कवि थे। उनकी कविताएं यद्यपि फुटकर प्राप्त हुईं, किन्तु वे सार पूर्ण अति उपयोगी हैं। श्री रिकबदासजी महाराज के शिष्य श्री वेणीचंदजी म० हुए वड़े तपस्वी व संयमनिष्ठ महात्मा थे। प्रसिद्ध पू० श्री एकलिंगदासजी म० सा० इन्हीं के शिष्य थे। एक शिष्य और थे जिनका नाम श्री शिवलालजी था। ये घोर तपस्वी थे। पूज्य श्री मानमलजी म० के पाट पर चतुर्विध संघने श्री एकलिंगदासजी म. को आसीन किया। श्री श्री किस्तूरचंदजी म०, श्री मोतीलालजी म०, श्री कजोड़ीमलजी म० श्री छोगालालजी म०, श्री कालूरामजी म०, श्री चौथमलजी म०, श्री मांगीलालजी म० आपके शिष्य हुए। इनमें से श्री मोतीलालजी म०, पूज्य श्री एकलिंगदासजी म० के बाद पाट नायक बने। श्री भेरूलालजी म०, श्री भारमलजी म०, श्री गोकलचंदजी म०, श्री रतनलालजी म०, श्री जेवन्त रायजी म०, श्री वखातावर सिंहजी

म०, श्री मोहनलालजी म०, श्री उत्तमचंदजी म०, श्री सोहनलालजी म०, श्री गुलाब जी म० आदि शिष्य हुए। श्री भारमलजी म० के शिष्य श्री मुरारीलालजी म०, श्री अम्बालालजी म०, श्री पन्नालालजी म०, श्री इन्द्रमलजी म०, आदि हुए। इसमें से श्री अम्बालालजी म०, के शिष्य श्री मगन मुनिजी. श्री कुमुद मुनिजी, श्री मदन मुनिजी, श्री हेम मुनिजी आदि हैं। श्री जैवन्त राजजी के शिष्य श्री शान्ति मुनिजी हैं।

पूज्य श्री एकलिंगदासजी म० के शिष्य श्री किस्तूर चंदजी मम्ये। उनके तीन शिष्य हुए--श्री जोधराजजी म०, श्री कन्हैयालालजी म०, श्री रामलालजी म० ॥ पूज्य श्री एकलिंगदासजी म० के शिष्य श्री मांगीलालजी म० के तीन शिष्य विद्यमान हैं। श्री हस्तीमलजी म०, श्री पुखराजजी म०, श्री कन्हैयालालजी म० । श्री मानजी स्वामी की शिष्य परम्परायें के अदभुत रत्न ॥ पूज्य श्री मानजी स्वामी के शिष्य श्री रिषबदासजी म० । श्री पन्नालालजीम० । श्री हीरालालजी म० । श्री केशरीमलजी म० । श्री बाल कृष्णजी म० आदि ॥ श्री रिषभ दासजी म० विद्वान और महा कवि थे। आपकी कई रचनाएँ उपलब्ध हैं। जिनकी गवेषणा चालू है ॥ बाल कृष्णजी म० तपस्वी तेजस्वी सन्त रत्न थे। इनके विषय में कई अनुश्रुतियाँ प्रसिद्ध हैं। उनमें से एक मुख्य नीचे उद्धृत की जाती है।

विचरन करते हुए एक बार श्री बाल कृष्ण जी म० नोखी पधारे। वहां की जनता तो धर्म प्रिय थी ही किंतु दरबार का धर्म प्रेम भी कम नहीं था। बाल कृष्णजी म० सा० जैसे प्रतापी तेजस्वी सन्त रत्न की सेवा से कैसे वंचित रह सकते थे। बड़े उत्साह के साथ व्याख्यान आदि में उपस्थित होते और राजमहल पावन करने का आग्रह करते रहते थे। गुरुदेव की आज्ञा से एक बार सन्त महलों में गोचरी के हेतु गये। जब आहार लेकर लौट रहे थे उस समय द्वारपर एक सूबेदार खड़ा था जो जाति का मुस्लिम था। साथ ही बड़ा धर्म विरोधी भी था। कुछ यंत्र मंत्र का भी जानकार था। उसने सन्त से पूछा—तुम राजमहल से क्या लाये ? सन्त ने कहा—

आहार । उसने कहा-नहीं, आपके पात्र में अभक्ष्य मांस है। मुनि यह सुनकर दंग रह गये। उन्होंने कहा-तुम झूठ बोल रहे हो । उसने कहा-महाराज। मैं नहीं, आप झूठ बोल रहे हैं। आप मांस को छिपाना चाह रहे हैं किन्तु अब वह छिप न सकेगा। आप सच्चे हैं तो पात्र खोलिये। मुनि ने पात्र निर्वस्त्र किये तो उनके आश्चर्य का पार नहीं था। जब कि आहार के स्थान पर पात्र में मांस पाया गया। मुनि निस्तेज घबराये से रह गये। आस पास खड़े व्यक्ति भी आश्चर्य में रह गये। किन्तु प्रत्यक्ष्त विरुध कौन बोल सकता है। विरोधी लोग खुश हुए और इस बात को खूब प्रचारित की। मुनि पात्र लेकर बाल कृष्ण जी म० सा के पास आये और सारा हाल बताया। बाल कृष्णजी म० सा० ने अपने तप के प्रभाव से म्लेछ की माया को हटाकर आहार को शुद्ध बनाया। किन्तु विघटित घटना से फैली हुई भ्रान्ति का निवारण करने के लिये मार्ग ढूढंने लगे।

एक दिन बाल कृष्णजी म० स्वयं महलों में गोचरी पधारे। जब लौटे तो मियांजी फिर अपने दल बल सहित खड़े थे। उसने अपनी आदत के अनुसार म० सा० को भी टोका और पूछा। बालकृष्णजीम० भी यही चाहते थे। उन्होंने कहा—मेरे पात्र में दाल बाटी है। मियांजी ने कहा—मांस है, आप छिपाइये नहीं। बाल कृष्णजी म० ने कहा—देख मुनि को वृथा कलंकित मत कर, इसके परिणाम भयंकर हो सकते हैं। किन्तु मियांजी अक्कड़ में थे। उन्होंने कहा—पात्र खोलिये और बताइये। मुनिजी ने पात्र खोला तो अंदर दाल बाटी ही थी। इस बार मियांजी के लिये तीर बेकार साबित हुआ। वह खिसीयाना होता हुआ खिसकने लगा। किन्तु इस तरह छूट भागना अब सहज कहां था? मुनि जी का हाथ जो ऊपर था वह नीचे होते ही मियांजी गले तक भूमि में धस गये। गेंद जैसा शिर मात्र बाहर था जो उनके जीवन को टिकाये रख रहा था। मुनिजी तत्काल चल पड़े। मियांजी की आंखों में आंसू थे। मियांजी की यह दुर्दशा देख हजारों व्यक्ति कम्पित हो गये। परिवार वाले चिल्लाने लगे। दरबार के पास फरियाद पहुंची। दरबार ने सुनकर कहा—सूबेदारजी को संतों को नहीं सताना चाहिये था। अब उनकी प्रसन्नता से ही यह संकट से उबर सकता है। मोरवी दरबार गुरुदेव की सेवा में उपस्थित हुए और मियांजी के उद्धार के लिये प्रार्थना करने लगे। मुनिजी ने कहा—यह उसकी करणी का नतीजा था। वह जिन धर्म और मुनि महात्माओं को कलंकित करने पर तुला हुआ था। पाप का फल कहां छूट सकता है

और शासन की शान की सुरक्षा का प्रश्न भी खास था। दरबार के फिर आग्रह करने पर म० सा० ने कहा कि इस विघ्न के हटने पर क्या उपकार हो सकता है? दरबार ने कहा—जो आपकी आज्ञा होगी। श्री गुलाबसिंह जी, दरबार के अपर पुत्र थे। म० सा० के उपदेशों से प्रभावित हो दीक्षा के लिये तैयार थे। किन्तु दरबार की आज्ञा का प्रश्न खास था। जब दरबार ने वचन दे दिया तो म० श्री ने पधार कर मंगलीक फरमाया और मियांजी सही सलामत भू पर आ गये और चरण पकड़ कर किये पर पश्चाताप करने लगे। जनता में जिन शासन के प्रति जो भ्रम फैला था वह निर्मूल हो गया। और शासन की श्री वृद्धि हुई। दरबार कहने लगे—गुरु क्या हुक्म है? अच्छा अवसर देखकर महाराज ने फरमाया कि गुलाबसिंह दीक्षेच्छुक है, उसे आज्ञा दीजिये। यह सुनकर दरबार ने सहर्ष आज्ञा दी। और बड़े समारोह के साथ दीक्षा दी। कहते हैं दीक्षोत्सव में एक लाख रुपये व्यय हुए।

श्री गुलाबसिंहजी म० बड़े तपस्वी तेजस्वी संत सिद्ध हुए। किन्तु जीवन के आखिरी वर्षो में कुछ मर्यादा से हट से गये थे। अतः मेवाड़ मुनि मण्डल में उनका वह स्थान नहीं रहा जो कभी था। फिर भी मेवाड़ का जन-जन उनसे प्रभावित था। उनका स्वर्गवास कहाँ हुआ इस बात की खोज चल रही है। वे जीवन के आखिर वर्षों में अज्ञात से हो गये। कई वर्षों से एकाकी तो थे ही। फिर बड़े रहस्यमय ढंग से छिप से गये। अभी यह पर्दा आया नहीं कि जीवन के अन्तिम वर्षों में वे कहाँ और कैसे रहे। वे बड़े कलाकार भी थे। उनकी कई कला कृतियां यत्र तत्र पड़ी पाई जाती हैं। जिनका संग्रह किया जा रहा है। उनके हस्त लिखित कई ग्रन्थ उपलब्ध हैं। अक्षर मोती के दाने जैसे हैं।। इति।।

दरियापुरी सम्प्रदाय पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली (वृक्ष) मुद्रित नक्शे के रूप में प्राप्त होती है, जिसे मुनि श्री छगनलालजी ने तैयार किया। स्व० भावसार सामलदास की ओर से, अहमदाबाद से सं० १९९३ कार्तिक सुदी १५ को इसका प्रकाशन हुआ। यह पूज्य श्री धर्मसिंहजी के दरियापुरी सम्प्रदाय से सम्बन्धित है। इसमें भगवान महावीर के बाद होने वाले २७ वें पट्टधर देवर्द्धि क्षमाश्रमण से लेकर ६३ वें पट्टधर धर्मसिंहजी तक के आचार्यों का नामोल्लेख है। अन्त में धर्मसिंहजी के बाद होने वाले दरियापुरी सम्प्रदाय के २६ पट्टधर आचार्यों—वर्तमान आचार्य मुनीलालजी तक—का नाम-निर्देश किया गया है।]

आठकोटी दरियापुरी जैन सम्प्रदाय वृक्ष

स्व. भावसार सामलदास तरफ थी प्रसिद्ध, सरसपुर बाजार सं. १९९३ कारतक सुदी १५ अहमदाबाद (तैयार करनार मुनि श्री छगनलालजी)

दरियापुरी सम्प्रदाय

श्री सुधर्मा स्वामीनी पाटानुपाट वल्लभीपुरमा वीर सं. ९८० मा सूत्रो लखाया

वीर सं० ९९३ मां श्री कालिकाचार्य- चोथनी संवत्सरी करी

,, १००० वर्षे सर्व पूर्वो विच्छेद गया

२७ मो पाटे देर्वाधिगणी क्षमाश्रमण

२८ श्री आर्य ऋषिजी

२९ श्री धर्माचार्य स्वामी

३० श्री शिवभूति आचार्य

३१ श्री सोमाचार्य

३२ श्री आर्यभद्र स्वामी

३३ श्री विष्णुचन्द्र स्वामी

सत्यमित्र वि सं. ५३० मां थया
हरिभद्र „ ५८५ „
सिद्धसेन „ ५८३ „
जिन भद्रमणि „ ६४५ „
उमास्वामी वाचक युगप्रधान वी. सं. ११९०
वनराजे पाटण बसायु वी. सं १२७२
शीलंकाचार्य वीक्रम सं. ६४५ मां थया
अमृतचंद सूरि „ ९६२ „
सर्वदेव सूरि „ ९९४ „ वडगच्छ थाप्यो

३४ श्री धर्मवर्धनाचार्य
३५ श्री भूराचार्य
३६ श्री सुदत्ताचार्य
३७ श्री सुहस्ती आचार्य
३८ श्री वरदत्ताचार्य
३९ श्री सुबुद्धि आचार्य
४० श्री शिवदत्ताचार्य
४१ श्री वीरदत्ताचार्य
४२ श्री जयदत्ताचार्य
४३ श्री जयदेवाचार्य
४४ श्री जयघोषाचार्य
४५ श्री वीरचक्रधराचार्य
४६ श्री स्वातीसेनाचार्य
४७ श्री श्रीवंताचार्य
४८ श्री सुमति आचार्य
४९ श्री लोंकाशाह आचार्य

विक्रम संवत, १५३१ मां भस्म ग्रह उतर्यो,
विक्रम संवत, १५३१ मा साधु मार्ग चलाव्यो लोंकागच्छ प्रारंभ

अरहटवाडा ग्राममी वणिक ओसवाल-पिता हेमचंद, माता गंगाबाई तेमणे ४५ जणाने साधुमार्गी दीक्षा अपावी। (२) केटलाक कहेछे के लोकाशाहे ये। संवत् १५०९ मी पाटणना सुमति विजय पासे दीक्षा लीधी अने लक्ष्मीविजय नाम धारण करी ४५ जणने दीक्षा ग्रहण करावी। अने केटलाक कहेछे के दीक्षा ग्रहण करी नथी अने संसार मां रहीने ४५ जणाने दीक्षा अपावी।

५० श्री भाणजी स्वामी १५३१
५१ श्री भिदाजी स्वामी १५४०
५२ श्री नुनाजी स्वामी १५४६
५३ श्री भीमाजी स्वामी १५४८
५४ श्री जगमालजी स्वामी १५५०

५५ श्री सरवाजी स्वामी १५५४ — १५६२ मां मांकड गच्छ थयो
५६ श्री रूपचंद्रजी स्वामी १५६६ — १५७० मां श्री बीजगच्छ थयो
५७ श्री जीवाजी स्वामी १५७८ — १५७२ मां श्री पायचंद गच्छ
गुजराती लोंकागच्छ — २ श्री विजय गच्छ
३ श्री सागर गच्छ
५८ श्री कुंवरजी स्वामी १६१२ — लोंकागच्छ नानी पक्ष
५९ श्रीमल्लजी स्वामी १६२९
६० श्री रतनसिंहजी स्वामी १६५४
६१ श्री केशवजी स्वामी १६८६ (१६८९)
६२ श्री शिवजी स्वामी १६८८ (१६७७)

दरियापुरी आठ कोटि सम्प्रदाय

६३ क्रिया उद्धारक श्री धर्मसिंहजी स्वामी (उदयपुर मां १६९२ मां शिवजी रास रच्यो) पाट २—सोमजी, ३—मेघजी, ४—द्वारका दा.जी, ५—मोरारजी, ६—नाथाजी, ७—जेचंदजी, ८—मोरारजी, ९—नाथाजी, १०—जीवणजी, ११—प्रागजी, १२—शंकरजी, १३—खुशालजी, १४—हर्षचंद्रजी, १५—मोरारजी, १६—झवेरजी, १७—पुंजाजी, १८—भगवानजी, १९—मसुकचंदजी, २०—हीराचंदजी, २१—रघुनाथजी, २२—हाथीजी, २३—उत्तमचंदजी, २४—ईश्वरलालजी, २५—भायचन्दजी, २६—चुनीलालजी—वर्तमान । हरेक आचार्य बालब्रह्मचारी ।

* * * *
* * *
* *
*

(१०)

कोटा परम्परा की पट्टावली

[प्रस्तुत पट्टावली कोटा परम्परा से सम्बन्धित है। प्रारम्भ में भगवान् महावीर से लेकर देवर्द्धि क्षमाश्रमण तक २७ पाटों का उल्लेख किया गया है। तदनन्तर मध्यवर्ती विभिन्न घटनाओं के वर्णन के साथ लोंकागच्छ-उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए श्री रूपजी, जीवोजी, लवजी, सोमजी आदि का परिचय देकर, कोटा परम्परा के श्री हरजी, गोधोजी, परस-रामजी, लोकमणजी, माहारामजी, दौलतरामजी, लालचन्दजी, शिवलालजी, हुकमचन्दजी का उल्लेख किया गया है। अन्त में 'बाईस टोला' का नाम-निर्देश किया है। इस पट्टावली का प्रतिलेखन श्री हजारीलाल द्वारा सं० १९५४ मगसर सुद ९ को किया गया।

पट्टावली के अन्त में कोटा-परम्परा का पूरक पत्र दिया गया है, जिसमें इस परम्परा से संबंधित विभिन्न आचार्यों और उनके शिष्यों-प्रशिष्यों का उल्लेख है।]

अथ पाटावली लीखन्ते ।। श्री जुसलमेर का भण्डार मांही थी ।। लूक मते पुस्तक कड़ाबीन जोया छ। तीण मांही इसी बीगती नीकली छ। श्रमण भगवन्त श्री महावीर देव प्रत बन्दी नमस्कार करी न, अहो प्रम कल्याण प्रम दयालः तरण तारण जीहाज समानः सकंदर देवः पहला देव लोक नो धणी, हात जोड़, मान मोड़, बनणां नीमसकार करी न श्री भगवंत देव जी प्रते पूछता हुवा, अहो भगवंत पूज तुमाहारी जनम रास्य

उपर भसम ग्रह बठो छ, तेहनी तोथी, २००० दोय हजार बरसतो भसम-ग्रह बठा पछ समण निग्रंथ, चतुर बंद्र संग, साध-साधवी श्रावक सराव-गान उदे पूजा नहीं होसी, त्यार सकंदर बोला- अहो पूजयक घड़ी आघी करो क पाछी करो : त्यारे भगवंत देवजी बोल्या—अहो सकंदर आउखो घटाबा की बधाबा की हनारी समरथाइ नही, ये दोय हजार बरस नोक-लीया पीछ भसम नामा ग्रह उतर जासी पछ समण नीग्रंथ नी उद पूजा घणी होसी

चौथो आरो थाकतो केतलोक रह्यो ८६ पखवाड़ा चौथा आरा ना रह्या जणका ३ वरस ८ (८॥) मास रह्या त्यारे श्री पावापूरी नगर न वोषे अमावसरी रातेः श्री महावोर देव नोरवाण पोहोत्यां। तोबार श्री गोतम स्वामी नः केवल जीनान उपनोः गोतम बरस ५० सुधी तो ग्रह-वास रह्या, बरस बारा केवल पण रह्या, सरव आउखो बरस बागम को छ। बीजो पाट श्री सुधरमा स्वामी बरस ५० तो ग्रह वास पण रह्या, पाछ संजम लीनो; ४२ वरस छदमसत ते रह्या, आठ वरस केवल रह्या सरब आउखो १०० बरसतो। तीजो पाट जंबू स्वामी नो बरस १६ ग्रह-वास रह्या, वरस २० छदमसतकपण रह्या; बरस ४४ चनालीस केवल पण रह्या; सरव आउखा बरस ८० नो। अव तोजो पाट जुगत्र भूमिका हुई। श्री भगवंत नोरवाण पोहोत्या पीछ ६४ बरस ताई केवल गनान रहो। श्री जंबू स्वामी नोरवाण पोंहोत्या पछ १० बोल बछेद गया। मनपरजव गोनान १, प्रम अवधो २, पुलागलब्धी ३, आहारीक सरीर ४, उप सम सेणी ५, खपक श्रेणी ६, जीन कलपी ७, परीहार वीसुधी चारतर ८, सूक्षम संपराय चारत्र ६, जथा ख्यात चारत्र १०।

होव श्री भगवन्त देवजी पछ २७ सताबीस पाट हुवा। ते कहछः। पहलो पाट श्री सुधरमा स्वामी १, दुजो पाट जंबू स्वामी २, तीजो पाट प्रभव स्वामी ३, चोथो पाट श्री जंसव स्वामी ४, पाँचवो पाट जस भद्र स्वामी ५, छटो पाट संभुत बेज स्वामी ६, सातमो पाट भद्र बाहु स्वामी ७, आठमो पाट थूल भद्र स्वामी ८, नवमो पाट माहागोरो स्वामो ६, दसमो पाट सुमन (सुहस्ति) सामी १०, ग्यारमा पाट सुपड़ो बुध स्वामो ११, बारमो पाट इंद्रिदीन स्वामी १२, तेरमो पाट आरजदीन स्वामी १३, चवदसमो पाट वयर स्वामी १४, पनरवो पाट बहर स्वामो १५, सोलमो पाट आरज रोह स्वामी १६, सतरमो पाट परस गोर (पूसगिर) स्वामो

१७, अठारमो पाट मूगत (मंगू) मित्र स्वामी १८, गुनीसमा पाट धरणी गिरी स्वामी १९, बीसमो पाट सीवभुत स्वामी २०, अकबीसमो पाट आरज भद्र स्वामी २१, बाबीसमो पाट आरजनख(त्र) स्वामी २२, तेबीसमो पाट आरज रख स्वामी २३, चोबीसमो पाट नाग स्वामी २४, पचीसमो पाट जेहिल स्वामी २५, छवीसमो पाट सछल (संडिल) अणगार स्वामी २६, सताइसमो पाट देवढी खमा समण स्वामी २७।

अब सताबीस पाटी नंदी सूत्र म चाला छ। तेतो भगवन्त री आग्य सहत चाला छ, पाछ बाकी राखा दरबलंगी भाग ले रह्या, पाछ केत लायक़ बरसा पछ चाल्या सू साइ। आत्मा अरथी सुध मारीग चला वसीः। तेहनी उद पूगी (पूजा) घणी होसी। तेहनो अधकार कह छ।

सुध साद असुध साध ए दोय न्ह तो बोरो कह छ। श्री भगवती सूत्र सतक बीसम उदसो आठमो। श्री भगवंत प्रते। श्री गोतम स्वामी हात जोड़ मान मोड, बीनगा नोमसकार करीन पूछता हुवा—अहो गोतम बरतमान चोबीसी को बोरो कह छ। तीजो आरा का तीजा भाग न बाषे। श्री रखबदेव भगवान् को जनम हुवो। तीजा आरा का पखवाड़ा ८९ थाकता रहा। जदि श्री रखबदेव भगवान् नीरमाण पोंहोत्या। जठा पीछ एक कोड़ा न कोड़ सागर को (चोथो आरो) लागो। जणम ४२००० हजार बरस घाट एक कोड़ा न कोड़ सागर को चौथा आरा माही २३ तीर्थंकर हुवा। चौथा आरा का बरस ७५ मास ८।। बाकी थाकता रह्या, त्यार श्री बीरधमान स्वामी को जनम हुवो—कुनणपुर नामा, पिता सीधारथ, माता तीसलादे राणी कूख थकी जनम्या, चैत सुदी १३ तेरस के दिन सुभ नीखत्र जनम्यां, स्वामी नो सरव आउखो बरस ७२, तेह म ए ३० बरस कुमरपद रह्या, ३० बरस छदमसतक पण रह्या, १२ बारा बरस केवल पण रह्या। एवं सरब आउखो ७२ बरस नो भोग बी न चोथा आरा का थाकता ३।। बरस ८।। मास बाकी रह्या। त्यार श्री प्रभू मोख पधारचा छ। चोथा आराना बरस ३ मास ८।। बदीत हूवा पाछ पांचमो आरो बठो। २१ हजार बरस नो पांच मो आरो बठो। पांचमा आरानो अकड़ीस हजार बरस नो सुधि सासण चालसी साद सादवी, श्रावक-श्रावका, च्यार तीरथ धरम अकबीस हजार बरस सुदी चालसी। भगवंत नीरवाण पोहोत्या। पछइ इतरा बरस हुवा ते कह छ।

श्री वीर निरवाण पूगा पीछ बारा वरस सुदी तो गोतम स्वामी

रह्या: पछ मोख पोहोत्या: श्रीवीर पछ २० बरस पाछ श्री सुधरमा स्त्रामी मोख पोहोत्या श्री वीर पछ चोसट ६४ बरस पछ श्री जम्बू स्त्रामी मोख पोहोत्या, पछ भरत खेत्रना जनम्यां न मोख अह को भरत खेत्र का जनमान मोख न थी, जम्बू स्वामी थको १० वोल बछेद गया श्री वीर पछ ९८ बरस पछ श्री प्रभत्र स्त्रामी देवलोक गया श्री वीर पछ १७० बरस पछ श्री भद्रबाहु स्त्रामी देवलोक पोहोत्या, श्री वीर पछ २१४ बरस पछ अवगतवादी तीजो नंदव हुवो ते कोस सरग अथवा नरग इंहा हीज छ आग नगर कांइ नहीं मानेतें दीरग संसारी जाणबो ते सूत्र अरथ मान नहीं। श्री बीर मोख पोहोत्यां पछ २१५ बरस पछ थूल भद्र स्त्रामी मोटामुनी हुवा, देवलोक पोहोत्या श्री बीर पछ २२० बरस पछ सुन वादी चोथो नंदव हुवो ते पून पाप नरग सुरग कांइ मानता न थी। श्री वीर पछ २२८ वरस पछ पांचमो नंदव हुवो त एके समय दोय करीया मानी, इत भगवंत इम कहो के एक समीया दोय नहीं, एक समय दो करीया सान नहीं, होव नहीं, आ परूप ते बात खोटी छे।

श्री वीर पछ ३३५ बरस पछ कालका आचारज हुवो तेहन सरसती भैन छी, भनना भेनना लेण हार हुवो आपकी रूपवंती भांन घणी छी ते माठे गंदरफसेन राजा बीखे घणो थको सुरसती आरजा न लेगयो, कालका आचारज को जोर कांइ चलो नहीं त्यार अनेरो दूजा देस मांही बीयार कीयो उ सात बरस मांही सात राजा न प्रतबोद देई समझाया त्यार राजा घणा राजी हुवा, अहो गूजै म्हे तुम्हारा सेवग छां हम लायक कांई काम होव सो कहो, त्यार कालका आचारज बोल्या-अहो राजा हमारी भैन भगनी गदरफसेन राजा ले गयो ते आणी दो त्यार साथ (त) राजा लड़बा न चढ़्या, काई बल चाल्यो नहीं, गढ़ घेरी लड़बा लागा पण जोर चल नहीं, त्यार एक विद्याधर आइ नीकल्यो जीन अस्यो कहो— आज गदरफसेन अमावस नी रातें पूरबदसी दरवाजे कोट ऊपर चढ़ी न गधा को रूप करसी, गंदरफ नामा बीदा सादसी, नखत्र न जोग, त्यार गंदरफ सैन भुंकसी, त्यार गढ़ कोट कांगरा तावांना होसी. बजरना होसी, त्यार थारो बल चालसी नहीं, ते माटे पहला सावधान होज्यो, असो वचन सांभलनि सात राजा आठमो आचारज इचरज जाणी न बीधा सांसत्र करी न, सावदान थई उभा। होवै गंदरफसेन राजा बीधामंत्र सादी न भुकवा लागो।

त्यार आठ न संबद सांभलो न आठे जणांयक साथ बाण मुका तेहनो मुंडो बाणां सु भराणो, तेहनो बल घट गयो, अतार मुवो, अचारज सुरसती भांनन ले गया।

श्री वीर पछ ४७० बरस पछ राजा वीरविक्रमादीत हुवो, जैन धरमी हुवो, पर दुःखनो काटणहार हुवो, बरणा बरणी न्यांतीरो बंदोबसत कीयो, मूरंजादा बाँदी ते स्यां माटे साहूकार माहू मांही जाणी, सगपण कीधो हतो, पछ बेटा रो बाप धन करी हीणो होतो गांव बाहर जाय रहो, बेटी मोटी घणी होइ पण बेटी रो बाप रांक जाणी परणाव नहीं, बेटी मोटी जाणी न राजा न परणाव दी कीधीं। राजा वीर वकरमदीत परणवा आयो, तिण सम बेटा री मा रोवा लागी। त्यार राजा बोलो—महाराज आप परणबा आया ते मांग म्हारा बेटा नी छ। ते माट रोउ छू। ते पछ राजा वीचारी ये बात सुज जुगत नहीं। इम वीचारी न आपका गहणा पोसाक लहसकर सहत आपके ठकाण उनका बेटा कू उनकी मांग परणावी। धन माल भोत दियो। सुखी कियो। पछ राजा बीचारो हुतो न्यावी हुवो पण आग होसी नहीं. ते माटे बरणाबरणी कोधी, आपापकी न्यात म परणो परणावो, बीजी नात म परणावा पाव नहीं।

श्री वीर पछ ५५४ बरस पीछ छटो नन्दव हुवो। श्री वीर पछ ५८४ बरह पीछ वेर स्वामी हुवा। मोटा मुनीराज छ। ते सब बसतरा त्यागी हुवा। पीण यक न्हारनी विदा फेरी। त्यार वीदा गरु परी फोड़ा, वीर स्वामी न डंड दियो, पछ आरादीक हुवा देवलोक पोहोता, वीर पछ ५८५ वरस पछ सातमो नन्दव हुवो, गोसाला मती हुवो, तथा जेमाली यती आठवो नंदव हुवो। वीर पछ ६०९ वरस पीछ गोसठा माल हुवा सो डीगंमर मत नीकालों छे।

ते डीगंमर मत कीम निकल्यो तें कह छ-क एक बुटक नामा सादु होतो जीन न आचारज एक पछेवडी भारी मोल की दीनो, तीन ममता करीन बांधी पण वोड नहीं, पुंछे नहीं, पलेवे नहीं, त्यार गरु अजान जाणी न परी फाड़ी, सादा न मुंफती के वासते देदी, जठा सु धीख भराणी सादा सु धरेष करबा लागो, त्यार सु उपाव कीनो, पोताना वसत्र सब अलग नांख्या पछ सादा री नद्या करबा लागो, पाछ पोता नी भान होती तेहन पणे, नगन मुद्रा कीनी, पछ लोग नद्या करवा लागा, असत्री नगन सौव नहीं,

त्यार तेहन लाल वसत्र पहराया, बाइजी नाम दीधो । पछ असत्री न मोख नहीं इम परुपणा कीधी । पछ पोतारा मत कलपणा करी न सासत्रना मुलगा अरथ पाट भागीन पोतारी मत कलपणां सु घाली न नवा सासत्र वणाया, आग ला भगवन्त रा भाख्या सासत्र ना उंदा अरथ परुप्या जे साध होव ते वसत्र राख नहीं साध न नगन रहणो, इम द्रेख न भांग घणा बोल सुत्रां का उथापीन खोटा बोल को थापना का सासत्र बणाया हींस्या म धरम परुपो, गाड़री परवार जिम जाणवा ।

वीर पछ ६२० वरस पछ च्यार साखा हुई—चंद्र साखा १, नागंद्र साखा २, तीवरतर (निवृत्ति) साखा ३, वीधाधर साखा तेहनो विसतार कह छ-१२ बरस पछ काल लगतो पछ काल लगतो पड़ो, पछ काली, सतकाली १२ बरसनो काल पड़ो, तीवार पछ घणा साध साधवी न सुजतो भात पाणी मिलो नहीं, असूजतो साधा न लेणो नहीं, ते अवसर ७८४ सात सौ चोरासी साध तो संथारो कीधो । संथारो करी न देव लोक म गया । आप आपणा कारीज सारचा । बली मोटा मुनीराज महा जोरावर होता सो तो दुकाल मांही डग्या नहीं, संथारो कबूल कीयो । अराधीक हुवा, आगम काल मुगती प्रती होसी । कोइक भवन आतरे मोख जासी । केत लायक उत्तम मुनी राज प्रदेस उठ गया । कितलायक साधु सू परीसा खमाणो नहीं । खुदा बेदनी खमाणी नहीं । बाकी रा साध रह्या सो जीण न आर पाणी पण मिल नहीं । कदाचीत् मील तो भीख्यारा आगे खावा म आव नहीं; केतलायक महा पुरुष आतमा अर थे सो तो परदेश उत्र गया । बीयार कर गया । पछ वाको रा साद रया सो मोकला ढीला पड्या, नी केवल भेखधारी थया । आदाकरमी आद देइ न न घणा द्रोष ना लगावणहार थया । असा न सूजतो अन पाणी भी मिल नहीं । साधु दुखीया थया । कायर सादु भागा; परीसो खमो नहीं । तेवारे मोकला थया । संजम थकी भीसट थया, भगवानरी आग्या बाहर हुवा । संसार मांही पेट भरा थया ।

ते वारे भेख धारी पेट भरा घता उठा; पण असो उपाव उठायो । पोतारो मत काढ्यो । एक भीकारी आग कोचुवान जानी लोकारो भाव तो देने रा घणाई छ पीण भीस्की यारी आगे धरम जा सके नहीं, त्यार हात म डंडो राखवा लागा, भीकातीन ठेली न आहार लेव धरम लाभ केवा लगा: धरम लाभ कहीन लोका न बुलावा लागा, असत्री नी वीष साथो

ढाकबा लागा, साथो ढाकी गोचरी जाव। उठा तथी अनेक गच्छ निकल्या लोगा। आग कही हम साडु छां। पाटा न पाट चाला आव छ। द्रव राखबा लागा। चेला-चेली मोल लेबा लागा। अने जती नाम धराबा लागा। जती तो पचेंद्री जीते सो जती, पचन्द्री मोकली मेली न जती नाम धरावे सो तो सुत्र वेद (विरुद्ध) छे। मोल का लीधा तो गरू न होवे। देव, गरू, धर्म ये तीनु तो अमोल छ। ये तीन बात तो मोल मिले नहीं, मोल को तो कीरयानौ छः अथवा घी चोपड़ मीले। मोल का लीधा तो चाकर गोला होव पण मोल का लीधा देव, गरू, धरम न कह्यो। चत्रु होव सो तो विचारज्यो, जो साधु तो सासत्र मांहो चाला छ। माहा बरत धारी, भेक धारी न साध नहीं कहीये। भेक तो भांड़ धारे छ। भेक सु तो मांग खाव छ। पीण भेख सू काइ, गरज सर नही, गरज तो गुण सूं सरसी चत्रु होव सो विचारज्यो।

येक साहुकार के परवार घणो। बेन बेटी भाई बंधव घणा अने जीण घर धन तो पण घणो पण अन नहीं। द्रव देता अन मिल नहीं, रूपया बरोबर पण अन मिल नहीं छे, हल अवसर थोड़ो सो अन रही त्यार सेठाणी कहो-अन तो खूटो। त्यार सेठजी कहो-थोड़ा थोड़ा अन सूं काम चलावो। त्यार सेठाणी थोड़ा थोड़ा अन्न की राबड़ी रांधी न सारा घर का न पाव। ते वारे बल करी न हीण थया। एक दीन सेठाणी बोली के सेठ जी अन तो सारो ही खूटो। ते वारे साहूकार बोल्या-कठ ई खूना खेचरा, कोठा कोठी, बुहारी न काम चलावो। ते बार सारा ही घर म कोठा कोठी में बुहारी न कण-कण भेलो कीयो। भेलो करी पीसी तेहनी पतली राबड़ी रांधी। सेठ कहो क सेठानी राबड़ी म नांखबा अरथ थोड़ोक बीष बांटो। बीष रावड़ी म नाखी न थोड़ी सारा ही पीर सो रहस्यां। तीबारे सेठाणी रावड़ी में बीष नाखवा अरथ बांटवा बैठी। इतारे मोटा मुनीराज बहरा अरथ आया। जतीराज पधारा धरम लाभ दीधो। ते बारे साहूकार बोल्या-थोड़ी सीक राबड़ी जतीराज न बहरावो पछ बीष घाल जो। सेठाणी रावड़ी बहराई। तेवार जतीराज बोल्या-बाई तुम सु बांटो छो। जद सेठाणी बोली-जतीराज तुम्हार सुं काम छे। जद जती सेठजी न बूझो। जद सेठजी बोल्या-स्वामी माहारा धरम धने तो घणोई छः पण अन्न नथी। जे मणी बीष बांटी राबड़ी म नाखी न राबड़ी पी सो रहस्या।

त्यार गुरुदेव बोल्या-मन दया आव छ। सेठजी सामलो। म गुर देव कन जाइन पाछो आउं, जीत न जहर नाखो मती। इतरो कहीन चेलो गुर देव कन गयो। गुरां न मोडी न बात कही—पुजै साहूकार ना घर असो कारण छ। त्यार गुरूदेव बोल्या—तुम बठो म जास्यूं। त्यार गुरू कहो—अहो सेठ जी तुम सारा मरो छो तुम न 'श्रवन' हूँ बचाऊं तो म्हांन कांई देवो। त्यार सेठ जी बोल्या—स्वामी जो तुम मांगो सो तुमन देउ। त्यार जती बोल्या—साहाजी सात दीन दोरा सोरा काढ़ो, पछ दीन सात मांही धान री जाहाज आवसी। जीसम देस मांही धान सूंगो होसी, दुकाल नीकल जासी, चींता मत करो। पछ सुकाल होसी। सेठ जी वचन सामलीन प्रमाण कीधो।

जद दीन सात नीकल्या। जद भाज धान री आई। देस म सुकाल हुवो। ते वारे सेठ जी ४ च्यार बेटा साधु जी न दीधा। लोक पण केत-लायक सुख पाम्यां। च्यार पुत्रां नो नांम—यक को नाम तो बोगजो १, लेगादर जी २, बीजधर जी ३, भदमती ४,[1]। इन चार जणा भेक लीधो। सासत्र भणां। पंडीत 'गीतारथ' हुवा। पछ साध आतमा अरथ दीसावर गया होता, ते पाछा आया। साधा न च्यार जणां न कह्यो—तुम सुध कीरीया करो। आतमा को कल्याण करो। च्यार जणा मांनो नहीं। सारा ही भेख धारी जती भेला हुईन तीहां थकी मत नीकल्यो। च्यार ही भायां चार ही गच्छ नीकाल्यां। चार साखा हुई। आप आपणो मत जुदा जुदा काड़्या। सीतांमर डीगामर मत काड़ो, आप आपरा जुदा-जुदा मत चलाया। भगवंत री परतेमा कराबी, भगवंत करी न थापी। लोक आपण नहीं आवतो परतमा देखी न आवसी। ते मांठ लाभ नो कारण घणो होसी। श्रीफल तथा पूंगीफल अने री दूब घणो अ वसी। ते वारे श्रावक भेक धारी ना उपदेस सुणी नैं, धोपानो फल तथा आड़मर करवा लागा। तीवारे सरावगां देहरा तथा चेताला तथा उपासरा ठांम-ठांम आंरभ सारभ कराबा लागा। आप आपणो गछ नीमत बाधना। आप आपणा सींघ काढ़वा की परूपणा कीधी। उठा थकी पूजा प्रतेस्टा चलावी वीसेख मोकला पड्या। उठ थकी गोठलमाल डीगमर हुवो। ६०८ छह स आठ बरस पीछ उठ थकी गोठवमाल नीदव नीकल्यो। ४ च्यार साखा हुई।

१—नागेन्द्र, विद्याधर आदि नाम सुधार कर पढ़ें।

श्री वीर पछ ८८२ बरस पछ चतरा वेसी हुवो । धरम खातर देहरा मंडाणा । हींसा मांही धरम परुप्यो । लोकां आग कहृ । भगवंत री प्रतेष्टा करता दोष नथी । भगवंतर हेत हिंसा करता दोष नहीं । हींसा करीन धरम परुप जीगन भेकधारी पेटभरा जाणवो । श्री भगवंत देवजी तो असो कहो छे । देवन अरथे धरमन अरथे गरुन अरथे हींसा कर छ हींसा परुप छ । जीवन बोध बीज समकतनी प्रापती थाय नहीं अथवा जावे पाससे नहीं । अनंता जनम मरण करस घणा जबर करम बांधसः हींसा करसी तो पाप लागसी, धरम नीमत हींसा करसी तेहन मांहा पाप लागसी, घणो संसार देटार रलसी । असो जाणीन कोई जीव धरम जाणी हींसा कर जो मती ।

श्री परसण व्याकरण म प्रथम आसरव दुवार म भगवंत कहो छ पीण समर दुवार म न थी भगवंत न तो इम कहो छ—के मांखी नो पाख दुखाय जठ ही पाप लाग छः अने पाखंडी लंगधारी पेट भरा हीण पून्याई म कहे छ- धरम खोत्र हींसा करता दोख नहीं । देखो न अब चैन दया धरम ओर हींसा धरम मांही वेम भगवंतारी बचन कस्यो छ । त्यार लोग वोल्या– दया म धरम छ पण हींसा में न थी, हींसा म पाप छ या बात बालक न पूछो तो जीव बचाया धरम केसे । जीव मारा पाप कसे तथा हीन्दू मुसलमान बीराम्हण भगत बेरागी संन्यासी खटदरसणो जीव बचाया में धरम कहसी । पीछ चत्रु होवे सो बीचार लीजो ।

श्री वीर पछ ९८० बरस पाछ पुसतक रुडे लीखाणों, सासत्र बाचबा लागा ते कीम श्री वीर पछ ९८० बरसा पीछ देवगणी आचारज येक १ दीन परसतावे सुंठ नो गाठो कान प्रमेलो हो तो सो बीसर गया । काल अती करमो । सांज पड्या पीछ समाल्यो । ते वारे देव गणधर बोल्या वीचार करी न कहोः काईक बुधी हीण थई छ । सूत्र मुड़ रह सी नहीं । ते मांट सुत्र उपर चड़ाबा लीखा । आचारंगजी न सातमा अधीन मांही प्रगन्यापवो नाम ते काइक कारण जाणी नः देव डीखमा समाणो लीखो नहीं, तीण बिछेद गयो । इतिरी भगवानरी आगना । श्री बीर पछ ९८० बरस पीछ वीर मंडाणां पुसतक मंडाणा पतल लगतो सुत्र मारग चाल्यो, तीवार पछ दुकाल पड्यो । पछ लंगधारी, भेषधारी पेट भराई साधू रह्या । सुत्र सीधांत सारा पाना भंडार म राखा । पोतार छांद पोतारी मत कलपणां रा सासत्र बणाया । चोपाई तथा रास छंद ढाल तथा सीरलोक काव्य संस्कृत टीक गीरंथ तथा सतोत्र तथा सीतरंजो

माहातम अनेक पोतारी मत कलपणां रा सासत्र बणाया । करी ने हींस्यां धरम ना सासत्र बणाया । गरु नी पूजा तथा पोथी री पूजा तथा प्रतमारी पूजा तथा प्रतेस्टा । गोत्तम पडो गो खमासणां वैराग गरु न सामेलो करावो, गाजा बाजा सुं गॉव म लावो । पग माडण बीछाव, भगवंतरा भांख्या सासत्र थकी बीरुप परुपणा करी न आपणी मत कलपणा रा सासत्र बणाया ।

श्री वीर पछ ९९३ वरस पछ कालका आचारज हुओ । छंमछरी पाचवरी मेटी चोथ री थापी । ते तो खोटो थापो ते देखो रषो पंचमी तो खट द्रसणी पण मान छ । छतीस पोण मान छ, अन चोथ पड़ीकम्म छ । चोथ न दीन छमछरी कर पाचव नो पारणो कर छ । ते तो येकंत मीथात-दीसटी जाणवा । छमछरी तो सावण बुदी १ सुं मांडी न भादवा सुदी दीन ४९ तथा ५० आवछ ते लेवा । भादवा सुदी थकी मोड़ी न काती सुदी १५ दीन ६९ तथा दिन ७० म दीन चोमासो उ़ठ छ य अधकार श्री सामायंग कहो छ सोतरम ७० । श्री बीर पछ ९७० बरस होया बार पाछ वीपरीत कर छ क तो जैन धरम थकी बोरोध छ असो सांख सामांयग ७० सत्तर म छ । श्री वीर पछ ९९४ वरस पछ पखी उथापीं न चवदस की थापी । आग पखी करता आंवे चउदस की कर छ जे उपासंगदीसा मांही चाली छः ।

श्री वीर पछ १००० वरस पछ पुरबधारी रह्या । श्री वीर पछ येक हजार आठ बरस १००८ पीछ पुरबधारो बीछेद गया । पोसाल मंडाणी श्री वीर पछ १४६४ वरस पछ बड़गछ हुवो । ८४ गछ हुवा । श्री वीर पछ १६२९ बरस पछ पुनम्या गछ हुवो । अमावस नी पुनो कीधी । ते तो देवनी सकती थकीः ते तो अहंकार न भांग जाणबो । श्री वीर पछ १६५४ वरस पोछ आंचलया गछ हुवा । ते कीम सूत्रना बोल आंचलीया ए हेतु लगाया । ते माटे श्री वीर पछ १६७० वरस पीछ खरतर गछ हुवो ते केम पहली कीरयान बीषः खत्र पण चाल्या ते माठे श्री वीर पछ १७५५ बरस पछ तपगछ हुवो ते कीम पहली तप साधणा कीधी, पछ पोसाल थापी ।

बीर पछ २०२३ बरस पीछ जीनमती सांची सरदना नो धनी लूहको मतो हुवो ते कीमहु वो ते कह छ—के पुस्तक भंडार मांही होती तीणने उदेइ खादा । ते पाना जोवान बाहर काड्या । त्यार पाना फाटा

देखा। तेवारे बीचारो ये सीधंत लीखाव ते बारो, तेवारे ल्हुको मतौ सरावक हुतो। सीरकार -को कारकुन होतो, दफतरी होतो। यकदा परसता व भेकधारी कन आयो होतो । तेवारे भेखधारी कयो येक जीण सासण नो काम छे। त्यार लूंको मतो बोलो—सुं काम छ, फुरमावो। तेवार जती बोल्या-सीधंत ना पाना उदइ खादा छ, ते नवा लीखीन आपो ते कील्याण नो कारण छ, घणोलाभ थासी। इम कता थका ल्हुकमत बचन प्रमाण कीधो। तेवारे भेखधारी १ यक दसमीकालकी पडत लीखनी आपी। तेवार ल्हुके मत इम बीचारो जे श्री तीर्थंकरदेवजी रो मारीग इन दसमीकाल सुत्र मांही इम कह्यो छ जे सादारो मारग तो असो दीस छ। दया धरम असो आचार दीस छ, द्रबलंगी भेषधारी आचार छोडी न हींस्या धरम की परुपणा करवा लागा, ते कीम पोते ढीला पड्या। ते माटे लोगान सुध दयाधरम बताव नहीं, ते हीवडा केसुं तो मानसी नही। सासत्र पोण ठावा करसी नही । त्यार मुते बीचारो जे जीम तीम जाणी ने सूत्र कडावी न उतार लेवा तो जाणनो अंग उपांग ना धणी होउं, घणा भवजीव प्रतबोध पामसी। ते माठ दसमीकालनी दोवडी पडत उतारी। एक पडत तो पोत राखी एक पडत उणन दीधी। ते पोतान पास ईण रीत पडत सरब उतारी लीधी, तेवार पछ लुकमते पोतानी घर पण सुत्र नी परुपणा करवा लागा। तेवारे भवजीव सामलवा लागा। धणा जीवार दया रुची।

तीण काल तीण सम अरठवाडी बाणीया नगजी १, मोतीचन्दजी २, दुलीचंदजी ३, संभूराम ना बेटानी बेटी महुबाई अने मोहुबाईनी माता ईतादीकपण संग काड्यो ते कीम, जात्रा लागा गाडा घोडी उंट बलध सेजावाला इतादीक पुरण लेई चाल्या। तेवारे पछ पाणीनी बीरखा हुई। जीण गांव म लुको मुहतो हुतो रहतो तहा संघवाला लोग मुहता पास सांभलवा आया। दसमीकालक नो बखाण सुणो। तीम काइ अधिकार नीकलो प्रथबी न हण नही, हणाव नही, हणता प्रते भलो जाण नही, ईम अपकाय इम तेउकाय, इम छह कायनो आरंभ समारंभ नो अधिकार लुको मुहतो बाचं। जेता संघना लोग तथा संघवीसाथ साभलवा आया। तीवार लुकमत दया धरम न हेत सासत्र बाचे पण प्रमाद कर नही। त्यारे मुहता पास दया धरम तथा साधनो मारग श्रावक नो मारग दया धरम नो मारग रूपो नी परुपणा कर छै। ते गांम बार संघनो पडाव थयो। तीवार पछ संघना लोग मताजी री तारीफ करवा लागा। मतानी

बात सुणी खबर पाटी त्यार लुक मुहत भीन भीन करी न जीन मारग, साधरो आचार, श्रावग नो आचार सांभली न पासो मन मांही जीन मारग रुचो । कीतलायक दीन हुवा सीधंत साभलता दया मारग नी आसता आइ । तीबार भेषधारी संघ न गुरु हूता तीण बीचारो जे संघना लोग दया धरम साभलसे तो हमारो आव मीट जासी, सीधंत नी बात सांभलसी तो संघ चलावसी नहीं, असो भय आणी नें संघवी नै पास द्रव-लंगी आव्या, इम कहवा लागा-जे संघ ना लोग खरची पाणी वीना दुखीया थासी । त्यार संघवी बोल्या-बाट म घणी अजणी दीस छ, बाट म हरी अंकुरा घणा हुवा छ, बाटमे पोण त्रस जीव की घणी उतपती छ, नीलफुल घणी हुई छ ईतादीक घणी अजणा दीख छ ते माटे सुसता थाउं ।

तीवार द्रवलंगी गुरु बोल्या-साहाजी धरम न कारणे हींसा गणाय नही, तीबार संघवी मनमांही बीचार्यो जे लूका मुता पास ईम साभलो भेषधारी जती रीसाणो करी न पाछा करगया ते संघवाला णो सीधंत सुणीन बराग उपनो । त्यार संघनालाए सधंत सुणी न बराग उपनो त्यार पतालीस जणाय संजम लीधो, संजती थया साधना बरत अंगीकर कीधा, संवत १५३१ साके साल संजन लीधो । तेहना नाम-साध सरबाजी १, भाणोजी २, लुणोजी ३, जगमजी (जगमालजी) ४ ईतादीक आद देईन ४५ साधूजो नाम मारग परुपबा लागा, दया धरम परुप्यो । हींसा म पाप बतायो त्यारे घणा जीव दया धरम मारग आदरबा लागा ते दयाधरम आदर्यो । तीवार लुहकसा····कहो ते मोथकी सासत्र वाजसो । त्यार साधूजी बोल्या—मुहताजी हमतो श्री तीर्थंकर माहाराज रो धरम तुम थकी पाम्या छा हो हम तो लूका साधू बाजस्या । तीवार लुका साध बाजस्यां, लुका साध नाम दीयो । तीवार पछ घणी करीया करतूत करीने अनेक कसट करबा लागा । तीवार घणा लोग आगता हंता ते सुसता थया, जे जती आन श्रावक हा त सुसता थया ते दया मारग ना पालणहार हुबा । पछ देखी जीव हुआ, उपसरग दीधो ते माहारीख परिसा सह्या. तीवार पछ रुपजी साहा, पाटण नो बासी संजम लेई नीकल्यो । मोटो पुरुव थयो । एह लुकानो पहलो पाट थयो ।

तीवार पछ सुरत नो बासी, जीवो संसार न बीषे पुन्य पबीत्र हुतो, तीहा रुपरख आया संजम लीधो । जोवारख थया, ते बीबहार सुध साध

जाणोय छ । तीवार पछ थानक ना दोष सेवा लाग्या । आहार की गवेषणा थकी मोकला पड्या, तेड्या जावा लागा, बसत्र पात्रनी मुरजादा लोपी, आचार थी ढीला पड्या । तीवार पछ संवत १७०९ साले सुरत नो वासी बोरा वीरजी श्रीमाल, लोकामांही कोडीधज हुवो । तेहनो बेटी फुलाबाई तेहनो बेटो लवजी साहा सधंत घणो भणो । तीवार लवजी साहान वराग उपनो, तीवार बोराजी वीरजी पास संजम लेवानी आग्या मांगी । तीवार बोरो बीरजी कहबा लागो—के तुम लुकारा गछमाही दीखा लो तो आज्ञा आऊ (पूं) तीबार लवजी साहा बीचार्यो—हेवडा अवसर अहवाइज छ, इसो जाणी न लुकागछ माहो वराग दीख्या लीधी, त्यार दीख्या लइन लवजी जत्या पासे घणा सूत्र सधंत भण्या, जीवादीक पदारथ भण्या, ए पंडीत थया ।

तीवार वरस दोय पछ पोताना गरून एकंत पूछयो, गाथा-दस अट्ठाय ठाणाइ इती वचन त् ए अ गाथा दशमीकालक सूत्र नी छ, छटा अध्ययन में बोल १८ नो अधीकार चूछो, सामी साधुनो आचार ए ही दीस छ । तीम हीबडा पाल छ नही। तीवार गुरू बोल्या-अज तो पाचमो आरो छ, ते अहवो आचार कोम पले, तीवार रीख लवजी बोल्या—स्वामी भगवंत रो मारीग तो २१००० बरस सूधी चालसी, ते माटे लुकामाही थी नीकलो तो थे माहारा गुरू हूं तुम्हारो चेलो, तीवार जंगजी सूं बोल्या—हमसुं तो नीकलाय नही । तीवार रीख लवजी बोल्या-हूं तो सुध साधपणो पालस्यूं । तीवार रख लवजी गछ बोसराई न नीकल्या । रख लवजी साथ रख थोबणजी, रख सोवोजी नीकल्या, जगाये फेर दीख्या लीधी । ढूंढामांही उतर्या । घणा गांम उ (न) गर न वीषे लोका न समजाया, तीवार लोकोये ढूंढीया नाम दीधो ।

अमदावाद म कालूपुरानो बासी साहा सोमाजी, रख लवजी पास दीख्या लीधी । २७ बरस सुधी दीख्या पाली ते घणी सूरज साहामी घणी आतापना लीधी तथा घणी ताड खमी । तपसा कावसग कीना ! घणा साध साधवी नो परवार हुवो, तेहना नाम–हरीदासजी, रख पेमजी, रख कालूजी, रीख गीरधरजी प्रमुख घणा जणा हुवा बरजंगजीना गछ ना नीकल्या, लवजी प्रमुख बरजंगजी ना गछ थकी नीकल्या तेहना नाम-अमीपालजी, रख धरमदासजी, रख हरजीजी, रख जीवोजी, रख करमणजी, रख छोटा-हरजीजी, रख केसवजी, ईत्यादीक नामा महापुरुष गछ छाडी न दीख्या

लीधी । जीण धरम घणो दीपायो । घणो परवार थयो, रीख समरथजी श्री पूजंजी श्री धरमदासजी, गोधाजी, घणो जीनधरम दीपायो अन तीण-माही हरजी न, गोधोजी, परसरामजी तस सीख लोकमणजी, तससीख माहारामजी, तससीख दौलतरामजी, तीस सीख लालचंदजी, गणेसरामजी, गोमदरामजी पुजै रीख लालचंदजी, तसै सीख स्योलालजी, तस्यै सीख तपसजी, हुकमचन्दजी आददेई थया, ईम अनेक माहापुरष थया । रीख गजानंदजी पूज श्री गणेसरामजी का तस्यै सीख पूजै जीवणजी अमीचंदजी ।

पछ छेहला आरा पांचमा उतरताइ दरोपतनामा साधू होसी, फागणी नामा आरज्या होसी, नांगलनाम श्रावक होसी, संघणी नाम श्रावका होसी, अ च्यारही तीरथ संथारो करसी, तीन पोहोर को संथारो होसी, आउखो पूरो करीन देवलोका जासी । मत अथवा टोला घणा होसी पण संजम अराधीक दुरलंगछ, असै, समाचारो नी हूंडी छ, पछ तो केरली सीकार सो सही ईती पाटावली समपूरण ।

अथ बाईस टोला का नाम लीखय छ—पूजै लालचंदजी नो टोलो तीमसु टोला ३ नीस-या—एक तो अमरसंघजी नो १, दूजो स्वामी दासजी नो २, तीजो नगजी को ३ । दूजो टोलो पूज धनाजीको तीमसु टोला ३ नीस-या-स्वामी रघुनाथजी १, दूजो जैमलजी २, तीजो कुसलाजी ३ । तीजो टोलो मनाजी को ३ ते नाथुरामजी का साध । चोथो टोलो वड़ा प्रीयाजी को, तीमे नरसंगदासजी छ । पांचमो वालचंदजी को टोलो ते सीतलदासजी साध छे । छटो टोलो लोहोडा पीथाजी को प्रतापगड का साध । सात पुजे रामचंदजी सो गुजरात म अजरामलजी छ । आठमो टोलो मुलचंदजी को उजीण ना मणकचंदजी साध । नवो ताराचंदजी नो टोलो ते कालारखजी का साध छे । दसमो टोलो खेमजी को ते जावद कानी साध रतनजी तपसी का साध । ११ पंदारथजी को टोलो, १२, खेमजी को टोलो, १३ तलोकजी को टोलो, १४ पदारथजी को टोलो, १५ भाणदासजी को टोलो, १६ सोलमो पुज्यै प्रसरांमजी को टोलो हाडोती म वचर छ । १७ भवानीदासजी रो टोलो । १८ अठारमो मुकटरामजी को टोलो । १९ मनोहरजी को टोलो । २० सांमीदासजी को टोलो ।

२१ बागजी को टोलो । २२ बाइसमो समरथजी को टोलो । टोला का नाम पूरण । उतारी पुजे श्री श्री श्री श्री श्री श्री १००८ श्री गजानंदजी का पाना सुंचोमासो करो जोद तंनसुख पटवारी स्यांमपुरा का न मी.ो आसोज सुदी १ संवत १९२३ का मंगलवार, और असल पटवारीजो का हात की पाटावली तो स्वामजो माहाराज श्री श्री श्री १००८ श्री श्री केवलचंदजी वा सुखलालजी माहाराज ठाणा दोय २ सु सेखकाल पधारी जद बाकूं बहरादोनी ओर नकल या राखी मीती मांगसर सुद ९ संवत १९५४ का द. हजारीलाल का ।

कोटा परम्परा का पूरक पत्र

पुज्य माहाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्री दौलतरामजी तस्यै सीक्ष लालचंद जी तस्ये सीक्ष तपसीजी माहाराजाधिराज श्री हुकमीचंदजी बडा पुरस हुवा, तीणाक चेलां का त्याग अर पुज्यै श्री गोविंदरामजी तत् सीक्ष पुज्यै श्री दीयालजी पास्य गांम रतलाम मध्ये साहा सोलालजी न दीख्या लीधी । बडा दीपता मुनिराज हुवा । स्वंत १८९१ का साल पछै मास ६ म पुज्यै दीयालजी देवलोक पधार्या पछ तपसी हुकमीचंदजी न सोलालजी विचर्या । घणा नरनारी न समझाया । बडा सीक्ष साहो चत्र-भुजजी सीगोली का वासी दीख्या लीधी । पछ स्वंत १९०७ के साल सोवलालजी म्हाराज्ये क चेला ५ एक दिन म हुवा अर च्यार तीरथां को साखे लु पुज्यै पदवी आई । चेला कोठारी सादूलजी आदे ई घणा हुवा । पछ स्वंत १९१७ के साल तपसीजो म्हाराजे हुकमीचंदजी देवलोक गांव जावद म पधार्या । अर स्वंत १९२५ क साल गांव जावद मध्यै पुज्यै पदवी उदचंदजी कु हुई । स्वंत १९३२ क साल पुज्यै सोलालजी देवलोक पधार्या । यो टोलो तपसी हुकमीचंदजी को कहाव छै ।

पुज्यै सोलालजी के पास्ये दोक्षा लीधी तपसीजी महाराजाधिराज श्री पन्नालालजी स्वंत १९१२ पोस सुद ३ गुरुवार रामपुरा का श्रीश्री माल माहातपसी हुवा अर चेला का त्याग कर्या इ आराम उदकसरी तपस्या कर छै । अर पुज्यै श्री गोवंदरामजी तस्यै सीख फतेचंदजी तस्यै सीख ग्यानचंदजी तस्यै सीख बलदेवजी अर दूजा छगनलालजी तीजा गंभीरमलजी दलीका जौहोरी हुवा । चित नर्मल सं० १९१९

राणीपूरा म पुज छगनलाल जी डकवा (डेकवा) का पोरवाड जा घोर संवत् १९२२ में दीक्षा लीधी। ज्याका······पसी प्रेमचन्दजी लि········ में विद्यमान दक्षिण विहारी। अर बलदेवजी क चेला मगनमलजी हुवा। अर पुज्यं गणेसराम जी तस्ये सीख जीवणरामजी, भरूजी अमीचन्दजी पंडत हुवा। जीवणजी क चेला माणेकचन्दजी तस्य सीख रतनचन्दजी मोखली का पोरवाड दीक्षा लीधा गांव स्यामपुरा मध्ये स्वत १९२६ म. अमीचंदजी का सीख मगनमलजी, भरुजी।

पुज्यं दौलतरामजी म्हाराज का च्चार चेला गणेशरामजी १, गोविंदरामजी २, लालचन्दजी३, राजारामजी ४। गणेशरामजी का पुज्य अमीचंदजी। पुज्य अमीचंदजी का ग्यारा चेला होया—छोट जीवणजी १, मगनजी २, वागजी ३, माणकचंदजी ४, भोलुजी ५, बडा भरूजी ६, कालुजी ७, धनजी बड़ा ८, छोटा धनजी ९, छोटा भरुजी १०, चुनीलालजी ११ ज्या मे से श्री कालुजी म्हाराज बुंदी का वोसवाल, गोत गुगल्या, दीक्षा माधोपुर सम्बत १९२० में लीधी। तत् शिष्य माधोपुर का पोरवाड, गोत औचछला, दि० सं० १०५५ आगण बुध १२ में गाम अलोद में दीक्षा ली रामकुमार ज्याका चेला ४—ननुलालजी स्यामपुरा का, पोरवाड, मंडावरिया, सं० १९६····· म्हा. शु. ५ बुधवार वड़े पीपलदे दिक्षा ली। वृद्धिचंदजी अलगढ़ रामपुरा के पोरवाड, गोत डंगरा, दिक्षा ली, सं० १९७२ म्हा० शु० ५ मागरोल में। रामनिवासजी स्यामपुरा का पोरवाड, मंडावरकोट दिक्षा ली १९७९ आषाढसुद्ध २ को कोटा में। हजारीमलजी चोरु का सामरचा, चोरु दिक्षा ली सं० १९७९ जेठ सुद ५ को, वरतमान मया है।

पट्ट-वृक्ष[1]

लोंकाशाह १५६६ वर्षे

श्री कुँवरपालजी म०

↓

तेजपालजी म०

↓

(१) अमीपालजी | (२) महिपालजी | (३) हीराजी | (४) जीवराजजी | (५) गिरधरजी | (६) हरजी महाराज

(४) जीवराजजी ↓

(१) लालचन्दजी | (२) धन्नाजी | (३) घासीरामजी | (४) दौलतरामजी

(१) लालचन्दजी ↓

(१)	(२)
स्वामीदासजी	दीपचन्द जी
रूपचन्दजी	मलुकचन्दजी
उग्रसेणजी	नांनकरामजी
घासीरामजी	निहालचन्दजी
कनीरामजी	सुखलालजी
रिपीरामजी (रेखराजजी)	हर्षचन्दजी
नथमलजी	
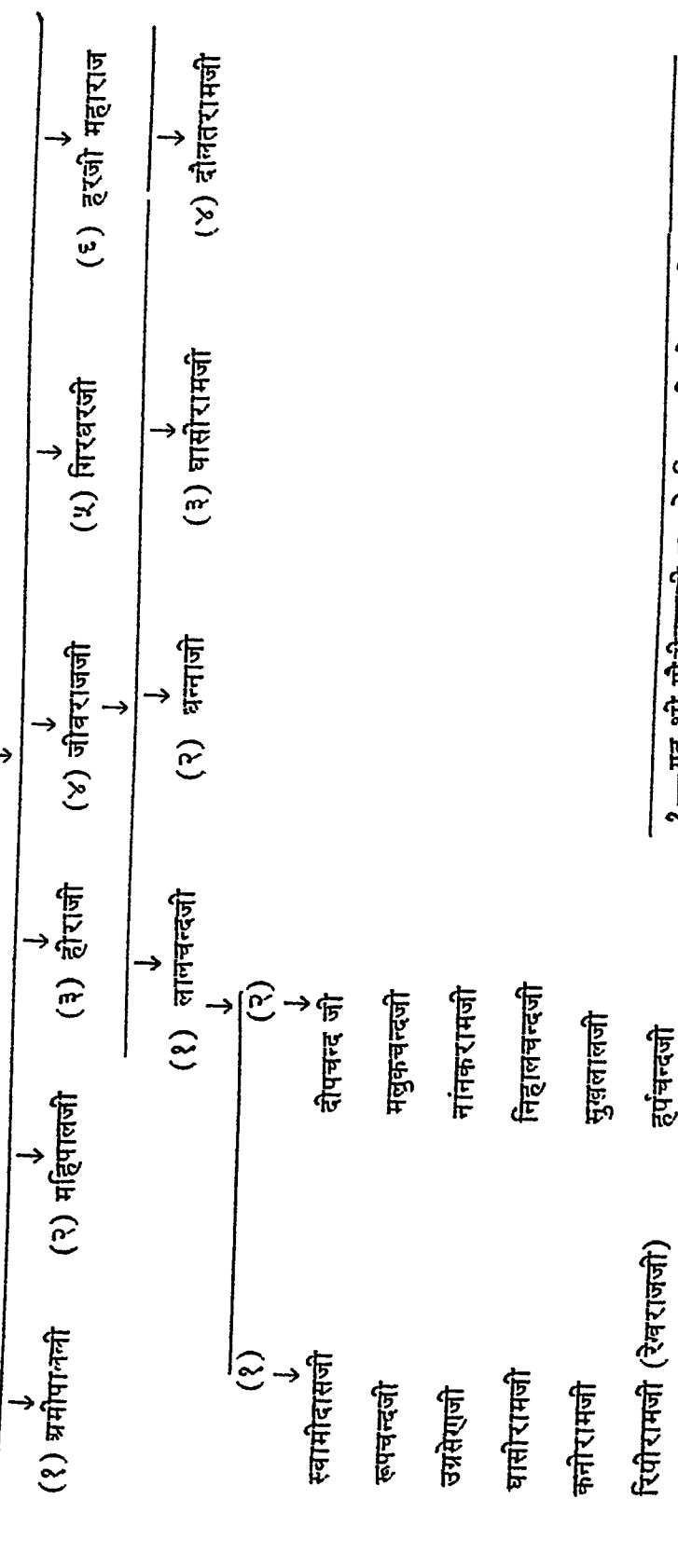
१—यह श्री गौडीदासजी म० के शिष्य श्री मोहन मुनि जी से प्राप्त हुआ है।

(२) धन्नाजी

(१) रामोजी		(२) मगनजी (मनजी)	(३) वालचन्दजी	(४) स्यामजी
(१) वजाजी (वीजाजी)	(२) अमरसिंहजो	नाथूरामजी	शीतलजी	मुकटरायजी
उदयभाणजी	तुलसीदासजी	लक्ष्मीचन्दजी	देवीचन्दजी	हरकिशनजी
अनोपचन्दजी	ईसरदासजी	छीतरमलजी	हीरानन्दजी	नेणसुखजी
विनेचन्दजी	कोजूरामजी	रतनचन्दजी	लक्ष्मीचन्दजी	मनसारामजी
वगतावरजी	सोजीरामजी	भज्जूलालजी	भेरूदासजी	दयारामजी
लालचन्दजी	चतुरभुजजी		उदयचन्दजी	
	रोडमलजी		पन्नालालजी	
	करमजी		नेमीचन्दजी	
	छोटमलजी		वेणीचन्दजी तपसी	
	विरधीचन्दजी			

(२)
मगनजी (मनजी)
नाथूरामजी
(१)
भोजरामजी
कल्याणजी
भागचन्दजी
रायचन्दजी
(२)
दयारामजी
मलुकचन्दजी
कुशालचन्दजी
बिजलालजी
रामबकसजी
(३)
रायचन्दजी
ख्यालीरामजी
शिवलालजी
(४)
रामचन्दजी
इन्दरमलजी
रतिरामजी
नन्दलालजी
रूपचन्दजी

(५)
गिरधरजी म०
(१)
श्री पालजी म०
(२)
वड़े प्रथ्वीराजजी म०
धारूजी महाराज
छोटे प्रथ्वीराजजी म०
देवीचन्दजी म०
सुखानन्दजी
हीरानन्दजी म०
रामकृष्णजी
नरसिंहदासजी
रोडीदासजी म०
सूरजमलजी म०
मानमलजी
रिषभदासजी
गुलावचन्दजी

(६)
हरजी महाराज
↓
गुनावचन्दजी
↓
फरसरामजी
↓
खेतसीजी → → → → → अनोपचन्दजी → देवजी → पन्नालालजी → कनीरामजी → चंपालालजी → किशनीजी म० → विसनजी म० → बलदेवजी → हरखचन्दजी → मांगीलालजी म०
↓
खेमसिंहजी (खीव)
↓

(१)
↓
वुधरदासजी म०
परतावचन्दजी म०
शोभाचन्दजी म०
वखतावरचन्दजी म०
गोड़ीदासजी म०
मोहन मुनि म०

(२)
↓
मगनीरामजी म०
लवजी रिषी[1] ← ← ← (पन्नालालजी से)
सोमजी
कानजी
ताराचन्दजी
जोगराजजी

१—प्रमाण की अपेक्षा है।

(६) हरजी म०
↓
गुलाबचन्दजी
↓
फरसरामजी
↓
लोकमणजी म०

महारामजी म०

दौलतरामजी म०

गौविन्दरामजी म०

फतेचन्दजी म०

ज्ञानचन्दजी म०

छगनलालजी

वक्तावरमलजी

कजोडीमलजी म० → प्रेमराजजी म०

शंकरलालजी म०

गणेशीलालजी म० (खादीवाला)

दौलतरामजी म० → लालचन्दजी म०

हुक्मीचन्दजी म०

शिवलालजी म०

उदैचन्दजी म०

चौथमलजी म०

श्रीलालजी म०

जवाहिरलालजी म०

गणेशीलालजी म०

नानालालजी म०

हुक्मीचन्दजी म० → शिवलालजी म०

उदैचन्दजी म०

बड़े जवाहिरलालजी म०

नन्दलालजी म०

हीरालालजी म०[1]

मन्नालालजी म०

खूबचन्दजी म०

पं० कस्तूरचन्दजी

१—इनके शिष्य जैन दिवाकर चौथमल जी म० हुए।

परिशिष्ट—२

भगवान महावीर के बाद की प्रमुख घटनाए

(संकलित पट्टावलियों के आधार पर प्रस्तुत तालिका)

वीर सवंत्	घटना
६४	दस बोल का विच्छेद ।
२१४	तृतीय अव्यक्तवादी ।
२२०	चतुर्थ शून्यवादी निह्लव ।
२२८	पंचम क्रियावादी निह्लव ।
३३५	प्रथम कालकाचार्य (श्यामाचार्य) ।
४५२	द्वितीय कालकाचार्य ।
४७०	विक्रमादित्य राजा, विक्रम संवत् चला ।
५४४	छठा निह्लव रोह गुप्त ।
५८४	सातवां निह्लव गोष्ठमाहिल, वज्र स्वामी का समय, इस समय के बाद १० पूर्व ज्ञान, चतुर्थ संहनन तथा चतुर्थ संस्थान का विच्छेद हो गया ।
६०६	सहसमल से दिगम्बर मत निकला ।
६२०	वज्रसेन स्वामी का समय, बारह वर्ष का दुष्काल, चार शाखाएँ निकलीं—चन्द्र, नागेन्द्र, निर्वृत्त, विद्याधर ।
८८२	चैत्यवासी प्रकट हुए ।
६८०	देवर्द्धि क्षमाश्रमण द्वारा वल्लभीपुर में सूत्र-लेखन ।
६६२	लब्धियों का विच्छेद ।
६६३	भाद्रपद शुक्ला पंचमी के स्थान पर सर्व प्रथम भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी की सम्वत्सरी प्रारम्भ हुई ।
६६४	सर्व प्रथम चतुर्दशी को पक्खी पर्व का आरम्भ ।

१०००	एक पूर्व का ज्ञान रहा।
१००८	पोसाल, उपासरों का निर्माण।
१००६	समस्त पूर्वो के ज्ञान का विच्छेद।
१४६४	वडगच्छ की स्थापना।
१६२६	पूनमिया गच्छ की स्थापना।
१६५४	आंचलिया गच्छ की स्थापना।
१६७०	खरतर गच्छ की स्थापना।
१७२०	आगमिया गच्छ की स्थापना।
१७५५	तपागच्छ की स्थापना।
२००० के लगभग	लोंकाशाह द्वारा सूत्र-प्रतिलेखन।
२०६५	ऋषि मत की स्थापना।

विक्रम संवत्	घटना
१५३१	लोंकाशाह का धर्म प्रवर्तन, भानजी, नूनजी, सरवोजी, जगमालजी आदि ४५ व्यक्तियों द्वारा प्रवज्या-ग्रहण।
१५८२	तपागच्छ के आनन्दविमल सूरि द्वारा क्रियोद्धार।
१६०२	आंचलिया-क्रियोद्धार।
१६०५	खरतर-क्रियोद्धार।
१७०६	लवजी द्वारा वरजंगजी के पास प्रवज्या-ग्रहण।
१७१४	लवजी, थोभनजी व सखियाजी का गच्छ-त्याग।
१७१५	संवेगी धर्म की स्थापना।
१७१६	धर्मदासजी की स्वयंमेव दीक्षा।
१८१५	भीखनजी का रूघनाथजी से मतभेद।
१८५४	वडलू में इक्कीस बोलों की मर्यादा।

परिशिष्ट–३

प्रति-परिचय

पट्टावली प्रवन्ध संग्रह में १७ पट्टावलियां—७ पट्टावलियां लोंकागच्छ परम्परा से संवंधित तथा १० पट्टावलियाँ स्थानकवासी परम्परा से सम्वन्धित-संगृहीत हैं। इनके वर्ण्य-विषय के संवंध में प्रत्येक पट्टावली के पूर्व संक्षिप्त परिचय दे दिया गया है। प्राप्ति-स्थल आदि से संवंधित वहिरंग परिचय इस प्रकार है–

(क) लोंकागच्छ परम्परा से संबंधित पट्टावलियां :

(१) पट्टावली प्रवन्ध :—यह पट्टावली नागोरी लोंकागच्छीय परम्परा से सम्बन्धित है । इसके रचयिता रघुनाथ ऋषि लद्र‌राजजी के प्रपौत्र शिष्य थे। उन्होंने सं० १८९० में पटियाला के पास अवस्थित सुनाम नामक ग्राम में इसकी रचना की। संस्कृत भाषा में निवद्ध यह रचना रचनाकार के प्रौढ़ भाषा ज्ञान की परिचायिका है। हमें इसकी दो हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं। पहली प्रति मुनि श्री हगामी लालजी म० के पास है जो अजमेर स्थानक (लाखन कोटड़ी) के भंडार से प्राप्त हुई है। इसे सं० १८९९ में प्रथम चैत्र शुक्ला चतुर्दशी शुक्रवार को मुनि संतोषचन्द्र ने अहिपुर (नागौर) में लिपिबद्ध किया। दूसरी प्रति श्री जैन रत्न पुस्तकालय, जोधपुर की है जिसे ऋषि शिवचन्द ने सं० १९०७ में मकसूदाबाद के वालचर नामक गाँव में लिपिवद्ध किया। हमारा मूल आधार अजमेर की प्रति रही है । संशोधन में जोधपुर की प्रति का सहारा लिया गया है। लेखन प्रायः शुद्ध होते हुए भी कुछ स्थल संशोधन की अपेक्षा रखते हैं। लिपि स्पष्ट और सुन्दर है।

(२) गणि तेजसी कृत पद्य-पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति वड़ौदा के मुनि श्री हेमचन्दजी के संग्रह में है। उसकी नकल आचार्य श्री विनयचंद्र ज्ञान भंडार, जयपुर में सुरक्षित है। इसके रचयिता तेजसी (तेजसिंह) केशवजी के शिष्य थे। तेजसी अपने समय के संस्कृत के पंडित व अच्छे कवि थे।

(३) संक्षिप्त पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति श्री हस्तीमलजी म० के पास है। इसका लिपिकाल सं० १८२७ ज्येष्ठ कृष्णा १३, बुधवार है। अक्षरों को देखने से लगता है कि इसे पूज्य गुमानचन्दजी म० ने लिखा हो। यह एक पन्ने में

लिखी हुई है। 'पट्टावली लूंकानी' के नाम से इसकी एक अन्य प्रति भी मिली है जो लोंकागच्छीय किसी यति द्वारा लिखित अनुमानित होती है।

(४) बालापुर पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति वड़ौदा के यति श्री हेमचन्दजी के संग्रह में है। इसकी नकल आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भंडार, जयपुर में सुरक्षित है। यह १९ वी शती के किसी लेखक (ऋषि) द्वारा लिखित अनुमानित होती है। यह तीन पन्नों में लिखी हुई है।

(५) बड़ौदा पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति वड़ौदा के यति श्री हेमचन्दजी के संग्रह में है। लिपिकार का निर्देश नहीं है। इसे सं० १९३८ मगसर विद १ को वड़ौदा में लिपिवद्ध किया गया। अन्तिम दो आचार्यो का परिचय बाद में जोड़ा गया है। इसकी नकल आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भंडार, जयपुर में सुरक्षित है।

(६) मोटा पक्ष की पट्टावली—इसकी हस्तलिखित प्रति उदयपुर में मुनि श्री कांतिसागरजी के पास है। इसे ऋषि मूलचन्द ने लिपिवद्ध किया। मूल प्रति में पट्टावली का नाम दिया है 'अथ श्री सतावीस पाटनी पटावली।' हमने अपनी ओर से वर्ण्य विषय के आधार पर इसका नाम 'मोटा पक्ष की पट्टावली' रखा है। इसकी नकल आचार्य श्री विनयचन्द ज्ञान-भंडार में सुरक्षित है।

(७) लोंकागच्छीय पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति बड़ौदा के यति श्री हेमचन्द्रजी के संग्रह में है। उसकी नकल आचार्य श्री विनयचंद ज्ञान-भंड़ार, जयपुर में सुरक्षित है।

(ख) स्थानकवासी परम्परा से सम्बन्धित पट्टावलियाँ :

(१) विनयचंद्रजी कृत पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति श्री हस्तीमलजी म० के पास है। अक्षरों को देखने से लगता है कि पूज्य श्री हमीरमलजो ने इसे लिपिवद्ध किया हो। यह पाँच पन्नों में लिखी गई है। इसके रचयिता कवि विनयचन्द्रजी इन्हीं पूज्य हमीरमलजी से प्रतिवोध पाकर जैन धर्म की शुद्ध श्रद्धा के उपासक वने थे। अनुमान है सं० १९०२ (पू० रत्नचन्द्रजी का स्वर्गारोहण-काल) के पूर्व ही इस पट्टावली की रचना की गई होगी क्योंकि रचनाकार ने अपने अन्तिम पद्य में "रहो पूज रतनेश चिरकाले तन चंगा' लिखा है जो पूज्य श्री की विद्यमानता में हो संभव हो सकता है। 'चौबीसी' तथा 'आत्मनिन्दा' नामक इनकी अन्य रचनाएँ हैं। काव्य निर्माण की इनमें अनुपम क्षमता थी। इनका छन्द सम्वन्धी ज्ञान भी विस्तृत था। पट्टावली में कई विभिन्न छन्दों का प्रयोग किया गया है।

(२) प्राचीन पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति मुनि श्री हगामीलालजी म० के पास है जो अजमेर से पूज्य नानकरामजी म० के संग्रह (लाखन कोटडी) से प्राप्त हुई है। इसे श्री हीराचंदजी म० ने सं० १९३१ में आश्विन शुक्ला १० मंगलवार को अजमेर में लिपिबद्ध किया। यह ग्यारह पन्नों में लिखी गई है। प्रति के अन्त में 'लाल री आहार निषेधो तिण साधा रो नाम' तथा पूज्य जीवराजजी से लेकर पूज्य नानकरामजी म० को परम्परा के वर्तमान श्री हरकचंदजी म० तक का उल्लेख किया गया है जो इस प्रकार है—

'इति समंत पूजजि श्री जिवराजजी तत सिपं पूज श्री लालचंदजि तत सिप पुज श्री दीपचंदजी तत सिप पुज श्री मलूकचन्दजी तत सिप पुजजि श्री श्री नांनग रामजी तत सिप पुज श्री निहालचन्दजी तत सिप पुज श्री नुपलालजी तत सिप सांमीजी श्री हरकचन्दजी माहाराज तत सिप लिपिकृतं हीराचंद सहर अजनेर म्मवे समत १९ से ३१ रा आसोज सुकल पक्ष १० मोमेवार मंगलवार।'

(३) पूज्य जीवराजजी की पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति श्री हस्तीमलजी म० के पास है। इसे ऋषि व्रजलाल ने सं० १८८९ में पोष वद ७ को लिपिबद्ध किया। यह एक पन्ने में लिखी गई है। पन्ना प्राचीन होने से कुछ खंडित है। मुनि श्री ने 'लवजी वरयंगजी रे गछ थी नीकल्या' इस वाक्य से लेखन आरंभ किया है।

(४) खंभात पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति संघवी पोल, खंभात में है। इसे सं० १८३४ में लिपिबद्ध किया गया। यह पांच पन्नों में लिखी गई है। इसका मूल नाम 'पट्टावली पत्र है'। हमने अपनी सुविधा के लिए इसे 'खंभात पट्टावली' कहा है। पं० बालाराम ने सं० २०२३ में प्रथम श्रावण कृष्णा अष्टमी को इसकी नकल की जो आचार्य श्री विनयचंद्र ज्ञान भंडार, जयपुर में सुरक्षित है।

(५) गुजरात पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति सदानंदी मुनि श्री छोटेलालजी म० के पास है जो लींबडी भंडार से प्राप्त हुई है। यह एक प्राचीन पन्ने पर लिखी हुई है। इसकी नकल आचार्य श्री विनयचंद्र ज्ञान भंडार, जयपुर में सुरक्षित है।

(६) भूधरजी की पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति श्री हस्तीमलजी म० के पास है। अक्षरों को देखते हुए लगता है यह पूज्य गुमानचंदजी म० की लिपि हो। लिपिकार ने इसका नाम 'पटावली वुर थी' रखा है। हमने अपनी सुविधा से इसका नाम 'भूधरजी की पट्टावली' रख दिया है। लिपिकार ने लिखते-लिखते इसे

अधूरा छोड़ दिया है, ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि अन्त में किसी प्रकार का विराम चिन्ह नहीं है। यह एक पन्ने में लिखी हुई है।

(७) मरुधर पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति जैतारण के स्थानकवासी संघ के भंडार की है। इसे श्री सौभाग्यचंदजी म० के शिष्य श्री अमरचन्दजी ने लिपिवद्ध किया। यह २१ पन्नों में लिखी गई है। लिपिकार ने पट्टावली के अन्त में मुनि-नामावली और संप्रदायों के नाम-निर्देश किये हैं। कई वातें, वहुश्रुत होने के कारण, लिपिकार ने परम्परा की अनुश्रुति पर से लिख दी प्रतीत होती हैं। विशेषकर पूज्य धर्मदासजी म० के सम्बन्ध में लिपिकार की मान्यता अन्य लेखकों से अलग जाती है। प्रस्तुत लिपिकार ने श्री जीवराजजी म० के पास धर्मदासजी का दीक्षित होना माना है जिसका अन्य विविध लेखकों के लेख समर्थन नहीं करते।

(८) मेवाड़ पट्टावली :—इसकी हस्तलिखित प्रति पं० मुनि श्री लक्ष्मी चंदजी के पास है जिसे पं० वालारामजी ने सं० २०२३ में मुनि श्री अम्वालालजी म० के द्वारा लिखाये जाने पर लिखी।

(९) दरियापुरी सम्प्रदाय पट्टावली :—यह मुद्रित नक्शे (वृक्ष) के रूप में प्राप्त होती है। इसे मुनि श्री छगनलालजी ने तैयार किया और इसका प्रकाशन सं० १९९३ कार्तिक सुदी १५ को भावसार सामलदास ने अहमदावाद से कराया।

(१०) कोटा परम्परा पट्टावली :—यह हजारीलालजी पटवारी की प्रतिलिपि से प्रतिलिपित है। सं० १९९५ में सूरजमल ने हजारीलाल की प्रति से इसे उतारा था। उसी प्रति से सं० २०२४ माघ कृष्णा १३ को मास्टर राजूलाल और मोतीलाल गांधी ने इसकी नकल की। सूरवाल में इसका संशोधन किया गया।

परिशिष्ट—४

आचार्य, मुनि, राजा, श्रावकादि

अ

ख

ट

ठ

ड

त

थ

द

ध

म

ह

परिशिष्ट—५

ग्राम, नगरादि

परिशिष्ट—६

गण, गच्छ, शाखादि

परिशिष्ट—७

सूत्र-ग्रन्थादि

भ

म

ल

व

श

स

परिशिष्ट—८

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	८	बिमलान्त	विमलानन्त
४	२१	चतुर्विंशतितन	चतुर्विंशतितम
६	२२	नामके और तीन चारित्र	नामके तीन चारित्र
२३	१८	६१५२	१५६२
२४	२२	साहने भांडैजी से विचार	साहने भांडेजी व कमेजी से विचार
४६	२६	और चारित्र पद	और चारित्र एवं पद
६५	२८	यह ६६ वां पाट	यह ६१ वां पाट
६६	२६	सद्गुरु५	सद्गुरु—
८१	१५	साधुरोया	साथरिया,
८५	११	सयलित—	संपलित—
८५	१४	संमिल—	संडिल
८५	२०	अन्य दर्शनीय,	अन्य दर्शनीइं
८५	२४	माटे मंडाणे	मोटे मंडाणे
६१	७	जात धरम स्वामी	जीतधर स्वामी
६१	१०	खेत	रेवत
६१	१४	लोहितस्यगणि	लोहित्यगणि
६१	१५	दुख्यगणि	दूष्यगणि
६१	१६	क्षमा श्रवण	क्षमाश्रमण
६४	१६	निरदाण	निरवाण
६५	१८	३०	२०
६७	१५	मदावेद	महावेद
६७	२०	दीकरा लीधी	दीख्यालीधी

१	२	३	४
९८	२९	सर्वाय	सर्वायु
१०४	११	पदढवा	पदठवा
११२	२	मूर	भूर
११४	२६	पाछे वीर,	पाछे, वीर
११५	२	पुलाक लब्धि	पुलाक, लब्धि
११७	२३	५६ वर्ष	१५६
११७	२७	गहवास	गृहवास
११८	२८	५८४	५१२
१२१	७	वष	वर्ष
१२१	१५	वाली	वाली
१२१	१९	गंधर्वसेन	गर्दभिल्ल
१२६	२१	पीकर में	पीकर
१३१	६	लिखाताऽदल	लिखा ताडदल
१३१	८	बद्धि	वृद्धि
१३४	२	और चौरासी	चौरासी
१३९	१२	से ज्वाला	सेजवाला
१४०	१४	सम्भल	साम्भल
१४१	१६	दोपाये	दीपाये
१४२	११	खव	खूब
१४४	१०	निन ओले	तिन ओले
१४७	२	तिन न दीक्षा लीध	तिन दीक्षा लीध
१४७	१०	यक्ति	युक्ति
१६३	१८	फांसो	कांसो
१६३	२५	फांसे	कांसे
१७७	२४	मांति	मांनी
१७८	५	छोडो उध	छोडीउ
१७८	२६	चिंता किय	चिंता किम
१७९	१३	अठा	अठा,
१७९	१४	बीयंग छंति	बीयं गछंति
१८०	४	चूलिजा	चुण्णिज्जा

१	२	३	४
१८०	५	एल विड जूं यो लवि पुलाउमूणि यवो	ए, लद्धिइ जूयो लद्धि पुलाओ मुणियन्तो ।
१८०	१४	संतोध	संतोत्र
१८०	१५	करवि उई ।	करवि ।
१८१	६	उपवंरि	उपधारी
१८१	९	वांचि म	वांचि.न
१८१	१०	कहेए	कह्यो.
१८१	१३	कहए	कह्या
१८१	३१	कहेए	कह्यो,
१८२	०	गिणचा	गिणवा
१८३	१४	वेइराघ	वेइराग
१८३	१७	कहऐ	कह्यो
१८३	१९	कहऐ	कह्यो
१८४	२२	पुछेए	पुछ्यो
१८४	२४	कहऐ	कह्यो
१८५	२	एत्रतिन	एतिन
१८५	३०	पूदाहि	खुदाहि
१८६	९	हाकम वे हाकम वे.हाथ	हाकम वे हात-
१८६	२४	पाड्या	पाम्या
१८७	६	गूणवंत फ्रंणी	गूणवंत प्राणी
१८७	९	वांववा	वांचवानो
१८७	२०	जाउघर	जाउंबर
१८७	२६	प्रमूप	प्रमुख
१८८	२५	कहेए	कह्यो
१८९	२	धरम समजवतां	धरस समजावतां
१९०	३	वाइ भामा	वाइ भाया
१९२	१०	ते मिल्यांउ	तेडिल्यांउ
१९३	२०	सराग्नि	सरागांन
१९४	१३	केटिवंव	फेटिबंव

१	२	३	४
१९४	१३	यांत्रया मांथि	पात्रयामां थी
२००	४	षनागार्जंण	पेनागार्जंण
२००	५	षमंण	पमणा
२००	१६	८९०	९८०
२००	२८	छीती	स्थिती
२०१	३	माहि राख्णं	माहि राख्या
२०१	९	जोवामें	जोवाने
२०१	१०	बीचारु रा	विचारु ए
२०१	१३	छनो काम छे	नो काम छे
२०१	१६	मार्ग कतो	मार्ग तो
२०१	१५	वीचासुं	बीचार्युं
२०१	२५	माव वुथे युं	मावठुं थयुं
२०१	२८	घरणा	घणा
२०२	१७	तिवारे पुछे	तिवारे पुठे
२०२	२४	कोडिधभ्र हुते	कोडिधभ्र हुतो
२०३	१८	वाठनी	ताढनी
२०३	२३	ऋषिमें	ऋषि
२०४	१२	४ नीव	चौथा निनव ८
२०४	१६	छगे निनव	छठो निनव
२०५	२	मोघ पोहोता	मोख पोहोंता
२०५	६	१०० सर्व	८० सर्व
२०५	१०	पुलांगनिउ	पुलांगनियंठा
२०६	११	५९ वर्से	५९२ वर्षे
२०७	१	पंवुसणा पर्व	पजुसणा पर्व
२०७	५	८४ छ गच्छ	६४ गच्छ
२०७	९	ने हवै जटांणे	ते हवैंज टांणे
२०७	२०	फूसमामजी	फसरामजी
२०७	२१	लहुमाईये	लहुडाइये
२१४	२४	हेहरांनी	देहरानी
२१६	८	हिंसा नहीं	हिंसा गिणाय नहीं

१	२	३	३
२१८	३	घृतपुरी उवरांत	घृतपुरी उपरांत
२ ८	१५	उद्यो जिण मार्ग	उद्योत-जिण मार्ग
२१८	२२	समण्या	समज्या
२१६	३	यया	यथा
२२०	१८	रात्री हरणगमेषो	रात्री ए हरणगमेषी
२२०	२०	वरा बरस वा नव मास	वरा बरस सवा नव मास
२२०	२४	तेथी	तेथी ते
२२२	२	पषनणो	पषऊणो
२२२	४	चरम""सो	चरम चौमासो
२२२	६	कहेवाग्या	कहेवा लाग्या
२२३	४	त्रण से शिष्य	त्रण त्रण से शिष्य
२२३	५	प्रभवा मांमे	प्रभास नांमे
२२३	१४	गोतम आउषो	गोतम स्वामीनो आउषो
२२३	२१	काशप	काश्याप
२२४	८	गृहस्था मां	गृहस्थाश्रम मां
२२५	८	एह पली काली पडी	एह पली दुकाली पडी
२२५	१४	उदेसीदीक	उदेसादीक
२२५	२२	वडीत	वतीत
२२५	२४	साहवी	साधवी
२२६	१६	इन्द्रन स्वामी	इन्द्रदिन स्वामी
२२७	११	नूवन	तुंबवन
२२७	१६	लीपंतो	लीषंते
२२७	१७	नूवन	तुंबवन
२२७	१८	धन ग्रही	धन गिरी
२२७	२६	धनगीरी	धनगिरी
२२७	२७	आपनी कल्पा हता	आप निकल्या हता
२२७	३०	वशते	वशे ते
२२८	२०	कोसीस	कोसीसय

१	२	३	४
२२६	१६	लांगधारी	लिंगधारी
२२६	२०	सरम हें जसो	सरम रहे जसो
२३०	२१	दोरं	दोरा
२३२	३	तदीस–वत	तदी संवत
२३२	१५	ए-अगरंमा	ए–ग्रंठाग्मा
२३२	१७	परज्या लीने	परज्या पालीने
२३३	१०	८७	८७५
२३३	२२	आश्रव	आश्रम
२३५	१०	माथे	मा
२३६	७	समाइसंजय	समाइय संजय
२३६	८	छे उवगरिणय	छे उवठारिणय
२३६	१३	जिन कल्पगी मुनि	जिनकल्गी मुनि
२३६	१६	सुषमं	सुषम
२३६	२४	परिगाहो	परिठगहो
२३७	२	तिनकं	तिनके
२३८	४	तरे पंथनी	तरे पंथना
२३८	२८	उदराजेवावी कल	उदर जेवा वीकल
२३९	१३	तेमाकलो	तेमा कह्यो
२४०	१	छाडावा	छोडावा
२४०	१३	पंचमी छमछरी छे	पचमीनी छमछरी छे
२४१	५	राजा यो तानो	राजा पोतानो
२४१	२२	बुलासा	खुलासा
२४४	११	पद रह्या	पद रह्या सरव दीख्या छमालीस वरस पाली
२४५	२४	पदम नाम स्वामी	पदम नाभ स्वामी
२४५	२४	पदम नाभ आचारज	पदम नाभ आचारज
२५१	११	नाव्या	नाख्यां
२५१	१७	मोलण तेलो	डोलण तेलो
२५२	१४	संवेग भात आंणीं	संवेग भाव आणी

१	२	३	४
२५२	२२	थयोल देपी लगी रहुवा	थयेलो देपी दीलगीर हुवा
२५३	११	लूकाजी श्रापी	लूंकाजी ने श्रापी
२५४	२०	सफा थयां चालसू	सफा थयां थी चालसू
२५५	१५	घणाज वाटसू	घणाज ठाट सू
२५६	१६	श्रोपद रे वदले नांम थापन हुवो	श्रोपद रे बदले जेर नी पुड़ी दीधी
२५७	२६	लेरने	लेने
२५८	२	जीमम छै	जीम छै
२५८	२८	श्रमदा मां	श्रमंदावाद मां
२६०	१६	सूत्र भगवा	सूत्र भणवा
२६१	६	कहीयो तानो	कही पोतानो
२६१	१६	लीना	वीना
२६१	१८	सीष्या	सीष्य
२६५	३	वावीस	छावीस
२६७	२६	माहाराज गंणे	महाराज ठाणे
२६८	१	सांथी	त्यांथी
२६६	८	गृहणा श्रवमां	गृहस्याश्रवमां
२७०	२०	महाराज जो	माहाराज नी
२७२	२२	उगणीस ने बावीस	उगणीस ने छावीस
२७३	२	वढता	छढता
२७४	६	लेता रह्या। हजारा	लेता त्यां हजारा
२७४	२६	दाष्या है भ.	दाख्या हे सु-
२७५	५	वार है	द्वार है
२७५	७	वेइ	देइ
		नरनारी स्वाथूण	नर नारी स्याथूण
		पूज्य श्री	पूज्यजी
		गणां	ठाणां
		छगनमन	छगनलाल

१	७	३	४
२८०	३	वरतमांममा	वरतमांन मां
२८०	७	संप्रदाय नी वीजी	संप्रदाय जीवाजी
२८१	२०	फालुनी	फाल्गुजी
२८५	१६	मल दीक्षा	मूल दीक्षा
२८५	२०	कपटाचार्य	खपुटाचार्य
२८५	२५	विहर कुमार	वयर कुमार
२८५	२६	वेहर स्वामी	वयर स्वामी
२८६	१२	—कालिक के ॥६॥	—कालिक के छट्ठे
२८७	२७	इन स्वयं की	इन सब की
२८८	६	के सलिये	के लिये
२८८	२४	वेड़ गच्छ	वड़ गच्छ
२९०	२	सरसघजी	सरवाजी
२९१	४	अघितीयथी	अद्वितीय थी
२९२	८	किस्तूरचंदजी मम्ये	किस्तूरचंदजी म० थे
२९७	१६	मसुकचंदजी	मलुकचंदजी
२९९	१	तीथी	थिति
३०१	८	आग नगर	आगे नरग
३०१	१८	अनेरो	अनेरा
३०२	१०	राजा वोला—	राजा वोला—हे बाई रोवो किम छो। त्यारे डोकरी वोली—
३०३	८	पछ ९२०	पछ ६२०
३०३	१०	पछ काल लगतो पछ काल लगतो पडो—	पछं काल खगतो पड़ो,
३०६	९	केटार रुलसी	कंतार रुलसी
३०९	१४	पाछा करगया	पाछा फरगया
३०९	१९	साधूजी नाम मारग	साधु जिन मारग-
३०९	२१	सासत्र	सांसन
३११	१३	केरली सीकार	केवली सीकारे

१	२	३	४
३१२	२६	उदकसरी तपस्या	उदकसटी तपस्या
३१३	१५	सं० १०५५	सं० १६५५

नोट :—पृ० २५६ में १५ से २४ की पंक्तियों का लेख 'तेथी तपा घरणा वंध्या। तेथी तपाजी' से लेकर—समत १६६७ व०' तक मूल प्रति में उलट-पलट है, अतः प्रतिलिपि में भी वैसा होना सहज है। पर संशोधन की दृष्टि से उसको निम्न रूप में बदल कर पढ़ना चाहिये।

तेथी तपा नाम हुवो। लूकाजी ना आठ पाट सूध आचारी हुवा : तेना नाम—१ जानजी स्वामी, २ भीखमदासजी स्वामी, ३ नूनजी स्वामी, ४ भीमजी स्वामी, ५ जगमालजी स्वामी, ६ सरवोजी स्वामी, ७ रूपेजो स्वामी, ८ जीवाजी स्वामी। ए आठ पाट उत्तम आचारी हुवा। ए आठ-मा पाट उवाला। जीवाजी स्वामी ने सरीर रोगादिक नी उतपती हुई। ओपध रे वास्ते आनन्द विमल जती रे पासे गया, तर जाणीने ओषद रे बदले झरनी पुडी दीधी, ते ओषद ने भरोसे ते पुडी जीवाजी स्वामीए खाधी। तिवारे शरीर मां झर प्रगम्यांन झहर जाणियो तरे संथारो कीधो ने देवगत हुवा। तीवारे लारे चैला हुता ते वगत सं० १६६७ व०।